With best compliments from

Once the summer Palace
of Rajput Royalty
today, a hotel fit for a king

THE RAMBAGH PALACE

Built in 1835 by the Scholar-prince Maharaja Sawai Ram Singh ji, the Rambagh Palace remained the traditional residence of Jaipur s royal family for years

Today it offers you a welcome like none other

105 air-conditioned rooms and suites furnished in the typically Rajasthani style The Rajput Room-a magnificient banquet and dining hall and the Suvarna Mahal, both offering a choice of the very best in Indian and Continental Cuisines The legendary Polo Bar Three conference rooms An inviting indoor swimming pool For the more athletically inclined-tennies, squash and golf and an exciting shopping arcade
Give yourself over to the luxury of life in a Palace it s an experience you wouldn t want to miss

For reservations, contact

The Rambagh Palace

Bhawani Singh Road, JAIPUR 302 005 Phone 381919
Tlx 365-2254 RBAG IN Cable RAMBAGH, JAIPUR"
Fax (0141) 381098

THE TAJ GROUP OF HOTELS

अंक 31

भगवान महावीर का
2592वां जयन्ती समारोह

महावीर जयन्ती स्मारिका

1994

सम्पादक मण्डल :

डॉ. प्रेमचन्द रांवका
श्री सौभागमल रावंका
श्री अमर चन्द जैन

प्रबन्ध मण्डल :

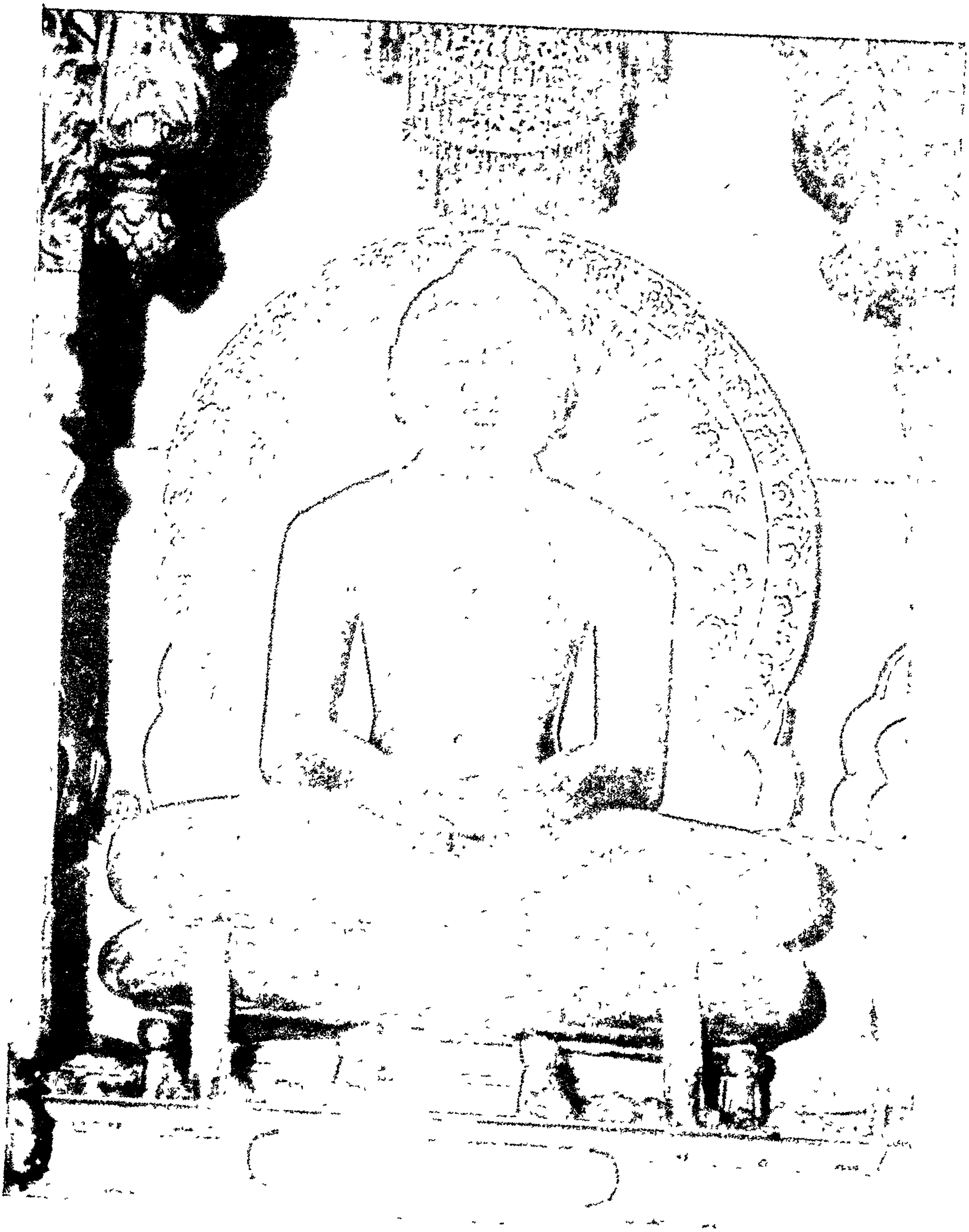
श्री कैलाश चन्द साह
श्री प्रकाशचंद ठोलिया
श्री राकेश छावड़ा
श्री नरेन्द्र कुमार पाटनी
श्री पूर्णचन्द काला
श्री भागचन्द जैन
श्री कैलाश चन्द सौगाणी
श्री जय कुमार गोधा
श्री सूरजमल सौगाणी

प्रधान सम्पादक :
ज्ञान चन्द विल्टीवाला

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेम चन्द छावड़ा

मुद्रक :
जैना प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
बोरड़ी का रास्ता, किशनपोल बाजार
जयपुर-3, फोन 313068, 315881

प्रकाशक :
महेन्द्र कुमार पाटनी
मंत्री
राजस्थान जैन सभा, जयपुर



नमः श्री वर्धमानाय निर्धूत कलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्यादर्पणायते ॥

राजस्थान जैन सभा, जयपुर

कार्यकारिणी 1994

श्री रतन लाल छावड़ा	*अध्यक्ष*
श्री कैलश चन्द साह	*उपाध्यक्ष*
श्री प्रेमचन्द छावड़ा	*उपाध्यक्ष*
श्री महेन्द्र कुमार पाटनी	*मंत्री*
श्री भागचन्द छावड़ा	*संयुक्त मंत्री*
श्री शान्ति कुमार गोधा	*संयुक्त मंत्री*
श्री अरुण कोड़ीवाल	*कोषाध्यक्ष*
श्री राजकुमार काला	*सदस्य*
श्री रमेश चन्द गंगवाल	*सदस्य*
श्री ताराचन्द साह	*सदस्य*
श्री अरुण सोनी	*सदस्य*
श्री कमल वावू जैन	*सदस्य*
श्री राकेश छावड़ा	*सदस्य*
श्री सुरेन्द्र मोहन	*सदस्य*
श्री विजय जैन	*सदस्य*
श्री अरुण काला	*सदस्य*
श्री सुधीर वाकलीवाल	*सदस्य*
श्री धन कुमार लुहाड़िया	*सदस्य*
श्री विजय सौगाणी	*सदस्य*
श्रीमती स्नेह लता शाह	*सदस्या*
श्रीमती शकुन्तला गोधा	सदस्या

कार्यकारिणी 1994

श्री प्रकाश चन्द ठोलिया	अभ्यर्थित सदस्य
श्री गणेश कुमार राणा	अभ्यर्थित सदस्य
श्री निर्मल कुमार गोधा	अभ्यर्थित सदस्य
श्रीमती पुष्पा गोधा	अभ्यर्थित सदस्या

विशेष आमंत्रित सदस्य

श्री सोहन लाल सेठी
श्री कैलाश चन्द सौगाणी
श्री राजेन्द्र कुमार गोधा
श्री भागचन्द वस्सी वाले
श्री शम्भु कमार जैन
श्री रतन लाल गगवाल
डा श्री सुभाप गंगवाल
श्री अमर चन्द जैन
श्री महावीर कुमार बिन्दायक्या
श्री बसन्त कुमार बाकलीवाल
श्री प्रेमचन्द हैदरी

शुभ सन्देश

आचार्य श्री सन्मति सागर जी महाराज का

आशीर्वाद

अवसर्पिणी काल में आयु, ज्ञान, स्मृति इत्यादि घटते जाते हैं। धरसेन आचार्य ने इसी दृष्टिकोण से पुष्पदन्त भूतवलि को अपना ज्ञान दिया और उन्होंने इसे लिपि वद्ध किया, जिसे पढ़कर भव्यजन यथार्थता का ज्ञान करते हैं । पू. चा. च. समाधि सम्राट आचार्य श्री आदि सागर जी (अंकलीकर) कहते थे; पठितव्यं पठितव्यं अग्रे अग्रे स्पष्टं भविष्यति–पढ़ते चलो, पढ़ते चलो, आगे-आगे स्पष्ट हो जावेगा । इसी दृष्टि से वर्तमान में विषय को लिपि वद्ध करके प्रकाशित करना आवश्यक है । राजस्थान जैन सभा का प्रतिवर्ष महावीर जयन्ती पर स्मारिका प्रकाशित करना ज्ञान की वड़ी सेवा है । स्मारिका निश्चय ही जनोपयोगी है । इसके प्रधान सम्पादक श्री विल्टीवाला एवं उनके सहयोगियों एवं प्रकाशकों को आशीर्वाद ।

(प्रेपक व्र. मैना जैन)

आशीर्वाद

महावीर जयती वर्तमान युग का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आयोजन है। महावीर की वाणी आज जितनी प्रासगिक बनी है, उतनी अतीत मे बनी या नही, अनुसधान का विषय है। युग वैज्ञानिक है। शस्त्रीकरण सीमा पार कर चुका है। उसके आगे कोई विकल्प नही दिख रहा है। हिंसा और आतक की समस्या दिन प्रतिदिन उलझ रही है, जातीय और साप्रदायिक अभिनिवेश कम नही हो रहे हैं। पदार्थ का सग्रह और भोग की मात्रा भी बढ़ती जा रही है। इस परिस्थिति मे महावीर की वाणी और दर्शन एक आलोक, एक ज्योति-किरण बनकर जीवन-पथ को आलोकित कर सकता है। इस अपेक्षा की पूर्ति के लिए महावीर जयती एक सार्थक आयोजन बने।

—गणाधिपति तुलसी
—आचार्य महाप्रज्ञ

6 4 94
ग्रीन हाउस
जयपुर

श्री महावीर जी

दिनांक : 8 अप्रेल, 1994

आशीर्वाद

महावीर जयन्ती के पावन अवसर पर राजस्थान जैन सभा प्रतिवर्ष एक स्मारिका प्रकाशित करती है, जानकर बड़ी प्रसन्नता है। आज भगवान महावीर के सिद्धान्तों/उपदेशों के प्रचार प्रसार की बहुत आवश्यकता है। स्मारिका के माध्यम से जैन सभा जो कार्य कर रही है, उसके लिये उसके सभी कार्यकर्ताओं को आशीर्वाद ।

मुनि सुधा सागर



SECRETARY OF GOVERNOR
RAJASTHAN, JAIPUR

सन्देश

महामहिम राज्यपाल महोदय को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि राजस्थान जैन सभा जौहरी बाजार, जयपुर द्वारा भगवान महावीर की जयन्ती के पुनीत अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

भगवान महावीर के सिद्धान्त आज के भौतिकवादी युग मे मानव कल्याण की दृष्टि से अत्यत महत्वपूर्ण हैं। उनके अहिसा, अपरिग्रह जैसे महत्वपूर्ण उपदेश सुखी जीवन के लिये अपना विशेष महत्व रखते हैं।

महामहिम इस अवसर पर हार्दिक शुभकामनाए प्रेषित करते है।

(एन आर भसीन)
सचिव
राज्यपाल, राजस्थान



सत्यमेव जयते

मुख्य मंत्री

राजस्थान

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि राजस्थान जैन सभा, जयपुर द्वारा महावीर जयन्ती के अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

आज के भौतिक युग में समूचा विश्व जिस विषम और अशान्त परिस्थिति से गुजर रहा है, तव भगवान महावीर के अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त और पुरुषार्थ जैसे आदर्श सिद्धान्तों की महत्ता एवं प्रासंगिकता और भी अधिक वढ़ जाती है। आवश्यकता इस वात की है कि मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिए भगवान महावीर के उपदेशों और आदर्शो को व्यापक वनाया जाय। मुझे खुशी है कि राजस्थान जैन सभा विगत 30 वर्षो से इस दिशा में सक्रिय है।

मैं भगवान महावीर की पावन जयन्ती के पुनीत अवसर पर आयोज्य समारोह एवं प्रकाश्य स्मारिका की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनायें प्रेपित करता हूँ।

(भैरोंसिह शेखावत)

मुलायम सिंह यादव
मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश

सचिवालय एनेक्सी
लखनऊ
दिनाक ७ अप्रैल, १९९४

जैन धर्म व उसके अहिंसा के सिद्धान्त से आज समूचे समाज को पूरी तरह परिचित कराने की आवश्यकता है जिससे मानवतावादी विचारधारा का प्रसार हो सके और मानव-मानव के बीच प्रेम की भावना जागृत हो सके ।

आपका

(मुलायम सिंह यादव)
मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश

अध्यक्षीय

विश्ववंद्य भगवान महावीर की पावन जयन्ती पर 'महावीर जयन्ती स्मारिका' का प्रकाशन करना राजस्थान जैन सभा की एक प्रमुख गतिविधि है । जिसका शुभारम्भ दर्शन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान, महान चिन्तक, लेखक पं. चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ ने संपादन कर किया था । यह उन्हीं की प्रेरणा का फल है कि स्मारिका का निरन्तर प्रकाशन हो रहा है ।

स्मारिका प्रकाशन एक गुरुत्तर कार्य है । इस इकतीसवें अंक का संपादन पूर्व वर्षों की भाँति दर्शनशास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान श्री ज्ञानचन्द बिल्टीवाला ने किया है । लेखों का चयन उन्हें सजाने संवारने में उनके सम्पादक मण्डल के सदस्यों का सहयोग भी भुलाया नहीं जा सकता । हम उन सभी के प्रति बहुत कृतज्ञ हैं ।

स्मारिका का प्रकाशन विभिन्न बन्धुओं के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्राप्त सहयोग से ही संभव हो सका है जिसके लिय हम उन सभी के आभारी हैं । विद्वान लेखकों, विज्ञापनदाताओं, प्रबन्ध सम्पादक भाई श्री प्रेमचन्द जी छाबड़ा एवं प्रबन्ध मण्डल के सदस्यों के प्रति भी हम अपना आभार प्रकट करते हैं ।

सभा के मंत्री श्री महेन्द्र कुमार जी पाटनी का योगदान महत्वपूर्ण रहा है, मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना नहीं रह सकता ।

स्मारिका मुद्रण कार्य को समय पर सम्पन्न कराने में जैना प्रिन्टर्स एवं स्टेशनर्स के मालिक तथा कर्मचारियों का जो सहयोग प्राप्त हुआ है । उसके लिये उन्हें धन्यवाद करते हुये आभार प्रकट करते हैं ।

अन्त में मै सभी सभा के पदाधिकारियों, कार्यकारिणी के सदस्यों, सहयोगियों, शुभचिन्तकों, विद्वानों, महिलाओं तथा युवा साथियों का जिनका सहयोग एवं मार्गदर्शन मिला है उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ और आशा करता हूं कि भविष्य में भी सभा को इसी भांति सहयोग एवं मार्गदर्शन मिलता रहेगा ।

जय महावीर

दि. 24 अप्रेल, 1994

रतनलाल छाबड़ा
अध्यक्ष

प्रकाशकीय

आज सम्पूर्ण देश मे विश्ववद्य भगवान महावीर की 2592वी पावन जयन्ती पूर्ण गरिमा के साथ मनाई जा रही है । सम्पूर्ण जैन समाज इस अवसर पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करता है जिससे भगवान के उपदेश जन-जन तक पहुचकर उनके जीवन मे उतर सके । इस परम पावन दिवस पर राजस्थान जैन सभा भगवान महावीर के पावन उपदेशो को जन-जन तक पहुचाने के उद्देश्य से गत 30 वर्षो से महावीर जयन्ती स्मारिका का प्रकाशन करती रही है , महावीर जयन्ती स्मारिका का 31वा अक पाठको की सेवा मे प्रस्तुत कर सभा प्रसन्नता व गौरव का अनुभव कर रही है ।

महावीर जयन्ती के शुभावसर पर सभा द्वारा प्रकाशित होने वाली स्मारिका ने जैन साहित्य-धर्म-दर्शन और सस्कृति के क्षेत्र मे विशेष स्थान बनाया है तथा इसके गत प्रकाशनो की सभी क्षेत्रो मे बहुत प्रशसा हुई है । वास्तव मे सभी स्मारिकाए सग्रहणीय बन गई है । स्मारिका मे भगवान महावीर व उनके जीवन सिद्धान्त, शाकाहार, सयम, ध्यान, साहित्य पुरातत्व सम्बन्धी रचनाए विशेष रूप से प्रकाशित होती है ।

महावीर जयन्ती स्मारिका का यह स्तर हमारे माननीय लेखको, विद्वानो, व कवियो, विद्वान साधुजनो की रचनाओं के कारण ही बन पाया है । मै उनका आभार मानते हुए निवेदन करता हू कि वे भविष्य मे भी सभा को इसी प्रकार सहयोग प्रदान करते रहे । स्मारिका का शुभारम्भ स्व प चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ जयपुर की प्रेरणा, प्रयास, मार्गदर्शन से हुआ जिसके लिये सभा उनकी सतत आभारी है ।

गत वर्षो की भाँति इस वर्ष भी स्मारिका का सम्पादन प्रसिद्ध विद्वान श्री ज्ञानचन्द जी बिल्टीवाला ने किया है, इन्ही क सम्पादकत्व मे प्रकाशित महावीर जयन्ती स्मारिकाओं का स्तर प्रतिवर्ष निरन्तर उच्च स्तर की ओर बढ़ रहा है । इसके लिये सभा प्रधान सम्पादक श्री ज्ञानचन्दजी बिल्टीवाला की आभारी है । इनके सहयोगी सर्वश्री डा प्रेमचन्द जी रावका, सौभागमल जी रावका, एव अमरचन्द जी जैन के प्रति भी सभा आभारी है ।

स्मारिका का प्रकाशन विज्ञापनदातो के सहयोग व सहायता के बिना असम्भव है इसके लिए सभा सभी विज्ञापनदाताओं के प्रति कृतज्ञ है । प्रबन्ध सम्पादक श्री प्रेमचन्द जी छाबड़ा एव उनके प्रबन्ध मडल के सदस्यो विशेषत सर्वश्री प्रकाशचन्द जी ठोलिया, भागचद जी जैन, राकश जी छाबड़ा व उनके अन्य सहयोगियो ने अकथनीय परिश्रम कर विज्ञापन के माध्यम से अर्थ सग्रह कर प्रकाशन को सम्भव बनाया उसके लिये हम सभी उनके अत्यन्त आभारी हैं । यहा मैं सभा के अध्यक्ष श्री रतन लाल जी छाबड़ा के प्रति

भी कृतज्ञता प्रगट किये बिना नहीं रह सकता, जिनके मार्ग दर्शन से व योगदान से स्मारिका व अन्य कार्यक्रम आकर्षक व उपयोगी बन पाये हैं।

मैं सभा के उपाध्यक्ष श्री कैलाशचन्द जी साह का भी आभारी हूँ जिन्होंने स्मारिका के प्रकाशन में पूर्ण सहयोग प्रदान किया। स्मारिका का मुद्रण जैना प्रिंटर्स एण्ड स्टेशनर्स बोरड़ी का रास्ता, जयपुर द्वारा किया गया है। इनके व्यवस्थापकों व कर्मचारियों के परिश्रम से यह स्मारिका इतनी सुन्दर रूप में समय पर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में सफलता मिली है इसके लिए वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में मैं उन सभी के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूं जिन्होंने किसी न किसी रूप में स्मारिका के प्रकाशन में सहयोग प्रदान किया है।

स्मारिका में यदि किसी प्रकार की त्रुटि रह गई हो तो उसके लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है पाठक उसे उदार हृदय से क्षमा करेंगे तथा त्रुटियों व सुझावों से अवगत करायेंगे ।

महेन्द्र कुमार पाटनी
मंत्री
राजस्थान जैन सभा, जयपुर

सम्पादकीय

प्रात स्मरणीय, स्वनामधन्य स्व प चैन सुखदास जी न्यायतीर्थ की प्रेरणा से आरम्भ हुई महावीर जयन्ती स्मारिका का यह 31वाँ अक है। पूर्व की भाँति इस अक के भी पाँच खण्ड हैं—

(1) महावीर जीवन, सिद्धान्त एव व्यवहार (2) साहित्य (3) इतिहास एव पुरातत्त्व (4) विविध (5) आग्ल भापा। सन्तो का आशीर्वाद प्राप्त कर हमने कार्य का प्रारभ किया है और परिणामत माँ जिनवाणी की सेवा के दुरूह पथ को हमने सीधा सपाट हुआ पाया है। सन्तो ने हमे केवल आशीर्वाद ही नही दिया है वरन् स्मारिका के अग-न्यास का एक बड़ा भाग भी उनके द्वारा ही सम्पन्न हुआ है। इस शुभ अनुष्ठान मे राज्य सत्ताओं से प्रेरणा एव प्रोत्साहन हमे प्राप्त हुआ है।

लातूर मे गत वर्ष आये भयकर भूकप एव जनवरी माह मे कैलीफोर्निया तथा इन्डोनेसिया मे हुई उसकी आवृत्तियो ने पर्यावरणीय प्रदूपण की समस्या के प्रति मानव को झकझोर दिया है। 'हम भूकपीय पीढ़ी है' पुस्तक के लेखक अरीजोना के जेफ्री गुड्मैन एव अन्य मानसिक भूगर्भशास्त्रियो का मानना है कि मानव के चित्त से उठने वाली तरगे एव उसके व्यवहार का प्रकृति पर गहन प्रभाव पड़ता है। अत आज धारणा बनने लगी है कि **'मानव ही भूकप है और वह ही उससे बचने का उपाय भी है।'**

शेक्सपीयर के नाटक 'हैमलेट' मे पोलोनियस अपने पुत्र लायर्टिस को 'be true to thyself का उपदेश देता है। ऋपभादि तीर्थंकरो ने मानव का उसके अर्हन्त समान परमात्म स्वरूप से अपना आदर्श प्रस्तुत कर परिचय कराया है तथा अपने योग-उपयोग के प्रत्येक व्यापार से, अपने कार्यो से उस परमात्म स्वरूप को अधिकाधिक अनुभव मे लाने/अभिव्यक्त करने की प्रेरणा की है, और इसी मे समाज का एव विश्व का हित स्वीकार किया है, एव उससे विपरीत आचरण करने को स्वय तथा अन्यो के लिए विनाशकारी बताया है। आज सभी प्रवुद्ध जन जानते हैं कि बाह्य जगत मानव के विचार और व्यवहार की छाया के रूप मे ही बहुभाग ढलता चलता है।

प्रस्तुत अक के प्रथम खड का आरम्भ चतुर्विंशति तीर्थकरो एव भगवान महावीर की स्तुतियो से हुआ है। ये स्तुतियाँ हमे अपने सदेह अवस्था मे अकारण ही तीर्थकर रूप का स्मरण कराती हैं। हमारे इस स्वरूप पर हमारे ही अपराधो से कृत्रिम कर्मो की काई आ गई हो चाहे, पर यह कभी पूरा लुप्त होता नही है। अत हमे मानना चाहिए कि हम ज्ञानादि अनन्त चतुष्टय के धनी दीप्तिमान, तेजस्वी वस्तुत है, और हमारे चारो ओर जगत सहज समवसरण रूप है जहाँ कोई उपद्रव नही है, रोग शोक नही है, सुभिक्ष ही सुभिक्ष है। इस अपने और जगत के अकारण मूल रूप को स्वीकार न कर यदा-कदा, कही-कहीं आ रही कर्म-कालुष्य की काई को, जन्म-मरण रोग शोक-भूख प्यास एव अन्य उपद्रवो को ही दृष्टि/अनुभूति का पुन पुन विपय बनाकर हम उसी का विस्तार करते हैं और अपने अविनश्वर अकारण मूल स्वरूप के स्निग्ध स्पर्श से स्वय को वचित करते है, उसके और अपने बीच एक कृत्रिम विभाजक रेखा पुन पुन खीचते है।

दूसरा खड नदीश्वर द्वीप मे स्थित अकृत्रिम जिन बिम्बो की स्तुति से तथा तीसरा खड मथुरा के ककाली टीले से प्राप्त सभवनाथ स्वामी की प्रतिमा के वर्णन से आरभ हुआ है। यह इस

बात का स्मरण है कि पुद्गल कृत्रिम-अकृत्रिम रूप में जीव की छाया बन वर्तन करता है, तथा जगत के अर्हन्त स्वरूप सब जीव ही हमारे लिये मंगल रूप नहीं है, वरन् पुद्गल भी हमारे मंगल में सहायतार्थ चारों ओर प्रस्तुत है।

चतुर्थ खंड का आरंभ ज्ञान की अचिंत्य शक्ति की चर्चा से हुआ है। आचार्य अमृत चन्द्र कहते हैं—'चिदेक धातोरपि से समग्रतामनन्तवीर्यादिगुणा : प्रचक्रिरे।' (ल. त. स्फो. 6/14) अर्थात्, हे प्रभो ! एक चैतन्य धातु रूप होने पर भी वीर्यादि गुणों ने आपकी समग्रता को किया।' हम आत्मा के लोक प्रमाण असंख्यात प्रदेशों में व्याप्त अपने वीर्यादि गुणों पर भरोसा करें। यदि सम्पूर्ण कषाय-कालुष्य को छोड़कर हम स्व-पर के वस्तु स्वरूप को ज्ञान में लेने, उसके साथ निर्मल अनुभूति रस की ज्ञान की होली खेलने में दत्त चित्त हों तो हमारे अन्तर्बाह्य कष्टों, दुर्बलताओं का निवारण हमारी वीर्यादि शक्तियाँ आनन-फानन में कर दें। कषाय-कालुष्य से विक्षिप्त रहने और हिंसादी पाप कार्यो में लिप्त होने पर दुःख-दुर्गति की अन्तर्बाह्य रचना भी उन्हीं वीर्यादि शक्तियों में आये विकार का परिणाम है।

पंचम खण्ड का आरंभ जैन धर्म की प्राचीनता और समीचीनता की चर्चा से हुआ है। करोड़ों वर्षो पूर्व आदि तीर्थकर ऋषभदेव द्वारा जड़-चेतन पदार्थो के मूल-दिव्य स्वरूप का, जिसका नाम धर्म है, उद्घाटन हुआ है। मोक्ष मार्ग के इस अवतरण के साथ ही अथवा थोड़े पश्चात् स्वर्ग साधना के शुभ पथ भी मारीचि आदि ने उस युग में खोले जिनकी धारायें वैदिक परम्परा एवं विश्व के अन्य धर्मो में वही।

अंक का प्रथम लेख भगवान महावीर के पूर्व भवों के परिचय का है, जिसमें हम देखते हैं कि इस महापुरुष ने कितनी वार ब्राह्मण ऋषि के रूप में शुभ तप तपा और पुनः पुनः स्वर्ग प्राप्त किया। इन तपों से वह कभी स्वर्गो में इन्द्र नहीं वना। देवों की उपासना से अथवा अग्नि, पवन आदि प्राकृतिक तत्त्वों की उपासना से देवेन्द्र आदि उपास्य पद प्राप्त नहीं होते। (प्रकृति का शोषण करना तो खतरनाक ही परिणाम लाता है जो आज के भौतिकवादी जीवन ने अपने उदाहरण से प्रमाणित कर दिया है।) महावीर पूर्व भव में नारायण वने वह भी अपनी ज्ञान स्वभावी, अनन्त चतुष्टय धारी आत्मा की उपासना से, उसी के प्रसाद स्वरूप तीर्थंकर वने, परमात्मा वने। अंक के अन्तिम लेख में अपरिग्रह की चर्चा हुई है। उसमें अणु रूप में भी सामाजिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपरिग्रह के पालन से मानव को शान्ति-सुख की प्राप्ति हो जाना वताया गया है।

इस अंक में संकलित सभी लेख, कविता आदि महत्वपूर्ण हैं, पठनीय हैं। उन्हें समय पर हमें प्रकाशन हेतु भेजने के लिए हम लेखक एवं कवि महानुभावों के आभारी हैं। स्थानाभाव से जिनकी रचनायें हम प्रकाशित नहीं कर सके उनसे क्षमा प्रार्थी हैं। सभा के अध्यक्ष मंत्री एवं प्रवंध कारिणी के सदस्यों के हम आभारी हैं कि भगवान महावीर की जयन्ती के पुनीत अवसर पर जिनवाणी की पूजा में अर्घ समर्पण का उन्होंने हमें अवसर प्रदान किया। साथी सम्पादक डॉ. प्रेम चन्दजी रांवका, श्री सौभाग मलजी रांवका एवं श्री अमरचन्द जी जैन का मैं आभारी हूँ। यह सव श्रम उन्हीं का है। सुन्दर मुद्रण हेतु जैना प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स के मालिक श्री कैलाश चन्द जी सा०, तथा श्री सुरेश चन्द जी गोधा एवं श्री सुनील पाटनी के हम हृदय से आभारी हैं।

ज्ञानचन्द विल्टीवाला

आभार

राजस्थान जैन सभा की कार्यकारिणी ने मेरी विनयपूर्वक असमर्थता प्रकट करने के उपरान्त भी महावीर जयन्ती स्मारिका के प्रवन्ध सम्पादक का दायित्व इस वर्ष मुझे वहन करने का निर्देश दिया। कार्यकारिणी समिति द्वारा मेरे मे जो विश्वास प्रकट किया, उसके लिये मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

भगवान महावीर के दिव्य सन्देश जन-जन पहुँचाने के उद्देश्य से राजस्थान जैन सभा सन् 1962 से स्मारिका का प्रकाशन करती आ रही है। इस वर्ष 31वा अक आपके हाथो मे प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त हर्ष एव गौरव का अनुभव करते हैं।

स्मारिका मे प्रकाशनार्थ लेखो का चयन एव सकलन सरल स्वभावी एव चिन्तनशील विचारक श्री ज्ञानचन्द जी विल्टीवाला तथा विद्वद्‌जन डा प्रेम चन्द जी रावका, श्री सौभाग मल जी रावका तथा श्री अमर चन्द जी जैन के विशेष परिश्रम, त्याग और लगन से सम्भव हो सका है। मैं इन सबका अत्यन्त आभारी हूँ। स्मारिका के लेखकगणो के प्रति भी मै अत्यन्त आभारी हूँ, जिनके सारगर्भित लेखो के कारण स्मारिका की माग जैन धर्म मे अध्ययन करने वाले छात्रो मे बनी रहती है।

विज्ञापन दाताओं के मुक्तहस्त सहयोग से ही प्रयास और चेष्टाये ठोस आकार ग्रहण कर सकी। स्मारिका के विज्ञापन उनके वाणिज्यिक विनियोग से अधिक उनकी आस्था और विश्वास की प्रतीक है। मै समस्त विज्ञापनदातो का आभारी हूँ, जिन्होंने अपने व्यापारिक औद्योगिक प्रतिष्ठानो का विज्ञापन देकर हमे अनुग्रहित किया।

मै राजस्थान जैन सभा के अध्यक्ष श्री रतन लाल जी छावड़ा, मत्री श्री महेन्द्र कुमार जी पाटनी का बहुत ही आभारी हूँ, जिन्होंने स्मारिका मे प्रकाशनार्थ विज्ञापन एकत्र कराने मे हमे पूर्ण सहयोग दिया। श्री प्रकाश चन्द जी ठोलिया का जो सहयोग मुझे प्राप्त हुआ वह महत्वपूर्ण है, स्मारिका हेतु विज्ञापन जुटाने मे प्रवन्ध मण्डल के सदस्यगणो ने अथक प्रयास कर इस कार्य को सम्पन्न करने मे जो सहयोग दिया उसके लिये मै उन सभी का अत्यन्त आभारी हूँ।

इस अवसर पर मै सर्वश्री एम एल जैन, प्रेमचदजी कोड़ीवाल, सुरेश चन्द जी वज, लल्लूलाल जी छावड़ा, रतनलाल जी नृपत्या, वी के जैन, भागचन्द जी छावड़ा, सियारामजी, एल सी जैन, चेतनजी वाकलीवाल, रमेशचन्द जी गगवाल, विजयजी सोगाणी, सुधीरजी वाकलीवाल, वावूलाल जी सेठी, पी के जैन, भागचन्द जी सौगाणी, प्रेमचन्द जी सौगाणी, सुरेन्द्रमोहन जी, हरकचन्द जी हमीरपुर वाले, वसन्त कुमार जी वाकलीवाल,

प्रेमचन्दजी हैदरी, महावीर कुमार जी झागवाले, एन. एल. जैन, मुकेश साह, राजेश साह, कमल वावूजी जैन, डी. के. जैन, रादेशजी पापड़ीवाल, सुमरेचंद जी आदि सभी सहयोगियों का आभार मानता हूँ ।

इस अवसर पर 'जैना प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स' के संचालक श्री कैलाश चन्द जी शाह के प्रति विशेष रूप से आभार प्रकट करता हूँ जिनके लग्न एवं परिश्रम से स्मारिका का प्रकाशन समय पर सम्भव हो सका । इस हेतु प्रेस के कर्मचारियों के प्रति भी आभार प्रकट करना मैं अपना कर्तव्य मानता हूँ ।

स्मारिका हेतु विज्ञापन प्राप्त करने में जाने-अनजाने जिन व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त हुआ है, उन सव ही के प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ ।

स्मारिका के विज्ञापनों में किसी प्रकार की त्रुटि रह गई हो तो उसका पूर्ण उत्तरदायित्व मेरा अपना है, उसके लिये हृदय से क्षमा प्रार्थी हूँ ।

इस आशा और विश्वास के साथ यह अंक आपके हाथों में है कि भविष्य में इसे अधिक उपयोगी व सुन्दर वनाने में अपने सुझावों से अवगत करायेंगे ।

जय महावीर

प्रेम चन्द छावड़ा
प्रवन्ध सम्पादक

राजस्थान जैन सभा की गतिविधियां

राजस्थान जैन सभा की स्थापना वर्प 1952 मे हुई थी तव से यह सगठन जैन समाज की सामाजिक, धार्मिक उन्नति के लिए सगठित रूप से योजनाबद्ध तरीके से काम कर रहा है इसका विधिवत सविधान तैयारकर राजस्थान सोसाइटीज एक्ट के तहत निम्न उद्देश्यो की पूर्ति हेतु पजीकरण करवाया गया ।

1 जैन समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समाज हित की दृष्टि से सगठित करना ।

2 विभिन्न जैन सस्थाओं से सम्पर्क स्थापित कर उन्हे एक सूत्र मे लाना ।

3 जैन समाज का सर्वांगीण विशेपत सामाजिक, मानसिक, आर्थिक, शारीरिक, साहित्यिक एव सास्कृतिक आदि विभिन्न प्रवृत्तियो के विकास के लिए विभिन्न प्रकार के यथा सम्भव प्रयत्न करना एव इस हेतु आवश्यक विभिन्न आयोजनो को करना ।

4 समाज मे फैली हुई कुरीतियो को दूर करना ।

5 वे समस्त कार्य करना जो सस्था के उपर्युक्त उद्देश्यो की पूर्ति मे प्रत्यक्ष व परोक्षरूप से आवश्यक तथा सहायक हो ।

6 जैन मान्यताओं एव जैन समाज के हितो की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहना ।

प्रमुख गतिविधिया

दशलक्षण पर्व समारोह—प्रत्येक वर्प भादवा सुदि पचमी से चतुर्दशी तक वड़े दीवानजी के मदिर मे रात्रि मे दस धर्मो पर ख्याति प्राप्त विद्वानो के प्रवचन कराये जाते हैं । इस वर्प नागपुर के प राकेश कुमार जी को आमन्त्रित कर दस दिन तक उनका प्रवचन करवाया गया था । इन दस दिनो मे समाज की विभिन्न शिक्षण सस्थाओं, महिला सगठनो को आमन्त्रित कर कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं । विभिन्न विपयो मे विशिष्ठ विद्वानो को बुलाकर उनके अलग अलग विपयो पर भापण करवाये जाते हैं ।

क्षमापन पर्व समारोह—दशलक्षण पर्व की समाप्ति पर प्रतिवर्प रामलीला मैदान मे आसोज बुदि दोज को प्रात सामूहिक क्षमापन पर्व समारोह का आयोजन किया जाता है । इस वर्प समारोह के मुख्य अतिथि श्री उम्मेदमल जी पाड्या थे तथा कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री नरेश कुमार जी सेठी (आई ए एस) थे । केन्द्रीय वित्त राज्य मत्री श्री अवरार अहमद भी समारोह मे पधारे थे । इस वर्प एक माह का उपवास करने वाली महिला श्रीमति प्रेमलता वाई तथा 10 दिन का उपवासकरने वाले 19 पुरुप व स्त्रियो को सभा की ओर से सम्मानित किया गया ।

भूकम्प पीड़ितों की सहायता—इस वर्प महाराष्ट्र प्रान्त के लातुर जिले मे भयकर भूकम्प आया जिसमे भारी सख्या मे जानमाल का नुकसान हुआ । कई जैन मदिर भी ध्वस्त हुए । इस प्राकृतिक प्रकोप से पीड़ित मानव को सहायता पहुचाने के लिए सभा ने धनराशि एकत्रित

करने का अभियान किया। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री सहायता कोष में राजस्थान के राज्यपाल के माध्यम से सभा की ओर से 2,16,111/- रु. की राशि भेंट की गई है।

महावीर निर्वाण महोत्सव—सभा द्वारा भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव कार्तिक सुदि एकम को मनाया जाता है। इस वर्ष भी यह कार्यक्रम गोपालजी के रास्ते में स्थित दि. जैन मंदिर कालाडेरा (महावीर स्वामी) के मंदिर में आयोजित किया गया।

साहित्य प्रकाशन—(क) महावीर जयन्ती स्मारिका का प्रकाशन सभा द्वारा वर्ष 1962 से किया जा रहा है जिसमें देश के ख्याति प्राप्त विद्वानों के लेख, रचनाएं प्रकाशित की जाती है। (ख) आचार्य श्री विद्यानंद जी महाराज द्वारा लिखित लघु पुस्तिकाओं का प्रकाशन सभा द्वारा करवाया गया तथा उनकी लिखी पुस्तक पिच्छी कमन्डलू नामक पुस्तक का प्रकाशन भी सभा ने करवाया। (ग) आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज द्वारा लिखित "निजामृत पान" का प्रकाशन करवाया गया। (घ) मास्टर माणकचन्द जी द्वारा लिखित भगवान महावीर नामक पुस्तिका का प्रकाशन करवाया। (ङ) डा. हुकमचन्द जी भारिल्ल द्वारा लिखित लघु पुस्तक तीर्थंकर महावीर नामक लघु पुस्तक का प्रकाशन करवाया। (च) चांदन के बाबा एवं धम्मम् शरणम नामक पुस्तकें प्रसिद्ध पत्रकार श्री प्रवीण चन्द जी छावड़ा द्वारा लिखी गई हैं उन्हें प्रकाशित करवाया। (छ) आचार्य कुन्द कुन्द पर स्मारिका में प्रकाशित लेखों का संकलन कर प्रकाशित करवाया। (ज) सुखी जीवन प्राप्ति के दस सोपान लेखक मुनि गुणधर नंदी पुस्तक का प्रकाशन करवाया। (झ) डा. शीतल चन्द जी जैन प्राचार्य दि. जैन संस्कृत महाविद्यालय जयपुर द्वारा लिखित युग प्रवर्तक भगवान ऋषभदेव नामक पुस्तक प्रकाशित करवाई गई।

प्रवचनों के आयोजन—समय समय पर जयपुर नगर में पधारने वाले आचार्यो साधु, साध्वियों, विद्वानों के प्रवचनों का आयोजन भी सभा द्वारा कराया जाता है। आचार्य श्री विद्यानंदजी, आचार्य श्री विमलसागरजी, आचार्य श्री देशभूषण जी व ब्र. कुमारी कोशल जी के प्रवचनों के कार्यक्रम विशेष उल्लेखनीय रहे। इस वर्ष 12.4.94 को आचार्य महाप्रज्ञ का जयपुर के केन्द्रीय कारागृह में 700 से अधिक वंदियों के समक्ष प्रवचन करवाया गया। इसमें उल्लेखनीय यह रहा कि 40 वंदियों ने आजीवन नशा छोड़ने का संकल्प लिया तथा करीव 400 वंदियों ने संकल्पी हिंसा के त्याग का संकल्प किया।

प्रश्नमंच कार्यक्रम—इस वर्ष ऋषभदेव जयन्ती के दो दिवसीय कार्यक्रमों के अन्तर्गत 3.4.94 की रात्रि में वड़े दीवानजी के मंदिर में भगवान ऋषभदेव से सम्बन्धित प्रश्नमंच कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में सैकड़ों वालक-वालिकाएं, युवा, प्रौढ़ व बुजुर्ग महिला, पुरुषों ने भाग लिया। मुख्य अतिथि श्री पूनमचन्द जी झरियावाले तथा अध्यक्ष श्री सोहन लाल जी सेठी थे। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री गुलाव चन्द जी पांड्या थे। भविष्य में भी वर्ष में कई वार प्रश्न मंच कार्यक्रम रखे जाने का विचार है।

साजो पर सामूहिक पूजन—भगवान ऋषभदेव जयन्ती कार्यक्रमों के अन्तर्गत दि. 4.4.94 की दोपहर में वड़े दीवानजी के मंदिर में साजों पर सामूहिक रूप से भगवान ऋषभदेव की पूजन के पश्चात् कर्मदहन पूजन विधान का आयोजन किया गया। इसमें करीव 400 महिलाओं व पुरुषों ने सामूहिक रूप से पूजा की। प. निर्मल कुमार जी ने विधान सम्पन्न करवाया तथा

श्रीमती डा शीला जैन सयोजिका थी । श्री गुलावचन्द जी पाड्या, श्री नेमीचन्द जी काला व दीवान प्रकाश चन्द जी का उल्लेखनीय सहयोग रहा ।

सामूहिक भोज—भगवान ऋषभदेव जयन्ती के अन्तर्गत आयोजित पूजन के पश्चात् 4 4 94 को साय पार्श्वनाथ भवन जयपुर मे पूजा मे वैठने वाले, शामिल होने वाले करीव 1100-1200 व्यक्तियो के सामूहिक भोज का सफल आयोजन किया गया ।

विचार गोष्ठी—सभा द्वारा महावीर जयन्ती के उपलक्ष्य मे चेम्वर भवन मे दिनाक 2 4 93 को विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया इसमे मुख्य अतिथि विधानसभा अध्यक्ष श्री हरिशकर जी भामड़ा थे । कार्यक्रम के सयोजक प्रो नवीन कुमार जी वज एव श्री कमल वावूजी थे । इस वर्ष 4 4 94 को भगवान आदिनाथ पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता श्री अशोक जैन (आई ए एस) द्वारा की गई तथा सयोजक श्री कमल वावू जैन थे ।

सम्मान समारोह—इस वर्ष दिनाक 10 4 94 को भट्टारकजी की नसिया मे राजस्थान विधान सभा के लिए निर्वाचित जैन विधायको का सम्मान समारोह आयोजित किया गया । श्री के एल जैन मुख्य अतिथि थे, तथा अध्यक्षता श्री तेजकरण जी डडिया ने की, श्री श्रेयान्स कुमार जी गोधा विशिष्ठ अतिथि थे । कार्यक्रम के सयोजक श्री रमेश चन्द जी गगवाल थे ।

वाद-विवाद प्रतियोगिता—इस वर्ष दिनाक 5 3 94 को स्कूलो के वालक-वालिकाओं की वाद विवाद प्रतियोगिता का आयोजन श्री महावीर वालिका विद्यालय चोरूको के रास्ते मे किया गया । जिसमे 12 स्कूल के वालक वालिकाओं ने भाग लिया । कार्यक्रम के प्रभारी श्री भागचन्दजी छावड़ा थे तथा सयोजक श्री अमर चन्द जी जैन थे । विपय था-आतकवाद की समाप्ति अहिसा से ही सम्भव है ।

निवध प्रतियोगिता—इस वर्ष दिनाक 28 2 94 को श्री महावीर दि जैन उ मा विद्यालय, सी-स्कीम, जयपुर मे स्कूलो के वालक-वालिकाओं की निवध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया । श्री भागचन्द जी छावड़ा इसके प्रभारी तथा श्री राजेन्द्र कुमार जी जैन गोदीका इसके सयोजक थे । विपय था जैन धर्म के सिद्धान्तो के अनुरूप हमारा दैनिक-आचरण ।

चित्रकला प्रतियोगिता—दिनाक 28 2 94 को श्री महावीर दि जैन उ मा विद्यालय, सी-स्कीम, जयपुर मे विभिन्न स्कूलो के छात्र छात्राओं की चित्रकला प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसका विपय था वाहुवली का महामस्तकाभिपेक । इसके सयोजक श्री राजेन्द्र कुमार जी गोदिका थे तथा प्रभारी श्री भागचन्द जी छावड़ा थे ।

महावीर जयन्ती समारोह—राजस्थान जन सभा द्वारा महावीर जयन्ती समारोह 5 दिन तक मनाया जाता है यह समारोह रामनवमी से प्रारम्भ होकर चैत्र सुदी तेरस महावीर जयन्ती तक चलते है । कायक्रम की प्रथम दिन भक्ति सध्या से शुरुआत होती है फिर विचार गोष्ठी, कवि सम्मेलन, जयन्ती के पहले दिन प्रात प्रभात फेरी होती है । मुख्य दिन महावीर पार्क से विशाल जुलूस रवाना होकर विभिन्न वाजारो से हाता हुआ रामलीला मैदान पहुचता है , जुलूस मे विभिन्न सस्थाओं की ओर मे झाकिया, भजन मडली शामिल होती हैं । स्कूल के छात्र-छात्राए महिला मडल की सदस्याये जुलूस मे अपने अपने गणवेश मे शरीक होती हैं ।

जुलूस में हाथी, घोड़े, ऊंट आदि होते हैं तथा जिनेन्द्र भगवान का रथ होता है । जुलूस रामलीला मैदान में तत्पश्चात् सभा में परिवर्तित हो जाता है । इसमें मुख्य अतिथि व अध्यक्षता के लिए राज्यपाल, मुख्यमंत्री, मंत्री, न्यायाधीश व अन्य श्रेष्ठी गणों को आमंत्रित किया जाता है। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है ।

रक्तदान—राजस्थान जैन सभा द्वारा महावीर भगवान जयन्ती के अवसर पर एक रक्तदान शिविर का आयोजन भी किया जाता है जिसमें काफी संख्या में रक्तदान करवाकर मानव सेवा का कार्य करती है । इसके संयोजक श्री राजेन्द्र के. गोधा हैं । राजस्थान जैन सभा सवाई मानसिह चिकित्सालय स्थित रक्त बैंक को रक्त देने की व जरूरतमंद लोगों को रक्त उपलब्ध करवाती है । राजस्थान जैन सभा के नाम से सवाई मानसिह चिकित्सालय में ब्लड बैंक स्थापित किया हुआ है । रक्तदान वर्ष में 2 वार तक करने का भी विचार है ।

पर्यावरण रक्षा—राजस्थान जैन सभा ने राष्ट्रीय सेवार्थ वृक्षारोपण का कार्य भी किया है। शिवदासपुरा-पदमपुरा मार्ग पर सभा के सदस्यों द्वारा वृक्ष लगाये गये हैं ।

सभा द्वारा शाकाहार प्रचार, जैन मूर्तियों की चोरी के विरोध में सम्वन्धित अधिकारियों से सम्पर्क कर चोरी वरामद करने हेतु निवेदन करने, राजस्थान विधान सभा में प्रस्तुत नग्नता विरोधी विल वापिस करवाने, राजस्थान ट्रस्ट एक्ट में आवश्यक संशोधन कराने, राजस्थान सरकार को भगवान ऋषभदेव जयन्ती की छुट्टी घोषित करने, अनन्त चतुर्दशी व संवत्सरी का ऐच्छिक अवकाश को स्वीकृत करवाने की कार्यवाही की है ।

भावी योजनाएं—राजस्थान जैन सभा की कार्यकारिणी ने इस वर्ष निम्न कार्य और हाथ में लेने का निर्णय लिया है ।

1. **1000 आजीवन सदस्य वनाने हेतु निर्णय** · सभा में अधिक से अधिक व्यक्ति जुड़ सके इसलिए इस वर्ष 1000 आजीवन सदस्य वनाने का लक्ष्य रखा गया है । इसके संयोजक श्री धन कुमार जी लुहाड़िया है ।
2. प्रथम श्रेणी प्राप्तकर्त्ताओं व वयोवृद्धों का सम्मान सभा ने इस वर्ष दसवी से लेकर एम. ए. तक प्रथम श्रेणी प्राप्तकर्ताओं तथी सी. एस., आई. सी. डव्ल्यू. ए., एम. वी. ए. आदि को इस वर्ष उत्तीर्ण होने वालों का सम्मान करने का निर्णय लिया हैं। इसके लिए रमेश चन्द जी गंगवाल संयोजक है ।
3. **सामाजिक कुरीति निवारण** : सामाजिक कुरीति के कुछ सर्व सम्मत विन्दुओं का निश्चय कर उनके वारे में वातावरण तैयार करने हेतु कमेटी का गठन श्री राजेन्द्र कुमार जी गोधा के संयोजकत्व में किया गया है । सभा विन्दुओं को तय कर सामाजिक कुरीति निवारण के लिए ठोस कदम उठायेगी ।
4. **उद्योग शाला** : समाज की असहाय, विधवा, परित्यक्ता महिलाएं अपने पैरों पर खड़ी हो सके, उन्हें आर्थिक आलम्वन मिल सके इस हेतु उद्योग शाला खोले जाने का निर्णय किया गया है । इसकी संयोजिका श्रीमती पुष्पा जी गोधा को वनाया गया है ।
5. **दि. जैन परिवारों का सर्वेक्षण** : पूर्व में राजस्थान जैन सभा ने चौकड़ी मोदीखाना के दि. जैन परिवारों का सर्वेक्षण करवाकर पुस्तक प्रकाशित की थी । इस वर्ष

चोकड़ी घाटगेट का सर्वेक्षण करवाकर पुस्तक छपाने का निर्णय लिया गया है । इसके सयोजक श्री निर्मल कुमार जी गोधा हैं ।

6 धार्मिक शिक्षण व नियमित पाठशाला चलाना यह निर्णय लिया गया है कि गर्मियो के अवकाश मे 2 जगह धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया जावे तथा चम्पाराम जी पाड्या के मदिर मे नियमित रूप से रात्रिकालीन धार्मिक स्कूल चालू करने का भी निश्चय किया गया । तथा गर्मियो की छुटि्ट्यो मे एक दिन पूजन, प्रक्षाल प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जावे तथा आसपास के स्थानो पर जाकर वहा के मदिरो की मूर्तियो की सफाई भी वहा के समाज के सहयोग से करने का निर्णय लिया गया । इसके सयोजक श्री प्रकाश चन्द जी ठोलिया को बनाया गया है ।

7 सगीत प्रतियोगिता का आयोजन जैन समाज की इस वर्ष सगीत प्रतियोगिता का आयोजन करने का निर्णय लिया गया । इसमे भजन, नृत्य व वाद्ययत्रवादन प्रतियोगिता होगी । इसके सयोजक श्री अरुण जी कोड़ीवाल बनाये गये हैं ।

8 अस्पताल के एक वार्ड को गोद लेकर उसमे सप्ताह मे एक बार फल वितरण का निर्णय लिया गया है । इसके सयोजक श्री रमेश चन्द जी गगवाल है ।

9 जैन युवा अखिल भारतीय परीक्षाओं मे विशिष्ठ पढ़ाई की सुविधा नही होने से अपेक्षित सफलता नही प्राप्त कर पाते हैं इसलिए यह निश्चय किया गया है कि यदि अखिल भारतीय व अखिल राजस्थान स्तर की परीक्षाओं मे दि जैन युवा को सफलता मिल सके इसके लिए कोचिग की योजना बनाकर शिक्षण प्रारम्भ किया जावे । इस हेतु प्रयास शुरु कर दिये गये है ।

10 सभा के सविधान मे सशोधन कर जयपुर से बाहर भी अन्य शाखाए खोलने का कार्य भी इस वर्ष किया जाना है ।

सभा के मदिरो के जीर्णोद्धार खेलकूल प्रतियोगिता के आयोजन, जैन मेला, चिकित्सा शिविर लगाने, मेहन्दी रगोली प्रतियोगिता खेलकूल प्रतियोगिता करवाने के बारे मे भी निर्णय ले रही हे ।

अन्त मे मैं सभी सस्थाओं, युवा मडलो, महिला मडलो, विद्यालयो व दि जैन मदिरो के प्रतिनिधियो के प्रति आभार प्रदर्शित करता हू कि इन्ही के सहयोग से सभा समाजहित के कार्य करने मे सक्षम हो सकी है ।

महेन्द्र कुमार पाटनी
मत्री

राजस्थान जैन सभा, जयपुर

पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी के सदस्यगण वर्ष 1994

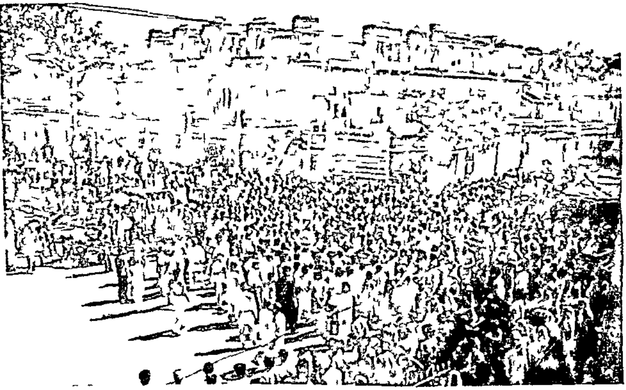


(बायें से दायें)

प्रथम पंक्ति (बैठे हुए) : सर्वश्री राजेन्द्र गोधा, भागचंद छावड़ा (सं. मंत्री), कैलाश चन्द साह (उपाध्यक्ष), रमेश चन्द गंगवाल, रतन लाल छावडा (अध्यक्ष), महेन्द्र कुमार पाटनी (मंत्री), सोहन लाल सेठी, प्रेमचंद छावड़ा (उपाध्यक्ष), शाति कुमार गोधा (सं. मंत्री)

द्वितीय पंक्ति (खड़े हुए) : सर्वश्री सुरेन्द्र मोहन, राजेन्द्र गोदीका, कैलाश सौगाणी, अमर चंद जैन, शकुन्तला गोधा, पुष्पा गोधा, बसंत कुमार वाकलीवाल, तारा चंद साह, विजय कुमार सौगाणी, कमल वाबू जैन

तृतीय पंक्ति (खड़े हुए) : सर्वश्री धन कुमार लुहाडिया, निर्मल कुमार गोधा, प्रेमचंद हैदरी, सुधीर वाकलीवाल, राकेश छावड़ा, अरूण कोड़ीवाल, अरूण काला, अरूण सोनी



महावीर जयन्ती 1993 के पूर्व दिन आयाजित प्रभात फेरी का दृश्य



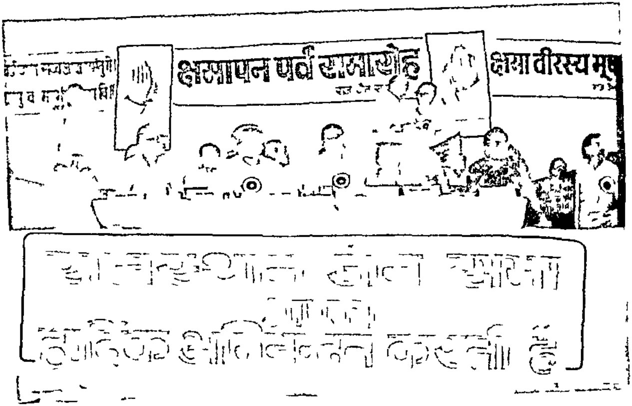
महावीर जयन्ती 1993 के अवसर पर रक्तदान शिविर का अवलोकन
करती हुयी श्रीमति शीला कौल



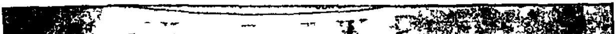
राजस्थान जैन सभा के अध्यक्ष श्री रतन लाल छावड़ा द्वारा एक माह का उपवास करने वाली महिला का अभिवादन करते हुए



क्षमापन पर्व (1993) पर मुख्य अतिथी श्री उम्मेदमल पाण्ड्या द्वारा दस दिन का उपवास करने वाली महिला को साहित्य भेंट करते हुए



रामलीला मेदान मे आयोजित सामुहिक क्षमापन समारोह का दृश्य



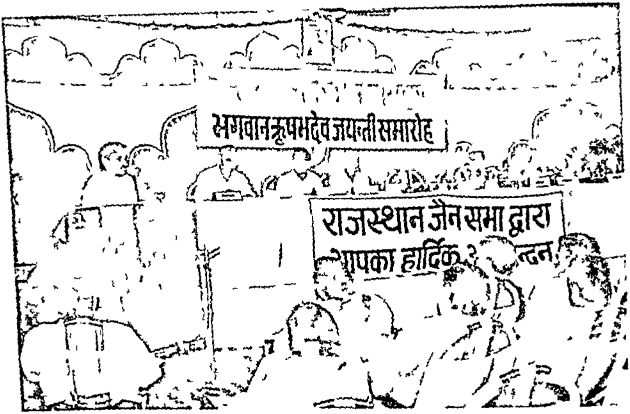
दशलक्षण पर्व समारोह के अन्तर्गत जा[illegible] बाजार दिगम्बर जैन महिला समिति की सदस्यें कार्यक्रम प्रस्तुत करती हुयी



ऋषभदेव जयन्ती समारोह 3 अप्रेल, 1994 को
आयोजित वड़े दिवान जी के मन्दिर में प्रश्न मंच के कार्यक्रम का दृश्य



ऋषभदेव जयन्ती 4 अप्रेल 1994 के उपलक्ष में वड़े दिवान जी के मन्दिर में
आयोजित सामुहिक कर्मदहन पूजन का दृश्य



पार्श्वनाथ भवन मे आयोजित ऋषभदेव जयन्ती (1994) पर समारोह के
अध्यक्ष श्री अशोक जैन, आई ए एस भाषण करते हुए



दिनाक 10 4 94 को सभा द्वारा आयोजित जैन विधायक सम्मान समारोह
के अवसर का एक दृश्य

प्रथम खण्ड

महावीर : जीवन, सिद्धान्त एवं व्यवहार

With Best Compliments From:

M/s PRABHA ENTERPRISES

M I ROAD
JAIPUR - 302 001

PHONE 67013

चतुर्विंशतितीर्थंकर स्तुतिः

☆ आचार्य श्री ज्ञानसागर

हिन्दी अनुवाद—पं. पन्नालाल साहित्याचार्य

नाभेयमानन्दगिराऽजितं च श्रीसम्भवं चाप्यभिनन्दनं च ।
सुमत्यभिख्यं जिनपं तथा तं स्तवीम्यहं सम्प्रति कालजातं ॥

मैं इस अवसर्पिणीकाल में उत्पन्न हुए श्री वृषभनाथ, अजितनाथ, श्री सम्भवनाथ, अभिनन्दन नाथ, और सुमति नाथ जिनेन्द्र की हर्ष युक्त वाणी से स्तुति करता हूँ ॥१॥

पद्मप्रभंचापि सुपार्श्वनाथं चन्द्रप्रभं पुष्प रदं किलाथ ।
श्री शीतलं नाम जिनं मदातं स्तवीम्यहं सम्प्रति कालजातम् ।

मैं पद्मप्रभ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त और हर्षयुक्त श्री शीतल नाथ जिनेन्द्र की स्तुति करता हूं ॥२॥

श्रेयान्समानन्दमयं च वासुपूज्यं लसन्तं विमलं तथाऽऽशु ।
अनन्त नामानमुपात्त सातं स्तवीम्यहं सम्प्रति कालजातम् ॥

मैं वर्तमान काल में समुत्पन्न श्रेयान्सनाथ, वासुपूज्य, शोभायमान विमलनाथ और सुखसम्पन्न अनन्तनाथ की स्तुति करता हूं ॥३॥

धर्मच शान्तिं खलु कुन्थुमञ्चन्नरं च मल्लिं मुनिसुव्रतं च ।
नमिं तथा नेमिमथोऽधुना तं स्तवीम्यहं सम्प्रति कालजातं ॥

मै वर्तमानकाल में उत्पन्न धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ को पूजता हुआ अरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ नमिनाथ और नेमिनाथ की स्तुति करता हूं ॥४॥

श्री पार्श्वनाथं स (स्व) मुदेकतानं
वीरं पुनस्तंभुवि वर्द्धमानम् ।
सिद्धेरधीशं जगदेकतानं
स्तवीम्यहं सम्प्रति कालजातम् ॥५॥

(स्वमुदेकतानं) आत्मीय आनन्द में निमग्न (श्री पार्श्वनाथं) श्री पार्श्वनाथ भगवान् को और उनके पश्चात् (वीरं) विशिष्ट लक्ष्मी को देने वाले (वर्द्धमानं) वर्धमान नामक चौवीसवें तीर्थंकर की अथवा (भुवि) पृथिवि पर (वर्द्धमानं) ज्ञान दर्शनादि गुणों से वृद्धि को प्राप्त होने वाले (वीर) नामधारी तीर्थंकर की स्तुति करता हूँ । इस तरह (अहं) में ज्ञान सागर (संप्रति काल जातं) वर्तमान अवसर्पिणी काल में उत्पन्न हुए चौवीस तीर्थंकरों की (स्तवीमि) स्तुति करता हूँ ॥५॥

□□

सिद्धार्थ-दुलारे

☆ रचि —देवेन्द्र कुमार पाठक 'अचल'

आदि अन्त जिनका कोई नर जान न पाया ।
जिनकी माया ने वरवस त्रिभुवन भरमाया ॥
त्रिशलानन्दन वन जिसने जग के शूल नसाये ।
समवशरण के भाव तन भव न वीच वरसाये ॥

जो हरता ही रहा आपदाये हर नर की ।
जिसने पदवी ली स्वाभाविक विश्वम्भर की ॥
सुनकर जिनका नाम छूट जाती कषाय गति ।
जिनके दर्शन से स्वमेव मिल जाती सन्मति ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश इन्द्र गुण गाते जिनका ।
करते मुनि आचार्य उपाध्याय चिन्तन जिनका ॥
सूर्यचन्द्र तारामण्डल मे यश है जिनका ।
वर्धमान कह सतत् ध्यान धरते हम उनका ॥

मनुपुत्रो ने कहा एक स्वर जय हो जय हो ।
जो नित अर्चा करे आपकी वही अभय हो ॥
सव पर हो अनुकूल सदा सिद्धार्थ दुलारे ।
वीर द्वार पर अचल रहे नत साझ सकारे ॥

ढाना, सागर म प्र

ऋषभ पौत्र मारीच कुमार से महावीर

☆ डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
अमलाई ४८४११७

आत्मा शुद्ध स्फटिक मणि के समान है। जैसे शुभ-अशुभ-शुद्ध भावों/कार्यों में वह तत्पर होता है तदनुरूप अवस्था ग्रहण कर लेता है। वह यदि अपने परमात्म रूप के श्रद्धान, ज्ञान और अनुष्ठान में प्रवृत्त होता है तो स्वर्ग की सीढ़ियां पार करता हुआ एक दिन अर्हन्त परमात्मा/ 'महावीर' वन जाता है। वह ही यदि अपने परमात्म स्वरूप को न पहचान अन्यथा ही त्याग-तप के शुभ मात्र के पथ का पथिक रहता है तो स्वर्ग की कुछ दूरी तक ही जाकर अटक जाता है, तथा जव वह हिंसा, परिग्रह आदि के अशुभ आर्त-रौद्र लोक में वर्तन करता है तो वह नरक का नारकी बनता है, एकेन्द्रिय वनस्पति आदि हीन दशाओं को भी प्राप्त होता है। महावीर की भवान्तर कथा को कहते हुए श्री बंसल जन्म-मरण की क्लेश पूर्ण चक्र की रचना और उस चक्र के भेदन के उपाय हमारे सम्मुख रख रहे हैं।

—सम्पादक

आदि व्रह्मा-प्रजापति, 'भगवान विष्णु एवं शिव के अवतार' तीर्थंकर ऋषभदेव की धर्मसभा लगी है। नर-पशु, देव-देवियां सभी भगवान का धर्म-उपदेश सुनने को उत्सुक हैं। उनकी अनक्षरी-दिव्य-ध्वनि झरी। सभी ने अपनी-अपनी भाषा में आत्म-धर्म का स्वरूप समझा। आत्म-स्वरूप के विकास-उत्कर्ष के प्रतीक भगवान ऋषभदेव आत्मस्थ हुये। उनके वड़े पुत्र चक्रवर्ती भरत ने पूछा, भगवन् मेरे कुल में आप जैसा क्या कोई और तीर्थंकर वनेगा? "उत्तर आया, हाँ। तुम्हारे पुत्र मारीच के जीव को यह सौभाग्य मिलेगा। वह महावीर के नाम से अंतिम तीर्थंकर होगा।" मारीच का जीव वहाँ उपस्थित था। भगवान की वाणी सुनकर वह कुमार्गी हो गया और "होने" के स्वभाव से च्युत होकर 'करने-के अहंकार' में भटक गया। जो था या होना था, उससे दूर हो गया। अच्छे-वुरे भावों/कर्मो के दौर में कभी-नरक, कभी स्वर्ग, कभी वनस्पति, कभी निगोद, कभी पशु-पक्षी तो कभी नर, नरराज, कभी भील, कभी चक्रवर्ती आदि की भ्रमर में फंस गया। ऋषभदेव से लेकर पार्श्वनाथ तक 23 तीर्थंकर हो गये किन्तु महावीर का जीव आत्मस्वभाव की शुद्धता/ परिपूर्णता प्राप्त नहीं कर सका।

चक्रवर्ती भरत का पुत्र मारीचकुमार पूर्व-भव में पुरुरवा भील था जो शिकार कर मांस खाता था। शुभ योग से दिगम्बर-मुनि सागरसेन ने उसे अहिंसा का महत्व समझाया। पुरुरवा भील ने भक्तिभाव सहित जीवनपर्यन्त शिकार न करने तथा माँस का त्याग किया। अहिंसा-व्रत के शुभ-भावों के कारण पुरुरवा भील मरकर प्रथम स्वर्ग में देव हुआ। स्वर्ग-सुख भोग कर वह भरत चक्रवर्ती का पुत्र मारीचकुमार हुआ। यह था अहिंसा-व्रत एवं माँस-त्याग का फल।

मारीच पहले अपने दादा ऋषभदेव के साथ दीक्षित हो गया था किन्तु आत्मबोध न होने के कारण चार हजार राजाओं सहित कुमार्ग का पोषण करने लगा। ऋषभदेव की भविष्यवाणी सुनकर भी मारीच ने अपना मिथ्या मार्ग नहीं वदला और आत्मधर्म से विमुख होकर

शुभ भावो का पोपण करने लगा । शुद्ध-स्वभाव के स्थान पर शुभ भावो को ही उसने धर्म माना और नये धर्म पथ का प्रचार किया। शुभ भावो के कारण वह पाँचवे ब्रह्म-स्वर्ग तक गया। वहाँ के सुख भोगकर वह पुष्प-मित्र ब्राह्मण हुआ । भ्रान्त धारणा के पूर्व सस्कार के कारण आत्मस्वरूप समझे विना उसने सन्यास ग्रहण किया और शुभ-भाव रूप ही तप किया। अगले जन्म मे वह दूसरे स्वर्ग का देव वना । फिर अभिसह नामक ब्राह्मण के रूप म उसने मिथ्यातप किया । प्रतिफल के रूप मे तीसरे स्वर्ग गया । फिर अग्निमित्र एव भारद्वाज नामक सन्यासी हुआ और शुभ भाव रूप कठोर तप किया, प्रतिफल मे दो वार चौथे स्वर्ग गया । वाद मे पाप-कर्म के उदय से महावीर के जीव ने अनेक वार एकेन्द्रिय निगोद मे अनेक जन्म धारण किये । एक वार मनुष्य भव मिला उसमे शुभ भावो को धर्म मानकर सन्यास धारण किया और उग्र तप से पाँचवे ब्रह्म स्वर्ग के सुख भोगे ।

पुण्योदय से महावीर के जीव ने राजगृही के राजा विश्वभूति के घर जन्म लिया । उसका नाम विश्वनदि रखा गया । विश्वनदि ने अपने आत्मस्वभाव को पहिचान कर जिनदीक्षा धारण की और पूर्ववद्ध कर्मो की निर्जरा हेतु कठोर तप किये । दुर्भाग्य से पूर्व कर्मों के उदय से उत्पन्न क्रोध के प्रवल वेग के कारण एक दुर्घटना मे उसने निदान किया कि उसके तप का फल अद्भुत शारीरिक शक्ति के रूप मे मिले । क्रोध में वह परम-आत्मिक सुख भूल गया । इस कारण शुद्ध-भावो की आस्था के साथ जुड़े शुभ-भावो के कारण वह दसवे स्वर्ग गया। स्वर्ग-सुख भोगकर महावीर का जीव भरतक्षेत्र मे त्रिपृष्ठकुमार नामक अर्द्ध-चक्रवर्ती हुआ और प्रथम वासुदेव कहलाया। इस भव मे महावीर के जीव ने तीव्र अशुभ भाव किये । आर्त-रौद्र ध्यानपूर्वक अनेक युद्ध किये और इन्द्रिय-शरीर-भोगो मे रमा रहा । इस कारण मरकर वह सातवे नरक गया । इस प्रकार तीव्र शुभ-अशुभ भावो के कारण महावीर के जीव ने स्वर्ग-नरक यात्रा की ।

सातवे नरक के तीव्र दु ख भोगकर महावीर का जीव सिह पर्याय मे आया और अति-हिंस्र-भावो के कारण पहले नरक गया । यहाँ से वह पुन वनराज सिह वना । पुण्योदय से उसकी पशु/वनराज से परमात्मा/जिनराज वनने की प्रक्रिया इसी सिह-भव से प्रारम्भ हुई जिसके फलस्वरूप महावीर का जीव धर्म-यात्रा मे उत्तरोत्तर वृद्धि/विकास करता हुआ आगामी 10 वे भव मे आत्मविजेता "महावीर" वना ।

वनराज सिह एक वार हिरण को मारकर माँस खा रहा था । उसी समय दो चारण ऋद्धिधारी आत्मज्ञानी परम तपस्वी मुनिराज आकाश मार्ग से भ्रमण कर रहे थे । वे वनराज को आत्मवोध कराने उसके सामने आये और वीतरागी शात भाव से सिंह को देखने लगे । सिंह शात भाव से मुनिराजो के नेत्रो के माध्यम से दिए गये धर्म-वोध सुनने/समझने लगा । उसे जाति स्मरण के साथ विश्वास हुआ कि आत्मा ज्ञान-आनन्द स्वभावी है ।"अप्पा सो परमप्पा" के मुनिराज की परम कल्याणकारी उपदेश को अनुभूत कर सिह का जीव द्रवित हो गया । उसे आत्म-वोध हुआ और उसकी तीव्र कपाय की चौकड़ी तड़-तड़कर टूट गयी । एक ही पल मे उसके जीवन का रूपातरण अधर्म से धर्मरूप हो गया और वह वनराज से जिनराज के पथ का पथिक वन गया । उसकी क्रूर प्रवृत्तियाँ शात हुई एव आतरिक कपाय मद हुई । शात परिणामो से मरकर शुभ भावो के कारण वह प्रथम स्वर्ग मे देव उत्पन्न हुआ । महावीर के जीव के अव मात्र आठ भव शेप थे और नोवे भव मे उसे शुद्ध आत्मस्वभाव को प्राप्त कर परमात्मा वनना था ।

प्रथम स्वर्ग से महावीर का जीव विदेह क्षेत्र में कनकध्वज नामक राजा हुआ और इसने आत्म-ज्ञानसहित जिनेश्वरी दीक्षा-ग्रहण की। शुद्ध भाव की आस्था सहित शुभ भावों के कारण वह आठवें कापिष्ठ स्वर्ग में देव हुआ। स्वर्ग से वह उज्जैन का राजा हरिषेण बना और जिनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर उसने घोर तपश्चरण किया। उत्तरोत्तर शुद्ध-शुभ भावों के कारण वह महाशुक्र नामक 10वें स्वर्ग का देव हुआ। स्वर्ग से वह विदेह क्षेत्र में प्रियमित्र नामक चक्रवर्ती बना और भगवान क्षेमंकर के समक्ष जिनदीक्षा ग्रहण की। आत्म-साधना के कारण उसके भाव निर्मल/पवित्र/शुद्ध होते जा रहे थे और कर्म-कालिमा नष्ट होती जा रही थी। फलस्वरूप वह 12वें स्वर्ग सहस्त्रार का देव हुआ। देव-सुख भोगकर वह भरत क्षेत्र में राजा नन्दिवर्द्धन हुआ। उसने पुनः प्रौष्ठिल श्रुत-केवली से जिनदीक्षा ग्रहण कर कर्म-वंध काटे। यहां से महावीर का जीव अच्युत नामक सोलवहें स्वर्ग में देव हुआ। देवत्व की प्राप्ति शुभ-भावों का प्रतिफल है। स्वर्ग के इन्द्रिय-भोग आत्मीय सुख नहीं दे पाते। वे पराश्रित एवं काल से वाधित होने से हेय/त्याज्य हैं। महावीर के जीव को अव अंतिम मनुष्य भव धारण करना शेष था जिससे कि वह पूर्व-वद्ध शेष कर्म नष्ट कर सके।

अच्युत स्वर्ग से आयु पूर्ण कर महावीर के जीव ने कुण्डलपुर के महाराजा सिद्धार्थ के राजमहल में त्रिशला की कोख से जन्म लिया। महावीर ने आठ वर्ष की आयु में ही आत्मानुभव कर व्रत धारण किये। तीस वर्ष की आयु में राजपाट त्यागकर उन्होंने जिनेश्वरी दीक्षा धारण की। वारह वर्ष तक आत्मसाधना कर घातियाँ कर्मो को नष्टकर अनंत ज्ञान-आनंद स्वरूप आत्मस्वभाव को प्राप्त किया और आत्मा के ज्ञान-स्वभाव में जम-रम गये। महावीर ने तीस वर्ष तक आत्मधर्म रूप आत्मविज्ञान का उपदेश देकर जगत के जीवों को स्वभाव रूप होने का मार्ग वताया और 72 वर्ष की आयु पूर्ण कर स्थायी रूप से सिद्धालय में जा विराजे।

महावीर ने कहा कि आत्म-श्रद्धान, आत्म-ज्ञान और आत्म-रमण ही मोक्ष-मार्ग है। प्रत्येक आत्मा स्वयंभू है और अपने-द्वारा अपने से अपना स्वभाव प्राप्त करने में सक्षम-स्वतंत्र है। जो जीव शिव-स्वरूप शाश्वत-सुख चाहते हैं उन्हें पराश्रय छोड़ स्वाश्रयी होना चाहिए। स्वाश्रय ही स्वतंत्रता का मार्ग है। पराश्रय-दुःखस्वरूप है। शुभ-अशुभ भाव पराश्रित भाव है। शुद्ध-ज्ञानस्वभाव-भाव स्वाश्रित हैं। जो अपने को जानकर अपने स्वभाव से स्थित हो जाता है वह सब को सर्वकाल के लिये जान लेता है। अपने ज्ञान स्वभाव में स्थिर रहना ही शिवत्व एवं आनन्द की प्राप्ति है, यही स्वभाव रूप धर्म है।

महावीर के काल में अनेक दार्शनिकों ने आत्मा के एक-एक गुण को लेकर उसकी एकांगी व्याख्या की। वुद्ध ने आत्मा को क्षणिक वताया। नास्तिकों ने आत्मा के अस्तित्व को ही अमान्य किया। नैयायिकों ने आत्मा एवं उसके ज्ञान-गुण में गुण-गुणी का भेद डाला और कहा कि ज्ञान अपने स्वयं को नहीं जानता। मीमांसकों ने आत्मा के सर्वज्ञपने का अभाव माना। महावीर ने कहा कि वस्तु का स्वरूप विराट है, उसे एकांगी दृष्टि से नहीं जाना जा सकता। इसके लिए अनेकांतिक दृष्टि की आवश्यकता है क्योंकि वस्तु अनेक गुण-धर्मो का पुंज है। उन्होंने कहा कि आत्मा स्वभाव से अमर, पर्याय से क्षणिक, स्वयं-को स्वयं-से जानने वाला साथ ही सर्वदर्शी-सर्वज्ञायक है। इस दृष्टि से महावीर ने विराट वस्तुस्वरूप के वोध का मार्ग प्रशस्त किया।

☐ ☐

महावीर साधना के शिखर पुरुष थे

☆ विद्यावारिधि डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया,
डी लिट्

प्रस्तुत लेख मे मानव के सामाजिक एव सास्कृतिक प्रदूषण के निराकरण में महावीर द्वारा प्रतिपादित कुछ व्यवहारिक सूत्रों की चर्चा हुई है । जैन धर्म कृत नहीं, प्राकृत है । उसका श्रोत वस्तु के स्वभाव में निहित है । जीवन मे, जगत में जब भी कभी किसी भी स्तर पर प्रदूषण/विकार उत्पन्न होता है तो तीर्थंकरो द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सयम, समता आदि सिद्धान्त जीवन को स्वभाव की मुक्त मजुलता मे पुन प्रतिष्ठा की राह बताते हैं ।

—सम्पादक

धर्म वाणी की नही व्यवहार की नैतिक निधि है । इसके द्वारा श्रद्धान और चरित्र मे विकास होता है । देव, शास्त्र और गुरु प्राचीन भारतीय सस्कृति और धर्म के प्रमुख अग हैं। इनके शुद्ध और सही स्वरूप पर आस्था रखने वाला प्राणी धार्मिक होता है । जैन धर्म है, अर्वाचीन कोई धार्मिक व्यवस्था नही । दरअसल वह कृत नही, प्राकृत है । इसका स्रोत वस्तु के स्वभाव मे निहित है । वैचारिक प्रदूषण से जब कभी धार्मिक धारा मद या मथर होती है तब साधना के शिखर पुरुष उसे उबारते और सुधारते हैं । जैन सस्कृति मे ऐसे प्रज्ञापुरूषो को तीर्थकर कहा गया है । वे जैन धर्म के कभी सस्थापक अथवा सचालक नही रहे । जेन धर्म को किसी व्यक्ति/शक्ति की कृति मानना वस्तुत मिथ्या मान्यता है ।

वह किनारा तट अथवा घाट जहाँ से भव-सागर पार किया जाता है, कहलाता है—तीर्थ, जिसके निर्मापक होते हें तीर्थंकर । तीर्थकरी परम्परा अत्यन्त प्राचीन है । भरत क्षेत्र में कृत युग से लेकर आज तक चौबीस तीर्थंकरो के होने का उल्लेख प्राप्त है । आदि तीर्थंकर ऋषभदव प्राचीन वेद-वाणियो ओर आगमी वाङ्मय मे विविध सदर्भो मे उल्लिखित है । अन्तिम अथवा चौबीसवे तीर्थकर महावीर ने तत्कालीन समुदाय और समाज मे धार्मिक रूढ़ियो और अधविश्वासो का उन्मूलन किया था । उन्होंने दिया था मूर्च्छा मुक्त जीवन जीने का निदेश । उपासना नही, साधना व्यक्ति के विकास का मूलाधार है । महावीर भगवत ने कहा कि सही और सफल जीवन श्रमपूर्वक जिया जा सकता है । सम्यक् श्रम से व्यक्ति मे स्वावलम्बन के सस्कार उत्पन्न होते हैं । व्यक्ति अपने कर्मो का स्वय कर्त्ता होता है और होता है वह अपने कार्यफल का भोक्ता भी । इसीलिए प्रत्येक कर्म करने से पूर्व कर्त्ता का जाग्रत होना आवश्यक है ताकि उसके चरण अनर्थ से मुक्त होकर सार्थ उठे । जीवन मे उठे सुधी चरण सदा सदाचरण की स्थापना करते हें । सदाचरण अतत जीवन मे मगलाचरण का प्रवर्तन करते हैं।

इन्द्र शब्द का एक अर्थ है—आत्मा । आत्मा की परिचायक होती है—इन्द्रियाँ । इन्द्रियाँ जब चेतना को प्रभावित कर सक्रिय होती हें तब वासना अर्थात् भोग प्रारम्भ होता है।

इसका अर्थ है कि आँख कहे यह देखना है, कान कहे यह सुनना है और चेतना वैसा करने में सहयोग करे तो उत्पन्न होता है भोग और जब चेतना के अधीन होकर इन्द्रियाँ कार्यशील हों तब सम्पन्न होता है योग। भोग का परिणाम वासना है जब कि योग का परिणाम होता है साधना। साधक सिद्धि को प्राप्त करता है।

तीर्थकर महावीर कालीन समुदाय और समाज मे धर्म और धार्मिक का क्षेत्र बड़ा संकुचित था। इसमें वैयक्तिक अर्थ और स्वार्थ मुखर हो उठे थे; फलस्वरूप इस क्षेत्र में अनेक धार्मिक रूपों ने स्वरूप धारण कर लिए थे। धार्मिक होने के लिए सुविधा प्राप्त व्यक्तियों के लिए प्रवेश सदा खुला रहता था, किन्तु सामान्य व्यक्ति भगवान की उपासना और आराधना करने के लिए भी धार्मिक महन्तों के अधीन थे। महावीर ने इस धार्मिक प्रदूषण के परिष्कार हेतु क्रान्तिकारी उद्घोष किया कि धर्म के लिए प्रत्येक प्राणी पात्रता रखता है। जो आत्मिक गुणों को धारे अर्थात् धारण करे वही है वस्तुतः धार्मिक। प्रत्येक प्राणी में अनन्त चतुष्टय विद्यमान हैं। सुप्त आत्मिक गुणों को सम्यक् साधना के द्वारा जगाया जा सकता है। आत्मा का प्रधान लक्षण है ऊर्ध्वोन्मुखी होना। प्रत्येक प्राणी का उदय सम्भव है। व्यक्ति-उदय अथवा वर्गोदय ही नहीं, उन्होंने सर्वोदय की बात कही। इस प्रकार सामाजिक उपेक्षित वस्तुतः अपेक्षित हो उठा। अन्त्योदय की अलख जगाई प्रज्ञापुरुष महावीर ने।

इसी सन्दर्भ में नारी-उद्धार का प्रकरण भी उजागर हुआ। नारी मात्र भोग की नहीं अपितु वह सत्कर्म में सहयोग की सुपात्रा है। एतदर्थ समुदाय और समाज में नारी समादृत होनी चाहिए। विचार करें एक ओर जहाँ वह प्रजनन की प्रयोग शाला है वहीं दूसरी ओर वह प्राणी-पोषण और उन्नयन की आधार शिला भी है। वह ज्ञान की प्राथमिक पाठशाला भी है। नारी शील और सदाचार की अधिष्ठात्री है। शील खील न होने पावे यह दायित्व पुरुषों का है। फलस्वरूप समाज में 'चन्दन बाला' जैसी सभी नारियाँ निहाल हो उठीं।

साधना के शिखर पुरुष भगवान महावीर ने पद-यात्रा की भूमिका का सफल निर्वाह किया। वे चले तो समाज में सदाचार का संचालन हो उठा। ईर्या समिति जीवन के भीतर और बाहर चरितार्थ हो उठी। चार हाथ आगे देखभाल कर चलने की प्रेरणा प्राप्त हुई ताकि निरीह जीवों की विराधना से बचना हो सके। चलने की कला का प्रवर्तन हुआ। आज समाज में संचार व्यवस्था सदोष है; अस्तु, ईर्या समिति की प्रासंगिकता स्वयमेव प्रमाणित है।

इसी प्रकार वाणी-व्यवहार का प्रश्न है। वाणी का वरदान व्यक्ति को प्राप्त है तथापि उसका दुरूपयोग तो नहीं होना चाहिए। हित, मित, ऋत पूर्वक वाणी का विनिमय जीवन और जगत में उल्लास को जन्म देता है। वाणी की साधना का सहयोगी है—मौन। मौन में 'नमो' का अभिप्रेत अन्तर्निहित है। इससे जीवन में विनय के संस्कार उत्पन्न होते हैं। विनय, विद्या के वातायन खोलती है।

शरीर की महत्ता उसमें प्रतिष्ठित सत्ता से पुरस्कृत है। उसके पोषण की एतदर्थ आवश्यकता है। आहार से संहनन-शक्ति का पोषण होता है। एषणा अर्थात् आहार चौका की संस्कृति से अनुप्राणित होना चाहिए। चौका से तात्पर्य केवल लकीर से घिरी भूमि मात्र नहीं है। चार प्रकार की शुद्धियों का समीकरण वस्तुतः चौका के रूप को स्वरूप प्रदान करता है। यथा

1 क्षेत्र शुद्धि 2. द्रव्य शुद्धि 3. काल शुद्धि 4 भाव शुद्धि

स्वच्छ भूमि जहाँ सूर्य प्रकाश निर्बाध फैल सके, क्षेत्र शुद्धि कहलाती है । द्रव्य शुद्धि व्यापक अर्थवाची है । मन से, वचन से, और उपार्जित शुद्ध शाकाहार द्रव्य शुद्धि का सामान्य अर्थ है। न्याय-नीति पूर्वक उपार्जित, शुद्ध शाकाहार वस्तुत द्रव्य शुद्धि है । जहाँ तक काल शुद्धि का प्रश्न है उसमे हम स्वय को सर्वथा भूल चुके हैं । सूर्य प्रकाश मे अर्थात् दिन मे भोजन पकाना और खाना-खिलाना चौका की सस्कृति मे मान्य है ।

मनुष्य प्रकृति से शाकाहारी है और है दिवाभोजी । हमारे जीवन की पूर्णता और सार्थकता ध्यान चर्या पर निर्भर करती है । रात्रि मे उदर की सारी ऊर्जा मस्तिष्क मे प्रवेश कर लेती है । यदि रात्रि मे भोजन करते हैं तो ऊर्जा उदर में आ जाती हैं, फिर ध्यान के लिए अवकाश नही रहता । परम साधक महावीर एतदर्थ रात्रि भोजन का पूर्णत निषेध करते हैं ।

सर्वोपरि है भाव शुद्धि । भोजन करते-कराते समय भावो की शुद्धि अपना महत्त्व पूर्ण स्थान रखती है । श्रावकाचार मे मत्रोच्चार के उपरान्त भोजन करने का विधान है ताकि चित मे कदाचित किसी प्रकार का द्वन्द्व-द्वेष है तो वह शान्त अथवा समाप्त हो जाता है । यही प्रयोग भोजन कराने वाली अन्नदा के लिए भी आवश्यक है । चित्त मे बोझ होने पर भोजन कराने से ओज के उदय की सम्भावना प्राय समाप्त हो जाती है ।

तीर्थंकर महावीर ने पदार्थ-बोध पर बल दिया । आवश्यक वस्तु-सग्रह करने-कराने मे दोष नही है, पर उनके प्रयोग, उपयोग करने मे सावधानी रखना जरूरी है । पदार्थ के प्रति ममत्व जागना कभी निर्दोष नही कहा जा सकता । इसी से अपरिग्रह का आलोक जाग्रत होता है ।

प्रत्येक प्राणी की पर्याय मे भिन्नता उसके कर्मानुसार होती है, किन्तु तात्त्विक दृष्टि से उसके प्राण तत्त्व मे सर्वथा अभिन्नता है । इस मान्यता से प्रत्येक प्राणी के प्रति समभाव उत्पन्न होना स्वाभाविक है । जब सभी प्राणियो मे समान गुणो की विद्यमानता है, तब उनके प्रति द्रोह के लिए कोई सम्भावना उत्पन्न नही होती । सभी के प्रति मैत्री भाव उत्पन्न होना स्वाभाविक है । ऐसी दशा मे अहिंसा मुखर होती है । समता की सस्कृति ममता की महिमा को निस्तेज कर देती है ।

इस प्रकार महावीर ने सामाजिक, सास्कृतिक तथा वैचारिक प्रदूषण समाप्ति के लिए जो क्रान्तिकारी कदम उठाए थे, उनकी आज भी प्रासगिकता है । वे वास्तव मे उपासना के नही, साधना के शिखर पुरुष थे । उनके सच्चे अनुयायी सदा श्रमी, स्वावलम्बी और उपयोग धर्मी होते हैं । वे स्वय जीते हैं और दूसरो को जीने की प्रेरणा देते हैं । सुखी और समृद्ध जीवन के लिए हम भगवत महावीर के निर्देशानुसार जाग्रत तथा मूर्च्छामुक्त जीवन जीने की आवश्यकता है ।

मगल कलश
394 सर्वोदय नगर
आगारोड़, अलीगढ़-202001

□ □

महावीर का अनेकान्त-स्याद्वाद सिद्धान्त

विचार में अनेकान्त, वाणी में स्याद्वाद एवं आचरण में अहिंसा की बात प्रायः पढ़ने, सुनने में आती है। विचार एवं वाणी की भाँति लेखक ने आचरण को भी अनेकान्त-स्याद्वाद की लक्ष्मण रेखा में समेट दिया है। यथा-शक्ति, देश कालानुसार, अपनी भूमिकानुसार की बात जैनाचार्यो ने श्रावक और मुनि के व्यवहार चरित्र के निरूपण में की भी है। इसी प्रकार अर्हन्त-सिद्ध परमात्मा के समान प्रत्येक आत्मा को अनन्त ज्ञानादि चतुष्टय धारी स्वीकार करने, अनुभव करने की जैनाचार्य हमें प्रेरणा देते हैं। अनेकान्त-स्याद्वाद का प्रयोग हमें जीवन के हर मोड़ पर, हर अन्तर्मुहूर्त में जितना हम इस अनन्त चतुष्टय सम्पत्ति को अनुभूति का विषय वना सके उतना ही वना, कर्म क्लेष से अधिकाधिक मुक्त होने की प्रेरणा करेगा।

—सम्पादक

प्रत्येक वस्तु जड़ या चेतन अनन्त शक्तियों व धर्मो का एक अखण्ड पुंज है। इन शक्तियों व धर्मो में अनेक परस्पर विरोधी एवं अनेक परस्पर सहयोगी होते हैं। ऐसी परिस्थिति में किसी भी वस्तु के लिये कोई एक ही वात निश्चित रूप से कह देना उस वस्तु के साथ अन्याय नहीं तो क्या होगा। एक वस्तु उसके द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा से कभी लाभप्रद होती है दूसरे काल या भाव या क्षेत्र की अपेक्षा वही हानिकारक हो जाती है। यह हमारे जीवन में हम हर समय प्रत्यक्ष देखते हैं। वस्तु का यह जटिल स्वरूप हरेक व्यक्ति को प्रत्यक्ष हो जावे यह आवश्यक एवं संभव नहीं है। हरेक दृष्टा वस्तु को अपने दृष्टिकोण से देखता है। इस दृष्टि भेद से उसको वस्तु एक प्रकार से दिखेगी तो उसका कथन भी तदनुरूप होगा। ऐसा लगता है कि विभिन्न विद्वानों के विभिन्न दृष्टिकोणों के कारण ही विभिन्न दर्शनों (मतों) का जन्म हुआ है, जैसे चार्वाक, सांख्य, नैयायिक, वैदिक आदि आदि।

यदि हम विशाल एवं निष्पक्ष दृष्टि से देखेगें तो सभी दर्शनों में किसी न किसी रूप से सत्यता नजर आवेगी। ऐसा न सोचकर इन प्रत्येक में हमें वड़ी भारी कमी प्रतीत होती है। वस्तुतः इस प्रतीति का कारण हमारे ज्ञान का अहंकार है जिसे हम असहिष्णुता कह सकते हैं। इसी के कारण एक दर्शन दूसरे दर्शन का सम्मान करने के वजाय उसका निराकरण करने में ही अपनी महत्ता समझता है। इतिहास साक्षी है कि इस संकीर्णता के कारण ही कितने कितने भयानक काण्ड हुये हैं। इसी कमी को जैनाचार्य एकान्त के नाम से वर्णन करते हैं। यह सत्य है कि एकान्त भी वस्तु का एक धर्म है जिसको किसी एक मानव ने देखा है। जिनकी दृष्टि व्यापक हुई एवं ज्ञान का पूर्ण विकास हुआ ऐसे महावीर आदि तीर्थंकरो, केवल ज्ञानियों ने एक ही काल में वस्तु की विरोधी धर्मो की सत्ता को भी देखा है। उन वीतरागी पूर्ण ज्ञानियों ने मानव को अनेकान्त का सिद्धान्त दिया है।

वस्तु के अनेक धर्मात्मक जटिल स्वरूप का प्रतिपादन एक ही प्रकार से अशक्य होने के कारण कथन पद्धति मे भी विचित्रता आना स्वभाविक है । एक ही साथ अनेक विरोधी धर्मों की सत्ता सरलता से कही नही जा सकती है और न ही सरलता से समझी ही जा सकती है । इसका कथन करने एव समझने के लिये बड़े धैर्य एव व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है । इसी कथन पद्धति का नाम स्याद्वाद, नयवाद या अपेक्षावाद है ।

असत्य कहकर किसी भी दृष्टि का उपहास करना या त्याग देना बहुत सरल है, पर बुद्धि पर जोर देकर उसकी कथचित सत्यता खोज निकालना कठिन है । जो विद्वान विभिन्न विषयो का एकान्तपक्ष पकड़ कर दूसरे के दृष्टिकोण का सम्मान करना न सीखे और उनका खडन करने मे ही अपनी बुद्धि की सार्थकता समझे तो यह कहना होगा कि या तो वे स्याद्वाद के इस महान सिद्धान्त को नही समझ पाये या उन्हे इस पर विश्वास नही है । इस सिद्धान्त के प्रयोग क्षेत्र मे साम्प्रदायिक झगड़ो व शास्त्रार्थों की आवश्यकता ही नही है । स्याद्वाद एकान्त हठ का निराकरण करता है ।

चारित्र या आचार शास्त्र भी स्याद्वाद सिद्धान्त का महान ऋणी है । आचार शास्त्र प्रयोगात्मक है जिसकी सफलता सहसा प्राप्त नही हो सकती है । वह निम्न दशा से क्रम पूर्वक उत्थान पथ पर अग्रसर होते हुये उच्चतम दशा को प्राप्त कराता है । चारित्र पथ की निम्न भूमिका मे ही उच्च भूमिका की बात करना एकान्त है । जैन आचरण मे मुख्य दो भूमिकाए है—श्रावक एव साधु ।

गृहस्थ दशा मे पूर्व सस्कारो की प्रबलता के कारण पर पदार्थों के आश्रय की प्रधानता रहती है । इसी कारण उसका आचार देवशास्त्र गुरू पूजा, दया, दान, सयम, आदि रूप से व्यवहार प्रधान होता है । व्यवहार सदा निश्चय सापेक्ष होता है । विकल्प व कषाय के मेटने के अर्थ इस पराश्रय से सदा अतरग की ओर झुकने का ही प्रयत्न करना गृहस्थ का कर्तव्य ह। गृहस्थ अवस्था मे व्यवहार प्रधान एव निश्चय गोण रहता है । साधु की भूमिका मे सस्कारो के क्षीण होने के कारण उनके गृहस्थ जैसे आश्रयो की प्रधानता नही रहती । वह स्वतन्त्रता से अतरग मे स्थित रहने मे समर्थ हो जाता है । अप्रमत्त दशा मे व्यवहार प्राय लुप्त हो जाता है और एक मात्र निश्चय ही रह जाता है । गृहस्थ श्रावक के लिये श्रावकाचारों मे जिस प्रकार अनेक व्रतो आदि का बन्धन बताया गया है साधुओं के लिये इस प्रकार का निर्देश ग्रन्थो मे नही पाया जाता है । साधु के लिये भोजनादिक के सम्बन्ध मे अनुद्दिष्टत्व तथा यथालब्धता ही बताये गये हैं । साधु के लिये प्रधान समता है ।

अनेकान्त एव स्याद्वाद के इन महान सिद्धान्तो के आश्रय से ही हम स्वय का कल्याण कर सकते ह एव अन्य के कल्याण मे सहयोगी बन सकते ह ।

सेठी भवन,
सरावगी मोहल्ला, अजमेर

□□

नमन हमारा महावीर को वन्दन सौ-सौ बार है

☆ *रचयिता—अनूपचन्द न्यायतीर्थ, जयपुर*

(1)

वैशाली गणतंत्र राज्य का कुण्डलपुर इक धाम है ।
महावीर ने जन्म लिया है जिसका सारे नाम है ।।
सिद्धारथ नृप त्रिशला रानी मात-पिता परिवार है ।।नमन।।

(2)

तीन लोक में आनंद छाया, हर्षित प्राणी मात्र है ।
देवों के सिंहासन डोले सभी प्रफुल्लित गात्र हैं ।।
वातावरण खुशी का अद्भुत घर-घर मंगलाचार है ।।नमन।।

(3)

पाण्डु शिला अभिषेक जन्म का क्षीरोदधि के नीर का ।
करके, पहिना वस्त्राभूपण रूप निहारा वीर का ।।
नहीं अघाया इन्द्र देखकर लोचन किये हजार हैं ।।नमन।।

(4)

आजीवन व्रत ब्रह्मचर्य ले, राजपाटको छोड़के ।
तीस वर्ष के वीर युवक ने सव से नाता तोड़ के ।।
नग्न दिगम्वर दीक्षा लेली, जो जीवन का सार है ।।नमन।।

(5)

द्वादश वर्प तक सहे परीपह आत्म साधना लीन हो ।
कभी याचना नहीं किसी से की, सन्मति ने दीन हो ।।
दिव्य ज्ञान भी प्रकट हो गया महिमा अपरंपार है ।।नमन।।

(6)

समवसरण की सभा लग गयी, नहीं कहीं भी भेद है ।
देव मनुज तिर्यंच सभी हैं नहीं किसी को खेद है ।।
वाणी को गौतम ने झेली किया बड़ा उपकार है ।।नमन।।

(7)

जीओ और जीने दो सब को सर्वसुखी ससार हो ।
सत्य अहिसा मय जीवन हो मानव का उद्धार हो ॥
सदा विश्व बधुत्व भावना जागे धर्म प्रचार हो ॥नमन॥

(8)

उग्रवाद आतकवाद और जातिवाद का जोर है ।
चोरी जारी लूट-पाट का गली गली मे शोर है ॥
सर्व जाति समन्वय रखो तो हो वेडा पार है ॥नमन॥

(9)

भौतिकता की चकाचोंध मे वचो भयकर पाप है ।
परिग्रह की ममता को त्यागो लोभ पाप का वाप है ॥
जो कुछ मिले बाट कर खाओ तो सुखमय ससार है ॥नमन॥

(10)

स्याद्वाद औ अनेकान्त के यदि महत्व को जान लो ।
मिट जावे मतभेद आपसी अपने को पहिचान लो ॥
महावीर सदेश राष्ट्र का सचमुच तारन हार है ॥
नमन हमारा महावीर को वन्दन सौ सौ वार है ॥

□ □

हे देव ! असीम ससार की महिमा मे विवश हो अनन्त वार पाच प्रकार के परावर्तनो को प्राप्त होता हुआ मै आत्मगृह मे विश्राम करने वाले आपके चेतन्य रूप आचल मे बल पूर्वक लगता हूँ[7/1] कषाय समूह की रगड़ से शेष बची हुई ज्ञान की एकक ला द्वारा उद्यत मेरा आपके वैभव के प्रकाशन मे कितना, कितना सा प्रकाश है ? अधजली लकड़ी का प्रकाश कभी भी दिवस का करने वाला नही होता ।[7/2] हे ईश ! अतिवत्सल आप सकल विश्व को छोड़कर बलपूर्वक मेरे पर (अमृत) वर्षा कर रहे ह, परन्तु अज्ञान से दुर्वल मेरे समान प्राणी अत्यन्त प्यासा होने पर भी कितना पीने मे समर्थ हो सकता है ?[7/3]

—आ अमृत चन्द्र कृत लघुतत्व स्फोट

सम्यग्ज्ञान

☆ उपा. मुनिभरतसागर

जैनाचार्य अनेकांतवादी हैं। वस्तु के एक रूप को पूरी वस्तु मान लेने को वे एकांत मिथ्यात्व कहते हैं। वस्तु अनेक पक्षों के समुदाय का नाम है। ज्ञान के नाना रूपो/पक्षों को लेकर आचार्यो ने विविध कथन किये हैं। उनमें किसी एक कथन को पढ़ कर उतना मात्र ही ज्ञान का कार्य मान लेने पर वह अवयवहीन, पंगुज्ञान कैसे अर्थक्रिया में समर्थ हो सकता है, उससे कर्म निर्जरा होकर कैसे आत्मतेज की अभिव्यक्ति हो सकती है ? ज्ञान को 'स्व पर भेद विज्ञान' तक ही सीमित कर तथा उसको रट कर हम प्रायः ज्ञान की सम्पूर्ण आराधना करना मान लेते हैं। यदि अन्य पक्षों को हम जानने का प्रयत्न नहीं करते, उनके प्रति अनुत्सुक रहते हैं, विमुख बने रहते हैं तो हमारी ज्ञानाराधना विशेष फलदायी न हो पाये इसमें आश्चर्य ही क्या है।

—सम्पादक

'जानाति ज्ञायतेऽनेन ज्ञातिमात्रं वा ज्ञानम्'- जो जानता है वह ज्ञान है (कर्तृसाधन), जिसके द्वारा जाना जाय सो ज्ञान है (करण साधन); जानना मात्र ज्ञान है (भाव साधनं) (स. सि. 1-1-6-1)

रा. वा. 1-1-5-5-1 एवंभूतनयवक्तव्यवशाज् ज्ञानदर्शनपर्यायपरिणतात्मैव ज्ञानं दर्शनं च तत्स्वभाव्यात् — एवंभूतनय की दृष्टि में ज्ञानक्रिया में परिणत आत्मा ही ज्ञान है, क्योकि, वह ज्ञानस्वभावी है

अथवा—वस्तु स्वरूप का निश्चय करने वाले धर्म को ज्ञान कहते हैं। शुद्धनय की विवक्षा में वस्तुस्वरूप का उपलम्भ करने वाले धर्म को ही ज्ञान कहा है।

ज्ञान के भेद—ज्ञान सम्यग्ज्ञान व मिथ्याज्ञान के भेद से दो प्रकार का है। मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय और केवल तथा कुमति, कुश्रुत, कुअवधि के भेद से ज्ञान आठप्रकार का है।

शंका—ज्ञान में मिथ्यापना या सम्यक्पना कैसे होता है ?

समाधान—वस्तुतः ज्ञान मिथ्या या सम्यक् रूप नहीं है, असलियत यह है कि ज्ञान की स्थिति "गंगा गये गंगादास, जमुना गये जमुनादास" जैसी है अर्थात् मिथ्यात्व के साथ जो ज्ञान है वह मिथ्याज्ञान है और सम्यग्दर्शन सहित जो ज्ञान है वह सम्यग्ज्ञान है।

ज्ञान के उपर्युक्त आठ भेदों में से मनः पर्यय और केवलज्ञान तो सम्यक् ही होते हैं। शेष मति, श्रुत अवधिज्ञान सम्यक् व मिथ्या दोनों प्रकार के होते हैं। मति-श्रुत अवधिज्ञान के

विपर्ययरूप होने मे आचार्यो ने एक दृष्टान्त दिया है—"जैसे कड़वी तूवड़ी मे रखा गया दूध कड़वा हो जाता है, उसी प्रकार मिथ्यादर्शन के निमित्त से मति, श्रुत, अवधिज्ञान मे विपर्यय होता है ।

सम्यग्ज्ञान का लक्षण (विभिन्न रूपो में)

१ तत्वार्थ के यथार्थ अधिगम की अपेक्षा—

"येन येन प्रकारेण जीवादय पदार्था व्यवस्थितास्तेन तेनावगम सम्यग्ज्ञानम्" । जिस जिस प्रकार से जीवादि पदार्थ अवस्थित हैं उस उस प्रकार से उनका जानना सम्यग्ज्ञान है । (स सि 1 1-5 6)

"नयप्रमाणविकल्पपूर्वको जीवाद्यर्थयाथात्म्यावगम सम्यग्ज्ञानम्" नय व प्रमाण के विकल्प पूर्वक जीवादि पदार्थो का यथार्थ ज्ञान सम्यग्ज्ञान है ।

2 सशयादि रहित ज्ञान की अपेक्षा—

अन्यूनमनतिरिक्त यथातथ्य विना च विपरीतात्
नि सन्देह वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिन ॥42॥ र श्रा

जो ज्ञान वस्तु के स्वरूप को न्यूनतारहित या अधिकतारहित, विपरीततारहित, जैसा का तैसा सन्देह रहित जानता है, उसको आगम के ज्ञाता पुरुष सम्यग्ज्ञान कहते हैं ।

विमोहसशयविपर्ययनिवृत्यर्थ सम्यग्विशेषणम्—ज्ञान के पहले सम्यक् विशेषण विमोह (अनध्यवसाय) सशय और विपर्यय ज्ञानो का निराकरण करने के लिये दिया गया है । (रा वा 1-1 2-4 7)

आत्मस्वरूप और अन्य पदार्थ के स्वरूप का जो सशय विमोह और विभ्रम (विपर्यय) रूप कुज्ञान से रहित जानना है वह सम्यग्ज्ञान है । (स सा /ता वृ /155)

भेद ज्ञान की अपेक्षा—जो योगी मुनि जीव अजीव पदार्थो का भेद जिनवर के मतकरि जाणै है । सो सम्यग्ज्ञान सर्वदर्शी कह्या है सो ही सत्यार्थ है । अन्य छद्मस्थ का कह्या सत्यार्थ नाही ।(चा पा /मू 38)

'सदसद्व्यवहारनिवन्धन सम्यग्ज्ञानम्'

सत् और असत् पदार्थों मे व्यवहार करने वाला सम्यग्ज्ञान है ।

स्वसवेदन की अपेक्षा निश्चय लक्षण—

"तस्मिन्नेव शुद्धात्मनि स्वसवेदन सम्यग्ज्ञान ।"

उस शुद्धात्म मे ही स्वसवेदन करना सम्यग्ज्ञान है (स सा /ता वृ /38)

ज्ञान के आठ अग—

ग्रन्थार्थोभयपूर्ण काले विनयेन सोपधान च ।
वहुमानेन समन्वितमनिह्नव ज्ञानमाराध्यम् ॥

1 शब्दाचार, 2 अर्थाचार 3 उभयाचार 4 कालाचार 5 विनयाचार 6 उपधानाचार 7 वहुमानाचार 8 अनिह्नवाचार ये ज्ञान के आठ अङ्ग है ।

1. शव्दाचार—शब्द-शास्त्र (व्याकरण) के अनुसार अक्षर, पद, वाक्य का यत्नपूर्वक शुद्ध पठन-पाठन करने को कहते हैं। व्यञ्जनाचार, श्रुताचार, अक्षराचार, ग्रन्थाचार आदि सव एकार्थवाची है।

2. अर्थाचार—यथार्थ शुद्ध अर्थ के अवधारण करने को कहते हैं।

3. उभयाचार—अर्थ और शब्द दोनों से शुद्ध पठन-पाठन करने को कहते हैं।

4. गोसर्ग काल (मध्यान्ह से दो घड़ी पूर्व और सूर्योदय से दो घड़ी पीछे का काल)

प्रदोषकाल (मध्यान्ह के दो घड़ी पश्चात् और रात्रि के दो घड़ी पूर्व का काल)

प्रदोषकाल (रात्रि के दो घड़ी उपरांत और मध्यरात्रिसे दो घड़ी पूर्व का काल) और विरात्रिकाल (मध्यरात्रि से दो घड़ी पश्चात् और सूर्योदय से दो घड़ी पूर्व का काल) इन चार उत्तम कालों में पठन पाठनादि रूप स्वाध्याय करना कालाचार नामक ज्ञान का प्रथम अंग है।

चारों संध्याओं की अन्तिम दो-दो घड़ियों में, दिग्दाह, उल्कापात्, वज्रपात, इन्द्रधनुष, सूर्य-चन्द्रग्रहण, तूफान, भूकम्प आदि उत्पातों के समय में सिद्धान्त-ग्रन्थों का पठन-पाठन वर्जित है। हॉ स्तोत्र, आराधना, धर्मकथादिक के ग्रन्थ वांच सकते हैं।

5. विनयाचार—शुद्ध जल से हाथ-पॉव धोकर शुद्ध स्थान में पर्यकासन बैठकर नमस्कार पूर्वक शास्त्राध्ययन को कहते हैं।

6. उपधानाचार—उपधानाचार उपधान सहित आराधन करने को अर्थात् विस्मृत न हो जाने को कहते हैं।

7. वहुमानाचार—ज्ञान, पुस्तक और शिक्षक का पूर्ण आदर करने को कहते हैं।

8. अनिह्नवाचार—जिस गुरू से, जिस शास्त्र से ज्ञान उत्पन्न होवे उसको गोपन न करने को कहते हैं।

सम्यग्ज्ञान के भेद—मतिश्रुतावधिमनः पर्ययकेवलानि ज्ञानम् ।।त.सू.)

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्ययज्ञान और केवल ज्ञान ये पाँच प्रकार के ज्ञान हैं।

1. मतिज्ञान—जो पांच इन्द्रियों और मन की सहायता से पदार्थ को जाने उसे मतिज्ञान कहते हैं।

2. श्रुतज्ञान—जो पॉच इन्द्रियों और मन की सहायता से मतिज्ञान के द्वारा जाने हुए पदार्थ को विशेप रूप से जानता है उसे श्रुतज्ञान कहते हैं।

3. अवधिज्ञान—जो इन्द्रियों की सहायता के विना ही रूपी पदार्थों को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की मर्यादा लिये हुए स्पष्ट जाने उसे अवधिज्ञान कहते हैं।

4. मनः पर्ययज्ञान—जो किसी की सहायता के विना ही अन्य पुरुप के मन स्थित रूपी पदार्थों को स्पष्ट जाने उसे मनः पर्ययज्ञान कहते हैं।

5. केवलज्ञान—जो सव द्रव्यों तथा उनकी पर्यायों को एक साथ स्पष्ट जाने उसे केवलज्ञान कहते हैं।

सम्यग्ज्ञान की भावनाएँ—

वाचनापृच्छना सानुप्रेक्षण परिवर्तनम् । सद्धर्मदेशनम् चेति ज्ञातव्या ज्ञान भावना ॥

जैन शास्त्रो को स्वय पढ़ना, दूसरो से पूछना, पदार्थ के स्वरूप का चिन्तवन् करना श्लोक आदि कण्ठस्थ करना तथा समीचीन धर्म का उपदेश देना ये पॉच ज्ञान की भावनाएँ जाननी चाहिए ।

सम्यग्दर्शन पूर्वक ही सम्यग्ज्ञान होता है क्योंकि सम्यग्दर्शन पूज्य है तथा सम्यग्दर्शन से ज्ञान मे समीचीनता आती है ।

आराध्य दर्शन तत्फलत्वत । सहभावेऽपि ते हेतुफले दीप प्रकाशवत् । अन ध 3 15

सम्यग्दर्शन की आराधना करके ही सम्यग्ज्ञान की आराधना करनी चाहिये, क्योंकि ज्ञान सम्यग्दर्शन का फल है । यद्यपि प्रदीप और प्रकाश की भाँति सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान साथ-साथ होते हैं फिर भी सम्यग्ज्ञान कार्य है और सम्यग्दर्शन उसका कारण ।

सम्यग्दर्शन के साथ सम्यग्ज्ञान की व्याप्ति है पर ज्ञान के साथ सम्यक्त्व की नही—

दसणमाराहतेण णाणमाराहिद भवे णियमा । णाण आराहतस्स दसण होइ भयणिज्ज । 4। भ आ ॥ सम्यग्दर्शन की आराधना करने वाले नियम से ज्ञानाराधना करते हैं, परन्तु ज्ञानाराधना करने वाले को दर्शन की आराधना हो भी अथवा न भी हो ।

सम्यग्ज्ञान को ही ज्ञान सज्ञा है—जिसके द्वारा जीव त्रिकाल-विषयक सर्वद्रव्य, उनके समस्त गुण और उनकी वहुत भेद वाली पर्यायो को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जानता है, उसे निश्चय से ज्ञानीजन ज्ञान कहते हैं ।ध पु १।१

(2) निश्चय सम्यग्ज्ञान का माहात्म्य—

जो जाणदि अरहत दव्वत्त गुणत्त पज्जयत्तेहि ।

सो जाणदि अप्पाण मोहो खलु जादु तस्स लय ॥८०॥ प्र सा

जो अरहत को द्रव्यपने, गुणपने और पर्यायपने से जानता है, वह आत्मा को जानता है और उसका मोह अवश्य लय को प्राप्त हो जाता है ।

भेद विज्ञान ही सम्यग्ज्ञान है—

स्वपरयोर्विभागज्ञानेन ज्ञायको भवति । इस प्रकार सम्यग्दृष्टि सामान्यतया और विशेषतया परभावस्वरूप सर्वभावो से विवेक (भेदज्ञान) करके टकोत्कीर्ण एक ज्ञायकभाव जिसका स्वभाव है ऐसा जो आत्मतत्व उसको जानता है । आत्मा स्वपर के भेद विज्ञान से ज्ञायक होता है ।

अभेद ज्ञान या इन्द्रिय ज्ञान अज्ञान है—

स्वपरयोरेकत्वज्ञानेनाज्ञायको भवति । स सा ३१४

स्व पर के एकत्व ज्ञान से आत्मा अज्ञायक होता है ।

आत्म ज्ञान के विना सर्व आगम ज्ञान अकिंचित्कर है-

विदिताशेष शास्त्रोऽपि न जाग्रदपि मुच्यते । देहात्मदृष्टिर्ज्ञातात्मा सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ।९४। स.श. । शरीर में आत्मबुद्धि रखने वाला बहिरात्मा सम्पूर्ण शास्त्रों को जान लेने पर भी मुक्त नहीं होता और देह से भिन्न आत्मा का अनुभव करने वाला अन्तरात्मा सोता और उन्मत्त हुआ भी मुक्त हो जाता है ।

तप करो, संयम पालो, सकल शास्त्रों को पढ़ो परन्तु जब तक आत्मा को नहीं ध्याता तब तक मोक्ष नहीं होता । सकल शास्त्रों का सेवन करने में भले आचार्य संघ को दृढ़ करे, भले ही योग में दृढ़ होकर तप का अभ्यास करे, विनयवृत्ति का आचरण करे, विश्व के तत्वों को जान जाये, परन्तु यदि विषय विलास है तो सबका सब अकिंचित्कर है । आराधना सा.५४

व्यवहार सम्यग्दर्शन—

व्यवहारज्ञान निश्चय का साधन है तथा इसका कारण—

तेनैव विकल्परूपव्यवहारज्ञानेन साध्यं निश्चय ज्ञानं भण्यते—उस विकल्परूप व्यवहार ज्ञान के द्वारा साध्य निश्चय ज्ञान का कथन करते हैं । निर्विकल्प स्वसंवेदन ज्ञान को ही निश्चय ज्ञान कहते हैं ।

आगमज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहना उपचार है—

श्रुतं हि तावत्सूत्रम् । तज्ज्ञप्तिर्हि ज्ञानम् । श्रुतं तु तत्कारणतत्वात् ज्ञानत्वेनोपचर्यत एव" ।३४। प्र.सा. । श्रुत ही सूत्र है । उस की ज्ञप्ति सो ज्ञान है । श्रुत (सूत्र) उसका कारण होने से ज्ञान के रूप में उपचार से ही कहा जाता है ।

व्यवहारज्ञान प्राप्ति का प्रयोजन—

जो जिनेन्द्र के उपदेश को प्राप्त करके मोह, राग, द्वेष को हनता है वह अल्पकाल में सर्व दुःखों से मुक्त होता है ।८८। जो जीव उस अस्तित्वनिष्पन्न तीन प्रकार से कथित द्रव्यस्वभाव को जानता है वह अन्य द्रव्य में मोह को प्राप्त नहीं होता ।

श्रमण एकाग्रता को प्राप्त होता है, एकाग्रता पदार्थो के निश्चयवान के होती है, निश्चय आगम द्वारा होता है अतः आगम में व्यापार मुख्य है । प्र.सा.

निश्चय ज्ञान का प्रयोजन—

एवं देहात्मनोर्भेदज्ञानं ज्ञात्वा मोहोदयोत्पन्न समस्तविकल्प जालं त्यक्त्वा
निर्विकारचैतन्य चमत्कार मात्रे निजपरमात्मतत्वे भावना कर्तव्येति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार देह और आत्मा के भेद को जानकर, मोह के उदय से उत्पन्न समस्त विकल्पजाल को त्यागकर निर्विकार चैतन्य चमत्कार मात्र निज परमात्म तत्व में भावना करनी चाहिए, ऐसा तात्पर्य है ।

निश्चय व्यवहार ज्ञान का समन्वय—

बहिरंग परमागमाभ्यासेनाभ्यन्तरे स्वंसवेदनज्ञानं सम्यग्ज्ञानम् । प्र. सा.

बहिरंग परमागम के अभ्यास से अभ्यन्तर स्वसंवेदन ज्ञान का होना सम्यग्ज्ञान है ।

जं अण्णाणी कम्म खवेदि भवसयसहस्स कोडीहिं ।
तं णाणी तिहिं गुत्तो खवेदि अंतोमुहुत्तेण ॥१०८॥ भ. आ.

छट्ठट्ठमदसमदुवालसेहि अण्णाणियस्स जा सोही ।
तत्तो बहुगुणदरिया होज्ज हु जिमिदस्स णाणिस्स ॥१०॥

सम्यग्ज्ञान से रहित अज्ञानी जिस कर्म को लाख करोड़ भवों में नष्ट करता है उस कर्म को सम्यग्ज्ञानी जीव गुप्तियों से युक्त हुआ अन्तर्मुहूर्तमात्र में क्षय करता है ।

अज्ञानी के दो, तीन, चार, पाँच आदि आदि उपवास करने से जितनी विशुद्धि होती है उससे बहुत गुणी शुद्धि जीमते हुए ज्ञानी को होती है ।

ज्ञान समान न आन जगत् में सुख को कारण,
इह परमामृत जन्म-जरामृत रोग निवारण, ॥छ ४।३॥
जे पूरब शिव गये जाहि अरु आगे जैहैं,
सो सब महिमा ज्ञानतनी मुनि नाथ कहे हैं ॥छ ४।७॥

भव्यात्माओं को जैसे भी बने तैसे पुरुषार्थ करके एक बार सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति कर लेना चाहिये, कारण यह मनुष्य भव एक बार हाथ से निकल गया तो पुन उसकी प्राप्ति दुर्लभ है और मानव पर्याय से भिन्न अन्य कोई पर्याय में इसकी पूर्ण प्राप्ति दुर्लभ ही नहीं असम्भव है।

□□

जो आत्मा को (प्रदेशो की अपेक्षा) जीव प्रदेशो जितना मात्र तथा ज्ञान की अपेक्षा गगन प्रमाण जानता है उसके तू आत्मा का ज्ञान जान ।[105] उसी के द्वारा परमब्रह्म देखा गया है, जाना गया है जो ब्रह्म को जानकर शीघ्र ही पर लोक को प्राप्त होता है ।[109] जो देव मुनिवर वृन्दो (एव) हरिहरो के मन मे निवास करता है, वह उत्कृष्ट से भी उत्कृष्ट ज्ञानमय परलोक कहा जाता है। [110] जिसकी मति वहा (परलोक मे) बसती है वह नियम पूर्वक उत्कृष्ट पुरुष कहा जाता है, क्योंकि (यह) नियम है कि जीव की जैसी मति होती है वैसी गति होती है ।[111] यदि आधे निमिष मात्र भी कोई परमात्मा मे अनुराग करे तो अग्नि की कणी जैसे काष्ठ के पर्वत को जलाती है वैसे वह सम्पूर्ण पाप को जला डाले ।[114]

—आ योगीन्दु कृत परमात्म प्रकाश

योग्यता का अभिनंदन : स्वावलंबन

☆ *मुनि गुप्तिसागर*

> प्रत्येक मानव अनन्त ज्ञानादि शक्तियों का पुंज एक आत्मा है। उसके उठे प्रत्येक कदम पर पुष्पों से सुरभित सुपथ अथवा कटीली झॉड़-झंकाड़ से भरे कुपथ निर्मित होते हैं, उसके एक इंगित पर उसके अन्तर्वाह्य स्वर्ग अथवा नरक की रचना होती है, अथवा मोक्ष धरा पर उतरता है, उसका विस्तार होता है। प्रश्न इतना ही है कि क्या उसे अपनी शक्तियों का अहसास है अथवा वह भिखारी की भॉति परमुखापेक्षी है।
>
> —सम्पादक

अपने ऊपर विश्वास करना, अपनी शक्तियों पर विश्वास करना एक ऐसा दिव्य गुण है जो हर कार्य को करने योग्य साहस, विचार एवं योग्यता उत्पन्न करता है। दूसरों के ऊपर निर्भर रहने से अपना बल घटता है और इच्छाओं की पूर्ति में अनेक बाधाएँ उपस्थित होती हैं। स्वाधीनता, निर्भयता और प्रतिष्ठा इस बात में है कि अपने ऊपर निर्भर रहा जाय, सफलता का सच्चा और सीधा पथ भी यही है।

यह संसार प्रतियोगिता का रंगस्थल है। यहॉ पर जो विजयी होता है वही पुरस्कृत किया जाता है। जो अपनी योग्यता और पात्रता का प्रमाण देता है विजयश्री वही वरण करता है। अयोग्य, आलसियों और परावलंबियों के लिए इस संघर्ष भूमि में कोई स्थान नहीं है।

पुरुषार्थ का सहारा—यदि जीवन में कुछ बनने की इच्छा है तो स्वयं अपने पुरुषार्थ का ही सहारा लेना होगा। यह सोचना गलत होगा कि कोई दूसरा कृपा करके कोई ऐसा मार्ग प्रशस्त कर देगा जो इच्छित लक्ष्य की ओर जाता हो। यह सच है कि उन्नति करने के लिये समाज की सहायता एवं सहयोग की आवश्यकता होती है, किन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति यों ही अनायास नहीं हो जाती। उसके लिये योग्यता और पात्रता का प्रमाण देना होता है, जिसको पाने के लिए फिर भी स्वयं अपने आप पुरुषार्थ करना होगा। जो लोग अपना स्वतंत्र पुरुषार्थ न करके अपना श्रम और अपनी योग्यता दूसरों के हाथ बेच देते हैं वे कदाचित ही आत्म-निर्भर बन पाते हैं।

भौतिक उन्नति की तरह आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति भी आत्मनिर्भरता पर ही निर्भर है। इस विषय में श्रेष्ठ और सिद्ध पुरुषों से निर्देश तथा पथ दर्शन तो पाया जा सकता है, लेकिन उसकी साधना स्वयं ही करनी होती है। आत्म-विश्वास के संबंध में किसी दूसरे की

साधना अपने काम नहीं आ सकती । आत्म-साधना मे जिन सयमो, नियमो, व्रतो, उपवासों, अनुष्ठानो और तपस्याओं की आवश्यकता होतीहै उसका पालन तो स्वय अपने आप ही करना होगा, तभी उनका यथार्थ लाभ प्राप्त हो सकता है । यदा कदा गुरुजनो की कृपा से भी आत्म प्रकाश की किरणे मिल जाती हैं, किंतु इस कृपा के लिये पुन आत्म निर्भरता पर आना होगा। गुरु अथवा ज्ञानी पुरुष को प्रसन्न करने के लिए जिस सेवा और परिचर्या की आवश्यकता होती है वह तो अपने किए ही पूरी हो सकती है, कोई बदले म सेवा करके गुरुजनो की प्रसन्नता किसी दूसरे के लिये सपादित नही कर सकता ।

उत्साह आवश्यक—कोई भी क्षेत्र और विषय क्यो न हो, उसमें उन्नति के लिए आत्मनिर्भरता का गुण विकसित करना ही होगा । परावलम्बी प्रवृत्ति से किसी प्रकार की उन्नति नहीं की जा सकती । आत्म-विश्वास से योग्यता, क्षमता, साहस और उत्साह आदि ऐसे गुण प्राप्त होते हैं जो जीवन को उन्नति के शिखर पर ले जाने के लिये न केवल उपयोगी ही है, बल्कि अनिवार्य भी हैं । जिसमे आत्म विश्वास की कमी होगी वह किसी पथ पर बढ़ने की कल्पना ही नहीं कर सकता । वह तो यथास्थिति को ही गनीमत समझकर चुपचाप अपना जीवन काट लेने मे ही कल्याण समझेगा । जो कर्तव्य के प्रशस्त पथ पर चलेगा ही नहीं, जिसे यह विश्वास ही न होगा कि वह भी उन्नति कर सकता है, आगे बढ़ सकता है उन्नति और प्रगति उसके लिये असभव ही बनी रहेगी ।

जिनमे उत्साह नही, वे जीवन पथ पर आई एक ही असफलता से निराश होकर बैठ जाएँगे, एक ही आघात मे उनके उन्नति और विकास के सारे स्वप्न चकनाचूर हो जायेंगे । निश्चय ही उन्नति और प्रगति मे उत्साह का बहुत महत्व है । उत्साह से वचित हुआ व्यक्ति साधारण काम भी सफलतापूर्वक नही कर सकता । तब कोई ऊँचा लक्ष्य तो बहुत दूर की बात है ।

स्वावलबन अथवा आत्म-निर्भरता के पवित्र व्रत पालन से उन्नति और विकास के लिए आवश्यक सारे गुण प्राप्त हो जाते हैं । जिसने आत्म-निर्भरता का व्रत लिया है वह इस लज्जा से कि कही किसी विषय के परमुखापेक्षी होकर उसका व्रत भग न हो जाए, स्वय प्रयत्न पूर्वक अपने अदर की सारी कमिया दूर करता रहेगा । दूसरे का मुख देखने या हाथ पसारने के बजाय स्वाभिमानी व्यक्ति अपनी सारी कमियो को दूर करने का कोई प्रयत्न नही छोड़ेगा, चाहे फिर इसके लिये उसे कितना ही कष्ट और कठिनाई क्यो न उठानी पड़े ।

किसी भी क्षेत्र अथवा विषय मे उन्नति क्यो न करनी हो, कोई भी लक्ष्य क्यो न पाना हो स्वावलम्बी बने बिना उसमे सफलता नहीं मिल सकती। दूसरो की शक्तियो, साधनो और परिस्थितियो पर अपना जीवन लक्ष्य निर्भर कर देने वाले प्राय असफल ही होते हैं ।

परावलम्बी पृथ्वी का बोझ—परावलम्बी व्यक्ति न केवल अपने लिये ही समस्या होता है बल्कि दूसरो के लिये भी समस्या और उलझन बनता रहता है । साधारण सी कठिनाइयो और कार्यो के लिये वह दूसरो के पास जाकर खड़ा हो जाता है और सहायता सहयोग की याचना करने लगता है । कोई भी लक्ष्यनिष्ठ व्यक्ति उसकी इस याचना से असमजस मे पड़ जाता है । यदि वह उसके नगण्य से काम के लिये अपना बहुमूल्य समय देता है तो अपनी

उन्नति की स्पर्धा में दो कदम पीछे रह जाता है और यदि इंकार करता है तो मानवीय उदारता पर ऑच आती है । बहुत बार तो उसे अपनी हानि कर उसके काम में वक्त देना होता है और बहुत वार मजबूरी बताकर मानसिक वेदना सहनी पड़ती है । ऐसे परमुखापेक्षी और परावलम्बी व्यक्ति वास्तव में धरती के भार के सिवाय और कुछ नहीं होते ।

परावलंबन बड़ी ही हीन, हानिकारक और लज्जास्पद वृत्ति है । हर स्वाभिमानी व्यक्ति को इसका त्याग कर देना चाहिये । स्वावलंबन और आत्मनिर्भरता एक बड़ी उदात्त और आदर्श वृत्ति है । हर प्रयत्न और हर पुरुषार्थ के मूल्य पर इसे विकसित करना ही चाहिये । परावलंवन मनुष्य की मानसिक निर्बलता है । यह उचित नहीं है । पुरुष को पुरुषार्थ ही शोभा देता है। उसे हर प्रकार से अपने हर क्षेत्र में स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनना चाहिये और मंसार में चल रही भौतिक अथवा आध्यात्मिक किसी भी प्रतियोगिता को अंगीकार कर विजय प्राप्त करनी चाहिये ।

ऐसा नहीं है कि प्रत्येक समस्या या गुत्थी को सुलझाने में व्यक्ति स्वयं समर्थ होता है। कभी-कभी दूसरों की सहायता भी लेनी पड़ती है । दूसरों से सहायता अवश्य लीजिए परंतु उन पर अवलंवित मत रहिए । अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न कीजिए । जव आत्म विश्वास के साथ सुयोग्य मार्ग की तलाश करेंगे तो वह किसी न किसी प्रकार मिल कर ही रहेगा ।

जव मनुष्य आत्म-निर्भरता के वीरता पूर्ण दृष्टिकोण को छोड़कर पराया मुँह ताकने की कायरता, क्लीवता और हीनता की अंधकारमयी भूमिका में उतरता है तो वह बड़े दीन वचन वोलने लगता है एवं दूसरों से अपेक्षाएं रखने लगता है । वस्तुतः सारी समस्याओं को सुलझाने की कुंजी अपने अंदर है । दूसरे लोगों से जिस वात की आशा करते हैं उसकी योग्यता अपने अंदर पैदा कीजिए तो विना माँगे अनायास ही वह इच्छाएँ पूरी होने लगेंगी । जरूरत है तो सिर्फ दृढ़ इच्छा शक्ति की ।

आत्मनिर्भरता-योग्यता को पुरस्कार—आत्मनिर्भरता मात्र विचार करने से नहीं आती, वल्कि उसके लिये प्रयत्न भी करने पड़ते हैं तथा विचारों के अनुरूप ढलने की कोशिश भी करनी पड़ती है । जेसे कि आप चाहते हैं कि आपको वीमारी न सतावे, तो स्वास्थ्य के नियमों पर दृढ़ता पूर्वक चलना आरंभ कर दीजिए । आप चाहते हैं कि ऐश आराम उठावें तो धन कमाना आरंभ कर दीजिए । आप चाहते हैं कि वहुत से मित्र हों तो अपना स्वभाव आकर्पक वनाइये । आप चाहते हैं कि लोग आपका लोहा मानें तो शक्ति संपादन कीजिए । आप चाहते हैं कि प्रतिष्ठा प्राप्त हो तो प्रतिष्ठा के योग्य कार्य कीजिए । आप चाहते हैं कि ऊँचा पद प्राप्त हो तो उसके योग्य गुणो को एकत्रित कीजिए । धन, वुद्धि, वल, विद्या चाहते हैं तो परिश्रम और उत्साह उत्पन्न करिए । जव तक अपने भीतर वे गुण नहीं हैं जिनके द्वारा मनोवांछाएँ पूरी हुआ करती हैं तव तक यह आशा रखना व्यर्थ है कि आप का मनोरथ सफल हो जावेगा ।

सफल मनोरथ के लिये वाहर की शक्तियाँ भी सहायता किया करती हैं, पर करती उन्हीं की हैं जो उसके पात्र हैं । इस संसार में अधिक योग्य को मान्य देने का नियम सदा से

चला आया है । ससार मे सुयोग्य व्यक्तियो को सब प्रकार सहायता मिलती है । माली अपने बाग मे तन्दुरुस्त पौधो की खूब हिफाज़त करता है और जो कमजोर होते हैं उन्हे उखाड़ कर उस जगह दूसरा बलवान पौधा लगाता है । ईश्वर की सहायता भी सुयोग्यो को मिलती है । ससार मे सफलता, लाभ की आकाक्षा के साथ अपनी योग्यताओं मे वृद्धि करना भी आरभ करना चाहिये । यदि आप आत्मनिर्भर हो जावे, जैसा होना चाहते हैं उसके अनुरूप अपनी योग्यताएँ बनाने मे प्रवृत्ति हो जावे तो इच्छित लक्ष्य पाये जा सकते हैं ।

सफलता के अग्रदूत—अपनी आत्मा को बाह्य परिस्थितियो का निर्माता—केन्द्र बिन्दु मानिये । जो घटनाएँ सामने आ रही हैं, उनकी प्रिय-अप्रिय अनुभूति का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लीजिए । अपने को जैसा चाहे वैसा बना लेने की योग्यता अपनेमे समझिये । अपने ऊपर विश्वास कीजिये । किसी और का आसरा मत ताकिये । बिना आपके निजी प्रयत्न के—योग्यता सपादन के बाहरी सहायता प्राप्त न होगी, यदि होगी तो उसका लाभ बहुत थोड़े समय मे समाप्त हो जायेगा और पुन वही दशा उपस्थित होगी । उत्साह, लगन, दृढ़ता, साहस, धैर्य व परिश्रम इन छ गुणो को 'सफलता का अग्रदूत' माना गया है । इन दूतों का निवास स्थान आत्म-विश्वास मे है । अपने ऊपर भरोसा करेगे तो यह गुण भी उत्पन्न होगे ।

"उद्धरेत आत्मनात्मानम्" की शिक्षा देते हुए गीता ने स्पष्ट कर दिया है कि यदि अपना उत्थान चाहते हो तो उसका प्रयत्न स्वय करो । जैसे अपने पेट के पचाये बिना अन्न हजम नही हो सकता, जेसे अपनी आँखो के बिना दृश्य दिखाई नही पड़ सकता, उसी प्रकार अपने प्रयत्न बिना उन्नत अवस्था को भी प्राप्त नही किया जा सकता ।

परावलबन बनाम पराधीनता—आत्मविश्वासी आत्म निर्भर भी होता है । आत्मनिर्भर व्यक्ति कभी बड़ी-बड़ी कल्पनाएँ नही बनाता, वह केवल उतना ही सोचता है जितना उसे करना होता है, और जितना कर सकने की उसमे शक्ति होती है । जबकि पर निर्भर व्यक्ति की सहज कमजोरी यही होती है कि वह दूसरो के भरोसे जीवन मे बड़े-बड़े लक्ष्य निर्धारित कर लेता है । शिष्टाचारिक आश्वासन मे भी वह अखड विश्वास करने लगता है । दरअसल आत्मनिर्भरता के अभाव मे मनुष्य जब दूसरो के सहारे चलने की भावना का शिकार हो जाता है तो ससार मे हर व्यक्ति उसे शक्तिवान तथा मित्र मालूम होता है और उसका विश्वास उसके प्रति स्थायी हो जाता है ।

यही कारण है कि परावलम्बी व्यक्ति आजीवन दुखी एव दरिद्र बना रहता है । जो दूसरो के सहारे जीना चाहेगा उसे दयनीय जीवन बिताना ही होगा । परावलबन का दूसरा नाम पराधीनता है—'पराधीन सपने तु सुख नाही' वाली दशा से कभी भी कोई व्यक्ति मुक्त नही हो सकता । वह सदा त्रस्त, दु खी तथा असतुष्ट ही रहेगा । पर निर्भरता ससार का सबसे बड़ा अभिशाप है ।

जो आत्मनिर्भर है, आत्म विश्वासी तथा आत्म निर्णायक है, जिसके पास अपनी बुद्धि और अपना विवेक है, उसका ही जीवन सफल और सतुष्ट होता है । स्वावलबी दूसरो पर आश्रित नही रहता । आत्मनिर्भर का लक्ष्य उसकी गति के साथ स्वय उसकी ओर खिचता चला आता है । आत्मनिर्भर व्यक्ति के लिये समय के साथ अपनी शक्ति के भरोसे से प्रारभ

किया हुआ काम ठीक उसी प्रकार फल लाता है, जिस प्रकार बोया हुआ बीज फलीभूत होता है ।

आत्मनिर्भरता : दिव्यगुण—आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास ऐसे दिव्यगुण हैं कि जिनको विकसित कर लेने पर संसार का कोई भी कार्य कठिन नहीं रह जाता । आत्मवान व्यक्ति में समयानुसार बुद्धि का स्वयं स्फुरण होता रहता है । आत्मविश्वासी को अपने निर्णय तथा कार्यपद्धति में किसी प्रकार का संदेह नहीं होता । वह उन्हें विश्वास पूर्वक कार्यान्वित करके सफलता प्राप्त कर ही लेते हैं ।

आत्मनिर्भर व्यक्ति में अपनी असफलता का दोष दूसरों को देने की निकृष्ट निर्बलता नहीं होती । आत्मनिर्भर अपनी असफलता का कारण स्वयं अपने अंदर खोजा करता है और उसे दूर कर वह शीघ्र ही उसे सफलता में बदल लेता है । परावलम्बी की तरह उसे असफलता के लिये किसी को कोसने तथा दोष देने का अवकाश नहीं होता ।

अतः यदि आप जीवन में सफलता, उन्नति, सम्पन्नता एवं समृद्धि चाहते हैं तो स्वावलम्बी बनिये । अपना जीवनपथ खुद अपने हाथों प्रशस्त कीजिये और उस पर चलिये भी अपने पैरों से । परावलम्बी अथवा पराश्रित रहकर आप दुनिया में कुछ न कर सकेंगे । मनुष्य की शोभा आश्रित बनने में नहीं, आश्रय बनने में है ।

निःसंदेह यदि आप निष्कलंक, निर्भीक और निर्द्वन्द्व जीवन जीना चाहते हैं तो आत्मनिर्भर बनकर अपना काम करिये । विश्वास कीजिये आप अवश्य अपने लक्ष्य में सफल होंगे, मनोवांछित जीवन के अधिकारी बनेंगे ।

पडावः महावीर जी

❑ ❑

हे जीव ! सकल चिन्ता छोड़कर निश्चिन्त हो जा । चित्त को परमपद में धारणकर निरंजन देव को देख ।[115] ध्यान करता हुआ शिव दर्शन में जो परमसुख (तू) पा सकता है, वह सुख अनंत देव को छोड़कर लोक में कहीं नहीं है ।[116] निज आत्मा का ध्यान करते हुए मुनि जो अनंत सुख प्राप्त करते हैं वह सुख करोड़ों देवियों के साथ रमण करता हुआ इन्द्र भी प्राप्त नहीं करता है ।[117] आत्म दर्शन में जिनवरों को जो अनंत सुख होता है वह सुख विरागी जीव शान्त शिव को जानता हुआ प्राप्त करता है ।[118] हे योगिन् ! निर्मल निज मन में नियम से शान्त शिव दीखता है जैसे बादल रहित निर्मल आकाश में सूर्य प्रकाश मान होता है ।[119] राग से रंजित हृदय में मलिन दर्पण में बिम्ब की भाँति शान्त देव नही दिखता है, यह निर्भ्रान्त होकर जान ।[120]

—आ. योगीन्दु कृत परमात्म प्रकाश

अर्हन्त

☆ आ स्याद्वादमती

अर्हन्त सदेह अवस्था मे हमारा अपना अकारण शुद्ध रूप है । एक देश यह प्रत्येक ही मानव में व्यक्त भी है । एक देश सभी चतुष्टय के धारी हैं, परीषह उपसर्गों से रहित है, दोषों से रहित हैं । इस एकदेश मे वृद्धि नहीं हो पाती इसका एक मात्र कारण है कि हमारे सामने सर्व देश शुद्ध अर्हन्त रूप नहीं होता, उसे हमने जाना नहीं है, जान भी लिया है तो उसका वेदन/अनुभव नहीं करते, उसे स्वानुभूति का विषय नहीं बनाते और सदैव दोषी, मलिन पक्ष को ही दृष्टि/अनुभूति का विषय बनाये रहते हैं । अर्हन्त स्वरूप को जानकर हमे उसकी भावना करनी चाहिए अर्थात् सिंह गर्जना के साथ एकदेश सर्वदेश का भेद गौण कर अपने स्तर पर अर्हन्तता मे मुक्तभाव से जीना चाहिए । कभी ध्यान मे सर्वदेश मुक्त अर्हन्त रूप को भी यथासभव अनुभूति का विषय बनाये । तब एकदेश हमारी अर्हन्तता की वृद्धि अवश्य होगी ।

—सम्पादक

जैन दर्शनानुसार जीव अपने कर्मो का क्षय स्व परिणामो की विशुद्धि के बल से करके परमात्मपद को प्राप्त करता है । उस परमात्मपद की दो अवस्थाए हैं—(1) शरीर सहित अर्हन्त अवस्था (2) शरीर रहित सिद्धावस्था । प्रथमावस्था भी दो प्रकार की है—तीर्थङ्कर व सामान्य । विशेष पुण्य सहित अर्हन्त जिनके पञ्चमहाकल्याणमहोत्सव भव्यात्माओं के द्वारा मनाये जाते है तीर्थङ्कर कहलाते है और शेष सर्व सामान्य अर्हन्त कहलाते हे ।

अर्हन्त श्रमण परम्परा के परम आराध्य देव है । अर्हन्त का प्राकृत रूप "अरहत ' है। इसका सस्कृत रूप है अर्हत् । अर्ह पूजायाम्" अर्थात् पूजार्थक अर्हधातु से शतृङ प्रत्यय होकर अर्हत् शब्द निष्पन्न होता है । प्रथमा एक वचन "उगिदचा सर्वनामस्थाने धातो " पाणिनी सूत्र से नुम् का आगम होकर "अर्हन् पद बनता है । प्राकृत भाषा मे ना' प्रलय हो कर अर्हन्त रूप बनता ह । साथ ही प्राकृत व्याकरण के सूत्रानुसार र् ह् के मध्य इकार का आगम होकर "अरिहन्त" तथा प्राकृत की परम्परा के अनुसार अकार का आगम हाकर अरहत रूप बनता है। आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव ने प्राकृत भाषा मे इसका एक "अरूह" प्रयोग भी किया है—"अरूहा सिद्धायरिया !' सभवत इस अरूहा शब्द पर तमिल भाषा का प्रभाव है ।

अरहत शब्द के विभिन्न भाषाओं मे अनेक रूप इस प्रकार हैं—

सस्कृत — अर्हत्, प्राकृत — अरहत, अरिहत, पाली— अरहत, जेनशोरसेनी — अरुह, मागधी —अलहत अलिहत, अपभ्रश — अलहतु, अलिहतु, तमिल — अरूह, कन्नड़ — अरुह, अरुहत

अर्हन्त—अतिशयपूजार्हत्वाद्वार्हन्त : (ध. १।१,१,१।४४।६)

अतिशयपूजा के योग्य होने से अर्हन्त संज्ञा प्राप्त होती है ।

अरिहंति णमोक्कारं अरिहा पूजा सुरूत्तमा लोए ।।५०५। मू. आ.।।

अरिहंति वंदणणमंसाणि अरिहंति पूयसक्कारं ।

अरिहंति सिद्धिगमणं अरहंता तेण उच्चंति ।। ५६२।।मू.आ.।।

जो नमस्कार करने के योग्य हैं, पूजा के योग्य हैं और देवों में उत्तम हैं, वे अर्हन्त है।

वन्दना और नमस्कार के योग्य हैं, पूजा और सत्कार के योग्य हैं, मोक्ष जाने के योग्य हैं इस कारण से अर्हन्त कहे जाते हैं ।

"पञ्चमहाकल्याणरूपां पूजामर्हति योग्यो भवति तेन कारणेन अर्हन् भण्यते"—पञ्च महाकल्याणक रूप पूजा के योग्य होता है, इस कारण से अर्हन् कहलाता है । (द्र.सं.टी ।५०।२११।१)

अरिहंत—अरिहननादरिहन्ता । रजोहननाद्वा अरिहंता । रहस्याभावाद्वा अरिहन्ता (ध. १।१,१,१।४२।९)

"अरि" अर्थात् शत्रुओं का नाश करने से अरिहंत यह संज्ञा प्राप्त होती है । समस्त दुःखों की प्राप्ति का निमित्त कारण होने से मोह को अरि कहते हैं । अथवा, रज अर्थात् आवरण कर्मो का नाश करने से अरिहन्त यह संज्ञा प्राप्त होती है । ज्ञानावरण और दर्शनावरण रज की भाँति वस्तु विषयक बोध और अनुभव के प्रतिबन्धक होने से रज कहलाते हैं । अथवा, रहस्य के अभाव से भी अरिहंत संज्ञा प्राप्त होती है । रहस्य अन्तराय कर्म को कहते हैं । अन्तराय कर्म का नाश ज्ञानावरण, दर्शनावरण और मोहनीय कर्मो के नाश का अविनाभावी है और अन्तराय कर्म का नाश होने पर शेष चार अघातिया कर्म भी भ्रष्ट बीज के समान निःशक्त हो जाते हैं ।

अरहंत

जरवाहिजम्ममरणं चउगइगमणं च पुण्णपावं च ।

हंतूण दोसकम्मे हुउ णाणमयं च अरहंतो ।। बोध. पा. ।।३०।।

जरा और व्याधि अर जन्म-मरण, चार गतिविषै गमन, पुण्य और पाप इन दोषनि के उपजाने वाले कर्म हैं । तिनिका नाश करि अर केवल ज्ञान मई अरहन्त हुआ होय सो अरहंत है ।

रजहंता अरिहंति य अरहंता तेण उच्चदे । मू.आ.। ५०५।

जिदकोहमाणमाया जिदलोहा तेण तें जिणा होंति ।

हंता अरिं च जम्मं अरहंता तेण वुच्चंति ।।५६१।।

अरि अर्थात् मोह कर्म, रज अर्थात् ज्ञानावरण व दर्शनावरण कर्म और अन्तराय कर्म इन चार के हनन करने वाले हैं अतः अरि का प्रथमाक्षर "अ" "रज" का प्रथमाक्षर "र" लेकर उसके आगे हनन का वाचक "हन्त" शब्द जोड़ देने पर अरहन्त बनता है । वे अरहन्त

क्रोध, मान, माया, और लोभ इन कषायो को जीत लेने के कारण "जिन" हैं और कर्म शत्रुओं व ससार के नाशक होने के कारण अरहन्त कहलाते हैं।

अरुह—(जैन शौरसेनी)

"न रोहन्ति इति अरुह" अर्थात् कर्मरूप वीज के दग्ध हो जाने से जो पुन ससार में उत्पन्न नही होते हैं वे "अरुह" हैं।

षट्खण्डागम की टीका से ज्ञात होता है कि आचार्य वीरसेन स्वामी के समय मे इस महामत्र के अरहत, अर्हन्त, अरिहन्त, अरूहन्त आदि पाठान्तर थे, जैसा कि ध ८।३, ४१।८९।२ से ज्ञात होता है।

"खविदघादिकम्मा केवलणाणेण दिट्ठसव्वट्ठा अरहता णाम। अथवा, णिट्ठविदट्ठकम्माण घाइदाघादिकम्माण च अरहतेत्ति सण्णा, अरिहणण पदिदोण्ह भेदाभावादो"। जिन्होंने घातिया कर्मों को नष्ट कर केवल ज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण पदार्थों को देख लिया है वे अरहन्त हैं। अथवा आठो कर्मों को दूर कर देने वाले और घातिया कर्मों को नष्ट कर देने वालो का नाम अरहत है, क्योंकि कर्मशत्रु के विनाश के प्रति दोनो मे कोई भेद नही है।

जिस प्रकार मोतीचूर का लड्डू किधर से भी, कैसे भी खाइये मीठा व आनन्ददायी होता है। उसी प्रकार अर्हन्त भगवान का नाम कैसे भी जपो चाहे अरिहन्त कहिये, अरहन्त कहिये, अरुहन्त या अरुह कहिये वह कर्मक्षय का ही कारण है। शव्द भेद होने पर भी यहाँ अर्थ भेद नही है, गुणो की अपेक्षा समानता है।

जैन वाङ्मय मे तो अरहन्त शव्द का प्राचीन इतिहास "अनादिनिधनता" मे समाहित है ही परन्तु वैदिक, वौद्ध एव सस्कृत वाङ्मय मे भी इस शव्द का प्रयोग उपलव्ध है

वैदिक वाङ्मय मे अर्हत् शव्द—

विनोवा भावे ने ऋग्वेद का उदाहरण देते हुए जैनधर्म की व अर्हत शव्द की प्राचीनता सिद्ध की है— मन्त्र —

"अर्हत विभर्षिसायकानि, धन्वार्हन्निष्क यजत विश्वरूपम्
अर्हन्निद दयसे विश्वमम्व न वा ओ जीओ रूद्र त्वदन्यदस्ति'

अर्थात् है अर्हत ! तुम इस तुच्छ दुनिया पर रक्षा करते हो" (ऋग्वेद २ ३३ १०)

अर्हन् देवान् यक्षि मानुपत् पूर्वो अद्य (ऋग्वेद २।५।२२।४।१)

अर्हन्तो ये सुदानवो नरो अमामि शव स (ऋ ४।३।९।५२।५)

अर्हन्ता चित्पुरोदये शेप दवावर्तते (ऋ ३।८३।५)

इसके अलावा वराहमिहिर सहिता, योगवशिष्ट, वायुपुराण तथा ब्रह्मसूत्र शकर भाष्य मे भी "अर्हत' शव्द का उल्लेख मिलता है। सस्कृत साहित्य के महाकवि कालिदास ने अपने काव्य व नाटको मे अनेक स्थानो पर अर्हत शव्द का प्रयोग किया है। रघुवश मे रघु राजा गुरुदक्षिणामिलापी कौत्सऋषि को सवोधित करते हुए कहते हैं — हे अर्हत् ! आप दो तीन दिन ठहरने का कष्ट करे तव तक मैं आपके लिये गुरुदक्षिणा का प्रवन्ध करता हू।

एक अन्य स्थान पर कालिदास अर्हत को "नय चक्षुषे" विशेषण देकर संभवतः उनके नय प्रमाण के ज्ञातृत्व की ओर संकेत करते हैं —

अर्हणामर्हते चक्रुर्मुनयो नयचक्षुषे (रघु. १।५५)

शाश्वतकोष तथा शारदीय नाम-माला में "अर्हत" शब्द "जिन" का पर्यायवाची कहा गया है— स्तार्हन् जिनपूज्ययोः (शाश्वतकोष ६।४१)

श्वे. आचार्य हेमचन्द्र अर्हत को पदार्थ का यथार्थ वर्णन करने वाला परमेश्वर कहते हैं— यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हत् परमेश्वर (हेमचन्द्र योगशास्त्र २-४) । बौद्ध वाङ्मय में अरहन्त शब्द महात्मा बुद्ध के लिये प्रयुक्त है । अरहंत के जो गुण पाली साहित्य में कहे गये हैं वे बहुशः जैन अरहन्त के गुणों से समानता रखते हैं ।

पाली भाषा के बौद्ध आगम त्रिपिटक धम्मपद में अरहंत वग्गो नामक एक प्रकरण है इसमें 10 गाथाओं में अरहंत का वर्णन किया गया है ।

धम्मपद के अनुसार अरहंत वह हैं जिन्होंने अपनी जीवन यात्रा समाप्त कर ली है, जो शोक रहित है, संसार से मुक्त है तथा जिसने सब प्रकार के परिग्रह को छोड़ दिया है और जो कष्ट रहित है (धम्मपद अरहन्त वग्गो ९०)

"ऐसा अरहन्त जहाँ भी विहार करता है वह भूमि रमणीय पवित्र है"

"यत्थारहंतो विहरन्ति तं भूमि रामणेच्यक" (धम्मपद अ. व. ९२)

महात्मा बुद्ध ने कहा था—"भिक्षुओं प्राचीन काल में भी जो अरहंत तथा बुद्ध हुए थे उनके भी ऐसे ही दो मुख्य अनुयायी थे जैसे मेरे अनुयायी सारीपुत्र और मोग्गलायन हैं । (संयुक्त निकाय ५.१६४) (गौतम बु. पु. १४७)

इस प्रकार भारतीय संस्कृति में "अर्हत्" शब्द की प्राचीनता एवं उपादेयता को देखने के पश्चात् आगे हम जैन साहित्य में अर्हत का मूल रूप उनके गुणों की ओर दृष्टिपात करते हैं :—

—जैनागम में अरहंत किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है वह तो आध्यात्मिक गुणों के विकास से प्राप्त होने वाला एक मङ्गलमय परमेष्ठी पद है—

जिसने राग-द्वेष कामादिक जीते, सव जग जान लिया ।
सव जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, जिन हरि-हर व्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ॥

(मेरी भावना ।१)

मोक्षमार्ग के नेता अर्थात् हितोपदेशी, कर्मरूपी पर्वतों को चूर करने वाले अर्थात् वीतरागी विश्व तत्वों के ज्ञाता अर्थात् सर्वज्ञ को अरहन्त कहते हैं । (त.सू.मं.)

अर्हन्तों के 46 गुण—

घणघाइकम्मरहिया केवलणाणाइपरम गुणसहिया ।
चोत्तिसअदिसअजुत्ता अरिहंता एरिसा होंति (।। नि. ।७१।।)

प्रत्येकमष्टशतकानि विभान्ति यस्य ।

तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय ॥६॥ स अ ॥

झारी, पखा, कलश, ध्वजा, स्वस्तिक, श्वेत छत्र, दर्पण और चमर ये प्रत्येक 108 मगल द्रव्य जिनके शोभायमान होते हैं, उन भुवनत्रयाधिपति जिनराज के लिये नमस्कार होओ ।

भगवान् अरहन्त मे 18 दोषो का अभाव—

छुहतण्हभीरूरोसो, रागो मोहो चिता जरा रुजा मिच्चू ॥

सेद खेद मदो रइ, विम्हिय णिद्दा जणुव्वेगो ॥ नि सा ६॥

भूख, प्यास, भय, क्रोध, राग, मोह, चिता बुढ़ापा, रोग, मृत्यु, पसीना खेद, मद, रति, विस्मय, निद्रा, जन्म और अरति ये अठारह दोष हैं । अरहन्त भगवान मे ये अठारह दोष नहीं होते अत उन्हे परमात्मा कहते हैं—

णिस्सेसदोसरहिओ, केवलणाणाइपरमविभवजुदो ।

सो परमप्पा उच्चइ, तव्विवरीओ ण परमप्पा ॥ नि सा ७ ॥

अर्हन्त के भेद—

सात प्रकार के अर्हन्त होते हैं—(1) तीर्थंकर केवली (पाँच तीन व दो कल्याणक युक्त) (2) सातिशय केवली अर्थात् गधकुटी युक्त केवली (3) सामान्य केवली (4)उपसर्ग केवली (5) समुद्घात केवली (6) मूक केवली और (7) अन्तकृत केवली ।

सामान्य केवली की वाणी खिरती है, किन्तु गणधर नही होते, क्योंकि उनकी वाणी के द्वारा द्वादशाङ्ग की रचना नही होती और गणधर का मुख्य कार्य द्वादशाङ्ग की रचना करना है। सामान्य केवलियो की सभा मे बीजबुद्धि आदि ऋद्धि-धारी विशेषज्ञानी आचार्य होते हैं ।

अरहत अवस्था मे किसी प्रकार का कोई उपसर्ग नही होता । जिनको उपसर्ग पूर्वक केवलज्ञान होता है वे उपसर्ग केवली कहलाते हैं । अन्तकृत केवली भी उपसर्ग रहित होते हैं। इनका वर्णन अन्तकृद्दशाग मे पाया जाता है । अन्तकृत् केवली व मूक केवली की गधकुटी नही होती ।

जिन मुनियो को शेर ने भक्षण कर लिया अथवा जिनके सिर पर अग्नि जला दी गई, केवलज्ञान के प्राप्त होते ही इन उपसर्ग केवलियो का शरीर पूर्ववत् साङ्गोपाङ्ग बन जाता है ।

अरहन्त अवस्था मे शरीर कटा-फटा या अगहीन नही रहता । अरहत अवस्था महान् अवस्था है, साक्षात् भगवान् हैं अत उनका शरीर अगहीन या विद्रूप हो यह सभव नही है । वह शरीर तो परमौदारिक बन जाता है उसमे सप्त कुधातु नही रहती । आत्मा की पवित्रता से शरीर भी पवित्र हो जाता है । बारहवे गुणस्थान मे सर्व निगोदिया जीव शरीर से निकल जाते हैं । आत्मा की विशुद्धता का प्रभाव पौद्गलिक शरीर पर पड़ता है और वह अशुचि शरीर भी महान् पवित्र बन जाता है । (प र मु व्य कृ पृ १७४)

केवली के विहारादि क्रियाओं का कर्तृत्वाकर्तृत्व—

अरहंत भगवान के खड़े होना, बैठना, विहार, धर्मोपदेश देना (नियत और अनियत समय पर वाणी खिरना) आदि सब क्रियाएं बिना इच्छा अथवा प्रयत्न के होती हैं। अतः इन क्रियाओं को स्वाभाविकी कहा गया है, किन्तु कर्मोदय से होती हैं इसलिये औदयिकी कहा गया है आ. श्री कुन्दकुन्दस्वामी प्रवनचनसार में लिखते हैं—

ठाणणिसेज्ञविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसि।
अरहंताणं काले मायाचारोव्व इत्थीणं ॥४४॥

अर्थ—उन अरहंत देव के उस अवस्था में स्थान आसन और विहार तथा धर्मोपदेश ये क्रियाएं स्वाभाविकी हैं, जैसे स्त्री के मायाचार (अथवा माताचार —सं) तद्गत पर्याय स्वभाव के कारण बिना प्रयत्न के होता है।

और भी कहा है—

पुण्यफलाअरहंता तेसिं किरिया पुणो हि ओदइया।
मोहादीहिं विरहिया तम्हा सा खाइगत्ति मदा ॥४५॥ प्र. .सा.।

पुण्य का फल अरहन्त अवस्था है। उनकी क्रिया (स्थान, आसन, विहार, दिव्यध्वनि) औदयिकी अर्थात् कर्म-जनित है। किन्तु ये क्रियाएं मोहादि से रहित अर्थात् विना इच्छा व प्रयत्न के होती हैं इसलिये आगामी कर्मबन्ध का कारण नहीं होती, किन्तु इन क्रियाओं के द्वारा कर्म फल देकर क्षय को प्राप्त हो जाता है इसलिये इन क्रियाओं को क्षायिकी भी कहा गया है।

महिमा—

तेजो दिट्ठी णाणं इड्ढी सोक्खं तहेव ईसरियं।
तिहुवणपहाणदयं माहप्पं जस्स सो अरिहो ॥ नि. सा./ता.वृ./७

तेज (भामण्डल), केवलदर्शन, केवलज्ञान, ऋद्धि (समवसरणादि), अनन्त सौख्य, ऐश्वर्य और त्रिभुवनप्रधान वल्लभपना—ऐसा जिनका माहात्म्य है, वे अर्हन्त हैं। (ध. १।१,१,१ भावार्थ) मोह अज्ञान व विघ्न समूह को नष्ट कर दिया है ॥२३॥ कामदेव विजेता, त्रिनेत्र द्वारा सकलार्थ व त्रिकाल के ज्ञाता, मोह राग-द्वेप रूप त्रिपुर दाहक तथा मुनि पति हैं ॥२४॥ रत्नत्रयरूपी त्रिशूल द्वारा मोहरूपी अन्धासुर के विजेता, आत्मस्वरूप निष्ठ तथा दुर्नय का अन्त करने वाले ॥२५॥ ऐसे अर्हन्त होते हैं।

देवाधिदेव, घातिकर्म विनाशक, अनन्त चतुष्टय प्राप्त, आकाश तल में/अन्तरिक्ष में विराजमान, परमौदारिक देहधारी, 34 अतिशय व अष्ट प्रातिहार्य युक्त तथा मनुष्य तिर्यञ्च व देवों द्वारा सेवित, पञ्चमहाकल्याणक युक्त, केवलज्ञान द्वारा सकल तत्वदर्शक, समस्त लक्षणों युक्त उज्वलशरीरधारी, अद्वितीय तेजवन्त, परमात्मावस्था को प्राप्त (१२३-१२८) ऐसे अर्हन्त अनुपम महिमा के धारक होते हैं।

"अर्हति इन्द्रादिकृतपूजामिति अर्हन्तः"

जो इन्द्रादिकृत पूजा के योग्य है वे अर्हन्त कहलाते है ।

प्रश्न— अर्हन्त ऐसे होते है, जानकर क्या करना चाहिये ?

उत्तर— अहन्त का उनके द्रव्य-गुण पर्यायो से चिन्तन करना चाहिये ।

कहा भी है—

जो जाणदि अरहत दव्वत्तगुणत्तपज्ज़येत्तेहि ।

सो जाणदि अप्पाण मोहो खलु जादि तस्सलय ॥८० प्र सा ॥

अर्थ—जो अरहन्त को द्रव्यपने, गुणपने और पर्यायपने से जानता है, वह अपने आत्मा को जानता है, उसका मोह अवश्य नाश को प्राप्त होता है ।

प्रश्न— अरिहन्त के द्रव्य-गुण पर्याय किस प्रकार जाने जाते हैं ?

समाधान—श्री अरिहन्त भगवान के केवलज्ञानादि विशेष गुण हैं, अस्तित्व आदि सामान्य गुण है। परमौदारिक शरीरकार रूप से आत्मप्रदेशो का अवस्थान वह द्रव्य व्यञ्जन पर्याय है । अगुरुलघुगुण के द्वारा जो षड्गुणवृद्धिहानि रूप जो प्रति समय परिणमन है वह शुद्ध अर्थ पर्याय है । इन गुण व पर्यायो के आधारभूत जो असख्यात प्रदेश है वह द्रव्य है । (प्र सार/जयसेन टीका/ गा ८०

प्रश्न— अरिहन्त को उनके द्रव्य-गुण पर्याय से जानकर क्या करना चाहिये ?

उत्तर— उन्हे नमोऽस्तु करना चाहिये । कहा भी है—

अरहतणमोकार भावेण य जो करेदि पयदमदी ।

सो सव्वदुक्खमोक्ख पावदि अचिरेण कालेण ॥ मू चा ।५॥

जो प्रयत्नमति होकर भावपूर्वक अरहन्तदेव को नमस्कार करते है, वे बहुत थोड़े ही काल मे सर्व दु खो से छुटकारा पा लेते हैं । ऐसा जानकर सर्व कर्मो का क्षय करने के लिये अर्हत भगवान् की भक्ति करते हुए और शुद्ध नय से ' मैं अर्हत स्वरूप हू' ऐसी भावना करते हुए तव तक उनका आश्रय लेना चाहिये, जव तक कि अपनी आत्मा अर्हत स्वरूप न परिणत हो जावे ।

खवियघणघाइकम्मा चउतीसातिसयपञ्चकल्लाणा

अट्ठवरपाडिहेरा अरिहता मगलामज्झ ।

□ □

परम पारिणामिक भाव का रहस्य

(आधुनिक मनोविज्ञानादि के प्रसंग में)

☆ —प्रोफेसर एल. सी. जैन

प्रस्तुत लेख में जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व को समझाते हुए प्रथम बार सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के समय होने वाली करणलब्धि की बहुत ही सरल एवं आधुनिक रूप में चर्चा की गई है। प्रस्तुत अंक में आगे एक लेख में मानव के प्रत्येक ज्ञान के व्यापार का, निर्मल अथवा मलिनचित्त-परिणतियों का छाया रूप में पौद्गलिक प्रभामण्डल के तेजस्वी अथवा मलिन होने रूप अंकन के प्रकट प्रत्यक्षीकरण की चर्चा हुई है। दृष्टा के विचार का Electron आदि सूक्ष्म अणु-अवयवों के व्यवहार पर प्रभाव भी आधुनिक अणु विज्ञान में स्वीकार किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में रत्नत्रय का, विशुद्धियों से निर्मल चित्त परिणतियों का मानव की मुक्ति और बाह्य में पुण्य-प्रकृतियों का अनुभाग बढना और मिथ्यात्वादि से मलिन चित्त के फल स्वरूप आत्मशक्तियों का कर्मावृत्त होना एवं पाप कर्म प्रकृतियों की रचना एवं रस वृद्धि के परिणाम से होने वाले देह में रोग आदि एवं वाह्य में दारिद्र्य तथा अन्य अनेकविध विपरीतताओं की रचना की बात को तात्विक रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए एवं तदनुरूप मानव को अपने सोच तथा व्यवहार/व्यापार को ढालना चाहिए। विषय गहन है, उसे परिशिष्ट रूप में लेखक ने हमारे निवेदन पर और स्पष्ट किया है।

—सम्पादक

यद्यपि आधुनिक विज्ञान भौतिक शास्त्र के क्षेत्र में सबसे आगे निकल चुका है पर मनोविज्ञान का क्षेत्र अभी भी अंधेरे के घेरों से अधिक वाहर नहीं आ सका है। मनोविज्ञान के जटिलतम विज्ञान से आज विश्व में सामान्यतः प्रचलित योग विज्ञान भी जुड़ गया है जो तंत्र कुंडलिनी योग के रहस्यमय विज्ञान में उलझ गया है। इन सभी का यदि वैज्ञानिक विश्लेषण करना चाहे और उसमें गणितीय सूझवूझ का प्रयोग करना चाहे तो उसे निश्चित ही दिगम्वर जैन ग्रंथों में उपलब्ध, मुख्यतः गोम्मटसार, लब्धिसार ग्रंथों की गणितमय टीकाओं का अवलम्वन लेना पड़ेगा। ज्यादा गहराई तक जाने हेतु इनकी स्रोत सामग्री धवल, महाधवल, जयधवल ग्रंथों में प्राप्त हो सकेगी।

रहस्यमय गणितीय सामग्री लब्धिसार में अधः प्रवृत्त करण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण के स्वरूप से प्रारम्भ होती है जिसका विस्तृत विवरण गोम्मटसार की केशववर्णीकृत कर्नाटकवृत्ति में मिलता है और जिसे पं. टोडरमल (जयपुर) ने खोलने का विशेप प्रयास किया है। प्रश्न

उठता है कि क्या ये करणत्रय वस्तुत परम पारिणामिक भाव ही है जो कर्मों के उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम की अपेक्षा नही रखते हैं ? क्या वे ही अनन्तानुबंधी कषाय के विसयोजन म कार्यकारी है तथा मिथ्यात्व का क्रमश तीन भागो मे द्रव्य-शक्ति सहित मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व एव सम्यक्त्व रूप मे पारस की तरह एक अभूतपूर्व परिवर्तन, रूपान्तरण करने मे समर्थ हैं ? करणत्रयो का गणितीय स्वरूप श्रेणिवद्ध रूप मे हमे ज्ञात है और उसके यदि प्रयोग से कोई ससारी जीव पर प्रभाव देखना इष्ट हो तो आधुनिक यत्र अनुमानत फल वतलाने मे समर्थ पाये जा सकते है ।

पारिणामिक भाव के 3 भेद हैं— 1 जीवत्व, 2 भव्यत्व, 3 अभव्यत्व ।

1 जीवत्व—दो प्रकार है—ज्ञान दर्शन रूप जीना और दस प्राण रूप जीना । इनमे ज्ञान दर्शन रूप जीवत्व शुद्ध पारिणामिक भाव है । प्राण रूप जीवत्व अशुद्ध पारिणामिक भाव है ।

2 भव्यत्व—जिन जीवो के अनन्त चतुष्टय रूप सिद्धि व्यक्त होने की योग्यता हो वे भव्य है । उनके पारिणामिक भाव को भव्यत्व कहते है ।

3 अभव्यत्व—उक्त योग्यता के अभाव को अभव्यत्व कहते है ।

जीवत्व भाव चेतना भाव है, ज्ञान भाव या जानन भाव, जानपना अन्वयी भाव ह, त्रिकालवर्ती, स्वपरप्रकाशी, शाश्वत, पहिचान कराने वाला असाधारण गुण है, समस्त जीवो मे प्राण रूप ह, सर्व अवस्थाओं मे व्याप्त है । चतना भाव दो प्रकार का है—सामान्य चेतना, विशेप चेतना । स्व पर का सामान्य विशेप जो जानना मात्र वह शुद्ध चेतना है । पर के निमित्त पाकर रागद्वेप को जानने/वेदने/अनुभव करने को अशुद्ध चेतना कहते है । पर कर्म भी हो सकता है । चेतना भाव जीव की निज उपादान शक्ति है, कर्मजन्य नही है ।

जिस प्रकार शुद्ध स्फटिक मणि मे स्वभाव की शुद्धि है, वैसे ही पारिणामिक भाव होता हे । शुद्ध चेतना भाव ज्ञाता-दृष्टा भाव रूप होता है । अत परमशुद्ध जीवत्वभाव या चेतना भाव ससार से मुक्त होने के लिये श्रद्धान रूप से ग्रहण किया जाता हे । इस प्रकार शुद्ध जीवत्व पारिणामिक भाव सुख का कारण है और परम्परा से आगामी मोक्ष का कारण है ।

जो भविष्यत काल मे जिस भाव के परिणमन का वाह्य निमित्त पाकर उस भाव रूप परिणमेगा वह भव्यत्व भाव है, अन्यथा अभव्यत्व भाव है । जड़ वर्णादिक जो परभाव सर्व जीवो के अयोग्यता रूप होने से अभव्यत्व भाव हे । त्रपन भावो मे उन समस्त भावो रूप त्रिकाल मे परिणमन न करने वाला अभव्यत्व भाव कहा गया है । भव्यत्व भाव सर्व गुणस्थानो मे तथा सर्वमार्गणा स्थानो मे पाया जाता है किन्तु अभव्यत्व भाव केवल प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान मे ही पाया जाता ह । सिद्ध जीवो मे दोनो का अभाव हे ।

भव्य भाव चतुर्गति ससार का भी कारण हे आर मोक्ष का भी कारण है । किन्तु अभव्यभाव ससार का ही कारण ह । इन सभी भावो क गुण स्थानो, मार्गणा स्थानो का विवेचन सर्वत्र उपलब्ध ह । अभव्य जीव, माक्ष के कारण वीस भावो रूप वाह्य निमित्त मिलते भी न परिणमगे (1) भव्यत्व पारिणामिक भाव (2) मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान,

मनः पर्ययज्ञान रूप क्षायोपशमिकभाव तथा अवधि दर्शन, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षा. चारित्र, देशसंयम - ये ८ भाव, (3) दो औपशमिक भाव, (4) नव क्षायिक भाव—ये कुल 20 भावरूप निमित्त । इसी प्रकार २१ मार्गणा स्थानों (योग मार्गणा में आहारक द्विक, ज्ञान मार्गणा में मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय, केवल, संयम मार्गणा में असंयम बिना छः संयम, दर्शनमार्गणा में अवधि और केवल, सम्यक्त्व मार्गणा में मिथ्यात्व बिना पाँच सम्यक्त्वों में अभव्यत्व भाव नहीं पाया जाता है ।

मानव जीवन में यह समझ लेना उपादेय है कि दर्शनमोह के उपशामक का परिणाम कैसा होता है ? कसाय पाहुड़ सुत्त (कलकत्ता, 1955) पृ. 615 पर विशेषार्थ है, "दर्शन मोहनीय कर्म के उपशमन करने के लिए उद्यत जीव अधः प्रवृत्तकरण करने के **अन्तर्मुहूर्त पूर्व से ही अनन्तगुणी विशुद्धिके** द्वारा अन्तर्मुहूर्त तक निरन्तर वृद्धिगत विशुद्धिवाला होता है । इसका कारण यह है कि अति दुस्तर, मिथ्यात्व गर्त्त से अपना उद्धार करने के लिए उद्यत, अलब्धपूर्व सम्यक्त्व-रत्न की प्राप्ति के लिए प्रतिक्षण प्रयत्नशील, क्षयोपशम, देशना आदि लब्धियों की प्राप्ति के कारण महान् सामर्थ्य से समन्वित और प्रति समय संवेग-निर्वेद के द्वारा उपचीयमान हर्षातिरेक से संयुक्त सातिशय मिथ्यादृष्टि के अनन्तगुणी विशुद्धि (असंख्यात मात्रा में परिणाम वृद्धिगत) अन्तर्मुहूर्त तक प्रति समय होना स्वाभाविक ही है । (कम्प्युटर ग्राफ) ।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि प्रथमोपशम ही कितने गहरे विज्ञान और गणित से पूर्णतः ओत-प्रोत है और जिसके प्रयोग अनुमान के आलम्बन से समझ के परे नहीं हैं । कौन से अर्थो से होकर गुजरना होगा, उसे संक्षेप में चूर्णिसूत्रों द्वारा समझाया गया है—(वही, पृ. 614 आदि) ।

1) अन्यतर मनोयोगी, अन्यतर वचनयोगी, औदारिक काययोगी या वैक्रियिक काययोगी जीव दर्शन मोह का उपशमन प्रारम्भ करता है । चार में से किसी एक कषाय से उपयुक्त जीव दर्शन मोह के उपशम का प्रारम्भ करता है । (EEG, ECG आदि से निर्मित ग्राफ) नियम से हीयमान कषाय युक्त(reducing emotions) साकारोपयोगी (EEG ग्राफ) तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याओं में से नियम से कोई एक वर्धमान लेश्या (increasing EEG + ECG) तीन में से कोई एक वेद वाला (Sex emotions) ।

दर्शन मोह का उपशमन करने वाले जीव के सभी मूल प्रकृतियां उदयावली में प्रवेश करती है । केवल सत्त्ववाली उत्तरप्रकृतियाँ प्रवेश करती है, यदि पर भवसंबंधी आयु का अस्तित्व हो, तो वह उदयावली में प्रवेश नहीं करती है । (प्रकृतियॉ पौद्गलिक कणों से संबंधित होने से उनके विभिन्न संरचकों को Bubble chamber या अन्य नवीन detector chambers द्वारा पहिचाना जा सकता है । इसी प्रकार व्युच्छिन्न प्रकृतियां भी जानी जा सकती हैं । कम्प्युटर द्वारा यह कार्य अत्यंत सरल हो सकेगा ।

3) अधःप्रवृतकरण (धारा प्रवाही वृद्धिंगत परिणाम ये असंख्यात गुणी मात्रा में अनन्तगुणी विशुद्धि प्रमाण लिए अंतर्मुहूर्त तक नदी की बाढ़ सदृश्य उमड़ते है) के प्रथम समय में न अन्तरकरण होता है और न यहां पर वह मोहकर्म का उपशामक ही होता है, किन्तु आगे जाकर अनिवृत्तिकरण में वे दोनों कार्य होते है । तीनोकरणों की धाराएं अलग-अलग प्रकार की

होने से अपने अपने विभिन्न प्रभावो द्वारा पहिचानी जा सकती है । स्थितिघात सख्यात वहुभागो का घात करके सख्यातवे भाग को प्राप्त होता है । अनुभाग घात अनन्त बहुभागो का घात करके अनन्तवे भाग को प्राप्त होता है । इसलिए इस अध प्रवृत्त करण के चरम समय म वर्तमान जीव के न तो स्थितिघात होता है और न अनुभाग घात होता है किन्तु तदनन्तर समय मे, (अपूर्वकरण के काल मे) ये दोनो ही घात प्रारम्भ होते हैं । तीन करण के सिवाय इस जीव के उपशमनाद्धा भी होती है । तीनो करणो का गणितीय विशद विवरण धाराओं के रूप मे मात्रा एव शक्ति मे गोम्मटसार की कर्णाटकवृत्ति से देखना चाहिए । स्थिति का अनुमान प्राप्त करने हेतु अनेक वैज्ञानिक विधियाँ आविष्कृत हो चुकी जिनमे से किसी यथोचित विधि का उपयोग किया जा सकता है ।

4 कुछ विशेषताए और इन कारणो की पहचान मम्वन्धी हैं—

अ) अनादि मिथ्यादृष्टि के अध प्रवृत्त करण मे स्थिति काडकघात, अनुभाग काण्डक घात, गुण श्रेणी और गुणमक्रम नहीं होता हैं । वह केवल प्रति समय अनन्त गुणी विशुद्धि से विशुद्ध होता हुआ चला जाता है । वह जिन अप्रशस्त कर्मांशो को वाधता है, उन्हे द्विस्थानीय (निम्ब और काजीर रूप) और समय-समय अनन्त गुणी हीन अनुभाग शक्ति से युक्त ही वाधता है । जिन प्रशस्त कर्मांशो को वाधता हे, उन्हे गुड़, खाड आदि चतु स्थानीय और समय-समय अनन्तगुणी अनुभाग शक्ति से युक्त वाधता है । एक-एक स्थिति वन्धकाल के पूर्ण-पूर्ण होने पर पल्योपम के सख्यातवें भाग से हीन अन्य स्थिति वध को वाधता है । इस प्रकार सख्यात सहस्र स्थिति वन्धापसरणो के होने पर अन्तर्मुहूत मात्र स्थिति वध वाले अध प्रवृत्त करण का काल समाप्त होता है ।

व) अपूर्व करण के प्रथम समय मे जघन्य स्थिति खड पल्योपम का सख्यातवाँ भाग है और उत्कृष्ट स्थिति खड सागरोपम पृथक्त्व है । अध प्रवृत्तकरण के अन्तिम समय मे होने वाले स्थिति वध से पल्योपम के सख्यातवे भाग से हीन अपूर्व स्थिति वन्ध अपूर्वकरण के प्रथम समय मे होता है । अपूर्व करण के प्रथम समय मे अनुभागकाडकघात अप्रशस्त प्रकृतियो का अनन्त वहुभाग होता है । विशुद्धि के वढ़ने से प्रशस्त कर्मो के अनुभाग की वृद्धि होती है किन्तु अनुभागघात नहीं ।

(यहाँ, यह वताना आवश्यक है कि जो भी सयत्र प्रणाली इनके प्रमाणो को निश्चित करे और पहिचाने वह प्रकृति सवधी प्राथमिक कण, प्रदेश सवधी गिनती, स्थिति सम्वन्धी गणना तथा अनुभाग या फलदान सवन्धी शक्ति की भी गणना अपने सकेतो, निर्धारित प्रणालियो द्वारा कर सकने मे समर्थ निर्मित की जानी चाहिये ।)

स) अनिवृत्ति करण के प्रथम समय मे अन्य स्थिति खड, अन्य स्थिति वध और अन्य अनुभाग काडक घात प्रारम्भ होते ह जो उक्त सयत्र प्रणाली द्वारा पहिचाने जा सकते है । यहाँ गुणश्रेणि निक्षेप अपूर्वकरण के समान ही प्रति समय असख्यात गुणित प्रदेशो के विन्यास से विशिष्ट और गलितावशेप रूप ही रहता ह । इस प्रकार सहस्रो स्थिति काडक घातो के द्वारा अनिवृत्तिकरण काल के सख्यात बहुभागो के व्यतीत होने पर वह मिथ्यात्व कर्म का अन्तर करता है । अन्तरायाम के समस्त निपेको को प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति मे देने को अन्तरकरण करते हैं । यहाँ सम्पन्न होते ही वह मध्यदीपक न्यास से उपशामक कहाने लगता है और आगे भी मिथ्यात्व के तीन खड करने तक उपशामक कहलाएगा ।

5) प्रथमस्थिति से भी (जो अन्तकरण से नीचे की अन्तर्मुहूर्त प्रमित स्थिति है, और द्वितीय स्थिति (जो अन्तरकरण से ऊपर की स्थिति है) से भी तब तक आगाल-प्रत्यागाल (पारस्परिक कर्मप्रदेशों का आना जाना) होते रहते हैं, जब तक कि आवली और प्रत्यावली (द्वितीयावली) शेष रहती है। उससे आगे मिथ्यात्व (द्रव्य) की गुणश्रेणि नहीं होती, किन्तु शेष कर्मो की होती है। प्रत्यावली से ही मिथ्यात्वकर्म की उदीरणा होती है। उदयावली मात्र प्रथम स्थिति के शेष रहने पर मिथ्यात्व कर्म के स्थिति एवं अनुभाग का उदीरणा रूप से घात नहीं होता।

6) उपर्युक्त विधान से आंवलीमात्र अवशिष्ट मिथ्यात्व की प्रथम स्थिति को क्रम से वेदन करता हुआ उक्त जीव **चरमसमयवर्ती** मिथ्यादृष्टि होता है और तदनन्तर समय में मिथ्यात्व की सर्व प्रथम स्थिति को गला देने पर वह दर्शन मोहनीय कर्म का उपशम करके प्रथमोपशम सम्यक्त्व को उत्पन्न करता है। *तभी ही वह मिथ्यात्व कर्म द्रव्य के मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व* और सम्यक्त्व प्रकृति नामक कर्मांशों को उत्पन्न करता है। (इन अभूतपूर्व कर्मांशों को भी पहिचाना जा सकता है, अणु विभंजन नाभिकीय प्रक्रिया में नये तत्त्वों का निर्माण होता है, क्योंकि ये भी पौद्गलिक हैं।) प्रथम, द्वितीय, तृतीय समय हुए गुणसंक्रमण, विध्यात संक्रमण होते हुए मिथ्यात्वकर्म को छोड़ शेष कर्मो का स्थितिघात, अनुभागघात और गुणश्रेणिरूप कार्य भी पहिचाने जा सकते हैं (detectors द्वारा)।

कसाय पाहुड सुत्त (95, 97) में बतलाया है कि दर्शन मोहनीय कर्म का उपशम करने वाला जीव चारों ही गतियों में जानना चाहिये जो नियम से पंचेन्द्रिय, संज्ञी और पर्याप्तक होता है। वह उपशामक निव्याघात और निरासान होता है। दर्शनमोह के उपशान्त होने पर सासादन भाव भजितव्य है। किन्तु क्षीण होने पर निरासान ही रहता है।

इस प्रकार, आधुनिक विज्ञान के संयत्र योग, कषाय, स्थिति, अनुभाग, प्रकृति प्रदेश की गणना में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जिस सम्यक् दर्शन की उत्पत्ति परम्परा से मोक्ष की प्रदाता है, उसे अनुमान प्रयोगों द्वारा समझ लेना, विज्ञान द्वारा सहज हो सकता है। इनके गहन अध्ययन आज के युग में और भी अधिक महत्त्व रखते हैं। लब्धिसार में इनका विवेचन समझ लेने पर, अंकादि सदृष्टियों-से हृदयंगम कर ध्यान की स्थिति में लाया जा सकता है। विशेष रूप से धारा प्रवाही करणत्रय का इंन्द्रिय-मन जन्य अनुमान लगाना कहाँ तक सम्भव है—यह प्रश्न अव वैज्ञानिकों को एक चुनौती है। पौद्गलिक (भौतिक) शास्त्र अव एक ऐसे मंच तक पहुँच चुका है जिसका दोहन कर हमें उक्त समझ तक ले जाना श्रेयस्कर ही हो सकता है।

यह स्पष्ट ही है कि करण लब्धि जन्य परिणाम अभूतपूर्व होते होंगे और कर्म पुद्गल पर अभूतपूर्व प्रभाव डालते होंगे जिन्हें वैज्ञानिक विधियों द्वारा पहिचाना जा सकना सम्भव प्रतीत होता है। यह भी स्पष्ट है कि कर्मो की अपेक्षा न रखने वाले भव्यत्व और जीवत्व पारिणामिक भावों की भूमिका क्षमादि भाव प्रवाहों की क्षमतादि अत्यन्त गहन रहस्य से भरी है। उनका (क्षमादि भाव प्रवाहों का) करणलब्धि के परिणामों से क्या सम्बन्ध हो सकता है, यह भी खोज शोध का वैज्ञानिक विषय है जिसमें विज्ञान की चरम सीमा वाली खोजों और शोधों को प्रयुक्त किया जा सकता है—एक टीम वर्क द्वारा और अव इतने प्रतिभा सम्पन्न मुमुक्षुओं की आज

विश्व मे कमी भी नही है । विज्ञान की सार्वभौमिकता, एक ही भाषा, पूर्वाग्रह एव मताग्रह से रहित प्रयास की रगभूमि, क्या अव जैन कर्म विज्ञान और उससे भी परे पारिणामिक भाव विज्ञान के नये आयामो को नयी विधाओं के रूप मे अवतरित नहीं कर सकती है ? परम पारिणामिक भाव के गहनतम भेद-रहस्य को भी खोलने के अव अनुपम प्रयास हो सकते हैं यदि हम निष्पक्ष भाव से, कल्याण भाव से, मन और हृदय के नये अनुवन्धो को नये सिरे से स्वीकार करते चले ।

परिशिष्ट

यह दृष्टि वदलने की प्रक्रिया है जिसके लिये पाचवी लब्धि—करणलब्धि ही सक्षम है, जिसमे परिणामो का प्रवाह कैसा होता है, मैंने लिखा है—गणितीय प्रमाण होने से किसी न किसी तरह अनुमानित किया जा सकता है जैसे प्राथमिक कण (Elemental Particles) जो इंद्रिय गम्य नही। अव प्रश्न है कि मिथ्यात्व गुण स्थान वाली दृष्टि क्या है—कर्ता और कर्म की, अपने और पराए की—यह +ve और -ve ध्रुवीकरण सदैव रखती है, किसी को अपना वनाओ तो शेप पराये हो जाते हैं और ससार परिभ्रमण स्थिति और अनुभाग का वध लिये इस ध्रुवीकरण के सहारे प्रोटान-इलेक्ट्रान के ध्रुवीकरण के कारण स्थिति अनुभाग लिए तव तक चलता रहता है जव तक यह ध्रुवीकरण दृष्टि discharge नही होती । कर्त्ता और कर्म तथा अपना और पराया यह ध्रुवी दृष्टि एक ऐसा Field (gravi or electr or nuclear) उत्पन्न कर देती है कि उसमे चरण तदनुसार होता चला जाता है । वह चरण इस ध्रुवीकरण के कारण (due to polarization) (प्रकृति वश जो पूर्वाग्रह या मताग्रह रूप होता है) अनन्त (ससार) के अनुवध मे निमित्त हो जाता है । ध्रुवीकृत दृष्टि को वदलना अपने आप मे एक विशालतम प्रयास है उस ध्रुवीकरण को discharge करने का, क्योंकि सभी Fields के चरण कपायरूप मे (चारित्र मोहनीय रूप मे) चलाने हेतु वही ध्रुवीकृत दृष्टि उत्तरदायी है ।

अव प्रश्न उठता है कि ऐसे विशालतम पुरुपार्थ को स्वतत्रता की ओर वढ़ने की प्रवृत्ति को, ध्रुवीकरण के सस्कार को नष्ट करने के प्रयास को सफल वनाने हेतु हमारे पास क्या विशेपता है ? जीवत्व तो सभी जीवो मे है, सदैव रहेगा, स्वल्प चेतना रूप या सिद्ध चेतना रूप। दर्शन-ज्ञान चेतना रूप अल्प-वहुत्वरूप मे रहेगा, चाहे तो ध्रुवाच्छादित रूप मे या अध्रुवाच्छादेत मिथ्या दृष्टि रूप मे या सम्यक् स्वतत्रदृष्टि रूप मे, प्रथम गुणस्थान मे अथवा अगले गुणस्थानो मे । जव तक ध्रुवीकरण रूप दृष्टि है वह मिथ्या दर्शन ज्ञान रूप मे परिणमनशील रहेगा, किन्तु कर्म से निरपेक्ष दृष्टि से रगा हुआ ध्रुवीकरण के घनात्मक और ऋणात्मक रूप से परिणमन शील होता। जो दृष्टि को वदलने का प्रश्न उठता है जो ध्रुवीकरण उत्पन्न किये हुए है—कर्ता और कर्म की, अपने और पराए की । वदलना एक प्रक्रिया मे सहायक हो सकता है, एक तो वाह्य निमित्त जिसने करण लब्धि हमारे हाथ मे रख दी है—जो भव्यत्व को ही प्राप्य है अभव्यत्व को नही । शेप चार लब्धिया ससार मे कहीं भी घुमाते रहे वे अभव्यत्व रूप परिणाम को लिए हुए ही होगे, नोग्रेवेयिक तक ही क्यो न हो— किन्तु भव्यत्व का परिणाम अभूतपूर्व—यहाँ करणलब्धि से प्रारभ होगा अभी तक दोनो ध्रुवीकरण वद्ध थे, दोनो ही चार

लब्धियों का अनादिकाल से उपयोग करते हुए परतंत्र थे—संसार मे परिभ्रमण करते हुए उस दृष्टिवश । पर अव भव्यत्व की काल लब्धि ने, बाह्यनिमित्त वश अधःप्रवृत्तादिकरणों का पुरुषार्थ संवेग रूप में, समुद्र के ebb रूप में, tide रूप में नहीं, निज की और तूफान लाने से, जहाँ सभी समुद्र की ओर खिंचे चले जाते हैं— बाहर की ओर नहीं, सागर की दिशा की ओर, केन्द्र की ओर ।

जो **ध्रुवीकरण** अणु के नाभिकीय बंध का कारण है, उसे तोड़ने (अर्हत् वचन लेख, वर्ष 2 अंक 1, पृ. 7-12, 1989 न्यूट्रान (उदासीन परिणाम) तीव्र योग को विमन्दित करते तथा अनन्तानुबंधी कषाय को विसंयोजित करने वाले परिणामों द्वारा उक्त ध्रुवीकरण की **तीन रूप से** विच्छेदित करते हुए, यह त्रिकरण का पराक्रम कैसे होता होगा, यह प्रश्न है । कर्मो से निरपेक्ष भी । बिना योग विमंदन के न्युट्रान श्रृंखला बद्ध प्रक्रिया नहीं कर सकता जिससे नाभि टूट कर तत्व तीन में टूटता है । इसी प्रकार यहाँ भी योग का विमन्दन, "एवं जाने दो" रूप निर्मल परिणामों का समुद्री भाटा रूप परिणामों की श्रृंखलावद्ध प्रक्रिया इनमें अधिक अन्तर नहीं होना चाहिये—क्योंकि द्रव्य और गुण पर्याय जीव में भी तथा परमाणुओं में भी अगुरुलघुत्व के कारण चलती ही है । "जाने दो" रूप निर्मलतम सशक्त परिणामों की श्रृंखला निश्चित ही क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आंकिचन रूप, ऐसी होगी जो क्रोध, मान, माया लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और अंततः स्त्री पुं-नपुंसक वेदों के परिणामों को निरस्त करती हुई प्रक्रिया करेगी । हॉ, इस अनन्तानुबंधी का विसंयोजन करते हुए यह तूफान जो समुद्र के भाटे के रूप में तीन श्रृंखलाबद्ध लहरों को लिए हुए (अधःप्रवृत करणादि रूप तीन परिणामों की विशालतम प्रवाहों भरी मात्रा और शक्ति को लिए हुए) क्रोधादि की अनंतानुवंधी लहरों को एक बारगी विसंयोजित कर देती होगी । फिर वे ध्रुवीकरण पर आक्रमण करती होंगी—किस रूप में कि ध्रुवीकरण से उत्पन्न अवस्था में जो अनन्तानुवंधी का प्रक्रम चला आ रहा था, अनन्तानुवंधी प्रक्रम को एक बारगी विसंयोजित कर, अकेले ध्रुवीकरण की नाभि पर प्रहार उन परिणामों की लहरों का होता होगा, जो उन परमाणुओं और ध्रुवीकृत परिणामों में उदासीनता (न्युट्रान की उत्पत्ति, जिसमें स्थितत्व और रुक्षत्व चरमहीनता तक पहुँच जाता है) को **उदासीन परिणामों** को उत्पन्न—श्रृंखलावद्ध प्रक्रिया में करती चली जाती होंगी । यही मिथ्यात्व का विभंजन तीन प्रकार के परिणामों के रूप में तथा तीन प्रकार के द्रव्य रूप में होता होगा । अस्तु । ये क्षमादि रूप इस सीमा तक उठने वाले भाटा रूप परिणाम, भव्यत्व की संज्ञा को प्राप्त होना चाहिए, जिस सीमा तक अभव्यत्व का परिणाम नहीं पहुँच पाता होगा। अर्थात् इतनी क्षमा, इतना मार्दव जो सभी अनन्तानुवंधी तीव्रतम कपायों को विसंयोजित करने में समर्थ हो । अतः भव्यत्व स्वतंत्रता की ओर प्रवृत्त समुद्री भाटा तीन लहरों रूप होना चाहिए ।

दीक्षा ज्वेलर्स,
554 सर्राफा, जवलपुर

❑❑

तेजस्वी प्रभामण्डल व्यक्ति और समाज का रक्षा कवच है

☆ नवीन जैन

लेख मे उद्धृत पुस्तक 'The Psychic Sense' के लेखको के मानव के प्रभामण्डल के प्रत्यक्ष दर्शन के आधार पर किये गये निष्कर्ष जैन सिद्धान्त के बहुत निकट है। जैनाचार्यों की भाँति वे भी कह रहे हैं—(1) मानव का प्रभामण्डल बाह्य भोजन पान आदि से तेजस्वी नही बनता, वरन् ज्ञान के निर्मल, तीक्ष्ण व्यापार के परिणाम स्वरूप स्वत तेजस्वी बन जाता है, राग द्वेषादि भाव उसे धुँधला करते हैं। (2) तेजस्वी प्रभामण्डल बाह्य प्रदूषण से मानव की रक्षा करता है, वातावरण को शात, क्षोभ रहित करता है, अन्यों के भी कष्ट निवारण मे सहायक होता है, जड़ पदार्थों पर अपना प्रभाव छोड़ देता है।

लेखको के ये निष्कर्ष आचार्य अमृत चन्द्र के कथन का कि बोध के अतिरिक्त मानव अन्य फल की इच्छा न करे तथा अन्य द्रव्य की रचना करने की आकुलता से बचे (ल तत्त्व स्फोट 2/10 एव 17) का रहस्य प्रकट कर देते हैं। ज्ञान के निर्मल व्यापार मे लीन मानव के बाह्य कार्य उसका प्रभामण्डल ही निबटा देता है, उसे स्वय को भाग-दौड़ करने की कोई विशेष आवश्यकता नही है। जब मानव कुछ भी तल्लीन हो कर करता है तो ज्ञाता ज्ञान-ज्ञेय की, कर्त्ता-कर्म-कृत्य की, ध्याता ध्यान ध्येय की घटित होने वाली एकता को जैनाचार्यो की निश्चय की कथनी को The Psychic Sense पुस्तक के लेखको के कथन प्रकट समर्थन कर रहे हैं।

जैनाचार्य निश्चय मे घटती इस एकता को अहिंसा का बहुत बड़ा आधार मानते हैं, क्योंकि निश्चय मे मानव के द्वारा मारा जाने वाला व्यक्ति वह स्वय ही है। व्यवहार से ही मानव अन्य को मारता है, अन्य पर करुणा करता है, अन्य को पढाता है अन्य की भक्ति करता है। निश्चय मे तो वह स्वय का भगवान, स्वय का शिष्य स्वय ही बनता है, सम्पूर्ण विश्व स्वय बनता है। जैनाचार्य निश्चय के इस पक्ष को अहिसा का ही आधार नहीं बनाते हैं, वरन् अपने में से सर्वभय निकाल देने पर अन्य द्वारा अपने पर आक्रमण को भी असमव हुआ मानते हैं। फिर भी कोई आक्रमण होता है तो उसे पूर्व के किसी निकाचित कर्म का उदय मानकर अपवाद रूप स्वीकार करते हैं। आ अमृत चन्द्र ल तत्त्व स्फोट 13/18 मे कहते हैं 'जो वस्तु आपके लिये (ज्ञाता के लिये) अत्यन्त स्पष्ट हो रही है वह भी कारकों के समूह को अपने अनुरूप करती है। क्योंकि निश्चय और व्यवहार की सहति (सघठन) रूप जगत की स्थिति किसी भी तरह हानि को प्राप्त नही होती है।' व्यवहार का पक्ष कैसे घटित हो जाता है इसे प्रभामण्डलीय चर्चा से हम थोड़ा समझ सकते हैं।

—सम्पादक

हमारे ती शरीर होते हैं—औदारिक, तैजस और कार्माण । प्रथम स्थूल है । तैजस और कार्मण सूक्ष्म हैं । यहाँ पर सूक्ष्म शरीर के रूप में हम तेजस की विद्युत शरीर की चर्चा कर रहे हैं । चेहरे पर ओज, वाणी में तेज्ज सूक्ष्म शरीर के कारण होता है । हमारे स्थूल शरीर के समानान्तर ही उसी आकार का प्रभा मण्डल सूक्ष्म शरीर के कारण ही होता है । इस सूक्ष्म शरीर का निर्माण हमारे भावों व विचारों पर आधारित होता है । जिसकी प्राण शक्ति जितनी सशक्त होगी उतना ही प्रभावशाली सूक्ष्म शरीर या प्रभामण्डल होगा ।

हमारे हर क्षण भाव/विचार/लेश्या/कषाय बदलती रहती है और तदनुरूप ही प्रभामण्डल की सघनता/विरलता/रंग परिवर्तित होता रहता है । यह कोई सैद्धान्तिक बात ही नहीं है अपितु अब वैज्ञानिक कसौटी पर भी कसी जा चुकी है । ऐसे यंत्रों का आविष्कार हो चुका है जिनसे प्रभामण्डल को देखा जा सकता है । तीर्थंकर देव के प्रभामण्डल के तेज के सामने तो सूर्य की तेजी भी फीकी पड़ती है ।

प्रभामण्डल से आस-पास का क्षेत्र भी प्रभावित होता है । अनेक ऐसे लोग मिलते हैं जिनसे प्रथम बार में ही आजीवन सघन मित्रता हो जाती है और किसी से हमेशा दूरी बनी रहती है । इसका कारण अनेक प्रभामण्डलों में परस्पर आकर्षण-विकर्षण है । कई साधुसन्त ऐसे होते हैं जिनके चरणों में पहुँचते ही समस्या का स्वतः ही निराकरण हो जाता है । सौ योजन तक सुभिक्ष का हो जाना, सब ऋतुओं के फल-फूल का खिलना, गाय, शेर का वैर भूल कर मैत्री भाव अपनाना आदि अतिशय तीर्थंकर के प्रभामण्डल के प्रभाव के कारण से ही है ।

व्यक्ति के मानस में जिन विचारों की तरंगें चलती हैं वे प्रभामण्डल में आकार भी ग्रहण करने लगती है । The Psychic sense पुस्तक के पृष्ठ 113-114 पर एक ऐसा ही उदाहरण देखने को मिलता है । इसमें एक लड़की के बारे में बताया गया है जो कि अपने नेत्रों से प्रभामण्डल को देख सकने में समर्थ थी । इसने एक मृत कवि की कविता पर भाषण दे रहे एक वक्ता के पूरी देह में व्यापा हो रहे प्रभामण्डल में बाँयी ओर इस मृत कवि का स्पष्ट आकार देखा । वह वक्ता जितनी गहराई में उस कवि पर विचार करता उतना ही गहरा व स्पष्ट उसका आकार दिखाई देता । बाद में जब इस वक्ता ने अपना भाषण समाप्त कर दिया तो इस मृत कवि की आकृति भी समाप्त हो गई ।

अन्य शब्दों में, व्यक्ति की मानसिक संवेदनाऐं प्रभामण्डल रूपी स्क्रीन पर फिल्म की भाँति क्रमवार आती रहती है । संकल्पशक्ति, आत्मविश्वास, संयम से व्यक्ति अपने प्रभामण्डल को प्रभावी बना सकता है । प्रभामण्डल जितना कमजोर होगा व्यक्ति उतना ही अधिक बाहरी वातावरण, प्रदूषण, रोग से आक्रान्त रहेगा, तथा सशक्त तेजस्वी प्रभा मण्डल मानव की बाह्य प्रदूषण एवं आक्रमण से कवच की भाँति रक्षा करता है । ऐसा नहीं है कि प्रभामण्डल मात्र मनुष्य या अन्य प्राणियों का ही होता है अपितु यह जड़ पदार्थों का भी होता है । जगह, क्षेत्र का अपना प्रभामण्डल होता है । यह अवश्य है कि जड़ पदार्थों का प्रभामण्डल स्वयं अपने से निर्मित न होकर मानव आदि चेतन प्राणियों के संसर्ग से उत्पन्न होता है । अतिशय क्षेत्र, तीर्थ क्षेत्र या सिद्धक्षेत्र पर आप जावेंगे तो एकाएक शान्ति व सुख की अनुभूति होगी व धर्मध्यान, पूजा अर्चना के भाव होंगे । ऐसी भावना क्या सिनेमाघर, कैफेटेरिया या क्लब में होगी ? आज जिन अतिशय क्षेत्रों पर भोग-विलास का, सुख उपभोग का क्रम प्रारम्भ हो गया है लोग पिकनिक के भाव से जाने लगे है, क्या वहाँ का प्रभामण्डल इससे विकृत नहीं होता जा रहा है ?

अत आवश्यकता है कि हम अपनी ऊर्जा का उर्ध्वीकरण कर प्रभामण्डल को सशक्त बनाये ताकि इहलौकिक शान्ति तथा पारलौकिक सुख को प्राप्त कर सके व जीवन को सार्थक कर सके ।

हम सत्सगति करे, ज्ञानाभ्यास मे रत हो, प्रासुक शाकाहारी भोजन करे, किसी के प्राणो को पीड़ा देकर कुछ भी प्राप्त करने का प्रयास न करे तो हम देखेगे कि हम चारो ओर एक तेजस्वी प्रभामण्डल सहित साक्षात् निर्विघ्न जीवन पथ के राही हैं और जिधर हम कदम बढ़ाते ह इह लोकिक और पारलोकिक सफलता अनायास ही हमारे चरण चूम रही हैं ।

उपरोक्त विषय को और स्पष्ट करने हेतु हम Phoebe D payne तथा Lawrence J Bendit द्वारा लिखित पुस्तक The Psychic Sense से कुछ उद्धाहरण दे रहे हैं—

आत्मा (जीव) दो प्रकार की देह रखता है—सूक्ष्म जिसे वे Psychic organism कहते हे तथा स्थूल भौतिक देह (पृ 124) । सूक्ष्म शरीर का प्रभामण्डल व्यक्ति के विचार एव भाव (Feeling) के हर परिवर्तन को तुरन्त ग्रहण करता है (125) । 'बौद्धिक व्यक्ति का सक्रिय प्रभामण्डल सिनेमा के पर्दे के समान होता है । उस पर आकार आत्मा द्वारा/ विचार कर्ता द्वारा उत्पन्न किये जाते है—सक्षिप्त विचार सरणी (chain) का अनुगमन करने वाला विचारकर्त्ता चित्रा के अथवा आकारो के क्रम को उत्पन्न करता है जो फिल्म के चित्रो की तरह चलते ह, रूपी (concrete) पदार्थो सम्बन्धि विचार उन पदार्थों जैसे ही लगभग बिम्ब उत्पन्न करते हैं—गृह निर्माण मे सलग्न architect उस मकान को अपने मानसिक प्रभामण्डल के भीतर विचार सामग्री मे उत्पन्न करता हे, और जो कुछ अपने मे देखता है उसे अपनी तजवीज (Plans) मे खींच देता हे । भाजन करता है, और वह अपने विचार को एक ओर रख देता है जिस पर वह धुधला होता हुआ गायब हो जाता है केशामर बिल्ली की भाँति । बाद मे, वह अपने विचारो को लौट आता हे और आकार पुन प्रकट हो जाते है जैसे ही वह उन पर कार्य करना आरम्भ करता है। सभवतया भोजन के दारान उसका अचेतन मस्तिष्क (लब्धि) design पर कार्य करता रहा ह, आकार को रूपान्तरित करता हुआ (modifying) ताकि इसमे अब बदलाव और सुधार है। (126) 'न केवल शुद्ध विचार बहुत कम होता है, बल्कि करीब करीब समस्त साधारण विचार भाव (Feeling) से रगा होता है—जितना अधिक भाव किसी पदार्थ के विचार से जुड़ा होता हे, उस विचार का उतना ही कम निश्चित आकार होता है । जितना अधिक शक्तिशाली विचार होता ह, उतना ही आकार अधिक स्पष्ट प्रकट होता है, भाव का रग आकार से गौण होने के कारण (P 128) Negative Psychic (कमजोर प्रभामण्डल वाले) का प्रभामण्डल अन्य व्यक्ति के उपस्थित वातावरण को ब्लाटिग पेपर की भाँति सोख लेता है । Positive Psychic (सशक्त प्रभामण्डल वाला) को किसी भी चीज का अहसास नही होगा, अथवा यदि उसका वातावरण पर ध्यान भी चला जाये तो वह अप्रभावित रहता है, और लिप्त नही होता । वास्तव मे, यदि वह काफी बलवान होता है, वह अपने प्रभामण्डल के अनुदान से गड़बड़ियो को स्थिर अथवा सगत कर देता है । यह बिना एक शब्द बोले किया जा सकता है, यद्यपि एक उपयुक्त कथन (remark) उत्प्रेरक के रूप मे कार्य करेगा आर परिस्थिति का सुलझाव आरभ कर देगा । (137 - 38)

ठीक जैसे लोग अपना वातावरण (atmosphere) बनाते हैं और लेकर चलते ह, इसी तरह जगह और चीजे अपने विशेष प्रभामण्डल रखते ह । यद्यपि ये जीवित प्राणियो से भिन्न

स्तर (order) के होते हैं । वे वातावरण अपने भीतर में से उत्पन्न करते हैं, यह उनके आन्तरिक जीवन अथवा आत्मा का उत्पादन है । अजीव पदार्थ के मानसिक (Psychic) शक्ति के केन्द्रिय फोकस के रूप में जीवित आत्मा नहीं होती, और उसका प्रभामण्डल स्वयं-निर्मित नहीं होता, वह बाह्य तत्त्व (Factors) द्वारा बनाया जाता है । दुर्घटना, हत्या या कोई दूसरी दुःखद घटना संवेगों (कषायों) से युक्त उस स्थान पर मजबूत असर छोड़ते हैं ।" (P. 139)

"स्थूल देह के स्तर पर ऐसा व्यक्ति प्रवाहमान् ऊर्जा वाला, (तेजस्वी, प्रभामण्डल वाला) बड़े पैमाने पर संक्रामक रोगों से और बीमारी लगने से वच जाता है । जिसका ऊर्जा प्रवाह कुंठित है (अर्थात् जिसका प्रभामण्डल हीन तेज है)—रोगाणुओं के प्रभाव के प्रति अरक्षित होता है ।" (P.147)

❑❑

"यह विचार कि ऊर्जा कृपा अथवा प्रार्थना से अथवा "हाथ रखने से" स्थानांतरित की जा सकती है , कैनन विलियम वि. रेशर, न्यू जरसी द्वारा समर्थित हुई है । वह बताते हैं कि कैना के पौधे उनके गिरजाघर के पास सात फीट ऊँचे बढ़ गये हैं । उनका विश्वास है कि यह असाधारण बढत उनके baptism और धार्मिक क्रियाओं से छूटा पवित्र पानी उन्हें (पौधों को) दिये जाने के कारण है । वह इन फल फूल रहे कैना पौधों की तुलना उसी समय लगाये गये लेकिन कभी पवित्र पानी नहीं दिये गये, से करते हैं—बाद वाले दो फीट से भी कम ऊँचे हैं ।" ...प्रो. आटो रान की खोज जो कोषों और नसो (tissues) से आने वाले लाभदायक एवं हानिकारक विकीरण के उदाहरण देती हैं कि चर्चा करते हुए श्वार्ज कहते है कि कुछ रजस्वला महिलाये "फूलों को कुम्हला देती हैं, मशरूम की क्यारियों को नष्ट कर देती हैं, खमीर एवं फफूंद की प्रक्रिया (bacterial culture) को गड़बड़ा देती है.....। "

जान विटमैन कृत
The Psychic Power of Plants पृ. 97-98

रोटी ही खाते ह । वीर्यान्तराय कर्म से ग्रसित व्यक्ति श्रावक या मुनि के व्रतो को ग्रहण नही कर पाता । सम्यग्दृष्टि होने पर भी क्षुधा, तृषा, शीतादि की वेदना को सहन नहीं कर पाता । अन्तराय कर्म का उदय ही था भगवन् आदिनाथ को कि छ माह आहार हेतु विहार करते रहे और आहार नही मिल पाया ।

अन्तराय कर्म का कार्य—अन्तराय कर्म के उदय से जीव चाहे सो नही होय है । वहुरि तिसही का क्षयोपशमते किंचित् मात्र चाहा भी होय ।'

अन्तराय कर्म के बन्ध योग्य परिणाम—

तद्विस्तरस्तु विघ्रियते-ज्ञानप्रतिषेध- सत्कारोपघात - दानलाभभोगोपभोग वीर्यस्नानानुलेपनगन्धमाल्याच्छादनविभूषणशयनासन भक्ष्य भोज्यपेय लेह्य परिभोग विघ्नकरण - विभवसमृद्धि विस्मय - द्रव्यापरित्याग - द्रव्यासप्रयोगसमर्थनाप्रमादावर्णवाददेवता निवेद्यानिवेद्यग्रहण - निरवद्योपकरणपरित्याग - परवीर्यापहरण धर्मव्यवच्छेदनकरण - कुशलाचरण तपस्वि गुरु चैत्यपूज्योव्याघात - प्रव्रजितकृपणदीनानाथवस्त्रपात्र प्रतिश्रयप्रतिषेधक्रिया-परनिरोध बन्धन गुह्याङ्गछेदन - कर्णनासिकौष्ठकर्तन - प्राणिवधादि । रा वा ६/२७ ज्ञान प्रतिषेध, सत्कारोपघात, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, स्नान, अनुलेपन गन्धमाल्य, आच्छादन, भूषण, शयन, आसन, भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और परिभोग आदि मे विघ्न करना, विभव समृद्धि मे विस्मय करना, द्रव्य का त्याग न करना, द्रव्य के उपयोग के समर्थन मे प्रमाद करना, अवर्णवाद करना, निर्दोष उपकरणो का त्याग न करना, दूसरे की शक्ति का अपहरण, धर्म व्यवच्छेद करना, कुशल चारित्र वाले तपस्वी गुरु तथा चैत्य की पूजा मे व्याघात करना, दीक्षित, कृपण, दीन, अनाथ को दिये जाने वाले वस्त्र, पात्र, आश्रय आदि मे विघ्न करना, पर निरोध, बन्धन, गुह्य अगच्छेद, कान, नाक ओठ आदि का काट देना प्राणिवध आदि अन्तराय कर्म के आस्रव के कारण ह ।

प्रश्न— अन्तरायकर्म घातिया हे तथापि उमे अघातिया के अन्त मे क्यो रखा ?

उत्तर— घादीवि अघादि वा णिस्सेम घादणे असक्कादो ।
णामतियाणिमित्तादो विग्घ पढिद अघादि चरिमम्मि ॥१७॥ गो क

अन्तराय कर्म यद्यपि घातिया ह, तथापि अघातिया कर्मो के समान जीव के गुणो को पूर्णरूप से घातने मे समर्थ नही हे । नाम, गोत्र और वेदनीय के निमित्त से ही अन्तराय कर्म अपना कार्य करता हे इसी कारण उसे अघातिया कर्मो के अन्त मे कहा है ।

अन्तराय कर्म का स्वभाव "भडारी के समान हे । जेसे दान देने को तत्पर सेठजी को मुनीमजी के द्वारा रोक देना । कहा भी है ।

"दातारी दान दे भडारी का पेट फटे"

अन्तराय कर्म की स्थिति—

आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटी कोट्य परा स्थिति ॥१४॥
आदि के तीन कर्म व अन्तराय कर्म की स्थिति उत्कृष्ट से तीस कोटा-कोटि सागरोपम है ।

अन्तराय कर्म की जघन्य स्थिति अर्न्तमुहूर्त है ।

मूल प्रकृति अन्तराय कर्म का नो कर्म—

भंडारी मूलाणं णोकम्मं दवियकम्मं तु ॥६९॥ गो. क.

"भंडारी" अन्तराय कर्म का नो कर्म है जो कर्मोदय के लिए भोगोपभोग वस्तु में विघ्न करता है ।

नो कर्म—जो उसके भले-बुरे में सहायक हो वही उसका नो कर्म है ।

अन्तराय कर्म के उत्तर-भेदों के नो कर्म—

दाणादि चउक्काणं विग्घगणगपुरिसपहुदी हु ॥८४॥ गो. क. ।

दानादि चार अन्तरायों का नो कर्म दानादि में विघ्न करने वाले पर्वत, नदी, पुरुष, स्त्री आदि हैं ।

इस प्रकार अन्तराय कर्म के कार्य को देखकर मनुष्य को जीवन में कदम-कदम पर विचार करके कार्य करना चाहिये । इसका नाश करने के लिये पुण्य कार्य एवं संयमाचरण करना चाहिये। प्राणी मात्र का कर्तव्य है कि किसी भी जीव के किसी भी शुभ कार्य में बाधक नहीं बने। एक बार दी बाधा अनेक भवों तक अन्तराय कर्म के रूप में जीव को परेशान करती है । अतः सभी शुभ कार्यों में उत्साह पूर्वक सम्मति प्रदान कर अन्तराय कर्म का क्षय करें ।

❑❑

"हे शान्ति से परिपूर्ण आत्मन् ! मोक्ष मार्ग में अवतीर्ण होने पर आप स्वयं स्व-प्रकाश को प्राप्त हुए । अन्यों के कर्कश, कुतर्कपूर्ण वाक्यों से निदा किये जाने पर भी आपका वोध शिथिल नहीं हुआ ।[9/1] परमार्थ के श्रेष्ठ विचार को प्राप्त कर आपने निष्कम्प रूप से अकेले रहने की प्रतिज्ञा की थी, अन्तरंग और बहिरंग परिग्रह का त्याग किया था तथा दीनजनों पर दयावान हुए थे ।[9/2] आगम के अनुसार अस्खलित दृष्टि वाले आपका किसी के प्रति पक्षपात नहीं था । तथापि, समस्त जीवों के प्रति तो वलपूर्वक ही मानों आपका पक्षपात था और आप छह काय के जीवों की रक्षा करते थे ।[9/3] सूर्य क्री किरणों से उत्पन्न अग्निकण सभी ओर से आपके शरीर को जलाया करते थे । वे कर्मफल के परिपाक की इच्छा करने वालेआपके लिये अमृत कणों के समान थे ।"[9/4]

—आ. अमृत चन्द्र कृत
लघुतत्त्व स्फोट

जीवन में सदाचार का महत्व

☆ लेखक—वाणी भूषण सत्यधर कुमार सेठी
उज्जैन

जैनाचार्यों के अनुसार मानव दो पक्षो वाला है (1) प्रदेशों की अपेक्षा देह-प्रमाण है (2) ज्ञान की अपेक्षा गगन प्रमाण हैं। देह पक्ष में सदाचार का अर्थ है ऐसा कुछ भी बोलना या करना नही जिससे छोटे बड़े किसी भी जीव को कष्ट हो। ज्ञान पक्ष मे सदाचार का अर्थ है ज्ञान को एकातिक विचारो की सकीर्णता से मुक्त करना, चित को घृणा, द्वेष, क्रोध, मान आदि दुर्भावों से मलिन न करना। इस प्रकार का दोनो स्तरों का सदाचरण मानव को तो परमात्मा बनायेगा ही समूचे राष्ट्र को भी सुखी, सशक्त, समृद्ध कर देगा।

—सम्पादक

भारतीय सस्कृति का आदर्श मानवीय गुणो का विकास है। इसका आधार है-सदाचार। सदाचार का अर्थ है जीवन की हर क्रिया मे अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकात विचारो का दर्शन हो। इनके विना न राष्ट्र का निर्माण हो सकता, और न राष्ट्र मे रहने वाले मानव के जीवन का निर्माण हो सकता। विश्व के समस्त धर्मों ने इसको स्वीकार किया है। जैन धर्म के विशाल साहित्य मे सबसे अधिक बल आचरण पर ही दिया गया है। बड़े-बड़े ऋषियो ने लिखा है कि "आचार प्रथमो धर्म। आचरण ही धर्म है। विना आचार शुद्धि के जीवन मे धर्म का अवतरण नहीं हो सकता। इसीलिये भगवान् महावीर ने सबसे पहिले अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकात विचार धारा को ही जीवन मे महत्त्व दिया है। सब से पहिले इन्ही तीनो सिद्धान्तो को जीवन मे उतारने के लिए भगवान् महावीर एकात साधना के लिए जगल के एकात प्रदेश मे गये। वन्य प्रदेश में बैठकर तप सयम और त्याग के बल पर अपने जीवन का निर्माण किया और उनका जीवन बिल्कुल निर्विकारी और आदर्श बन गया। उन्होंने निर्णय किया कि आचार मे अहिसा की आवश्यकता है और विचारो मे अनेकात की। भगवान् महावीर ने राष्ट्र को प्राणवान् बनाने के लिए इन तीनो ही विचारो का प्रचार और प्रसार करने के लिए अपना समस्त जीवन अर्पित कर दिया। वे अनेकात और सही अपरिग्रह के पूर्ण समर्थक रहे। उन्होंने कही भी पथ भेद, विचार भेद, समाजगत भेद और भाषा गत भेद को महत्त्व नही दिया। उन्होंने प्राणीमात्र को एक ही दृष्टि दी। वे सच्चे रूप मे सर्वोदयी विचार धारा के महापुरुष थे। सत विनोबा भावे जैसो ने बार-बार कहा था कि सर्वोदय सिद्धात भगवान् महावीर का है जिन्होंने प्राणिमात्र को जीवन जीने का पाठ पढ़ाया है। वनस्पति, जल और थल सब मे उन्होंने प्राण बतलाये और कहा कि इनका व्यर्थ मे विदारण करना राष्ट्रीय

अपराध है। इसीलिये जैन साहित्य में जगह जगह लिखा है कि वनस्पति और पानी की बूँद में भी असंख्य जीवित कीटाणु हैं। और इनको नष्ट करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। यदि इनका कोई व्यर्थ में हनन करता है तो वह राष्ट्र को हानि पहुँचाता है, इसलिये भगवान् महावीर ने यही कहा कि जीवो और जीने दो। महावीर के इन विचारों का प्राणिमात्र ने स्वागत किया, मानव में मानवीय भावनायें जागृत हुई और संपूर्ण राष्ट्र सुखी और समृद्ध बना। महावीर के मार्ग में वर्णभेद और जाति भेद को भी कोई महत्त्व नहीं है। उन्होंने यमपाल जैसे चण्डाल को भी ऊँचा उठाया, इतना महत्त्व दिया कि स्वर्ग से आकर इन्द्र ने उसकी पूजा की। कितना ऊँचा आदर्श है भगवान् महावीर की विचारधारा का। महावीर जयंती के पुनीत अवसर पर हमें आत्म निरीक्षण करना है कि आज हम कहाँ जा रहे हैं और उस महा मानव के सिद्धांतों पर हम कितना परिपालन करते हैं। जयकारे बोलने से न महावीर जिंदा रहेंगे और न संस्कार जीवित रहेंगे। आवश्यकता है हम उनके पवित्र सिद्धातों को जीवन में उतारें और बिना किसी भेदभाव के उनके प्रचार के लिये अपने कदम आगे बढ़ावें। आज चारों तरफ महावीर के सिद्धांतों पर हनन हो रहा है। इस महावीर के देश में चारों तरफ कत्लखाने खुल रहे हैं, माँसाहार और अंडों का प्रचार बढ़ता जा रहा है। मानव दानव बनता जा रहा है। सदाचार के दर्शन तक नहीं है। हत्यायें बलात्कार, चोरी आदि की घटनायें नित्य होती जा रही है। ऐसी स्थिति में राष्ट्र का तकाजा है कि हम मानव कहे जाने वाले लोग पुनः आगे बढ़ें और देश को जीवन देने के लिए बतलावें कि इन नैतिक मूल्यों के बिना देश जीवित नहीं रहेगा। यही सही सदाचार है तथा सही रूप में यही महामानव भगवान् महावीर की जयंती है।

❑❑

मोक्ष मार्ग पर कदम धरने से उत्पन्न होने वाले रस से अत्यन्त भरे हुए आपकी आत्म शक्तियों का निरन्तर विकास हुआ था। हे प्रभु ! अदभुत वैभव के प्यासे हम लोगों पर उस विकास की एक कला द्वारा प्रसन्नता कीजिये।[3/1] मोह व्यूह को बल पूर्वक छोड़कर समस्त सावध योग के त्यागी पुरुष का ज्ञान-दर्शन मात्र महिमा रूप आत्मा में सब ओर से लीन होना सामायिक है। हे भगवन्। आप सामायिक स्वयं हुए थे।[3/2] तप के अनुभव से जिनके रागद्वेष शान्त हो गये और बाहर तथा भीतर जो समता से युक्त हो गये ऐसे आपके लिये बाह्य में ये दोनों एक से ज्ञेय हो गये और अन्तरंग में आप दोनों के समान रूप से ज्ञाता हो गये।[3/4]

आ. अमृत चन्द्र कृत
ल. त. स्फोट

ब्राह्मणः भगवान् महावीर की दृष्टि में

☆ डॉ श्रीरंजन सूरिदेव

साम्प्रदायिक विद्वेष वश किसी ने जैन धर्म के विरुद्ध यह कथन किया हो 'हस्तिना पीड्यमानोऽपि न गच्छेत् जिन मन्दिरम्' जैन तीर्थकरो और आचार्यों ने तो सभी के कल्याण हेतु धर्म मार्ग का प्रतिपादन किया है । उनका धर्म किसी जाति, वर्ण, अथवा देश-विशेष तक सीमित नही है । पशु तक सम्यग्दृष्टि और व्रती होते महावीर की परम्परा में स्वीकार हुए हैं । जैसे ब्राह्मण कौन है यह बताया गया है, ऐसे ही महापुराण मे क्षत्रिय रत्नत्रय धारी को स्वीकार किया गया है और जो अन्य वर्ण के हैं उन्हे रत्नत्रय धारण कराके क्षत्रिय बनाने का मार्ग खुला रखा गया है । वैश्य और शूद्र का धर्म के क्षेत्र मे कोई स्पृहणीय स्थान लगता है नही है । उन्हे विद्वान अणुव्रती के रूप मे ब्राह्मण एव रत्नत्रय धारी के रूप मे क्षत्रिय बनना है ।

—सम्पादक

भारत देश मे ब्राह्मण-परम्परा और श्रमण-परम्परा, दोनो समान्तरगामी रही हैं। इन दोनो परम्पराओं के बीच किसी प्रकार की विभाजक रेखा ऐतिहासिक दृष्टि से नही खीची जा सकती। यह बात दूसरी है कि ये दोनो परम्पराएँ परस्पर एक दूसरे पर हावी अवश्य होती रही हैं । कभी ब्राह्मण-परम्परा अधिक वर्चस्वी हो उठी है, तो कभी श्रमण-परम्परा । अवश्य ही आज पुन श्रमण-परम्परा उद्ग्रीव हो उठी है ।

ब्राह्मण-परम्परा ज्ञान रूप ब्रह्म[1] या ईश्वर को मूल्य देती है, इसलिए वह ब्रह्मवादी या ईश्वरवादी परम्पराके नाम से अभिहित होती है और श्रमण परम्परा श्रम को मूल्य देती है, इसलिए वह श्रमवादी या अनीश्वरवादी या तीर्थकरवादी परम्परा के नाम से प्रतिष्ठित है । इन दोनो मे कोई परम्परा ऊँची या नीची नही है, वरन् दोनो ही परम्पराएँ समान मूल्य की अधिकारिणी हैं ।

सच पूछिए तो, जीवन-यात्रा के लिए ब्रह्म या ज्ञान और श्रम या कर्म दोनो अनिवार्य हैं । इस सन्दर्भ मे गोस्वामी तुलसीदास की चौपाई से मिलती-जुलती एक अर्द्धली लोक प्रचलित है 'कर ते कर्म करहु विधि नाना । मन राखहु जहँ कृपानिधाना ।।' इस दृष्टि से ब्रह्म और श्रम, दोनो की समानान्तर अस्मिता है ।

अव्यवस्था वहाँ उत्पन्न होती है, जहाँ ब्राह्मण और श्रमण अनपेक्षित रूप मे एक दूसरे को, जाति के आधार पर, ऊँचा और नीचा मानने लगते हैं । गीता से भी सिद्ध है कि

1 'सत्य ज्ञानमनन्त ब्रह्म ।'–तैत्तिरीयोपनिषद् पृ २११

वर्ण-व्यवस्था जाति के आधार पर नहीं, अपितु गुण और कर्म के आधार पर प्रतिष्ठित हुई है।[2] स्वयं भगवान् महावीर ने भी 'उत्तराध्ययनसूत्र' के यज्ञीय अध्ययन में चातुर्वर्ण्य की सृष्टि कर्म के आधार पर स्वीकार की है :

कम्मुणा बम्मणो होइ कम्मुणा होइखत्तियो ।
वइस्सो कम्मुणा होइ सुद्दो हवइ कम्मुणा ।। (२५.३१)

अर्थात् कर्म के आधार पर ही कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र होता है ।

भगवान् महावीर ने 'ब्राह्मण' को 'माहण' कहा है । इसकी व्युत्पत्ति है : 'मा हन जीवानिति माहणः ।' अर्थात् जो जीव को न तो स्वयं मारता है, न मरवाता है और न ही उसके मारने का समर्थन करता है, वह ब्राह्मण है । दूसरे शब्दों में जीवों को न मारने का उपदेश देने वाला व्यक्ति ही ब्राह्मण है । 'माहण' संस्कृत 'ब्राह्मण' का प्राकृत रूपान्तर है ।

उक्त जैनागम 'उत्तराध्ययनसूत्र' के पचीसवें अध्ययन में ही भगवान् महावीर स्वामी ने 'माहण' की पहचान में दस दो क्षेपक मिलाकर बारह गाथाएँ कहीं हैं । तदनुसार, यह तथ्य स्पष्ट होता है कि जिसे कुशल पुरुषों ने 'बंमण' (ब्राह्मण) कहा है या जिसे लोक में 'ब्राह्मण' कहा जाता है, जो अग्नि की भाँति सदा लोकपूजित है, उस कुशलपुरुषोक्त व्यक्ति को महावीर स्वामी ब्राह्मण कहते हैं :

जो लोए बंभणो वुत्तो अग्गी वा महिओ जहा ।
एया कुसलसंदिट्ठं तं वयं बूम माहणं ।। (गाथा-सं. १९)

महावीरस्वामी की दृष्टि में जो यज्ञवादी होते हैं, वे ब्राह्मण की सम्पदा/विद्या (या ज्ञान) से अनभिज्ञ होते हैं । उनकी स्वाध्याय-वृत्ति और तपस्या राख से ढँकी हुई अग्नि के समान होती है। अनासक्ति ब्राह्मण की विशिष्ट पहचान है, इसलिए वह इस संसार में आने पर न तो आसक्त होता है और न यहाँ से जाते समय शोक करता है, अर्थात् वह जन्म के सुख, यानी सांसारिक विषय-वासना के सुख से न तो हर्षित होता है, न ही मृत्यु के कष्ट से दुःखी होता है, अर्थात् वह जन्म-मरण के सुख-दुःख से सर्वथा मुक्त होता है । वह तो निरन्तर आर्य वचन में रमता रहता है। ऐसे ही व्यक्ति को महावीर स्वामी ब्राह्मण कहते हैं । मूल प्राकृत गाथा इस प्रकार हैः

जो न सज्जइ आगंतुं पव्वयंतो न सोयई ।
रमए अज्जवयंणमि तं वयं बूम माहणं ।। (गाथा सं. २०)

महावीर स्वामी तो उसे ब्राह्मण मानते है, जो अग्नि में तपाकर शुद्ध किये हुए और निकष पर घिसकर खरा सावित किये हुए सोने के समान होता है, साथ ही जो राग-द्वेष और भय से सर्वथा रहित होता है, अर्थात् तप्त-शुद्ध सुवर्ण की तरह बहिरन्तः निर्मल और विलकुल निरासक्त तथा निर्भय व्यक्ति ही ब्राह्मण होता है । गीता में ऐसे व्यक्ति को ही 'वीतरागभय क्रोधः' (२.५६) कहा गया है । 'उत्तराध्ययन' की मूल गाथा हैः

जाय रूव जहामट्ठं निर्द्धतमल पावगं ।
रागद्दोसभय़ाई यं तं वयं बूम माहणं ।। (गा. सें. २१)

2. 'चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।' गीताः ४.१३

यजमान का घी-दूध पीकर शरीर से मोटा-ताजा बने हुए व्यक्ति को भगवान् महावीर ब्राह्मण नही मानते । उनके विचार से ब्राह्मण तो वह है, जो तपस्या से कृषगात्र है, जिसकी इन्द्रियाँ अवदमित हैं, जिसके शरीर के रक्त माँस का क्षय हो गया है जो सुव्रत या शुभव्रतों का आचरण करने वाला है और जिसने निर्वाण-लाभ की स्थिति अर्जित कर ली है

तवस्सिय किस दत अवचियमससोणिय ।

सुव्वय पत्तनिव्वाण त वय बूम माहण ।। (क्षेपक)

महावीर की दृष्टि मे, अहिंसक होना ब्राह्मण (माहण) का पहला लक्षण है । जो त्रस (जगम) और स्थावर (जड़) जीवो को भली-भाँति जानकर मन, वाणी और शरीर से उनकी हिंसा नहीं करता, अर्थात् उन जीवो की हिंसा की बात न तो मन मे लाता है, न उनकी हिंसा की बात वचन से बोलता है, और न ही अपने शरीर (कर्मेन्द्रिय) से उनकी हिंसा करता है, उसे ही महावीर स्वामी ब्राह्मण कहते हैं

तसपाणे वियाणेत्ता सगहेण य थावरे ।

जो न हिसई तिविहेण त वय बूम माहण ।। (गाथा-स २२)

महावीरस्वामी की दृष्टि मे ब्राह्मण कभी झूठ नही बोलता । मिथ्यात्व उसके मौलिक सस्कार से इतर वस्तु है । वह किसी के क्रोध से दबकर या फिर किसी प्रलोभनवश या किसी भय से आक्रान्त होकर असत्य का सहारा नही लेता । सत्यवाद ही ब्राह्मणवाद है । सत्य ही ब्राह्मण का पर्याय है । हँसी हँसी मे या परिहास के खयाल से भी ब्राह्मण असत्य-भाषण नहीं करता । जो क्रोधरहित, लोभ और भय से मुक्त तथा परिहास स पराङ्मुख होता है, वही ब्राह्मण है । इसीलिए महावीर कहते हैं

कोहा वा जई वा हासा लोहा वा जई वा भया ।

मुस न वयई जो उ त वय बूम माहण ।। (गाथा-स २३)

भगवान् महावीर ब्राह्मण के गुणो की ओर सकेत करते हुए कहते हैं कि वह अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पाच व्रतो की उपासना या अनुपालन मे कभी प्रमाद नहीं करता । निम्नाकित गाथा मे इस बात का उल्लेख हुआ है कि ब्राह्मण कभी चोरी नहीं करता । भगवान् महावीर की दृष्टि मे चोरी उसे कहते हैं, जो अधिकारी के दिये बिना ले लिया जाय । इसी को अदत्तादान (अदत्त का आदान) कहा गया है । जो व्यक्ति सचित्त (सजीव) या अचित्त (अजीव) कोई भी पदार्थ चाहे वह थोड़ा हो या अधिक, उस पदार्थ के अधिकारी के दिये बिना नही लेता उसे भगवान् महावीर ब्राह्मण कहते हैं

चित्तमन्तमचित्त वा अप्प वा जइ वा बहु ।

न गेण्हइ अदत्त जो त वय बूम माहण ।। (गाथा-स २४)

ब्रह्मचर्य का मन वचन और शरीर से अनुपालन ब्राह्मणत्व का विशिष्ट लक्षण है । शुभ चारित्र ब्राह्मण का अनिवार्य धर्म है । ब्रह्मचर्य को तप माना गया है । ब्रह्मचर्य-रूप तप से ही देवता मृत्युजय हो गये 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत ।' ब्राह्मण को ही देवता कहा गया है । इस सन्दर्भ मे एक बहुश्रुत श्लोक उपलब्ध है

देवाधीनं जगत्सर्व मन्त्राधीनाश्च देवताः ।

मन्त्राश्च ब्राह्माणाधीनास्तस्मात् ब्राह्मण देवताः ॥

अर्थात् यह संसार देव-पुरुषों के अधीन है और देवपुरुष मन्त्र, यानी मनन और चिन्तन, उपासना और आराधना के अधीन है। और फिर, मन्त्र ब्राह्मण के अधीन हैं, इसलिए ब्राह्मण देवपुरुष हैं।

अवश्य ही, ऐसे देवपुरुष कभी अब्रह्म या मैथुन का सेवन नहीं करते। इसीलिए भगवान् महावींर ने उसे ही ब्राह्मण कहा है, जो देव, मनुष्य और तिर्यच-सम्बन्धी मैथुन का मन, वचन और शरीर से सेवन नहीं करता। मूल गाथा हैः

दिव्वमाणुसतेरिच्छं जो न सेवइ मेहुणं ।

मणसा कायवक्केणं तं वयं बूम माहणं ॥ (गाथा-सं. २५)

ब्राह्मण संसार में जल में कमल पत्र की तरह रहता है। जिस प्रकार जल से कमलपत्र लिप्त नहीं होता,उसी प्रकार ब्राह्मण सांसारिक विषयों के प्रति आसक्त नहीं होता। इसीलिए, अनासक्ति को ब्राह्मण की विशिष्ट पहचान बताते हुए भगवान् महावीर ने कहा है कि जिस प्रकार जल में उत्पन्न होकर भी कमल जल से निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार कामभोग के वातावरण में उत्पन्न होकर भी जो मनुष्य उससे आलिप्त नहीं होता, उसे ही वह ब्राह्मण कहते हैं :

जहा पोमं जले जायं नोवलिप्पइ वारिणा ।

एवं आलित्तो कामेहि तं वयं बूम माहणं ॥ (गाथा-सं. २६)

ब्राह्मण की अनासक्ति-वृत्ति पर बल देते हुए महावीर स्वामी उसे ही ब्राह्मण कहते हैं, जो लोलुप नही हैं, जो निर्दोष भिक्षा से जीवन का निर्वाह करता है, जो गृहत्यागी और अकिंचन है तथा जो गृहस्थों के प्रति आसक्ति नही रखता। मूल गाथा इस प्रकार है :

अलोलुयं मुहाजीवी अणगारं अकिचनं ।

असंसत्तं गिहत्थेसु तं वयं बूम माहणं ॥ (गाथा-सं. २७)

महावीर स्वामी की दृष्टि में, जो व्यक्ति विषय-वासना के प्रति आसक्त नहीं है, वही ब्राह्मण है, केवल ऐसी बात नहीं, वरन् वह ब्राह्मण के सन्दर्भ में समग्र अनासक्ति' के समर्थक हैं। इसलिए, वह उस व्यक्ति को ब्राह्मण कहते हैं, जिसने पूर्व-संयोगों के प्रति आसक्ति का परित्याग कर दिया है, और जो सदा ज्ञाति जनों और वान्धवों की भी आसक्ति से मुक्त रहता है। अर्थात्, महावीर ने जीवन्मुक्तता को ही ब्राह्मण की निजता के रूप में स्वीकार किया है। गाथा इस प्रकार है :

जहित्ता पुव्वसंजोगं नाइसंगे य वंधवे ।

जो न सज्जइ एएहिं तं वयं वूम माहणं ॥ (क्षेपक)

इस प्रकार, भगवान् महावीर ने ब्राह्मण के मुर्ख्य गुणों का निर्देश करके यह सिद्ध कर दिया है कि जाति से कोई व्यक्ति ब्राह्मण नहीं होता, वरन् वह अपने गुणो और आचरणों से

ब्राह्मण-पद पर अधिष्ठित होता है । इतना ही नही, महावीर ने श्रमण, ब्राह्मण और मुनि, तीनो की आचार-सहिता भी प्रस्तुत की है । उनका दो टूक कथन है

केवल सिर मुँड़ा लेने से कोई श्रमण नही होता, 'ओंकार' के जपमात्र से ही कोई ब्राह्मण नही बन जाता, केवल अरण्य वास से ही कोई मुनि नही होता और कुश का चीवर पहनने से ही कोई तापस नही हो जाता । वस्तुतत्त्व तो यह है कि समभाव की साधना से ही श्रमण होता है, ब्रह्मचर्य के पालन से ही ब्राह्मण होता है, ज्ञान की आराधना या मनन से मुनि होता है और तप के आचरण से ही तापस् होता है । (द्र गाथा स २९-३०)

महावीर की दृष्टि मे ब्राह्मण को 'स्नातक' (केवल ज्ञान मे सम्पन्न, प्रबुद्ध) और 'सर्वकर्मविनिर्मुक्त' (अनासक्त) होना अनिवार्य है । इसी तत्त्व को ध्यान मे रखकर उत्तराध्ययनसूत्र' मे कहा गया है

एए पाउकरे बुद्धे जेहि होइ सिणायआ।
सव्वकम्मविनिम्मुक्क त वय बूम माहण ॥ (गाथा-स ३२)

अर्थात् उक्त ब्राह्मणविषयक तत्त्वो को केवल ज्ञानी अर्हत (बुद्ध = महावीर) ने प्रकट किया । इन तत्त्वो के द्वारा जो मनुष्य स्नातक होता है और जो सब कर्मो से सर्वथा मुक्त होता है, उसे ही भगवान् महावीर ब्राह्मण कहते हैं ।

इस विवरण से 'ब्राह्मण' अपने-आप मे गुण-कर्म विशिष्ट एक उच्च पद सिद्ध होता है, जो सबका काम्य है उसे किसी एक जाति की सकीर्णता मे समेटना उचित नही ।

❑ ❑

हे भगवन् ! यदि पाप रहित, विभामय भाव आप स्वय हैं तो यह आप स्वय ही विस्फुरित होते हुए कभी भी भ्रम को प्राप्त नही होते है ।19/17 जो विभामय है वह सुशोभित होता है, जो अविभामय है वह कभी सुशोभित नही हो सकता है । निश्चय से जो यह सब सुशोभित होता है वह यह विभा ही अत्यन्त सुशोभित होती है ।19/18 केवल यह ही सुशोभित होता है यह सुशोभित नही होता, ऐसी कल्पना कहाँ होती है । 'यह इसके द्वारा सुशोभित होती है,' विभा का विभाग करने वाली यह द्विरुपता नही है ।19/19 सहज निरन्तर उदित सम, स्वप्रत्यक्ष पूर्णतया निराकुल, अद्भुत तेज की माला रूप यह विभा किसके लिये रात्रि हो ?19/20 जो अपने वैभव से निषेध को भी विधि के समान विधि रूप से धारण करती है वह परिशुद्ध एक चैतन्य से भरी हुइ आपकी विभा किसके द्वारा निषिद्ध हो सकती है ?19/21

—आ अमृत चन्द्र कृत लघु तत्त्व स्फोट

साम्ययोगी महावीर

☆ आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य श्री मानव को कषाय/तनाव से मुक्त हो समता में जीने का आह्वान करते हैं। जिसे समता के मार्ग पर चलना नही हो उसे बात छोटी सी लगती है, पर जो इस पथ पर चलना आरम्भ करता है वह जानता है यह पहाड़ उठाने से भी भारी है। जगत को जीतने से इन्द्रिय और मन को जीतना, सर्व परीषहों ओर उपसर्गो में अविचलित रहना, संक्षेप में आत्मजयी होना ज्यादा कठिन है। तब ही तो आत्मजयी जिनेन्द्रों के चरणों में चक्रवर्ती और इन्द्र नमन करते हैं। समता की तो थोड़ी भी उपलब्धि जीवन में 'चमत्कार' उत्पन्न करती है।

—सम्पादक

धर्म का मौलिक ध्येय है मुक्ति। फिर हमारे व्यावहारिक जीवन में भी वह कम उपयोगी नही है। भगवान् महावीर ने कहा—समता ही धर्म है।" उन्होंने बार-बार कहा—"लाभ अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निंदा-प्रशंसा और मान-अपमान में सम रहो।"

हम इस उपदेश को आध्यात्मिक ही समझते रहें और वह हमारी समझ ठीक भी है। हमें इतना और समझना चाहिए कि वह जितना आध्यात्मिक है, उतना ही व्यावहारिक है। मन की समता से हमारी आत्मा ही बन्धन-मुक्त नहीं होती, अपितु शरीर भी अनेक व्यथाओं से मुक्त होता है। मन की विषमता से हमारी आत्मा ही वद्ध नहीं होती, किन्तु शरीर भी व्यथित होता है। चिकित्साशास्त्र भी प्रमाणित कर चुका है कि मन की सम अवस्था शरीर की स्वस्थता में सहायक होती है और उसकी विषमता से स्नायुओं में भयंकर तनाव होता है। मन की अस्तव्यस्तता से शरीर विकार-ग्रस्त हो जाता है। उत्तेजना या क्रोध की दशा में हृदय की रक्त-कोशिकाएं स्रवित हो जाती हैं। उसका परिणाम अनिष्ट रूप होता है।

मानसिक विकारों से शरीर रुग्ण वनता है। उसका पहला प्रभाव यह होता है कि स्नायुओं में तनाव आ जाता है और दूसरा प्रभाव यह होता है कि अन्तः स्रावी तन्त्र विकृत वन जाता है। परेशानी और लज्जा से मुँह लाल हो जाता है। भय से चमड़ी सफेद हो जाती है। अप्रिय व्यक्ति को देखकर सिर या गर्दन में पीड़ा होने लगती है। आतंक के कारण पाँव ठंडे पड़ जाते है। हड्डियों की खरावी, पक्षाघात, मधुमेह, दन्तपीड़ा, गठिया, संग्रहणी जैसे दुस्साध्य रोगों का भी अस्वस्थ मन हेतु वन जाता है। तीव्र घृणा श्वास रोग और खीज व्रण के रूप में अभिव्यक्त होती है।

जेम्स कानिक ने लिखा है—"मानसिक तनावो तथा आवेगो के कारण पित्ताशय की पथरी बढ़ जाती है। धमनियो पर छायी चर्बी फूल जाती है। प्राय मन इन्हीं दोनो अस्त्रो से अपने शिकार को मारता है। मानसिक या भावनात्मक आवेग जितना ही बढ़ता है, एड्रेनेलिन नामक हारमोन उतनी ही अधिक मात्रा मे रक्त मे प्रवाहित होने लगता है। यह हारमोन छोटी धमनियो को सकुचित करता है। हृदय की धमनियाँ भी इससे प्रभावित होती हैं। अगर वे बहुत सकुचित हो जाती है तो मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

यदि हम चिता, भय और निराशा को वश मे रखना सीख जाए तो हमारा रक्त-चाप सतुलित रहेगा, हृदय की धमनिया सकुचित नही होगी, और अहभाव को प्रबल आघात लगने पर भी हमे कैंसर, क्षय, मधुमेह जैसे रोग नही होगे।

बहुत प्राचीन काल से ही यह कहा जा रहा है—

चित्तायत्त धातुबद्ध शरीर, चित्ते नष्टे बुद्धयो यान्ति नाशम्।

स्वस्थे चित्ते बुद्धय प्रस्फुरन्ति, तस्माच्चित्त सर्वथा रक्षणीयम्।

"यह धातु-बद्ध शरीर चित्त के अधीन है। चित्त के नष्ट होने पर धातुए नष्ट हो जाती हैं। चित्त के स्वस्थ होने पर बुद्धिया स्फुरित होती है, इसलिए चित्त की सर्वथा रक्षा करो।"

श्वेताम्बरत्वे न दिगम्बरत्वे, न तर्कवादे न च तत्त्ववादे।

न पक्षसेवाश्रयणेन मुक्ति, कषायमुक्ति किल मुक्तिरेव॥

"न श्वेताम्बर होने से मुक्ति होगी न दिगम्बर होने से। न तर्कवाद से मुक्ति होगी और न तत्ववाद से। अपने पक्ष से चिपटे रहने से भी मुक्ति नही होगी। सही अर्थ मे कषाय मुक्ति ही मुक्ति है।"

कषाय-मुक्ति और समता एक ही अर्थ को प्रगट करने वाले दो शब्द है। कषाय का अर्थ है—क्रोध, मान माया और लोभ। इनसे मानसिक विषमता उत्पन्न होती है। कषाय मुक्ति का अर्थ है—क्रोध आदि से मुक्त होना उन पर विजय पाना अर्थात् क्षमा, मृदुता, आर्जव और सन्तोष को प्राप्त करना। उनकी प्राप्ति से मानसिक समता उत्पन्न होती है।

व्यक्ति का जीवन जितना निश्छल और सरल होता है, उतना ही वह काल्पनिक भय मे दूर रह सकता है। निश्छलता का अर्थ है—कषाय-मुक्ति। व्यक्ति का जीवन जितना शान्त होता है, उतना ही वह स्नायविक तनाव से बच सकता है। शान्ति का अर्थ है—कषाय-मुक्ति। व्यक्ति का मानस जितना ममत्वहीन होता है, उतना ही वह स्नायविक तनाव से बच सकता है। निर्ममत्व का अर्थ है—कषाय-मुक्ति। व्यक्ति जितना मृदु होता है, उतना ही वह विषम मनोदशा से बच सकता हे। समता का अर्थ है—कषाय मुक्ति।

हम कषाय मुक्ति या समता के सिद्धान्त को समझकर ही भगवान् महावीर को समझ सकते हैं, अन्यथा महावीर हमारी श्रद्धा मे व्याप्त हो सकते हैं, हमारे जीवन मे नही।

☐☐

महावीर को पढ़ें

☆ मुनि सुखलाल

महावीर किसी कवि सम्मेलन में नहीं गए
हास्य रस की कविता का पाठ नहीं किया
न श्रृंगार को उभारा
फिर भी लाखों लोग उन्हें सुनते थे
करोड़ों लोग उन्हें पढ़ते हैं
अरबों लोग उन्हें पढ़ेंगे ।
कालीदास का अभिज्ञान शांकुतल भी अद्भुत है
पर उत्तराध्ययन की बात और है
भरत को जन्म देकर शकुंतला बुढ़िया जाती है
चन्दन बाला चिर यौवना है
साम्राज्य की सीमाएं घटती बढ़ती रहती हैं
सन्यास सीमाओं से मुक्त है
दुष्यंत पर आभिजात्यता का नशा है
गौतम का जातिमद झर जाता है
दुर्वाशा शाप देता है
धनावह वेडियां काटता है
आओ महावीर के कालजयी हस्ताक्षर पढ़ें
"सारे गीत विलाप है, सारे नृत्य विडम्बना है
सारे अलंकार बोझ, सारे कामभोग दुःखद हैं"
मेघदूत गीत है, आचारांग अगीत है
महावीर इन्द्रिय नही, आत्मा है ।

भगवान महावीर द्वारा स्थापित चतुर्विध संघ

☆ डॉ शोभनाथ पाठक

'सघे शक्ति कले युगे' । सदुद्देश्यो को लेकर बनने वाले सघठन केवल अपने सदस्यो का ही हित सम्पादन नही करते वरन् पूरे मानव समाज/जीव मात्र का हित सम्पादन करते हैं । न धर्मो धार्मिकै विना । अन्यो को धर्म मार्ग पर लाकर, गिरते हुए को स्थिर कर, उसे सक्लेषो से उवार कर मानव स्वय को धर्ममय कर लेता है । दैहिक स्वार्थ की पूर्ति रौद्र जगत मे छोटे बड़े अन्य जीवो के शोषण से पूरी होती हो अथवा करनी पड़ती हो अथवा मानी जाती हो, पर त्याग-तप के पथा का राही बन कर ही जिस श्रमण सस्कृति मे धर्म के बीज बोये जाते हैं सींचे जाते हैं और शाश्वत शक्ति पुञ्ज आनन्दमय स्वरूप अपने मे उभारा जाता है, उस पर से कर्म आवरण को हटाया जाता है, वहाँ स्व के कल्याण मे पर का और पर के कल्याण मे स्व का कल्याण ही सहज, निर्बाध व्यवस्था है । अन्तर्मुखी इस सस्कृति की धारा में सस्कारित मानव/समुदाय अपने लोक कल्याणकारी कार्यों का कृतज्ञता ज्ञापन भी नही चाहता ।

—सम्पादक

जैन धर्म मे समाज के सर्वाङ्गीण विकास के लिए जो ठोस उपाय किये गये हैं उनमे श्रमण श्रमणी तथा श्रावक श्राविका की महत्वपूर्ण भूमिका अतीत से अब तक अद्वितीय रही है और भविष्य म भी रहेगी, क्योंकि इस धर्म मे त्याग सयम सदाचार आदि को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाती है । जैन साधु साध्वियाँ जितनी कठोर साधना करके समाज को जागृत करने का जो अनुपम प्रयास करते हैं उसकी उत्तमता को आकना आसान नही है । तथ्यत मानवता के मगल के उद्देश्य से चतुर्विध सघ की स्थापना करने मे यही आदर्श प्रतिबिंबित होते हैं। इस सघ मे कोई भी सम्मिलित हो सकता था, जो सभी प्राणियो के कल्याण की कामना रखता हो । यही कारण है कि भगवान महावीर के सघ मे सभी वर्गो के लोग थे। केवल ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् भगवान् महावीर ने वैभार पर्वत पर जो सदुपदेश दिये उसमे सबका प्रतिनिधित्व रहा था यथा

अथ भगवान्सम्प्रापदिव्य वैभारपर्वत रम्य ।
चातुर्वर्ण्य सुसघस्तयाभूद् गौतमप्रभृति ॥

इस सामाजिक सरचना मे राजा-रक, श्रमिक श्रेष्ठी, स्त्री पुरुष आदि चारो वर्णो के लोग सम्मिलित होकर एक नये युग के निर्माण मे तन-मन-धन मे समर्पित हो गये । यही कारण है कि जहाँ सेवार्थ समर्पण की भावना है वहाँ बहुमुखी विकास तो होना ही है । स्वामी समन्तभद्

तो इस चतुर्विध संघ को धर्मतीर्थ कह कर सर्वोदय तीर्थ तक कह डालते हैं। जो सबके उदय का मार्ग प्रशस्त करे उस सर्वोदय की साकारता भगवान महावीर के कार्यकाल में हो चुकी थी-

सर्वान्तवत्तदगुण मुख्यकल्पं, सर्वान्तशून्यं च मिथोऽनपेक्षम् ।

सर्वापदामन्तकरं निरन्तं सर्वोदयं तीर्थमदं तवैव ॥

यही नहीं वरन् इस धर्मतीर्थ के प्रणेता भगवान स्वयं थे यथा :

णिस्संसयकरो वीरो महावीरो जिणुत्तमो ।

रागदोसमयादीदो धम्मतीत्थस्सकारओ ॥ (जयधवला टीका)

इस महातीर्थ की महत्ता के मान में विद्वानों, मनीषियों विचारकों ने बहुत कुछ कहा है यथा

"सर्वेषामभ्युदयकारणानां-हेतुत्वादभ्युदयहेतुत्वोपपत्ते"

समस्त प्राणियों के अभ्युदय का हेतु सूचित करते हुए इसे "सर्व सत्वानं हितसुखाय" कहा गया है

तथ्यतः श्रमण संघ का कार्य ही सबका कल्याण रहा है। श्रमण-श्रमणी श्रावक श्राविका अपनी-अपनी सराहनीय भूमिका में सराहे जाते हैं। भगवती सूत्र में कहा भी गया है

तित्थं पुण चाउवन्नाइन्ने समणसंघो ।

तं समणा समणीओ सावया सावियाओ ॥

संघ की सुव्यवस्था के लिए गच्छ-कुल गण, संघ आदि नाम देकर सर्वोदय को साकार करने के काम में लगकर परोपकारी जन जागृति में लग गये। इसी क्रम में--

श्रमण व श्रमणी की साधना सर्वोपरि मानी गई है। इस शब्द की व्याख्या करने पर भी यह ही तथ्य उजागर होता है। तथ्यतः "तप और खेद" (परिश्रम) अर्थवाली 'श्रम' धातु 'श्रम्' तपसि खेदे च से 'ल्यु" प्रत्यय होकर "श्रमण" शब्द बनता है। आचार्य हरिभद्र सुरी ने इस विषय में कहा है कि "श्राम्यतीति श्रमण तपस्यन्तीत्यर्थ" अर्थात् जो तप करता है वह श्रमण है। आचार्य रविषेण ने 'तप' को ही श्रम कहा है यथा

"परित्यज्य नृपो राज्य, श्रमणो जायते महान् ।

तपसा प्राप्य सम्वन्ध, तपो ही श्रम उच्यते ॥

"श्रम" धातु के तप और खेद" को ध्यान में रखकर अभिधान राजेन्द्रकोप" में श्रमण' शव्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार बताई गई है

"श्रमयानयति पञ्चेन्द्रियाणि'मनश्चेति वा श्रमणः श्राम्यति संसार विपयेपु..........."

तथ्यतः श्रमण का मूल प्राकृत रूप 'समण' है। इसका संस्कृत रूपान्तर श्रमण, समन, तथा शमन है अर्थात् श्रम, शम और सम। श्रमण संस्कृति में तप को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। तप के द्वारा ही आत्मिक विकास करके प्राणियों के कष्टों को परखा जा सकता है। इस शब्द की उत्तमता को आंकते हुए भगवान महावीर को भी इस नाम से समलंकृत किया जाता है। तभी तो कल्पसूत्र में कहा गया है

न्तएण मसण भगव महावीरे अरहा जाए, जिणो केवली सवन्नू सव्व दरसी

यही नही वरन् यह भी कहा गया है

योे च समेति पापानि, अणु थूलानि सव्वसो ।
समितत्ता हि पापान 'समणो' ति पवुच्यति '

यही नही वरन्

य सम सर्वभूतेपु त्रसेपु स्थावरेपु च ।
तपश्चरन्ति श्रद्धात्मा श्रमणोऽसौ परिकीर्तित ॥

श्रमण की सहिष्णुता, तल्लीनता, उदारता तथा कठोरतम तपश्चर्या अतुलनीय कही गई है । अपने प्राणो का त्याग करके भी अपने कर्तव्य का पालन करना श्रमण साधना की पराकाष्ठा है । तभी तो आचारागसूत्र मे कहा गया है-

वर प्रवेष्टु ज्वलित हुताशन
न चापिभग्न चिरसचित व्रत ।
वर हि मृत्यु सुविशुद्धकर्मणो
न चापि शीलस्खलितस्य जीवितम् ॥

शील की रक्षा के लिए तप की अग्नि मे समर्पित होना श्रेयस्कर है पर अपने पथ से विचलित नही होना चाहिए । तथ्यत श्रमण का जीवन कठोरतम साधनापूर्ण है, इसलिए प्रवचनसार मे इनके मूल गुणो का गान इस प्रकार किया गया है यथा

वदसमिदिदियरोधो लोचावस्सयमचेलमण्हाण ।
खिदिसयणमदतवण ठिदिभोयणमगभत्त च ।
एदे खलु मूलगुणा समणाण जिणवरेहि पण्णत्ता ॥

इतनी कठोर साधना करके श्रमण असीम आध्यात्मिक शक्ति के पुज बनकर मानवता के मगल हेतु अपनी सतोमयी आभा प्रसारित कर तमोमयी बुराइयो को दूर करते है । ऐसी सिद्ध शक्ति का नामस्मरण ही समस्त पापो से मुक्त करने की क्षमता रखता है जैसा कि कहा गया है

कालश्रमण शब्द च द्विरुक्ताऽमन्त्रणे तत ।
स्वाहेति पदमुच्चार्य प्राग्वत्कामानि चोद्धरेत ॥

इस प्रकार श्रमण साधना की सर्वोत्कृष्टता को आकना आसान नही है । आज के भौतिक भटकाव के लिये यह उद्बोधक थाती है जिस पर अमल किये जाने से हर प्राणी का कल्याण अवश्यम्भावी है ।

श्रमणा या श्रमणी श्रमण शब्द का स्त्रीलिङ्ग रूप है । श्रमणा का तात्पर्य कुमारी साध्वी से है तथा श्रमणी का सुहागिन से । अर्थात् जो कुवारेपन मे दीक्षा ले लेती है उन्हे श्रमणा कहा जाता है तथा जो विवाहित होने के पश्चात् दीक्षा लेती ह उन्हे श्रमणी कहा जाता है । कहने का तात्पर्य है कि-

"पद्माख्या श्रमणीमुख्या विश्राव्य श्रमणीपदम्"

श्रमण-श्रमणी के रूप में साधु-साध्वियां अतीत से निरन्तर कठोर तप साधना करते हुए सामाजिक सेवा के लिए पैदल यात्रा करके एक छोर से दूसरे छोर तक सतत कार्यरत रहते हैं। यही नहीं वरन् जो कुछ भी वे कहते हैं, उपदेश देते हैं उसे अपने जीवन में स्वयं उतार कर तब दूसरों को अपनाने का आह्वान करते हैं। यही कारण है कि दीर्घावधि से ये अपने युग संवाहक अभियान में वंदनीय बन कर असीम आदर व श्रद्धा पाते हैं।

ये साधु-साध्वियाँ श्रावक-श्राविकाओं को भी अर्थात् गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाले पति-पत्नी को सुसंस्कृत बनाते हैं। पारिवारिक जीवन जीते हुए भी समाज कल्याण के लिए कार्य किया जा सकता है। मानव शरीर धारण करके सभी प्राणियों के कल्याण का कार्य किया जाना ही शरीर की उपयोगिता है। इस प्रकार श्रावक-श्राविकाओं में सदाचार की शिक्षा देकर एक आदर्श समाज के निर्माण में अक्षुण्ण भूमिका निभाना इनका कार्य है।

श्रावक शब्द वैसे सदुपदेशों के श्रवण करने की महत्ता से मंडित है जिसके विषय में कहा गया है कि-

श्रृण्वन्ति जिनवचनमिति श्रावकाः

अवाप्तदृष्ट्यादिविशुद्धसम्पत परसमाचारमनुप्रभातम्।

श्रृणोति यः साधजनादतन्द्रात्तं श्रावकं पाहुरमी जिनेन्द्रा॥ (ठाणांग सूत्र)

यही नहीं वरन्-

श्रृद्धालुतां श्रांति पदार्थचित्तताद्धनानिपात्रेषु वपत्यनारतम्।

किरन्त्यपुण्यानि सुसाधुसेवनादथापि, तं श्रावकमाहुरञ्जसा॥

(ठाणांग सूत्र सटीक २८७)

हेमचन्द्राचार्य ने इसे इस रूप में कहा है यथा

एवं व्रतस्थितो भक्त्या सप्त क्षेत्रे धनं वपन्।

दध्या चावि दीनेषु महाश्रावक उच्यते। (योगशास्त्र)

कल्पसूत्र में भगवान महावीर के श्रावकों के विषय में बताया गया है कि समणस्स णं भगवओ महावीरस्ससंख समय णमोक्खाणं समणो वासगाणं एगा समयाहम्मीओ अउणट्टि" जबकि समीचीन धर्मशास्त्र में इसकी महत्ता का प्रतिपादन इस प्रकार किया गया है यथा

"श्रृणोति गुर्वादिम्यो धर्ममिति श्रावकाः"

तात्पर्य यह कि गुरु के मुख से सदुपदेशों को सुनकर उस पर मनन चिंतन करके स्वयं में सुधार करना चाहिए तथा हमारे दोषी आचार-विचार में सुधार की प्रेरणा देनी चाहिए क्योंकि महापुरुषों की साधना का पुण्य इसी क्रम में समाज में पहुँचता है जिससे सभी लोग सुख शांति का जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

श्रावक के कर्तव्यों का मान रखते हुए श्रावकाचार ग्रंथों में कहा गया है कि

गृहिणा चेधा तिष्ठत्यणु-गुण-शिक्षा-व्रतात्मकं चरणम्।

पंच-त्रि चतुर्भेदं त्र यथासंख्यमाख्यातम्॥

नेतृत्व और नैतिक आचरण

☆ प्रवीण चन्द्र छाबड़ा

मोक्षमार्गस्यनेत्तारभेत्तार कर्म भूभृताम ।
ज्ञातार विश्वतत्त्वाना वदे तद्गुणलब्धये ॥

जैन परम्परा सघ परपरा है । मानव के लौकिक-पारलौकिक स्वार्थ सिद्धियो मे सामूहिक/सामाजिक/राजनैतिक पक्ष कर्म भूमि के जीवन की अनिवार्यता है । लौकिक इन सघठनो/सस्थाओं के अभाव मे समाज मे मत्स्य-न्याय का प्रचलन हो जायेगा, जन-जीवन अन्त व्यस्त हो जायगा और धर्माचरण को भी अवकाश नही होगा । इसीलिये आदि पुरुष ऋषभदेव ने प्रथम मानव के धर्म-अर्थ-काम पुरुषार्थ सिद्धि की समाज में व्यवस्था की, फिर मोक्ष पुरुषार्थ की सिद्धि का मार्ग प्रशस्त किया । इस प्रकार ऋषभदेव ने मानव समाज के चारो पुरुषार्थो का नेतृत्व प्रदान किया । ऋषभदेव न समाज को नेतृत्व भी प्रदान किया, अपने कर्मावरण को भी नष्ट किया और सर्वज्ञ परमात्मा बन गये । जो अपने मे भी दोषो की वृद्धि करे और समाज मे भी अव्यवस्था पैदा करें वे तो आदर के नही करुणा/उपेक्षा/तिरस्कार के पात्र हैं ।

—सम्पादक

सार्वजनिक जीवन और निजी जीवन मे कहाँ और कैसे विभाजक रेखा खड़ी की जावे, यह आज का ज्वलत प्रश्न है । जैन दृष्टि मे व्यक्ति प्रधान रहा है, जिसमे आत्माचरण पर जोर दिया गया है । उसे हर समय अपने आपको देखना होता है । उसके लिये यह मान्यता ही भयावह है कि सार्वजनिक मामलो मे वैयक्तिक सदाचार को नजर-अन्दाज किया जा सकता है। वह किसी भी सस्था या सगठन मे होता है तो उसके प्रति पूरी तरह जवाबदार, जिम्मेदार और खबरदार होकर रहता है । लेकिन आज सार्वजनिक व्यवहार मे झूँठ बोला जाना साधारण बात हो गयी है । चुनाव मे इसे जायज मान लिया गया है । अपने लिये पक्षधरो का समूह बनाना और उनकी हर झूँठ को भी प्रश्रय देना नेतृत्व की कुशलता बन गया है । जैन सगठनो व सस्थाओं म भी यह दोष व्यापक होता जा रहा है । चुनावो ने झूँठ बोलना जहा सिखा दिया है, वहाँ आपसी व्यवहारो मे छल-कपट करना भी सामान्य हो गया है । इन सबमे दोष भी नही माना जाता है । यही कारण है कि हमारे पवित्रतम क्षेत्र, मन्दिर तथा सगठन अपनी विश्वसनीयता खोते जा रहे हैं । एक झूँठ व छल को छिपाने के लिये बड़े झूठ व छल का सहारा लिया जाता है ।

अदूरदर्शी होना अतीव सरल होता है। राजनीति तात्कालिक हित को देखती है, जबकि समाज के हित लम्बे होते हैं, आम आदमी का अधिकांश समय अपने परिवार के पालन के लिये आजीविका उपार्जन में लगा रहता है। उसे इतना अवकाश नहीं होता कि वह बेईमानी को देख सके। वह चन्द लोगों को अगुआ मान लेता है और उन पर अपना विश्वास टिकाये रहता है। सामाजिक मामलों में निर्णय का अधिकार भी उन्हें सुपुर्द किये देता है। इससे सारी सत्ता, संगठन और समाज का वर्चस्व चन्द लोगों के हाथों में सिमटता जाता है। वे अपने पक्षधरों को लाभ देते हैं और उनका समर्थन लेकर प्रभावी बने रहते हैं। आज सार्वजनिक जीवन निज की सत्ता हो गया है। इन चन्द लोगों की पकड़ इतनी मजबूत है कि उनसे छुटकारा पाने के लिए दूसरे किसी पक्ष को ही स्वीकारना होता है। समाज के ट्रस्ट और उसकी सम्पत्ति पर उनका एकाधिकार हो जाता है और वे उसके उपयोग व उपभोग के अधिकारी बनने के साथ नेता भी बन जाते हैं। मंच भी उनका हो जाता है। उनके कथन को स्वीकार करना विवशता बन जाता है।

पांच दशक पूर्व देश में सामन्ती व्यवस्था थी। राजा या अंग्रेजों द्वारा मनोनीत अधिकारी के निजी आचरण पर समाज का मौन उसकी विवशता थी। समाज उनकी तरफ झांक नहीं सकता था। यही कारण है कि राय-बहादुर या सेठ साहूकार तथा बड़े हाकिम समाज के नेता बने और उनकी दृष्टि सामाजिक दृष्टि बन गयी। उनसे पलने वाले लोग उनके ऐश्वर्य के साथ त्याग की गाथाओं को प्रचारित करते रहे। अपने ऐश्वर्य का शतांश देकर समाज शिरोमणी, दानी उपाधियों से अलंकृत होते रहे। उनके चहेते पण्डित विद्वान् हो गये और साधु चारित्र-शिरोमणी बन गये। समाज के लिये ये ही सब पूज्य और अगुवा हो गये। समाज इनसे इतना आतंकित रहा है कि उनके निजी दुराचरण को उनकी [illegible] [illegible]कत का रूप देता रहा। अंग्रेजों की यह राजनीति थी कि वह समाजों में सामन्ती शान को प्रतिष्ठित कर दे। दासता के विस्तार का यह भी एक उपाय था। उनके इस तरीके ने समाज को पंगु बना दिया। आजादी के बाद चालाक लोगों ने अपने गुट बना कर इस अधिकार को इतना बेईमान बना दिया कि झूंठ, छल और प्रपंच ही सब कुछ हो गया।

सत्ता में भ्रष्ट करने की प्रवृत्ति होती है और उससे बच कर रहने की तैयारी भी नहीं होती है। सत्ता और उनके लाभ का लोभ चरित्र को ही निगल जाता है। यह ऐसी दुर्बलता है जो उन सबमें होती है, जिनकी धारणा व मान्यता स्पष्ट नहीं होती है। लोकतंत्र की यह मूलभूत कठिनाई व कमजोरी है कि इसमें एजेन्ट ही निर्वाचित होते हैं। समाज भी अपने स्वार्थों को इनसे जोड़ लेता है। वह इतना विवश कर दिया जाता है कि उसे इनका अनुगामी बनना ही होता है। ये सब मिलकर कोई विकल्प नहीं रहने देते। समाज की अपेक्षाएँ इन्हीं लोगों के इर्द-गिर्द चक्कर लगाये रहती है। नये चेहरे, विश्वास या कर्मणा शक्ति को पूरी तरह नकार दिया जाता है। कभी कोई शक्ति उभर कर आ जाती है तो उसके प्रति विनय भाव पैदा कर उसे अपने गिरोह का प्रमुख बना लेते हैं। वह भी आगे-पीछे उनके स्वार्थों के लिये हो जाता है। समाज इस तथ्य से अवगत है। अपने कथित नेताओं के गिरोह, कार्य-व्यवहार, प्रणाली के आचरण से परिचित होता जा रहा है, विश्वास उठता जा रहा है। पर, वह यह भी जानता है कि किसी एक व्यक्ति या उनके समूह को बदल देने से यह बुराई दूर नहीं हो सकती।

जैन दृष्टि मे सार्वजनिक जीवन और निजी जीवन अलग नही हे । कोई एक व्यक्ति गिरता है तो वह अपने आस पास को भी कलकित करता है । लेकिन नेता बनकर कोई सता के लाभ के लिये होता है तो वह समाज को दोषी बनाता है । किसी नेता के दिल या दिमाग मे व्यक्तिगत सदाचरण और समूह के हितो के बीच वफादारियों का सघर्ष भी आ जाये तो उसका सदाचरण के लिये होना ही ईमानदारी है, जैन दृष्टि है । यह सही है कि सामूहिक कार्य मे कई बार ऐसी उलझने तथा परस्पर विरोधी स्वार्थ आते हैं, जब मार्ग का स्पष्ट देख पाना कठिन हो जाता है । ऐसे समय मे गलतिया भी हो जाती हैं । लेकिन जिनके समक्ष मान्यता, आस्था और सिद्धान्त होते हैं, वे कभी फिसलते नही हैं । इससे वे ठगाये भी नहीं जाते हैं । अन्यथा होता यह है कि समझौते का कोलाहल सिद्धान्तो, नैतिक नियमो को डुबो देता है । समाज के लिये सबसे गभीर खतरा नेताओं की नैतिक असफलताएँ हैं ।

□□

आत्मा तीन प्रकार का होता है - मूढ, विचक्षण एव परमब्रह्म । जो देह को आत्मा जानता है वह मानव मूढ है ।[13] परम समाधि मे भले प्रकार स्थित होकर जो परमात्मा को देह स भिन्न ज्ञानमय जानता है वह पडित होता है ।[14] सकल परद्रव्यो को छाड़कर (तथा) कर्मो को नष्ट कर जिसने ज्ञानमय आत्मा को पाया है, उसे मन मे परमात्मा जाना ।[15] जिस त्रिभुवन वदित सिद्धिगत का हरि, हर आदि ध्यान करते है उस ही अलक्ष्य को लक्ष्य मे स्थिर रूप से धारण कर परमात्मा जानो ।[16] जो नित्य, निरजन, ज्ञानमय, परमानन्द स्वभाव वाला है, उसे ही शात शिव जानो, भावो ।[17] जिसके वर्ण, गन्ध, रस, शब्द, स्पर्श जन्म, मरण नही हे, उसका नाम निरजन है ।[19] जिसके क्रोध, मोह मद, माया, मान नही है, जिसके स्थान तथा ध्यान नही है उसे ही निरजन जानो ।[20] जिसके पुण्य, पाप, हर्ष, विषाद - एक भी दोष नही हो, वह ही निरजन है ।[21] जिसके धारणा, ध्येय, यन्त्र, मत्र मण्डल, मुद्रा नही है, उसे ही अनत देव जानो ।[22] हे जीव । जो वेद शास्त्र (एव) इन्द्रियो से नहीं जाना जाता है, जो निर्मल ध्यान का विषय है, वह अनादि परमात्मा है ।[23] उसे केवल दर्शन ज्ञान मय, केवल सुख स्वभाव, केवल वीर्य (रूप) जानो । वह ही उत्कृष्टो मे उत्कृष्ट पदार्थ है ।[24] इन लक्षणो से युक्त जो उत्कृष्ट है देह रहित है, देव है, वह ही परमपद मे स्थित है तीन लोक का ध्येय ह ।[25]

—आ योगीन्दु कृत परमात्मप्रकाश

अहिंसा के अवतार भगवान महावीर

☆ सौभागमल जैन

> जैनधर्म में न तो जीवों को एक ब्रह्म के अंश माना गया है, न ही वे एक ईश्वर की संतान है । जीव-अजीव सभी द्रव्य अपने अपने गुण वैभव को लिये अपना अपना अनादि अनन्त रूप से अस्तित्व रखते हैं । ऐसे इस दर्शन में अहिंसा का उपदेश अन्य के हितार्थ इतना अर्थपूर्ण नहीं है जितना स्वयं कर्त्ता/व्यक्ति के लिये । हिसा से प्रकट में उसे अपनी स्वार्थ पूर्ति होती दिखे, वस्तुतः वह उसकी आत्मा, उसके तन-मन को विषाक्त वनाकर उसे गहन दुर्गतियों में प्रवेश करा रही है । जगत में जितने भी मानव तिर्यच दुःखों से आक्रान्त दृष्टिगत होते हैं, स्व-पर हिंसा के परिणाम से ही है ।
>
> —सम्पादक

तीर्थकर युग निर्माता होते हैं और युग निर्माण कुटुम्ब के संकुचित दायरे में नहीं हो सकता । इस के लिये उन्हें गृहवास का त्याग करना पड़ता है । मनुष्य का आध्यात्मिक विकास त्यागमय जीवन के बिना नहीं हो सकता । यही कारण है कि भगवान महावीर का वास्तविक जीवन तीस वर्ष के बाद ही प्रारंभ होता है ।

महावीर ने तीस से वियालीस अर्थात् वारह वर्ष तक अपने आध्यात्मिक चरम विकास के लिये घोर तपस्या की । इस तपस्या के समय वे बिलकुल मौन रहे । तीर्थकर तव तक नहीं वोलते जब तक वे 'अर्हत्' नहीं हो जाते । 'अर्हत् का अर्थ है पूर्णतः योग्य । उनकी सम्पूर्ण योग्यताकी कसौटी उनका अनुभवात्मक पूर्ण वोध और पूर्ण वीतरागता है । तव तक किसी भी आचरण अथवा कर्तव्य का दुनिया को उपदेश नहीं देते जव तक उसे पूर्णतः अपने जीवन में नहीं उतार लेते । अधूरा ज्ञान और वासना का छोटा सा छोटा अंश भी मनुष्य के तीर्थकरत्व में वाधक है । तीर्थकर वनने के लिए महावीर को जो घोर साधना करनी पड़ी वही उनकी तपस्या कहलाती है । वारह वर्ष आत्मसाधना करने के वाद उन्हें लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ । यह वह दिव्य ज्ञान है जिससे योगी किसी भी वस्तु को उसकी सम्पूर्ण गहराई तक जान लेते हैं । यह ज्ञान तव उत्पन्न होता है जव मनुष्य की सारी वासनायें धुल जाती है और उसमें पूर्ण निर्मलता आ जाती है ।

वियालीस से वहत्तर अर्थात् तीस वर्प तक भगवान महावीर ने स्थान स्थान पर भ्रमण कर संसार-तप्त प्राणियों को यथार्थ कल्याण-मार्ग का उपदेश दिया । यह श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र का रत्नत्रयात्मक मार्गोपदेश ही तीर्थ कहलाया है । महावीर के तीर्थ की चार विशेपतायें हैं सहिष्णुता, अहिंसा, अपरिग्रह और अनहंकार । जैन ग्रन्थों में महावीर के तीर्थ को सर्वोदय

तीर्थ बतलाया गया है। जो सबके कल्याण का कारण हो उसे सर्वोदय कहते हैं। जैनो क प्रख्यात आचार्य समन्तभद्र ने अपने युक्त्यनुशासन नामक ग्रन्थ मे कहा है–

सर्वातवत् तद्गुण मुख्य कल्प सर्वांत् शून्य न मियोऽनपेक्षम्

स्वोऽऽपदामन्तकर निरन्त मर्वोदय तीर्थमिद तवैव ॥६१॥

भगवान आपका तीर्थ ही सर्वोदयतीर्थ है क्योंकि आप के तीर्थ मे किसी भी वस्तु का उदार दृष्टिकोण से विचार किया गया है। उसमे विचारो की असहिष्णुता बिल्कुल नही है। पदार्थ के किसी भी गुण-स्वभाव अथवा धर्म के लिये आपके तीर्थ म आग्रह नहीं है। आग्रह से ही विग्रह पैदा होते हैं और विग्रह तो ज्ञान का अतराय हैं। इसीलिये आपने प्रत्येक वस्तु की विवेचना सापेक्ष दृष्टि से की है। जगत की कोई भी वस्तु सर्वथा निरपेक्ष नही है। विवेचना के समय पदार्थ का अमुक धर्म मुख्य और अवशिष्ट सारे गुण स्वभाव अप्रधान हो जाते हैं। वस्तुत न किसी का सर्वथा सद्भाव हैं और न किसी का सर्वथा असद्भाव। इसी का दूसरा नाम असप्रदायिकता अथवा सर्वधर्म-समभाव है। जब तक मनुष्य के विचारो मे यह अनेकात दृष्टि ना आ जावे, उसका सारा ज्ञान व्यर्थ है।

जिस प्रकार विचार क्षेत्र मे अनेकान्त दृष्टि की आवश्यकता है उसी प्रकार आचार क्षेत्र मे अहिंसा का महत्व है। हिंसा सारे पापो का मूल है। प्राणी की प्रतिकूल प्रवृत्ति है। ससार के सारे सघर्ष, कलह और विसवाद के मूल मे हिसा ही है। हिसा विनाश का ही दूसरा नाम है। इसके विपरीत अहिसा कल्याणकारी है। महावीर के समय मे हिसा का नाना रूपो मे प्रचार था और वे सभी रूप भयकर थे। गो, महिष अज, अश्व आदि पशुओं की देवता, मन्त्र, यज्ञ, और आहार आदि के लिये निर्मम हत्या की जाती थी। कभी-कभी मनुष्य को भी देवी-देवताओं को प्रसन्न करने और मन्त्र-सिद्धि क लिये वलिवेदी पर चढ़ा दिया जाता था। महावीर इस दृश्य को देख कर सिहर उठे थे। वे जहाँ जात, हिसा के इस नग्न ताडव को देखकर विह्वल हो जाते। चारो ओर से आने वाली त्राहि त्राहि का आवाजो ने उनकी आत्मा मे जो प्रेरणा उत्पन्न की वह कभी नही बुझने वाला एसा प्रकाश था जिसने पूरी मानवता को एक नई रोशनी दी। हिंसा का इस तरह नग्न ताडव करने वाले लोगो क मानस इतने विकृत हो गये थे कि वे स्त्री और शुद्रो पर भी असह्य अत्याचार करना अपना धर्म समझने लगे थे। महावीर को यह देख कर घोर मानसिक वेदना होती थी, इसीलिये केवल ज्ञान प्राप्त हो जाने के बाद महावीर ने अपने प्रवचनो मे जिस बात पर सबसे ज्यादा जोर दिया वह अहिंसा का सर्वांगीण विवेचन था। उनकी आत्मा मे अहिसा यहाँ तक एकाकार हो गई थी कि उस का क्रूर और जाति विरोधी जीवो पर भी सीधा असर होता था। यही कारण था कि उनके सान्निध्य मे शेर और गाय एक ही जगह पानी पी लेते थे। अहिसा क विषय मे जैन ग्रन्थो मे कहा है–

अहिंसैव जगन्माताऽहिंसैवानन्द पद्धति

अहिंसैव गति साध्वी श्रीरहिंसैव शाश्वती।

अहिंसैव शिव सूते द[illegible] च त्रिदिवश्रिय

अहिंसैव हित कुर्यात् व्यसनानि निरस्यति ॥

परिग्रह से उत्पन्न होने वाली क्रूरता भी एक तरह से हिंसा का ही रूप है। परिग्रही की सहानुभूति नष्ट हो जाती है। संयम ही उसके जीवन का ध्येय होता है। वह इतना निर्मम और सहानुभूतिहीन हो जाता है कि अपना पैसा वसूल करने के लिये दूसरों के तन का कपड़ा भी उतार सकता है। इसलिये महावीर ने स्पष्ट घोषणा कि परिग्रह एक महान् पाप है। परिग्रह का संचय ही सारे संघर्षो की जड़ है। अगर इन संघर्षो से बचना है तो संचय की बुराइयों को समझो और अपरिग्रह की ओर बढ़ो। अनावश्यक संग्रह न केवल एक सामाजिक पाप है अपितु मनुष्य का आध्यात्मिक पतन भी है। परिग्रह लोभ एवं तृष्णा को उत्पन्न करता है। जिसके पास अर्थ संग्रह नहीं है, उसका लोभ स्वतः ही दूर हुआ समझिये।

चौथी बात जिस पर भगवान महावीर ने जोर दिया वह अनहंकार है। जब तक मनुष्य का अहं नष्ट नहीं होता तब तक उसकी दृष्टि सम्यक् नहीं होती। जाति और कुल का मद भी अहंभाव से ही उत्पन्न होता है। धन भी मनुष्य में अहंभाव उत्पन्न करने का एक बड़ा कारण है। सर्व जाति समभाव मानवीय उत्थान का एक प्रधान अंग है। जाति, कुल, धन व अन्य सभी चीजों का अभिमान समाज में, मानव जाति में विषमता का जहर पैदा कर देता है और कभी कभी इससे ऐसा संघर्ष उत्पन्न हो जाता है जिस का परिणाम मनुष्य की बर्बादी के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। मनुष्य अपने सदाचरण से महान् होता है न कि किसी जाति में जन्म लेने से अथवा खूब धन होने से।

उन्होंने सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा की और समाज के हर अंग को समानाधिकार दे कर आत्मविकास का अवसर देने की घोषणा की। उन्होंने संघर्ष दूर करने की एक ही पद्धति बताई—तुम दूसरों के दृष्टि कोण में सत्य का अनुसन्धान करो और अपने दृष्टि कोण में समन्वय का प्रयत्न करो, तुम पाओगे, सत्य मिला और संघर्ष मिट गया।

आत्मस्वातंत्र्य के रूप में भगवान महावीर ने विश्व स्वातंत्र्य की जो घोषणा की थी वह उनके आत्मोपम्य दर्शन का एक मैनीफेस्टो था। उनका सारा दर्शन, सारा आदर्श केवल इस एक बात से अनुप्रेरित था कि सारे प्राणियों से मेरी मैत्री है। वह मैत्री स्वार्थ की नहीं किन्तु इस अनुभूति की है कि दुःख और सुख मन की स्वाभाविक परिणति है जो सब को समान रूप से होती है यदि हमें विश्व को अधिक सुखी बनाना है तो उसका उपाय अपने आप को अधिक संवेदनशील बनाना है। अगर हम यह अनुभव कर सकें कि हमारी क्रिया का दूसरे प्राणी पर क्या प्रभाव पड़ा, उसको क्या अनुभूति हुई है, तो निश्चय ही हम अपने ऊपर, हर क्रिया के ऊपर नियंत्रण और नियमन कर सकेंगे और जब सभी ऐसा आत्म नियंत्रण व नियमन करने लगेंगे तो क्या जानबूझकर किसी के द्वारा किसी को पीड़ा हो सकती है? विश्व मैत्री के इस सन्देश में ही विश्व शान्ति निहित है।

669, पं. चैन सुखदास मार्ग
किशनपोल बाजार,
जयपुर 302003

❑ ❑

जीव के दर्शन एवं ज्ञान गुणों की उपलब्धि और उपयोग

☆ कन्हैयालाल लोढ़ा

जैनाचार्य दर्शन को अन्तर्मुख चित्प्रकाश कहते हैं, उसमे पदार्थ का निर्विकल्प रूप से पवित्र ही ग्रहण मानते हैं। यदि मानव अपनी मिथ्या धारणाओं और तज्जनित कषाय भावो से दर्शन के उस पवित्र लोक को मलिन न करे तो जगत मे दु ख/विषाद/कलह आदि कृत्रिमताओं की रचना सभव ही नही है। दर्शन का यह प्रत्यय जैन श्रमण परम्परा का अनूठा प्रत्यय है। आधुनिक मनोविज्ञान मे Sensation के रूप मे इसी तथ्य को स्वीकार किया जाता है।

ऐसा ही अनूठा प्रत्यय लब्धि और उपयोग का जैन परम्परा मे हैं। आधुनिक मनोविज्ञान मे इसे मन का अवचेतन एव चेतन स्तर कर के स्वीकार किया गया है। उपयोग मे हम प्रकार सक्रिय हैं, पर लब्धि भी सक्रिय है और वहाँ से ही उपयोग में बोध-मणियो का उद्भव हाता है। उपयोग द्वारा लब्धि मे बीज वपन होता है और फसल पक कर लब्धि मे खड़ी होती है तथा उपयोग मे हमे उसके फल चखने को मिलते हैं।

—सम्पादक

जैन दर्शन मे चेतना या जीव का लक्षण दर्शन आर ज्ञान कहा है। इनमे भी पहले दर्शन होता है, फिर ज्ञान होना बताया है। इससे यह फलित होता कि यदि दर्शन न हो तो ज्ञान भी न हो। दर्शन गुण की पहली विशेषता स्वसवेदन है, दूसरी विशेषता निर्विकल्पता है। षट्खण्डागम की धवला टीका मे कहा है—"अन्तर्मुख चतन्य दर्शन और वहिर्मुख चित्प्रकाश ज्ञान है। ज्ञान सविकल्प, साकार, सविशेष, वहिर्मुख चित्प्रकाश व चितन रूप होता है। यद्यपि ज्ञान और दर्शन दोनो गुण चेतना के हे, परन्तु दोना के लक्षण एक दूसरे से विपरीत होने से जव दर्शनोपयोग होता है तव ज्ञानपयोग नही होता हे और जव ज्ञानोपयोग होता है तव दर्शनोपयोग नही होता है।

उपर्युक्त तथ्य से यह फलित होता है कि ज्ञान गुण और ज्ञानोपयोग एक नही है तथा दर्शन गुण ओर दर्शनोपयोग एक नही है। दोनो मे अतर है जैसा कि षट्खण्डागम की धवला टीका पु 2 पृ 41 पर लिखा है, 'स्व-पर-के ग्रहण करने वाले परिणाम को उपयोग कहते है।' यह उपयोग ज्ञान मार्गणा और दर्शन मार्गणा मे अन्तभूत नही होता है। इसी प्रकार पनवण्णा सूत्र मे भी ज्ञान दर्शन द्वार के साथ उपयोग द्वार को अलग से कहा है। तात्पर्य यह है कि गुणो की उपलब्धि का होना आर उनका उपयोग करना ये दोनो एक नही हे, दोनो मे अतर है।

उपलब्धि और उपयोग के अंतर को उदाहरण से समझें—मानव मात्र में गणित, भूगोल, खगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान आदि अनेक विषयों के ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता है, परन्तु किसी ने गणित व भूगोल इन दो विषयों का ज्ञान प्राप्त किया हो तो उसे उन दोनों विषयों के ज्ञान की उपलब्धि हुई यह कहा जायेगा, और अन्य विषयों के ज्ञान की उपलब्धि उसे नहीं है यह भी कहा जायेगा । गणित और भूगोल इन दो विषयों में से भी अभी वह गणित का ही चिंतन या अध्यापन कार्य कर रहा है, भूगोल के ज्ञान के विषय में कुछ नहीं कर रहा है तो यह कहा जायेगा कि वह गणित के ज्ञान का उपयोग कर रहा है और भूगोल के ज्ञान का उपयोग नहीं कर रहा है । परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उसके भूगोल के ज्ञान का अभाव है । उसे इस समय भी भूगोल का ज्ञान उपलब्ध है, हाँ, वह उसका उपयोग नहीं कर रहा है । एक दूसरा उदाहरण लें—एक धनाड्य व्यक्ति में अनेक वस्तुओं के क्रय करने की क्षमता है परन्तु उसने रेडियो और टेलीविजन ही खरीदा है । तथा, इस समय वह रेडियो चला रहा है, टेलीविजन नहीं चला रहा है, तो यह कहा जायेगा कि उस धनाड्य व्यक्ति में क्षमता तो अनेक वस्तुओं को प्राप्त करने की है, उपलब्धि उसे रेडियो और टेलीविजन की है और उपयोग वह रेडियो का कर रहा है । यह क्षमता, उपलब्धि और उपयोग में अंतर है । उपलब्धि और उपयोग के हेतु भी अलग-अलग हैं । उपलब्धि या लब्धि कर्मो के क्षयोपशम या क्षय से होती है और उपयोग लब्धि के अनुरूप व्यापार से होता है । जैसा कि उपयोग की परिभाषा करते हुए कहा गया है-

'उपयुज्यते वस्तु परिच्छेदं प्रति व्यापार्यते जीवोऽनेनत्युपयोगः । (प्रज्ञापना 24वाँ पद) । अर्थात्, वस्तु के जानने के लिये जीव के द्वारा जो व्यापार किया जाता है, उसे उपयोग कहते हैं ।

"उभय निमित्त वशादुत्पद्यमानश्चैतन्यानुविधायि परिणाम उपयोगः ।" "इन्द्रिय फलमुपयोग ।" स्वार्थसिद्धि अ. 2/9 व 8 । अर्थात् जो अंतरगं और बहिरंग दोनों निमित्तों से होता है और चैतन्य का अनुसरण करता है ऐसा परिणाम उपयोग है । अथवा, इन्द्रिय का फल उपयोग है ।

"स्व पर ग्रहण परिणाम उपयोगः" धवला टीका पु. 2 पृ. 411 । अर्थात् स्व पर को ग्रहण करने वाला परिणाम उपयोग है ।

उपर्युक्त परिभाषाओं से फलित होता है कि ज्ञानावरणादि कर्मो के क्षयोपशम से या क्षय से होने वाले गुणों की प्राप्ति को लब्धि कहते हैं और उस लब्धि के मिनित्त से होने वाले जीव के परिणाम या भाव का प्रवृत्तमान होना उपयोग है । परिणाम या भाव एक समय में एक ही हो सकता है । अतः एक समय में एक ही उपयोग हो सकता है अर्थात् ज्ञानोपयोग के समय दर्शनोपयोग और दर्शनोपयोग के समय ज्ञानोपयोग नहीं हो सकता । परन्तु लब्धियाँ ज्ञान-दर्शन गुण की ही नहीं, दान-लाभ-भोग आदि गुणों की भी हो सकती है । यही नहीं किसी को अनेक ज्ञानों की उपलब्धि या लब्धि हो सकती है परन्तु वह एक समय में एक ही ज्ञान का उपयोग कर सकता है, जैसा कि कहा है—"मतिज्ञानादिषु चतुर्पु पर्यायेणोपयोगो भवति न युगपत्" तत्त्वार्थभाष्य अ. । सू. 31। अर्थात्, मति, श्रुत, अवधि और मनः पर्यय इन चार ज्ञानों का उपयोग एक साथ नही हो सकता ।

❑ ❑

टीले से निकली मूर्ति और जंगल में मंगल

☆ कमल किशोर जैन
वरिष्ठ पत्रकार

देश मे व्यापी सामन्तवादी परम्परा के प्रभाव मे जैन समाज आ गया हो चाहे तथा छुआछुत और ऊँच-नीच के भेद भाव से ग्रस्त हो गया हो पर तीर्थंकरो का तत्त्व विज्ञान (दर्शन) और उनके तीर्थक्षेत्रो/अतिशय क्षेत्रो को सामन्तवादी यह घुण छू भी नहीं सका है। जैन तत्त्व विज्ञान पशु को भी सम्यग्दर्शन/आत्मदर्शन का अधिकार देता है, सामाजिक आर्थिक रूप से तथाकथित हीन, तुच्छ मानव तो पशु से कही ऊँचा है। अतिशय पूर्ण जिन बिम्बो के तेज के आगे भी सामन्तवादी अंधेरे की दाल नही गली है और केसारिया जी आदि अन्य जैन तीर्थों की भाति दि जैन अतिशय क्षेत्र महावीर जी भी जैन, अजैन/हिन्दु ही नही मुसलमान भाईयो तक की श्रद्धा भक्ति का पात्र बना हुआ है। अदभुत ही वीतराग तेज से भरा चाँदनपुर का महावीर है कि जो एक बार 'बाबा' के दर्शन कर लेता है वह पुन पुन दर्शन कर आनन्द मे नहाना चाहता है। उसके मन मे, आत्मा मे रोम रोम मे प्रभु की छवि गहराई से अकित हो जाती है। उसके दैहिक, भौतिक सब कष्ट मिट जाते हैं और एक अपूर्व शान्ति उसे मिल जाती है। —सम्पादक

टीले से भगवान का उदय और जगल मे मगल। वर्तमान मे देश का ख्याति प्राप्त, करोड़ो लोगो की श्रद्धा भक्ति का पात्र तीर्थस्थल का विशाल रूप। यही कहानी है जैन तीर्थ श्री महावीर जी की—जिसके चमत्कार के कारण गत 400 वर्षो मे चाँदन गाँव का लगातार विकास हुआ और ग्राम का नाम ही नही रेलवे स्टेशन का नाम भी श्री महावीरजी हो गया। अब प्रतिदिन हजारो भक्तो व श्रद्धालुओं का ताता है। जैन ही नही, सभी जाति और सम्प्रदाय के लोग यहा भक्ति-भाव से आते है। अब यह जैन तीर्थ सर्व जाति-समभाव और राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गया है।

श्री महावीरजी में जिस स्थान से यह मनोहारी प्रतिमा खोदकर निकाली गई थी, वह स्थान चरणचिन्ह छतरी के रूप में विकसित हुआ है। इसके चारों ओर सुन्दर उपवन है और सामने भगवान महावीर की 2500वीं जयन्ती की स्मृति में निर्मित सफेद संगमरमर का आकर्षक महावीर स्तूप है। यहाँ दुग्धाभिषेक की होड़ सी लगी रहती है। नवजात शिशुओं को गोद में लेकर चरण

रज लेना और बच्चों का जडूला उतरवाना तो यहां आम बात हो गई है। आज भी उस चर्मकार ग्वाले के वंशज चरण चिन्ह छतरी का चढ़ावा प्राप्त करते हैं। किसी चर्मकार ग्वाले की गाय का दूध स्वतः ही जब एक टीले पर झरने लगा तो उस ग्वाले ने गाय का पीछा किया और टीला खोदने पर उसे पाषाण की दिगम्बर प्रतिमा मिली। जैनधर्म के चौबीसवें व अन्तिम तीर्थकर भगवान महावीर की वह आकर्षक प्रतिमा थी। समय के साथ वहाँ मन्दिर बना, क्षेत्र का विकास हुआ और विकसित होने के क्रम ने इस स्थल को देश के एक लोकप्रिय तीर्थ का रूप दे दिया।

इस तीर्थ क्षेत्र और इसके मन्दिर के द्वार सभी धर्मों और वर्गो के लोगों के लिए खुले हैं। लाल और सफेद पाषाण से वने दिगम्बर जैन तीर्थ श्री महावीरजी के विशाल मन्दिर की शोभा अद्वितीय है। चतुष्कोण आकार के इस मन्दिर की स्थापत्य कला अद्भुत है। इसके स्वर्ण कलशों से सुशोभित उत्तंग तीन धवल शिखर, सम्यक दर्शन, ज्ञान व चरित्र के प्रतिक हैं। मन्दिर के पार्श्व प्रकोष्ठ के मध्य में तीन शिखर युक्त वेदी है, जिनमें मूलनायक रूप में भूगर्भ से प्राप्त भगवान महावीर की दिगम्बर प्रतिमा है। बाकी वेदियों में अन्य तीर्थकंरों की पाषाण और धातु की दिगम्वर प्रतिमाएं प्रतिष्ठित है। मन्दिर के भीतरी और बाहरी प्रकोष्ठों में संगमरमरी दीवारों पर वारीक खुदाई से और भित्ती चित्रांकन से मन्दिर की छटा को आकर्षक और प्रभावशाली वनाया गया है। चित्रांकनों में दिगम्वर जैन शैली के स्वर्णिम तैल चित्र भी है। मन्दिर की वाहरी परिक्रमा में श्वेत संगमरमर पर दिगम्बर जैन आख्यानों के कलात्मक भाव उत्कीर्ण किये गए हैं। मन्दिर के चारों और सुविधायुक्त कटला स्थित है। यहीं मन्दिर के प्रवेश द्वार पर प्रांगण में ही धवल संगमरमर पत्थर से निर्मित 52 फुट ऊँचा कलापूर्ण शिखर युक्त मान-स्तम्भ भी वना हुआ है। कटले के चारों और यात्रियों के आवास के लिए सुविधापूर्ण कमरे वने हुए हैं।

इस तीर्थ क्षेत्र की प्रवन्धकारिणी कमेटी महावीरजी के मूल ग्राम चाँदन गाँव और उसके ग्रामवासियों की सुख सुविधा के लिए भी कृतसंकल्प है। अव यह कस्वा अच्छी व्यापारिक मण्डी वना जा रहा है। अनेक दानवीरों और भक्त लोगों ने धर्मशालाएं वनाकर क्षेत्र के विकास मे योग दिया है। क्षेत्र कमेटी के अन्तर्गत जैन विद्या संस्थान शोध और संदर्भ के कार्य में रत है। हस्तलिखित पांडुलिपिओं का सूचीकरण कर ग्रन्थों के प्रकाशन के कार्य में यह संस्था मूल्यवान योग

दे रही है। जैन सस्कृति औरमाहित्य के विकास और विस्तार मे जैन विद्या सम्थान के अन्तर्गत अपभ्रश साहित्य अकादमी का भी महत्वपूर्ण योगदान है। इसी सस्थान के अन्तर्गत महावीर पुरस्कार, छात्रवृत्ति और विद्यार्थियो को आर्थिक सहायता देने की योजनाए भी शामिल हैं। लोकहित और लोक कल्याण की दृष्टि से श्री महावीरजी मे अनेक उपयोगी कार्य हुए हैं और सस्थाए स्थापित की गई है। आयुर्वेदिक औषधालय के साथ-साथ यहाँ महावीर योग प्राकृतिक चिकित्सालय और शोध सस्थान की स्थापना जनहित कार्यों मे उल्लेखनीय है। यात्रियो की सुविधा के लिए अन्नपूर्णा, सूरूचि अल्पाहार और उपभोक्ता भण्डार की स्थापना भी लोकहित कार्यों मे विशेषता रखते हैं।

राजस्थान के चादनपुर ग्राम मे महावीर बाबा का मन्दिर एक ऐसा स्थल है, जहाँ सभी वर्ग ओर सम्प्रदाय के दूल्हो की बारात रोकी जाती है और दुल्हा घोड़ी से उतर कर दिगम्बर जैन मन्दिर मे जाकर भगवान महावीर के दर्शन करता है और तभी बारात आगे बढ़ती है। साधारणतया वर घोड़ी पर बैठ कर जब बारात के जुलुस मे चलता है, तो बधु के द्वार पर तोरण मारकर ही घोड़ी से नीच उतरता है। मार्ग मे कहीं भी वह घोड़ी से नीचे नही उतरता, क्योंकि बीच मे घोड़ी से उतरना शुभ नहीं माना जाता, परन्तु श्री महावीरजी मे यह अपवाद है। इस चाँदनपुर ग्राम म किसी भी जाति की बारात हो महावीर स्वामी के मन्दिर मे शीश नवाकर ही शादी का कार्य आगे बढ़ता है। यदि बारात किसी अन्य स्थान पर चाँदनपुर से जा रही है तो पहले दूल्हा मन्दिर मे भगवान श्री के आशीर्वाद प्राप्त करेगा, तभी बारात चलेगी। ऐसे दृश्य प्रसिद्ध दिगम्बर जैन तीर्थ श्री महावीर जी मे विवाह के दिनो मे बहुधा देखन को मिलते हैं।

शादी विवाह ही क्यो ? चाँदनपुर ग्राम मे जो कि अब श्री महावीरजी के नाम से विख्यात हे, कोई भी मगलकार्य हो, ग्रामवासी पहले महावीर बाबा के दर्शन करते हैं। श्री महावीरजी म जिस चर्मकार द्वारा नदी तट पर भूमि से खोदकर मूर्ति निकाली गई थी उस चर्मकार के वशज महावीर जयन्ती के अवसर पर आयोजित पाँच दिवसीय मेले की विशाल रथ यात्रा के अवसर पर सम्मानित होते हैं। प्रति वर्ष वैशाख कृष्णा प्रतिपदा के दिन यानी अप्रेल माह मे मेले का समापन होता है, रथयात्रा और कलशाभिषेक का आयोजन इस दिन क आकर्षक कायक्रम हैं। मेले मे कोई एक लाख से भी अधिक व्यक्ति भाग लेते हैं जिनमे मीणा, गुर्जर, अहीर, माली, हरिजन आदि अधिक सख्या म आते है। मेल मे अनेक सास्कृतिक कार्यक्रम, भजन, भक्ति सध्या आदि के सुन्दर कार्यक्रम होते हैं। मन्दिर, कटला तथा सभी भवनों पर भव्य रोशनी होती है और यह जगमगाहट मेले का स्वरूप अलकृत करती है। गम्भीर नदी के सुरम्य तट पर स्थित श्री महावीरजी तीर्थ के प्रति ग्रामीणो की सच्ची श्रद्धा के उदाहरण एक नहीं है, अनेक हैं। 20 25 किलामीटर दूर से कनक दडवत करते अनेक ग्रामीण इस तीर्थ पर आते है। मीलो दूर पेट के बल मिट्टी मे लेट-लेट कर चलते हुए आगे बढ़ते है ओर साथ मे होती है उनकी धर्मपत्नि जो श्रद्धा से नत मस्तक होकर अपने पति क चरणा की रज लेती हुई उसके पीछे पीछे चलती है। इस तीर्थ क्षेत्र पर सभी ग्रामीण व अन्य नागरिक एक्य भावना से दर्शन करते है, भक्ति करते हें, जय जयकार करते है ओर मनोतिया मानते है। यह भगवान महावीर की प्रतिमा अलौकिक है। इसी प्रतिमा के चमत्कार स जनता मे सर्वत्र ज्ञान-ज्योति का प्रकाश फेला है।

सी 6 मोतीमार्ग, बापूनगर, जयपुर

□□

श्रावकाचार और पर्यावरण

☆ डा. शीतल चन्द्र जैन

सव्वत्थ सुंदरो लोए । इस अन्तर्बाह्य सर्वत्र अकारण स्वभाव से सुन्दर लोक में आज मानव पर्यावरण के प्रदूषण से भयभीत हो रहा है । प्रदूषण के रूप में पुद्गल का मानव पर यह उपकार है । हिंसादि पाप है, यह सीख रोगादि प्रदूषण के उत्पन्न होने पर ही मानव को मिलती है । ऐसे कौन किस की सुनता है ?

—संपादक

वर्तमान विश्व में सर्वाधिक चर्चा परिचर्चा का विषय यदि कोई है तो वह है पर्यावरण। आज के अखवार, टी.वी. आकाशवाणी आदि जो प्रचार के माध्यम है, उनमें पर्यावरण सम्बन्धित ज्ञापन विज्ञापन एवं सूचनायें जरूर रहती है ।

गतवर्ष 185 देशों के प्रतिनिधियों ने मिल कर दक्षिण अमेरिका के देश ब्राजील की राजधानी 'रियो डी जेनरो' में 2 जून से 14 जून तक 'पृथ्वी शिखर सम्मेलन' में पर्यावरण के प्रदूषण, संरक्षण और सन्तुलन बनाये रखने हेतु उपायों पर विचार विमर्ष कर कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये है । इसके पूर्व भी विश्वस्तर पर 'मानव पर्यावरण सम्मेलन' स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में हुआ था जिसकी स्मृति में 5 जून को प्रतिवर्ष 'पर्यावरण दिवस' मनाया जाता है ।

पर्यावरणिक नैतिकता के जनक व युग को "कृषि करो या ऋषि वनो" के लोक कल्याणक ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर और उनकी आचार्य परम्परा ने अपने आचरण से श्रमणों एवं श्रावकों को पर्यावरण और उसके सरंक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण मार्ग दर्शन दिया है । इस वैज्ञानिक युग में आज का मानव धार्मिक वातों को भी श्रद्धा से न समझकर तर्क वितर्क से समझता है । जैन धर्म भी कहता है कि तर्क युक्ति और आगम के द्वारा अनुभव करके देखो, समझो व प्रयोग करो । तब निष्कर्ष निकालो । उचित लगे तो मानो अन्यथा छोड़ दो ।

वातावरण से चेतन क्रिया /वैचारिक परिणति प्रभावित होती है, परन्तु ये दोनों सापेक्ष हैं। वर्तमान में भौतिक, वैचारिक एवं मानसिक पर्यावरण जो दूषित हो चुका है, उसके सुधारने में जैन धर्म में प्रतिपादित श्रावकाचार की अहं भूमिका हो सकती है । आवश्यकता है उसके प्रचार प्रसार एवं अनुकरण की ।

श्रावकों की आचार संहिता का निर्माण सर्वप्रथम आचार्य समन्तभद्र ने स्पष्ट रूप से किया। उन्होंने कहा कि श्रावक मद्य, मांस मधु और पांच पापों का त्याग सर्वप्रथम करे । उनके परवर्ती आचार्य अमृतचन्द्र ने भी पुष्टि करते हुए कहा कि इनको त्यागे विना वुद्धि शुद्ध/निर्विकार/उज्ज्वल नहीं हो सकती और वुद्धि शुद्ध हुए विना व्रतों का पालन संभव नहीं है ।

अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पञ्च अणुव्रत, दिगविरति, देश विरति और अनर्थ दण्ड विरति ये तीन गुणव्रत, सामायिक, प्रोपधोपवास, उपभोग परिभोग परिमाण और अतिथिसविभाग ये चार शिक्षाव्रत इस प्रकार श्रावक के वारह व्रतो द्वारा आचार सहिता प्रतिपादित की गई है । इन वारह व्रतो की आधारभूमि अहिसा है, यदि मानव अहिंसक आचरण करने लगे तो पर्यावरण प्रदुपण का प्रश्न ही नही उठता है । जब मानव हिसक प्रवृत्ति पर उतारू हो जाता है तव प्रदूपण फैलना प्रारम्भ होता है ।अत अहिसक आचरण द्वारा हम ससार के जीवो की रक्षा करके 'परस्परोपग्रहो जीवानाम' इस सिद्धान्त द्वारा पर्यावरण को पूर्णत सन्तुलित रख सकते है । सत्याणुव्रत से भी पर्यावरण मे सन्तुलन वना करके रखा जा सकता है । क्योंकि झूठे प्रमाणपत्र बनाकर फूलदार वृक्षो को भी सूखा वताकर सूखे वृक्षो के प्रमाणपत्र प्राप्त कर अवैध ढग से वनो की कटाई से पर्यावरण का विनाश हुआ है । जो मानव मत्याणुव्रत का पालन करेगा तो इस प्रकार का अवैध कार्य नही करेगा । अचौर्यव्रत के पालन करने मे आज के युग मे जो वस्तुओं में मिलावट से पर्यावरण विगड़ रहा है उसका सन्तुलन वनाकर रखा जा सकता है । इस व्रत की परिधि मे रहने से एकेन्द्रिय स्थावर जीव पेड़ पौधो के फल फूल पत्ते छाल आदि भी इनकी आज्ञा के प्रतिकूल नही लिये जा सकते । इसे पट्लेश्या वृक्ष के उदाहरण से आचार्यों ने भली भाँति समझाया है । अपरिग्रह के पालन करने से भौतिक एव अन्य पदार्थों का सग्रह कम से कम किया जायेगा तो प्राकृतिक ससाधनो का दोहन कम होगा । चाहे कपड़े हो या फर्नीचर हो अथवा पत्थरो के मकान हो आवश्यकता से अधिक रखने के कारण पर्यावरण असन्तुलन होगा । अत अपरिग्रह स्वय की सुरक्षा के लिये अपनाना ही होगा । पर्यावरण प्रदूपण मे जनसख्या की अभिवृद्धि भी कारण है । इसका निदान एक मात्र ब्रह्मचर्य है । इसके पालन से पर्यावरण सरक्षण के साथ-साथ समाज मे जो कामुकता के कारण कई जघन्य अपराध होते हैं वे भी समाप्त हो जायेगे । अपहरण, वलात्कार जेसे अपराध स्वत समाप्त हो जायेगे । इससे सामाजिक पर्यावरण सुखद और शान्तिमय होगा। इस प्रकार पञ्चाणुव्रत पालन करने से मानव के भीतरी पर्यावरण की शुद्धि होगी और उससे मन पवित्र होगा और इससे वाह्य जगत का प्रदूपण भी दूर होगा ।

तीन गुणव्रतो का पालन करने से वाह्य पर्यावरण के प्रदूपण से खतरा नही रहता क्योंकि—अनर्थदण्डविरति के पाचो भेदो के अन्तर्गत आने वाली क्रियाओं का श्रावक त्यागी होता है । जैसे, वह ऐसे व्यापार नही करता हे जिससे युद्ध वगैरह की सम्भावना हो या प्राणियो को कष्ट पहुँचे । अनावश्यक पेड़ कटवाना, जमीन खुदवाना, जल प्रदूपित करना ये प्रमादाचरित अनर्थदण्ड मे आता है । हिसा के उपकरण देना हिसादान अनर्थदण्ड है, और साम्प्रदायिक तनाव, जातीय दगे आदि को वढ़ाने वाले अशुभ वातो को सुनाना या सुनना अशुभश्रुति अनर्थदण्ड है । इत्यादि क्रियाओं के प्रति सावधान रहने से पर्यावरण को शुद्ध रखने मे पर्याप्त योगदान मिलता है । चार शिक्षाव्रत जीवन को सयमित रखते है जिससे पर्यावरण भी सयमित एव मर्यादित वना रहता है।

इस प्रकार श्रावक के द्वारा किया गया सही आचरण पर्यावरण के सरक्षण, सवर्धन एव सशोधन मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान रखता है । अत विश्व को प्राकृतिक प्रकोपो से निजात दिलाना हो तो जैनधर्म के सिद्धान्त अधिकाधिक अपनाने होगे ।

प्राचार्य
श्री जैन आचार्य स महाविद्यालय, जयपुर

□□

भगवान महावीर के चार सिद्धान्त

☆ आर्यिका विजयमती

भ. महावीर के अनेकांत-स्याद्वाद, कर्मवाद, अहिंसा एवं अपरिग्रह आदि सिद्धान्तों की चर्चा जितनी की जाये उतनी थोड़ी है । हर बार की चर्चा हमारे एकांत आग्रहों को शिथिल करती है, कर्म के सूक्ष्म जगत की बलवत्ता का अहसास कराती है, स्व-पर हिंसा की भीषणता से विरत कर सदयता की स्फुरण करती है और परिग्रह में बहुमान के मिथ्याभाव पर चोट करती है । अनेकांत-स्याद्वाद की सम्यक् समझ महावीर के सभी सिद्धान्तों के मूल में है । चाहे कर्मवाद हो, चाहे अहिंसा या अपरिग्रह यदि इनका अस्ति पक्ष है तो नास्ति पक्ष भी है, नास्ति अस्ति के मेल का एवं अवक्तव्य रूप पक्ष भी है । विविध पक्षों के सुमेल को रखती अहिंसा ही मानव का स्व पर हित साधन करती जीवन्त, तेजस्वी जीवन पद्धति है । एकांत रूप अनर्गल अहिंसा की बात तो व्यक्ति और समाज को हीनर्तेज करती कायरता/काय-रतता पर्याय बन जाती है । स्याद्वाद अनेकांत वचन में ही अभिव्यक्ति की पद्धति नही है, वस्तु के त्रिकाल व्यापी विराट अनेकांत स्वरूप की काल खण्ड विशेष में अभिव्यक्ति का एवं विकास का प्रारूप (Mechanism) भी है ।

—सम्पादक

भगवान महावीर विश्व की अनुपम विभूति ते । समस्त विश्व उनका था और वे थे विश्व के । तीर्थकर का अर्थ ही प्राणी मात्र का तारक होता है । जगत के उद्धार का मार्ग निर्धारण करे वही तीर्थङ्कर कहलाता है । चार स्तम्भ प्रासाद के आधार होते हैं, चार काठ से पलंग बनता है, चार दीवालों से कक्ष होता है । ऐसे ही भगवान महावीर ने सर्वोदय-जनक प्रधानतः चार सिद्धान्त निर्दिष्ट किये । ये मानव के जीवन के आधार हैं, व्यावहारिक जीवन के साधन हैं । भगवान महावीर ने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से आध्यात्म को परखा, आत्मा का परीक्षण किया, जीवन का सर्वाङ्गीण विकास और शाश्वत सुख को समझा । फलतः सच्चे शाश्वत सुख के साधनों की ओर सांसारिक मानव की दृष्टि फेरने का उपाय किया। यों तो मुक्ति मार्ग रत्नत्रय रूप वताया । इसकी सिद्धि के लिए उन्होंने व्यवहारिक रूप में अनेकान्तवाद-स्याद्वाद, अहिंसावाद, कर्मसिद्धान्त और अपरिग्रहवाद इन चार सिद्धान्तों का निरूपण किया । आज 2516 वर्ष के अनन्तर भी ये सिद्धान्त ज्यों के त्यों विद्यमान है और जीवनोत्थान के साधन है। कहावत है 'मनुष्य मर जाता है पर विचार नही मरते ।' भगवान महावीर मुक्त हो गये किन्तु उनके आदर्श आज तक ताजा हैं और रहेंगे ।

वर्तमान युग वैज्ञानिक के साथ-साथ सक्रान्ति का युग है । अनेक मत-मतान्तरो, विचारो की विभिन्नताओं का बोलबाला है । चारो ओर मतभेदो का प्रचार है । वैमनस्य, द्वेष हिसादि प्रवृत्तियो ने मानव को दानव का रूप प्रदान कर दिया है । सरकारे भी इन्हीं अमानवीय पतन के साधन, नैतिकता के विघातक, आध्यात्म्य के शोषक कारणो को प्रोत्साहन देकर मानव को प्रमादी, हिसक, अन्यायी, दुराचारी, व्यभिचारी आदि दुर्गुणो से आश्लिष्ट कर रही हैं । इस अशान्ति, दु ख, असहिष्णुता, पीडा, सन्तापादि के निवारणार्थ भगवान महावीर के ये सिद्धान्त ही समर्थ है । इन्हे अपनाने पर ही मानव, परिवार, समाज, देश, राष्ट्र व ससार का जीवित रहना सभव है, सहार से रक्षा हो सकती है । वर्तमान मे ये अमोघ, रामबाण औषधि है ।

विविध विरोधी धर्मो-स्वभावो का अविरोध रूप से एक ही वस्तु मे रहना अनेकान्त है। इस सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान करना स्याद्वाद है । अर्थात्, अनेकान्त सिद्धान्त है और स्याद्वाद उसके प्रतिपादन की शेली है । इनके द्वारा हमे सहिष्णु बनने की योग्यता-क्षमता प्राप्त होती है, समदृष्टि आती है, विरोधो विचारो मे सामंजस्य लाने का मार्ग मिलता है । यथा, कोई व्यक्ति पिता, पुत्र, भाई, मामा, चाचा, दादा आदि हैं, यह कहे तो विरोध सा प्रतीत होता है परन्तु अपेक्षा, नय, की दृष्टि से आकने पर ये विरोध समाप्त हो जाते हैं और समस्त धर्म सुव्यवस्थित रहकर मानवता का अस्तित्व कायम रह जाता है । एक बार अकबर बादशाह के दरबार मे बादशाह ने एक लाइन दीवाल पर डालकर पूछा, "यह बड़ी है या छोटी" सभी विद्वद् मण्डली चकरा गई । बीरबल जैन सिद्धान्त का ज्ञाता था । उसने अनेकान्त-अपेक्षावाद का स्मरण किया । उस लाइन के ऊपर एक बड़ी और और दूसरी छोटी लाइन खीच दी और कहा 'सरकार यह बड़ी भी है और छोटी भी है ।' देखिये, छोटी लकीर की अपेक्षा ही कोई लाइन बड़ी है और बड़ी की अपेक्षा छोटी है । अपेक्षा के अभाव मे अवक्तव्य है, स्व स्वरूप से सत् है अस्ति रूप है, पर की अपेक्षा नास्ति भी है । इस प्रकार क्रमश अस्ति, नस्ति उभय धर्मो को सयुक्त करने पर प्रत्येक वस्तु मे सात प्रकार बन जाते हैं, यही स्याद्वाद है । स्यात् का अर्थ कथचित् होता है अस्ति, नास्ति अवक्तव्य-इनसे सात भग-दृष्टिकोण सिद्ध हो जाते है । छ अन्धो ने हाथी के स्वरूप को छह प्रकार का कहा, सातवे ने सब के अभिप्राय का स्वागत कर उसे एक रूपता प्रदान कर झगड़ा शान्त कर दिया । आज भी हम अपने जीवन मे इमे उतारे तो हमारी समस्त विषम समस्याएँ हल हो सकती हैं, हम सहार से बच कर स्वास्थ्य लाभ ले सकते है, मृतप्राय मानवता को त्राण, प्राण प्रदान कर जीवन्त रख सकते हैं ।

दूसरा सिद्धान्त कर्मवाद का अलौकिक है, अद्वितीय है, प्राणीमात्र को पूर्ण स्वातन्त्र्य प्रदाता है, आत्मा का पोषक और विकासक है । जैन सिद्धान्त मे कर्म का स्वरूप बड़ा ही अनोखा है । भगवान महावीर ने बताया प्रत्यक प्राणी अपने सुख-दु ख, जीवन-मरण, उत्थान-पतन विकास ह्रास ससार मोक्ष का कर्ता-भोक्ता स्वय ही है । वह जैसा कर्म करता है वैसा ही भोगता है, शुभाशुभ रूप सात-असाता आदि कर्मो का सञ्चय कर स्वय ही सुखी व दु खी होता है । निश्चय से स्वय आत्मा ही जिम्मेदार है । हाँ, व्यवहार से अन्य भी द्रव्य, क्षेत्र, काल भावानुसार इस करने-भोगने मे सहायक होते हैं । इन्हे निमित्त सज्ञा दी

है। निमित्तों के अनुसार भी मानव के भाव-विचार, कर्त्तव्याकर्त्तव्य निर्मित होते हैं। इस प्रकार कर्म सिद्धान्तानुसार प्रत्येक प्राणी अपनी-अपनी सृष्टि का निर्माण करता है । जो जिसका निर्माण करता है वही उसके फल का भोक्ता होता है और वही उसका संहारक भी होता है । स्पष्ट है हमारे अपने शुभाशुभ कर्म सांसारिक सुख-दुख का निर्माण करते हैं और इन दोनों प्रकार के कर्मों का संरोध कर स्वयं ही जीव मानव संसारातीत अवस्था प्राप्त करता है, परमात्मा बन जाता है । पुरुषार्थ के अनुसार जीव बद्धाबद्ध होता है । वर्तमान में मानव की अनर्गल प्रवृत्ति, अशुभवृत्ति, तामसिकता, विषयात्मकता विलासिता, कामवासना का प्राचुर्य प्रदर्शित हो रहा है । एक दूसरे के प्रति घृणा द्वेषभाव जाग्रत हो रहा है । चारों ओर त्राहि-त्राहि मची है । मानव मानवता से बहुत दूर जा रहा है और स्वयं मकड़ी के जाल समान पर को फंसाने के द्वन्द में स्वयं फंसकर दुःखी हो रहा है । यदि हमें सुख शान्ति चाहिए तो इस कर्मवाद सिद्धान्त को समझकर मन, वचन, काय की क्रियाओं को सरल और पवित्र वनाना होगा ।

सफल और सार्थक जीवन की कुञ्जी है अहिंसा । राग-द्वेष, मद, मान, क्रोध लोभादि विकारों की उत्पत्ति का नहीं होना अहिंसा है । यों सामान्य रूप में किसी भी प्राणी को प्राणों से वियुक्त नहीं करना अहिंसा है । सबका जीवन समान है । सभी जीना चाहते हैं । हम किसी को जीवन दे नहीं सकते तो उसे लेने का भी क्या अधिकार है । इसीलिए भगवान महावीर ने डंके की चोट पर आदेश दिया "जीओ और जीने दो" Live and let live, अहिंसा परमो धर्म; जीव रक्षण परम धर्म है । आज नये-नये बूचड़ खाने खुल रहे हैं, लाखों मूक प्राणियों के जीवन से खिलवाड़ किया जा रहा है । सौन्दर्य प्रसाधन के सामग्री यथा लिपिस्टिक, नेलपालिश, सैंपू आदि; भोजन सामग्री में हिंसापूर्ण केक,डवलरोटी आदि पानपराग, गुटकादि वस्तुओं का खुले आम प्रचार, शराव का प्रयोग, अण्डे को शाकाहार वताकर प्रचार-ये समस्त कार्य घोर हिसा के वर्द्धक हैं, धर्म प्राण भारत के लिए ये निंद्य, अधर्म रूप और दुःख वर्द्धक हैं । महावीर के सिद्धान्त-अहिंसा के विना नाश के कगार पर खड़ी मानवता का अन्य कोई रक्षक नहीं है । "परस्परोपग्रहो जीवानां" की भावना ही प्रेम, वात्सल्य की हितकर गंगा प्रवाहित कर सकती है । दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या, कन्या संहार, वर-विक्रय आदि घृणित, कुत्सित, प्रवृत्तियों पर यही सिद्धान्त व्रेक लगाने में समर्थ है । अतः सम्यक्त्वोत्पादक अहिंसा सिद्धान्त को हमें जीवन में उतारना ही होगा ।

अन्तिम सिद्धान्त है अपरिग्रहवाद । आज परिग्रह सञ्चय की होड लगी है । समाज में अधिक-से-अधिक ऐशो आराम, भोगोपभोग सामग्री का सञ्चय करना सभ्यता का द्योतक वन गया है, जवकि भगवान महावीर ने 'वह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः', अधिक परिग्रह और आरम्भ को नरक आयु का आस्रव कहा है । यह धन अनर्थो की जड़ है । चार पुरुपार्थों में सर्वप्रथम धर्म पुरुपार्थ है । धर्म के अनन्तर क्रमशः अर्थ, काम और मोक्ष हैं । धर्म सवकी आधार शिला है । परिग्रह पाप का पुञ्ज है । कितना ही न्याय नीति से धनार्जन किया जाय कुछ न कुछ पापांश होता ही है, फिर अन्याय, अत्याचार, असत्य, चोरी, अनाचार पूर्वक अर्जित धन-धान्य परिग्रह पाप का आकार क्यों नहीं होगा ?भगवान महावीर ने पुण्यानुवन्धी पुण्य की सम्पदा को भी जीर्णतृणवत् त्याग दिया, वालब्रह्मचारी रहकर कठिन साधना में जुट गये । यहाँ

तक कि आहार भी शरीर स्थिति बनाये रखने के हेतु मात्र एक बार, वह भी चार, छ, दस दिन व महीने, दो महीने मे ग्रहण किया । त्याग की पराकाष्ठा धारण की । आज पेट की भूख नही, मन की भूख मुह फाड़े खड़ी है । इसका अन्त होने की अपेक्षा वृद्धि होती जा रही है । आशा-तृष्णा किसी प्रकार भी पूर्ण नही हो सकती । अग्नि ईंधन से, सागर नदियो से कदाचित तृप्त हो जाये परन्तु मानव की तृष्णा कभी भी ग्रहण से शान्त नही हो सकती है, वरन् घी पड़ने पर आग की भाँति बढ़ती जाती है और मानव आग मे घी की भाति लोलुपी होता जाता है। समाज मे अनेको विषमताएँ इसी तृष्णा के कारण घर किये हुए हैं ।

भगवान महावीर ने आशा की तृप्ति का उपाय बताया है, त्याग और सयम । इसी सिद्धान्त से शील, सदाचार, शिष्टाचार, नैतिकता का जीवन्त रहना सभव है । अन्यथा, जीवन मे दु ख, सन्ताप, असन्तोष बढ़ते ही जायेगे और दु ख की ताप मे झुलसना ही होगा । हम सुखी होना चाहते है तो हमे भगवान महावीर के सिद्धान्तो को अपनाना होगा । हमारे आचार्योंने इनही का प्रचार और प्रसार किया है । वर्तमान मे प पू श्री 108 मुनिकुञ्जर सम्राट चारित्र चक्रवर्ती आदिसागर जी आचार्य परमेष्ठी ने भी स्वय दिगम्बर मुद्रा धारण कर भगवान महावीर के सत्पथ पर चल कर स्व पर कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया ।

भारतवर्ष धर्मों की जननी है । हमे अपनी सस्कृति को समझना है और तदनुसार आचरण भी करना है । पाश्चात्य चाल चलन, रहन-सहन, खानपान आदि आचरण हमारे सर्वथा प्रतिकूल है । हम और हमारी राजसत्ता धर्म के आश्रय से ही टिक सकती है । तथाकथित वैज्ञानिक, थोथे, अविचारित रम्य आविष्कारो के पीछे हम बेहताश दौड़ रहे है । इस घुड़दौड़ को त्यागना ही होगा । हमारे विचारो मे अनेकान्त, जीवन मे अपरिग्रह और व्यवहार मे अहिंसा का प्रयोग करना होगा तभी मानव और मानवता जीवन्त रह सकेगी, दया, क्षमता, वात्सल्य का स्रोत बहेगा और जीवन हरा भरा हो जायेगा ।

□ □

द्वितीय खण्ड

साहित्य

"हे मनुष्य यदि तू विपुल सुखो को चाहता है तो सन्तोप कर"

महावीर जयन्ती पर शुभ कामनाए

पूनमचन्द जैन
गंगवाल

★ ★ ★
★ ★
★

जैन कुज
1 गोपाल वाड़ी
जयपुर

✦ ✦ ✦
✦ ✦
✦

☎
367698 371184

नन्दीश्वर-भक्ति

☆ पद्यानुवादक आचार्य विद्यासागर

जैन पृथ्वी चर्चा में नन्दीश्वर ऑठवा द्वीप है जहॉ वर्ष में तीन बार अष्टान्हिका पर्व पर देवगण जाकर पूजा, भक्ति आदि करते हैं । आज की भूगोल में वह अनुपलब्ध है । वैसे भी मनुष्य लोक के वाहर होने से मनुष्य आज तक न वहॉ पहुँचा है, न कभी पहुँच पायेगा और वहॉ के बावन चैत्यालयों के जिनबिम्वों के दर्शन नही कर पायेगा। आचार्य श्री ने नन्दीश्वर-भक्ति को हिन्दी पद्य में अनुवाद कर पाठक के लिये यहॉ ही उस द्वीप के अद्भुत चैत्यालयों, उनके अकृत्रिम जिनबिम्बों के अन्तः चक्षुओं से दर्शन कर अपने भक्ति प्रसून समर्पित करना सुलभ कर दिया है ।

—सम्पादक

ग्रन्थकार एवं गुरु-स्मरण

सुरासुरों से हैं सदा, पूजित जिनके पाद ।
पूज्यपादको नित नमूँ, पाऊँ परम-प्रसाद ।।१।।
सारे सागर क्षार है, मम गुरु मधुर अपार ।
नमूँ ज्ञानसागर, गहूँ, भवसागर का पार ।।२।।

(ज्ञानोदय-छन्द)

जय, जय, जय, जयवन्त जिनालय, नाश रहित हैं, शाश्वत हैं;
जिन में जिनमहिमा से मण्डित, जैन-विम्व हैं, भास्वत है ।
सुरपति के मुकुटों की मणियाँ, झिल-मिल, झिल-मिल करती हैं,
जिनविम्वों के चरण-कमल को, धोती हैं, मन हरती है ।।१।।

सदा-सदा से, सहज रूप से, शुचितम, प्राकृत छवि वाले,
रहें जिनालय धरती पर ये, श्रमणों की संस्कृति धारे ।
तीनों संध्याओं में इनको, तन से, मन से, वचनों से,
नमन करूँ, धोऊँ अघ-रज को, छूटूँ भव-वन-भ्रमणों से ।।२।।

भवनवासियो के भवनो मे, तथा जिनालय वने हुये,
तेज-कान्ति से दमक रहे है, और तेज सव हने हुये ।
जिन की सख्या जिन-आगम मे, सात-कोटि की मानी है,
साठ-लाख, दस-लाख और दो-लाख* वताते ज्ञानी है ॥३॥
अगणित द्वीपो मे अगणित है, अगणित गुण-गण मण्डित हैं,
व्यतर देवो से नियमित जो, पूजित सस्तुत वदित हैं ।
त्रिभुवन के सव भविकजनो के, नयन मनोहर सुन प्यारे ।
तीन-लोक के नाथ जिनेश्वर-मदिर हैं शिव-पुर द्वारे ॥४॥
सूर्य-चन्द्र-ग्रह-नक्षत्रादिक, तारकदल गगनागन मे,
कौन गिने वह अनगिन हैं ये, अनगिन जिनगृह है जिनमे ।
जिन के वन्दन प्रतिदिन करते, शिव-सुख के वे अभिलापी,
दिव्य-देह ले देव देवियाँ, ज्योतिर्मण्डल-अधिवासी ॥५॥
नभ-नभ-स्वर-रस-केशव सेना-मद[1] हो सोलह-कल्पो मे,
आगे पीछे तीन तीन मे,[2] शुभतर कल्पातीतो मे ।
इस विध शाश्वत ऊर्ध्वलोक मे, सुखकर ये जिन-धाम रहे,
अहो भाग्य हो नित्य निरन्तर, होठो पर जिन नाम रहे ॥६॥
अलोक का फैलाव कहाँ तक, लोक कहाँ तक फैला है ?
जाने जो जिन है जय भाजन, मिटा उन्ही का फेरा है ।
कही उन्ही ने मनुज लोक के, चैत्यालय की गिनती है,
चार शतक अट्ठावन[3] ऊपर, जिन मे मन ! रम विनती है ॥७॥
आतम-मद-सेना-स्वर-केशव-अग रग फिर याम[4] कहे,
ऊर्ध्व-मध्य औ अधोलोक मे, यूँ सव मिल जिन धाम रहे ॥८॥
किसी ईश से निर्मित ना है, शाश्वत है स्वयमेव मदा,
दिव्य-भव्य जिन-मदिर देखो, छोड़ो मन अहमेव मुधा ।
जिनमे आहत, प्रतिभा मडित प्रतिमा न्यारी प्यारी है,
सुरासुरो से सुरपतियो से, पूजी जाती सारी है ॥९॥

---

1 नभ (आकाश) ०, नभ ० स्वर ७, रस ६ (षड्रस), केशव ९, सेना ४, मद ८, 'अका
वामतो गति, के अनुसार ८४९६,७००

2 ३२३, कुल = ८८ ९६ ७०० + ३२३ = ८४,९७,०२३

3 ४५८

4 आतम १, मद ८ सना ४ (चतुरगणी सेना), स्वर ७, केशव ९ (९ नारायण), अग ६ (
काय), रग ५ याम ८ (प्रहर), यानी ८५६९७४८१

* ७७२०००००

रुचक-कुण्डलों-कुलाचलों पर, क्रमशः चउ-चउ-तीस रहें,
वक्षारों-गिरि विजयार्द्धों पर, शत,[1] शत-सत्तर ईश कहें ।
गिरि-इषुकारों, उत्तर-गिरियों,[2] कुरुओं में चउ, चउ, दश हैं;
तीन-शतक छह-वीस[3] जिनालय, गाते इनके हम यश हैं ॥१०॥

द्वीप रहा जो अष्टम जिसने, "नन्दीश्वर" वर नाम धरा;
नन्दीश्वर-सागर से पूरण, आप घिरा अभिराम खरा ।
शशि-सम शीतल जिसके अतिशय-यश से बस ! दश दिशा खिली;
भूमण्डल ही हुआ प्रभावित, इस ऋषि को भी दिशा मिली ॥११॥
किस किस को ना दिशा मिली ।

इसी द्वीप में चउ दिशियों में, चउ गुरु अंजन गिरिवर हैं;
इक इक अंजनगिरि संबंधित, चउ चउ दधिमुख गिरिवर हैं ।
फिर प्रति दधिमुख कोनों में दो-दो रतिकर गिरि चर्चित है;
पावन, वावन गिरि पर, वावन-जिनगृह हैं सुर अर्चित हैं ॥१२॥

एक वर्ष में तीन बार शुभ, अष्टाह्निक उत्सव आते;
एक प्रथम आषाढ़ मास में, कार्तिक फाल्गुन फिर आते ।
इन मासों के शुक्ल पक्ष में, अष्ट दिवस अष्टम तिथि से;
प्रमुख वना सौधर्म इन्द्र को, भूपर उतरें सुर मति से ॥१३॥

पूज्य द्वीप नन्दीश्वर जाकर, प्रथम जिनालय वन्दन ले;
प्रचुर पुष्प मणिदीप धूप ले, दिव्याक्षत ले चन्दन ले ।
अनुपम अद्भुत जिन-प्रतिमा की, जगकल्याणी गुरुपूजा;
भक्ति-भाव से करते हे ! मन ! पूजा में तू भी खोजा ॥१४॥

विम्वों के अभिषेक कार्यरत हुआ इन्द्र सौधर्म महा;
"दृश्य वना" उसका क्या वर्णन, भाव-भक्ति सो धर्म रहा ।
सहयोगी वन उसी कार्य में, शेष इन्द्र जयगान करें;
पूर्ण-चन्द्र-सम निर्मल यश ले, प्रसाद-गुण का पान करें ॥१५॥

इन्द्रों की इन्द्राणी मंगल-कलशादिक ले कर सर पे;
समुचित शोभा और वढ़ाती, गुणवन्ती इस अवसर पे ।
छां-छुम, छां-छुम नाच नाचतीं, सुर-नटियाँ है सस्मित हो;
सुनो ! शेष अनिमेष सुरासुर, दृश्य देखते विस्मित हो ॥१६॥

---

1. वृक्षारगिरी तथा गजदन्त संवंधी ८० + २०, कुल १००
2. ३६ मानुषोत्तर पर्वत
3. ३२६

वैभवशाली सुरपतियो के, भावो का परिणाम रहा,
पूजन का यह सुखद-महोत्सव, दृश्य बना अभिराम रहा ।
इसके वर्णन करने मे जब, सुनो ! वृहस्पति विफल रहा,
मानव मे फिर शक्ति कहाँ वह ? वर्णन करने मचल रहा ॥१७॥
जिन-पूजन-अभिषेक पूर्णकर, अक्षत केसर चन्दन से,
बाहर आये देव दिख रहे, रँगे-रँगे से तन-मन से ।
तथा दे रहे प्रदक्षिणा हैं, नन्दीश्वर जिनभवनो की,
पूज्य-पर्व को पूर्ण मनाते, स्तुति करते जिन-श्रमणो की ॥१८॥
सुनो ! वहाँ से मनुज-लोक मे, सब मिल कर सुर आते हैं,
जहाँ पाँच शुभ मदर-गिरि हैं, शाश्वत चिर से भाते हैं ।
भद्रशाल, नन्दन, सुमनस औ, पाडुक वन ये चार जहाँ
प्रति मदर पर रहे, तथा प्रति-वन मे जिनगृह चार महा ॥१९॥

मन्दर पर भी प्रदक्षिणा दे, करे जिनालय वन्दन हैं,
जिन-पूजन-अभिषेक तथा कर, करे शुभाशय नन्दन हैं ।
सुखद पुण्य का वेतन लेकर, जो इस उत्सव का फल है,
जाते निज निज स्वर्गों को सुर, यहाँ धर्म ही सम्बल है ॥२०॥
तरह-तरह के तोरण द्वारे, दिव्य वेदिका और रहे,
मानस्तम्भो याग-वृक्ष औ उपवन चारो ओर रहे ।
तीन-तीन प्राकार बने हैं विशाल मण्डप ताने हैं,
ध्वजा-पक्ति का दशक लसे चउ-गोपुर गाते गाने हैं ॥२१॥
देख सके अभिषेक बैठकर, धाम बने नाटक गृह हैं,
जहाँ सदन सगीत-साध के, क्रीड़ागृह कौतुकगृह हैं ।
सहज बनी इन कृतियो को लख, शिल्पी होते अविकल्पी,
समझदार भी नही समझते, सूझ-बूझ सब हो चुप्पी ॥२२॥

थाली सी है गोल वापिका, पुष्कर हैं चउ-कोन रहे,
भरे लबालब जल से इतने, कितने गहरे कौन कहे ?
पूर्ण खिले हैं महक रहे हैं, जिन मे बहुविध कमल लसे,
शरद-काल मे जिस विध नभ मे, शशि-ग्रह-तारक विपुल लसे ॥२३॥

झारी-लोटे-घट-कलशादिक, उपकरणो की कमी नही,
प्रति जिनगृह मे शत-वसु, शत-वसु, शाश्वत मिटते कभी नही ।
वर्णाकृति भी निरी-निरी है जिन की छवि प्रति छवि भाती,
जहाँ घटियाँ* झन झन, झन-झन, बजती रहती ध्वनि आती ॥२४॥

---

* १०८

स्वर्णमयी ये जिन-मंदिर यूँ, युगों-युगों से शोभित है;
गंध-कुटी में सिंहासन भी, सुन्दर-सुन्दर द्योतित हैं ।
नाना दुर्लभ वैभव से ये, परिपूरित हैं रचित हुये;
सुनो ! कहीं त्रिभुवन के वैभव, जिन-पद में आ प्रणत हुये ॥२५॥

इन जिन-भवनों में जिन-प्रतिमा, ये हैं पद्मासन वाली;
धनुष पंच-शत प्रमाणवाली, प्रति प्रतिमा शुभ छवि वाली ।
कोटि, कोटि दिनकर आभा तक, मन्द-मन्द पड़ जाती है;
कनक रजत मणि निर्मित सारी, झग-झग, झग-झग भाती है ॥२६॥

दिशा-दिशा में अतिशय शोभा, महा तेज यश धार रहे;
पाप-मात्र के भंजक हैं ये, भव-सागर के पार रहें ।
और और फिर भानुतुल्य इन, जिन-भवनों को नमन करूं;
स्वरूप इनका कहा न जाता, मात्र मौन हो नमन करूँ ॥२७॥

धर्मक्षेत्र ये एक शतक औ, सत्तर हैं षट्-कर्म जहाँ;
धर्म-चक्र-धर-तीर्थकरों से, दर्शित है जिन-धर्म यहाँ ।
हुये, हो रहे, होंगे उन सब, तीर्थकरों को नमन करूँ;
भाव यही है 'ज्ञानोदय' में, रमण करूँ भव-भ्रमण हरूँ ॥२८॥

इस अवसर्पिणि में इस भूपर, "वृषभ-नाथ "अवतार लिया;
भर्ता बन युग का पालन कर, धर्म-तीर्थ का भार लिया ।
अन्त-अन्त में 'अष्टापद' पर, तप का उप-संहार किया;
पाप-मुक्त हो मुक्ति सम्पदा प्राप्त किया उपहार, जिया ॥२९॥

वारहवें-जिन "वासुपूज्य" है, परम पुण्य के पुंज हुये;
पाँचों कल्याणों में जिनको, सुरपति पूजक, पूज गये ।
'चंपापुर' में पूर्ण रूप से, कर्मो पर वहुमार किये;
परमोत्तम पद प्राप्त किये औ, विपदाओं के पार गये ॥३०॥

प्रमुदित मति के राम-श्याम* से, "नेमिनाथ" जिन पूजित हैं;
कषाय-रिपु को जीत लिये हैं, प्रशम-भाव से पूरित हैं ।
'ऊर्जयन्त-गिरनार' शिखर पर, जाकर योगातीत हुये;
त्रिभुवन के फिर चूड़ामणि हो, मुक्ति वधू के प्रीत हुये ॥३१॥

'वीर' दिगम्बर श्रमण गुणों को, पाल वने पूरण ज्ञानी;
मेघ-नाद सम दिव्य-नाद से, जगा दिया जग, सद्ध्यानी ।

* बलराम-कृष्ण

१७०

'पावापुर', वर सरोवरो के, मध्य तपो मे लीन हुये,
विधि-गण विगलित कर अगणित-गुण, शिव पद पा स्वाधीन हुये ॥३२॥

जिमके चारो ओर वनो मे, मद वाले गज वहु रहते,
'सम्मेदाचल' पूज्य वही है, पूजो इसको गुरु कहते ।
शेप रहे 'जिन वीस-तीर्थंकर', इसी अचल पर अचल हुये,
अतिशय यश को, शाश्वत सुख को, पाने मे वे सफल हुये ॥३३॥

मूक तथा उपसर्ग अन्तकृत, अनेक विध केवलज्ञानी,
हुये विगत मे यति मुनि गणधर, कु-सुमत ज्ञानी विज्ञानी ।
गिरि वन तरुओं गुफा कदरो, सरिता सागर तीरो मे,
तप साधन कर मोक्ष पधारे, अनल शिखा मरु टीलो मे ॥३४॥

मोक्ष साध्य के हतुभूत ये, स्थान रहे पावन सारे,
सुरपतियो से पूजित ह सो, इन की रज शिर पर धारे ।
तपो भूमि ये, पुण्य क्षेत्र ये, तीर्थ क्षेत्र ये अघहारी,
धर्म-कार्य मे लगे हुये हम, सव के हो मगलकारी ॥३५॥

दोप रहित ह, विजितमना ह, जग मे जितने जिनवर है,
जितनी जिनवर की प्रतिमाये, तथा जिनालय मनहर है ।
समाधि साधित भूमि, जहाँ मुनि-साधक के हो चरण परे,
हेतु वने ये भविक-जनो के, भव लय मे, हम चरण पड़े ॥३६॥

उत्तम यश धर जिनपतियो का, स्तोत्र पढ़ निज-भावो मे,
तन मे, मन से ओर वचन से, तीनो सन्ध्या-कालो मे ।
श्रुत-सागर के पार गये उन, मुनियो मे जो सस्तुत हैं,
यथा शीघ्र वह अमित पूर्ण पद, पाता सम्मुख प्रस्तुत है ॥३७॥

मल मूत्रो का कभी न होना रुधिर क्षीर-मम श्वेत रहे
सर्वागो मे सामुद्रिकता, सदा सदा ना स्वेद रहे ।
रूप मलोना सुरभित होना, तन-मन मे शुभ लक्षणता,
हितमित मिश्री मिश्रितवाणी मुन लो ! और विलक्षणता ॥३८॥

अतुल वीर्य का मम्वल हाना, प्राप्त आद्य सहनन पना
ज्ञात तुम्हे हो ख्यात रहे हे, स्वतिशय दश ये गुणनपना ।
जन्म काल से मरण-काल तक, य दश अतिशय, 'सुनते है',
तीर्थकरा क तन मे मिलते, अमितगुणो को गुनते हे ॥३९॥
कोश चार शत सुभिक्षिता हो, अधर गगन मे गमन सही,
चउ विध कवलाहार नही हो, किसी जीव का हनन नही ।

केवलता या श्रुतकारकता, उपसर्गों का नाम नहीं;
चतुर्मुखी का होना, तन की छाया का भी काम नहीं ॥४०॥

विना बढ़े वह सुचारूता से, नख केशों का रह जाना;
दोनों नयनों के पलकों का, स्पंदन चिर मिट जाना ।
घाति-कर्म के क्षय के कारण, अर्हन्तों में होते हैं;
ये दश अतिशय इन्हें देख बुध, पल भर सुध-बुध खोते हैं ॥४१॥

अर्ध-मागधी भाषा सुख की, सहज समझ में आती है;
समवशरण में सब जीवों में, मैत्री घुल-मिल जाती है ।
एक साथ सब ऋतुयें फलतीं, "क्रम के सब पथ रुक जाते',
लघुतर गुरुतर बहुतर तरुवर, फूल फलों से झुक जाते ॥४२॥

दर्पण-सम शुचि रत्नमयी हो, झग-झग करती धरती है;
सुरपति नरपति यतिपतियों के जन-जन के मन हरती है ।
जिनवर का जब विहार होता, पवन सदा अनुकूल बहे;
जन-जन परमानन्द गन्ध में, डूबे दुख-सुख भूल रहे ॥४३॥

संकटादा विषकंटक कीटों, कंकर तिनकों शूलों से;
रहित बनाता पथ को गुरुतर-उपलों से अतिधूलों से ।
योजन तक भूतल को समतल, करता बहता वह साता;
मन्द मन्द मकरन्द गन्ध से, पवन मही को महकाता ॥४४॥

तुरत इन्द्र की आज्ञा से वस, नभ मण्डल में छा जाते,
सघन-मेघ के कुमार, गर्जन करते विजली चमकाते ।
रिम-झिम, रिम-झिम गन्धोदक की, वर्षा होती हर्षाती
जिस सौरभ से सब की नासा, सुर-सुर करती दर्शाती ॥४५॥

आगे-पीछे सात-सात, इक पदतल में तीर्थकर के;
पंक्ति-वद्ध यों अष्ट-दिशाओं, और उन्हीं के अन्तर में ।
पद्म विछाते सुर माणिक-सम, केशर से जो भरे हुये;
अतुल परस है सुखकर जिनका, स्वर्ण-दलों से खिले हुये ॥४६॥

पकी फसल ले शाली आदिक, धरती पर सर धरती है;
सुन लो फलतः रोम-रोम से, रोमांचित सी धरती है ।
ऐसी लगती त्रिभुवन-पति के, वैभव को ही निरख रही;
और स्वयं को भाग्यशालिनी, कहती-कहती हरख रही ॥४७॥
शरदकाल में विमल सलिल से, सरवर जिस विध लसता है;

वादल-दल से रहित हुआ नभ-मण्डल उस विधि हँसता है ।
दशो दिशाये धूम्र धूलियाँ, शाम-भाव को तजती है,
सहज रूप से निरावरणता, उज्ज्वलता को भजती हैं ॥४८॥

इन्द्राज्ञा मे चलने वाले, देव चतुर्विध वे सारे,
भविकजनो को सदा वुलाते, समवशरण मे उजियारे ।
उच्चस्वरो मे दे दे करके, आमत्रण की ध्वनि "ओ जी !"
'देवो के भी देव यहाँ है', शीघ्र पधारो आओ जी" ॥ ४९॥

जिसने धारे हजार आरे, स्फुरण शील, मन हरता है,
उज्ज्वल मौलिक मणि किरणो मे, झर-झुर, झर-झुर करता है ।
जिसके आगे तेज भानु भी, अपनी आभा खोता है,
आगे-आगे सवसे आगे, धर्म चक्र वह होता है ॥५०॥

वैभवशाली होकर भी ये, इन्द्र-लोग सव सीधे हैं,
धर्म-राग से रँगे हुये हैं, भाव-भक्ति मे भीगे हैं ।
इन्ही जनो से इस विध अनुपम अतिशय चौदह किये गये,
वसुविध मगल पात्रादिक भी, समवशरण में लिये गये ॥५१॥

नील-नील वैडूर्य दीप्ति से, जिसकी शाखाये भाती,
लाल-लाल मृदु प्रवाल-आभा, जिनमे शोभा औ लाती ।
मरकत मणि के पत्र वने है, जिसकी छाया श्याम घनी,
अशोक तरु यह अहो शोभता, यहाँ शोक की शाम नही ॥५२॥

पुष्प वृष्टि हो नभ से जिसमे, पुष्प अलौकिक विपुल मिले,
नील-कमल है लाल-धवल हैं, कुद वहुल हैं वकुल खुले ।
गन्धदार मन्दार मालती, पारिजात मकरद झरे
जिन पर अलिगण ' गुन गुन गाते, निशिगन्धा अरविन्द खिले ॥५३॥

जिनकी कटि मे कनक करधनी, कलाइयो मे कनक कड़े,
हीरक के केयूर हार हैं, पुष्प कण्ठ मे दमक पड़े ।
सालकृत दो यक्ष खड़े जो, कर्णों मे कुण्डल डोले,
चमर दुराते हौले-हौले, प्रभु की वो जय-जय वोले ॥५४॥

यहा यकायक घटि हुआ जो, कोई सकता वता नही,
दिवस रात का भला भेद वह, कहा गया कुछ पता नही ।
दूर हुये व्यवधान हजारो-रवियो के वह आप कही,
भामण्डल की यह सव महिमा, आँखो को कुछ ताप नही ॥५५॥
प्रवल पवन का घात हुआ जो, विचलित होकर तुरत थमा,

हर-हर, हर-हर सागर करता, हर मन हरता मुदित तमा ।
वीणा, मुरली, दुम-दुम दुंदुभि, ताल-ताल करताल तथा,
कोटि-कोटि यों वाद्य बज रहे, समवसरण में सार कथा ॥५६॥

महादीर्घ वैडूर्य रत्न का, बना दण्ड है, जिस पर हैं;
तीन चन्द्र-सम तीन-छत्र ये, गुरु-लघु-लघुतम ऊपर है ।
तीन भुवन के स्वामीपन की स्थिति जिससे अति प्रकट रही;
सुन्दरतम हैं, मुक्ताफल की, लड़ियां जिस पर लटक रहीं ॥५७॥

जिनवर की गम्भीर भारती, श्रोताओं के दिल हरती,
योजन तक जो सुनी जा रही, अनुगंजित हो नभ धरती ।
जैसे जल से भरे मेघ-दल, नभ-मण्डल में डोल रहे,
ध्वनि में डूबे दिगंतरों में, घुमड़-घुमड़ कर बोल रहे ॥५८॥

रंग-बिरंगी मणि-करणों से, इन्द्रधनुष की सुषमा ले,
शोभित होता अनुपम जिस पर, ईश विराजे गरिमा ले ।
सिंहों में वर बहु सिहों ने, निजी पीठ पर लिया जिसे;
स्फटिक-शिला का बना हुआ है, सिंहासन है जिया ! लसे ॥५९॥

अतिशय-गुण-चउतीस रहें ये, जिस जीवन में प्राप्त हुये;
प्रातिहार्य का वसुविध वैभव, जिन्हें प्राप्त हैं, आप्त हुये ।
त्रिभुवन-के वे परमेश्वर हैं, महागुणी भगवन्त रहे;
नमूँ उन्हें, अरहन्त-सन्त हैं, सदा-सदा जयवन्त रहें ॥६०॥

★ अञ्चलिका ★

नन्दीश्वर वर-भक्ति का, करके कायोत्सर्ग ।
आलोचन उसका करूँ, हे प्रभु । तव संसर्ग ॥१॥

नन्दीश्वर के चउ-दिशियों में, चउ गुरु अंजन गिरिवर हैं;
इक इक अंजनगिरि सम्वन्धित, चउ चउ दधिमुख गिरिवर है ।
फिर प्रति दधिमुख कोनों में दो-दो रतिकरगिरि चर्चित हैं;
पावन, बावनगिरि पर बावन, जिनगृह हैं, सुर अर्चित हैं ॥२॥

देव चतुर्विध कुटुम्ब ले सब, इसी द्वीप में हैं आते;
कार्तिक-फागुन-आषाढ़ों के, अंतिम वसु-दिन जब आते ।
शाश्वत जिनगृह जिन-बिम्बों से मोहित होते बस ! तातै;
तीनों अष्टाह्निक-पर्वो में, यही आठ-दिन बस जाते ॥३॥
दिव्य-गन्ध ले, दिव्य-दीप ले, दिव्य-दिव्य ले सुमन तथा;

दिव्य चूर्ण ले, दिव्य न्हवन ले, दिव्य-दिव्य ले वसन तथा ।
अर्चन, पूजन, वन्दन करते, नियमित करते नमन सभी,
नन्दीश्वर का पर्व मनाकर, करते निजघर गमन तभी ॥४॥

मैं भी उन सव जिनालयो का, भरत-खण्ड मे रहकर भी,
अर्चन-पूजन-वन्दन करता, प्रणाम करता झुककर ही ।
कष्टदूर हो, कर्मचूर हो, बोधिलाभ हो, सद्‌गति हो,
वीर-मरण हो, जिनपद मुझको, मिले सामने सन्मति ओ ! ॥५॥

★ रचना काल एवं स्थान परिचय ★

सतत सतपुड़ा कह रहा, असत त्याग सत-धार ।
"मुक्तागिरि" आ देख लो, दिखता "शिरपुर" द्वार ॥१॥

गगन चूमते शिखर है, रहे एक से एक ।
युवा मेघ ही जल भरे, करते है अभिषेक ॥२॥

रवि के व्रत दो, प्रथम तो-प्रतिदिन उठे प्रभात ।
'मुक्तागिरि' का दर्श ले, फिर यात्रा की वात ॥३॥

"मुक्तागिरि' पर मुक्त मुनि, साढ़े तीन करोड़ ।
"मुक्तागिरि" को नित नमूँ, नत-शिर हो कर जोड़ ॥४॥

ऋषि-आतम-रस-गन्ध"[1] की श्वेत-पचमी जेठ ।
पूर्ण हुआ अनुवाद है, पढ़ो सुनो भरपेट ॥५॥

□□

1 ऋषि ७ आतम १, रस ५, गन्ध २, 'अकाना वामतो गति' के अनुसार वीर निर्वाण सवत २५१७ (सन्१९९१ ईस्वी) की ज्येष्ठ सुदी पचमी तिथि को दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर महाराज द्वारा श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरि (मेढ़गिरी) बैतूल, म प्र मे श्री आचार्य पूज्यपाद कृत 'नन्दीश्वर भक्ति' का पद्यानुवाद पूर्ण हुआ ।

श्रीधरसेन आचार्य कृत

विश्वलोचन कोश : एक अनुशीलन

☆ ऐलक अभयसागर

> जैनाचार्यो ने केवल धार्मिक उपदेश एवं दार्शनिक चिन्तन ही नहीं किया है, वे केवल प्रथमानुयोग, द्रव्यानुयोग, करणानुयोग एवं चरणानुयोग तक ही सीमित नहीं रहे हैं, चिकित्सा शास्त्र, ज्योतिष, गणित, आदि धर्म निरपेक्ष विज्ञानों में भी उनकी समान दिलचस्पी रही है और उन्होंने तत्सम्बन्धी मौलिक कृतियों का भी निर्माण किया है। ज्ञान की इस मुक्त आराधना को तीर्थकरों के मार्ग में कर्म निर्जराकारक स्वीकार किया गया है। अत्यन्त ही सन्तोष का विषय है कि आचार्य ज्ञान सागर जी ने ज्ञान की मुक्त आराधना द्वारा कर्म निर्जरा के राजपथ पर इस युग में 'दोव नहीं उगने दीं' और उत्कृष्ट कोटि का साहित्य सृजन किया। उनके शिष्य आचार्य विद्यासागर जी भी अपने गुरु के अनुसरण में मौलिक साहित्य सृजन में तत्पर हैं। केवल वे ही नहीं उनका शिष्य समुदाय भी ज्ञान के लोक में मुक्त उड़ान भरने में विश्वास और रुचि रखता है यह ऐलक श्री अभयसागर जी के विश्वलोचन कोश एवं कोशकार पर प्रस्तुत लेख से स्पष्ट हो जाता है।
>
> —सम्पादक

बीसवीं शताब्दी के जैन वाङ्मय के उद्भट विद्वान मनीषी पण्डित श्री भूरामल शास्त्री हैं, जो वाद में श्रमण दीक्षा अंगीकार कर दिगम्बर जैन आचार्य श्री 108 मुनि श्री ज्ञानसागर जी महाराज के नाम से विख्यात हुए। उनके द्वारा महाकवि कालीदास, वाण, भारवि प्रभृति कवियों के महाकाव्यों की शैली एवं शिल्प के अनुरूप ही प्रौढ़ साहित्यिक विधा में संस्कृत में 'जयोदय', वीरोदय' 'सुदर्शनोदय' 'भद्रोदय' 'वीरशर्माभ्युदय' नामक महाकाव्य 'दयोदय' चम्पूकाव्य, 'सम्यक्त्वसार शतक', 'मुनिमनोरंज शतक' (अशीति), 'प्रवचनसार प्रतिरूपक' प्रतिपादक एवं संस्कृत भक्तियॉ जैसी काव्यगुणों से समलंकृत रचनाओं का सृजन किया गया है। राष्ट्रभाषा में भी 'ऋषभावतार' (महाकाव्य) 'गुणसुन्दर वृत्तान्त' एवं 'भाग्योदय' (चरितकाव्य) के अतिरिक्त समयसार,. नियमसार, अष्टपाहुड व देवागम स्तोत्र के पद्यानुवाद के साथ ही साथ तत्वार्थसूत्र की टीका, जैन विवाह विधि, सचित्तविवेचन पवित्र मानव जीवन, स्वामी कुन्दकुन्द और सनातन जैनधर्म आदि साहित्य लेखन का कार्य किया गया।

आपकी संस्कृत रचनाओं तथा उनकी स्वोपज्ञ वृत्तियों में 'विश्वलोचन-कोश' के प्रयोग बहुतायत से देखने को मिलते हैं। आपके द्वारा दीक्षित-शिक्षित शिष्य, सुप्रसिद्ध दिगम्बर

जैनाचार्य श्री 108 मुनि विद्यासागर जी महाराज ने भी अपने निरञ्जन शतकम्, श्रमण शतकम्, भावना-शतकम्, परीषहजय-शतकम्, सुनीति शतकम् तथा शारदा-स्तुति जैसी सुमधुर रचनाओं में भी इस कोश के माध्यम से शब्दालकारो की प्रस्तुति मे सुन्दर प्रयोग किए हैं।

उपरोक्त रचनाओं के अवलोकन करते समय शब्दो के कुछ विशिष्ट प्रयोग द्रष्टव्य होते हैं, जो सामान्यत तद्विषयक अर्थों मे सस्कृत साहित्य के कतिपय अन्य कोशो मे लगभग अप्रचलित/अप्रयुक्त है, अथवा उनमे प्राप्त ही नही होते। ये शब्द इन अर्थों मे सुप्रसिद्ध कोशकार जैनाचार्य श्रीधरसेन कृत "विश्वलोचन कोश" मे उपलब्ध होते हैं। सस्कृत कोश वाङ्मय /साहित्य के क्षेत्र मे इस कोश का अपना विशिष्ट महत्त्व एव योगदान है। अद्यावधि प्राप्त सस्कृत साहित्य तथा इतिहास विषयक ग्रन्थो मे इस ग्रन्थ का पर्याप्त परिचय उपलब्ध नहीं है। इसका मुख्य कारण सभव है इसका साहित्य एव इतिहास लेखक विद्वत् समाज एव मनीसीजनों तक नहीं पहुच पाना भी हो सकता है। फलत उनके द्वारा इसका सम्यक् पारायण एव ऐतिहासिक काल निधारण के साथ ही साथ साहित्यिक मूल्याकन का नही हो पाना भी है।

विश्वलोचन कोश के समान ही स्थिति महाकवि धनञ्जय द्वारा गागर मे सागर जैसी क्षमता रखने वाली 'धनञ्जय-नाममाला' एव 'धनञ्जय निघण्टु' की भी रही है, जो साहित्य-जगत् मे अपरिचित सी रहती है। अनेक सस्कृत एव हिन्दी टीकाओं के उपलब्ध होने के बावजूद यह कृतियाँ भी अभी पर्याप्त पर्यालोचन की प्रतीक्षा में है। यहा विश्वलोचन कोश के सबध म प्राप्त सक्षिप्त विवरण/परिचय उपलब्ध सामग्रियो के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे सस्कृत साहित्य के अध्येता, मनीषी, विद्वद्वर्ग एव इतिहासकार भी कोशकार के परिचित होकर कोशगत वैशिष्ट्य से परिचित हो सके।

'विश्वलोचन कोश' (सस्कृत) के रचयिता सुप्रसिद्ध जैन मनीषी, दिगम्बर जैनाचार्य हैं जो जैन वाङ्मय मे कोश-साहित्य के सृजेता के रूप मे लोक-विश्रुत हैं।[1] इस कोश का दूसरा/अपर नाम 'मुक्तावली-कोश' भी है जिसमे प्रयुक्त शब्द अपने विभिन्न अर्थों के कारण मुक्ताहार के समान ही शोभायमान हैं।[2]

पाश्चात्य जगत् के विद्वान ऑफ्रेस्ट[3] ने प्राचीन हस्तलिखित पुस्तको की सूची म विश्वलोचन कोश के सम्बन्ध मे लिखा है–'इस ग्रन्थ के कर्ता श्रीधरसेन थे। इसका उल्लेख/उद्धरण आक्सफोर्ड मे वर्तमान हस्तलिखित प्रति न 135 बी और 185 बी मे है। उन्होने एक स्थल पर विश्वलोचन कोश और सस्कृत के ही अन्य कोश 'विश्वप्रकाश' दोनो को एक ही मान लिया है।[4] परन्तु अपने केटॉलोगस केटालोगोरम मे उन्होंने ही इसे एक सम्भावना मात्र माना हे।[5] वस्तुत विश्वप्रकाश एक स्वतन्त्र एव भिन्न ग्रन्थ है, जो कि महेश्वर कृत माना जाता है।

पीटर्सन[6] ने अपनी सूची के भाग 5 पृष्ठ 162 मे उल्लेख किया है—श्रीधरसेन एक कोशकार हैं। इनके पिता का नाम मुनिसेन था।" सुन्दरगणी ने अपने धातु रत्नाकर मे बहुधा इसी के उद्धरण दिये है।[7] इतना ही नही पीटर्सन ने अपनी पाँचवी रिपोर्ट (1896) मे विश्वलोचन की उस हस्तलिखित प्रति से कुछ उल्लेख किये है जो अनहलवारापट्टन मे सुरक्षित है (दिखे पृष्ठ 112, हस्त पृ न ५)। उसी रिपोर्ट मे ग्रन्थकारो की अनुक्रमणिका मे वह

श्रीधरसेन के संबंध में लिखते हैं कि वे सेनान्वय के मुनिसेन के पुत्र थे तथा विश्वलोचन कोश प्रत्यक्षरूप से उनके शिष्य के नाम से सम्बद्ध किया है। इससे भिन्न मत रखने वाले श्री पी.के. गौड[8] के मतानुसार श्रीधरसेन के कुल और वास/स्थान आदि की संक्षिप्त जानकारी उसी कोश में दी हुई प्रशस्ति से प्राप्त होती है।[9] उनके अनुसार श्रीधरसेन के गुरु का नाम मुनिसेन था, जो न्यायशास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित के साथ ही श्रेष्ठ कवि भी थे। तत्कालीन कुछ राजाओं के द्वारा उनका विशेष मान-सम्मान किया गया था।

जैन मनीषी पण्डित के. भुजबली शास्त्री ने उपर्युक्त दोनों बातों को दृष्टिगत रखते हुए अपना अभिमत प्रकट किया है कि जो पिटर्सन साहब ने मुनिसेन को श्रीधरसेन का पिता माना है और प्रशस्ति उल्लेखानुसार पी. के. गौड ने मुनिसेन को उनका गुरु माना है, इन दोनों में अंतिम बात ही उपयुक्त है। श्रीधरसेन दिगम्बर जैन थे और यह कोश उन्होंने मुनि अवस्था में रचा था। मुनि अवस्था में दिगम्बर जैन लोग (साधु) अपने पिता का नाम नहीं लेते/लिखते, अतएव मुनिसेन का गुरु होना ही अधिक सम्भव है।[10]

पी. के गौड ने यह भी उल्लेख किया है कि जैन ग्रन्थावली[11] में विश्वलोचन कोश का उल्लेख हुआ है और इस संबंध में उपर्युक्त हस्तलिखित प्रति का उल्लेख आया है। उस ग्रन्थावली में यह भी बताया गया है कि विश्वलोचनकोश के रचयिता श्रीधरसेन दिगम्बर जैन थे अर्थात् वे दिगम्बर जैन मत के थे, श्वेताम्बर मत के नहीं।

जैन इतिहास लेखक पण्डित परमानन्द शास्त्री के अनुसार नेमिकुमार के पुत्र कवि वाग्भट्ट ने 'काव्यानुशासन' की वृत्ति में पुष्पदन्त के साथ मुनिसेन तथा उनकी रचनाओं की ओर संकेत किया है, जो आज अनुपलब्ध हैं।[12]

जैन वाड्मय के रचनाकारों में श्रीधरसेन नाम के अनेक दार्शनिक/विचारक जैनाचार्य हुए हैं।

जैनागम में द्वादशांग के कुछ अंशों के ज्ञाता तथा पुष्पदन्त और भूतबली मुनिराजों को कर्मसिद्धान्त विषयक ज्ञान देने वाले भगवंत् धरसेन आचार्य [13] से सर्वथा भिन्न विश्वलोचन कोश के रचयिता श्रीधरसेन नाना शास्त्रों के पारगामी विद्वान् होने के साथ ही बड़े-बड़े राजपुरुषों के श्रद्धास्पद/पूज्य भी थे।[14] वे अनेक ग्रन्थों के मर्मज्ञ ज्ञाता तथा कुशल आशु-कवि भी थे।[15]

दिगम्बर जैन परम्परा के साधुओं सम्बन्धी विभिन्न चार संघों में विख्यात 'सेनसंघ' के मनीषी श्रीधरसेन ने अनेक कवियों द्वारा रचित साहित्य, कोश एवं ग्रन्थों से संग्रह करके इस विश्वलोचन कोश की रचना की थी।[16] अद्यावधि इनके द्वारा रचित अन्य रचनाओं की जानकारी तथा खोजवीन करना शेष है क्योंकि इसी नाम के अन्य और भी विद्वान्, मनीषी, साहित्यकार हुए हैं और उनका साहित्य जैन परम्परा में उपलब्ध होता है।[17] इनमें श्रीधर, विबुधश्रीधर आदि के नाम लोक ख्यात हैं तथा उनके श्रुतावतार, भविष्यदत्त चरित्र तथा नागकुमार कथा' आदि ग्रन्थ भी प्राप्त होते हैं।[18] अतएव अन्तः साक्ष्य, परीक्षण एवं पुष्ट प्रमाणों के अभाव में अभी विस्तृत/ विशिष्ट जानकारी अप्राप्त है।

विश्वलोचन कोश की मुद्रित प्रति से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस कोश की हस्तलिखित प्रतियाँ देश के विभिन्न स्थानों के शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध थीं, जिनमें जयपुर,

आरा, ईडर (महीकाठा) प्रमुख हैं । वर्तमान मे 3 हस्तलिखित प्रतियो की जानकारी उपलब्ध है।[19]

विश्वलोचन कोश मे सस्कृत अनुष्टुप् वृत्त मे रचित 2453 पद्य है । ग्रन्थ मे स्वरवर्ण और ककार आदि व्यजन वर्णों के क्रम से शब्द के आदि का निर्माण किया गया है और अन्त मे ककार आदि से ।[20] शब्द के विभिन्न अर्थ बतलाने वाले कोशो मे यह विशिष्ट/प्रमुख तथा सभवत सबसे बड़ा कोश है । इसकी मौलिकता/विशेषता का उल्लेख करते हुए कहा जा सकता है कि इससे बड़ा और इतने अधिक अर्थों को बतलाने वाला कोश कोई अन्य नहीं है ।[21]

स्व डॉ नेमीचन्द्र जैन 'शास्त्री', ज्योतिषाचार्य के अनुसार साधु सुन्दरगणी ने अपने "धातु-रत्नाकर" मे विश्वलोचन कोश के उद्धरण दिये हैं । धातु-रत्नाकर का समय ईस्वी 1624 है, अतः श्रीधरसेन का समय ई 1624 के पहले अवश्य ही सुनिश्चित है ।[22]

आक्सफोर्ड मे महाकवि कालीदास के विक्रमोर्वशीय पर रगनाथ की जो हस्तलिखित प्रति उपलब्ध है, उसमे भी विश्वलोचन कोश का उल्लेख है ।[23] रगनाथ सिम्वेकर परिवार के बालकृष्ण के पुत्र थे जो कि व्योमकोश पुताभिधान के रहने वाले थे । उन्होंने अपनी यह टीका ई 1656 मे रची थी । यद्यपि यह रचना धातु रत्नाकर की अपेक्षा 32 वर्ष पश्चात् निर्मित हुई है, फिर भी विश्वलोचन कोश के उद्धरण होने से महत्त्वपूर्ण है ।[24]

वर्तमान मे आक्सफोर्ड मे ही 'अभिधान-चिन्तामणि' की एक हस्तलिखित प्रति के हॉसिये पर विश्वलोचन कोशकार और श्रीधर का उल्लेख आया है ।[25] लेकिन डॉ गौड के कथनानुसार इसका इतिहास की दृष्टि से विशिष्ट मूल्य है, क्योंकि हेमचन्द्र ने अपने ग्रन्थ मे जिन ग्रन्थो और ग्रन्थकारो का उल्लेख किया है, उनमे इनका उल्लेख नहीं है ।'अभिधान-चिन्तामणि' या उसकी स्वरचित टीका मे इन बातो का निर्देश नही है ।[26]

प्रोफेसर हन्दीकी[27] का कथन है कि नैषध चरित के टीकाकार जिनराज ने 16 सर्ग के 20वे श्लोक की टीका मे श्रीधर नामक एक कोशकार का उल्लेख किया है । प्रोफेसर हन्दीकी के निर्देशानुसार जिनराज 1651 ई मे विद्यमान थे । उन्होंने जिस विषय के सबध में लिखा है,[28] वह इस प्रकार है—

"शाण सार्धतोलके कर्षे कषणे करपत्रके' इति श्रीधर ।" यह उद्धरण श्रीधरसेन के इस विश्वलोचन कोश के निम्नलिखित श्लोक से मिलता-जुलता है

'शाणोर्द्धमापके कर्षे कषणे करपत्रके ।' इस प्रकार यह उल्लेख श्रीधरसेन कृत विश्वलोचन के समय-सीमा निर्धारण के सबध मे अन्यतम प्रमाण है ।

श्रीधर के सबध मे प्रोफेसर हन्दीकी लिखते हैं कि 'दवीयम्' की 'पुरुपाकार' टीका मे श्रीधर के उद्धरण दिये गये हैं । 'पुरुपाकार' का समय 13 वीं सदी बतलाया गया है । उद्धरण निम्न हैं—

'तथा च श्रीधरो त्यागेन नृत्यादीन् पठित्वा एतान् सप्त वर्जयित्वा इत्याह । (पृ ६६) एव—'श्रीधरस्तु 'स्तृन् छादने' दीर्घ स्तृत्र हस्व इत्युभावप्युपन्यास्यात् ।' (पृ १६)

उपर्युक्त उद्धरण किसी व्याकरण ग्रन्थ के जान पड़ते हैं, विश्वलोचन कोश के नहीं । जब तक यह निश्चित नही हो जाय कि कोशकार श्रीधरसेन और वैयाकरण श्रीधर एक ही

व्यक्ति हैं अथवा श्रीधरसेन की अन्य रचनाओं की जानकारी प्राप्त नहीं होती, तब तक इन उल्लेखों का विशिष्ट महत्त्व नहीं है । दोनों की अभेद/भेदता अन्वेषणीय है ।

श्री गौड के अनुसार श्रीधर 'चक्रवर्तिन्' नामक एक व्यक्ति सौपद्य व्याकरण के भाष्यकार के रूप में ज्ञात हैं ।[29] चूँकि उनके समक्ष उक्त भाष्य नहीं था, अतएव वे इस विषय में विशेष ऊहापोह नहीं कर सके ।

कोश के आभ्यंतरिक साक्ष्यों को उपस्थित करने से पूर्व इस विषय में कुछ अन्य विषय/परोक्ष प्रमाणों की चर्चा करना भी आवश्यक है । हेमचन्द्र ने अपने 'अभिधान चिन्तामणि' में न तो श्रीधरसेन का उल्लेख किया है और न ही विश्वलोचन कोश का । इससे अनुमान किया जाता है कि विश्वलोचन कोश का सृजन हेमचन्द्र (1150 ई.) के बाद हुआ होगा।[30A] इसी तरह महेश्वर विरचित 'विश्व प्रकाश' या 'विश्व' में भी जो 1111 ई. में निर्मित हुआ है-ग्रन्थकार ने सहायक ग्रन्थों का नामोल्लेख किया है ।[30B] परन्तु श्रीधरसेन का सन्दर्भ नहीं दिया है । इससे यह अनुमानित होता है कि 1111 ईस्वी में महेश्वर को विश्वलोचनकोश की जानकारी संभवतः नहीं थी । इसके विपरीत श्रीधरसेन ने हेमचन्द्र और महेश्वर दोनों के ग्रन्थों से काफी सामग्री/सहायता ली है । हेमचन्द्र, महेश्वर और मेदिनी के श्रीधरसेन कितने ऋणी हैं, यह जानकारी निम्न विवरण से किंचित् प्राप्त हो सकती है—

(1)	ईस्वी सन् १०८८-११७२	हेमचन्द्र अभिधान चिंतामणि (पृ. १०० श्लोक क्र. १०६)	गोमेदकं पीतरत्ले काकोले पत्रकेऽपिच ।
(२)	ईस्वी सन् ११११	महेश्वर विश्वप्रकाश (पृ. १८ श्लोक १९७)	गोमेदकं पीतमणौ काकोले पत्रकेऽपिच ।
(3)	ईस्वी सन् ११११ के बाद	मेदनी (पृ. २०, श्लोक १८६ ब)	गोमेदकं पीतमणौ काकोले पत्रकेऽपिच ।
(4)		श्रीधरसेन विश्वलोचन (पृ. ३३, श्लोक १९० ब)	गोमेदकः पीतमणौ काकोले पत्रकेऽपिच ।।

उपर्युक्त विवेचन से ऐसा जान पड़ता है कि मेदिनी 'विश्वप्रकाश का ऋणी है । 'गोमेदक' आदि शव्द उसने ज्यों के त्यों विश्वप्रकाश से ग्रहण कर लिये हैं । अव यह देखना है कि हेमचन्द्र का विश्वप्रकाशकार कितना ऋणी है ? यह गहन खोज का विषय है, क्योंकि यह भी संभव है चूंकि हेमचन्द्र (1088-1178 ई.) और महेश्वर (1111 ई.) दोनों ही समसामयिक थे । अतः दोनों ने ही कोई विशिष्ट जानकारी अन्यत्र किसी खास/विशिष्ट ग्रन्थों से प्राप्त की हो अथवा यह भी संभव है कि दो समसामयिक व्यक्ति, सुलभ होने पर भी एक दूसरे की रचनाओं को उपेक्षा की दृष्टि से देखें या कुछ सहायता भी लेवें तो प्रत्यक्ष नहीं परोक्ष रूप से ही । यदि यह निश्चित हो सके कि महेश्वर ने हेमचन्द्र के 'अनेकार्थ संग्रह' से कुछ सहायता ली है, तो कहा जा सकता है कि 'अनेकार्थ संग्रह' का 'पीतरत्ले' विश्वप्रकाश में 'पीतमणौ' कर दिया गया है । अतः श्रीधरसेन ने इस परिवर्तित शव्द को विश्वप्रकाश से अथवा मेदिनी से ग्रहण किया हो, ऐसी संभावना हो सकती है ।

इसो प्रकार की सम्भावना से युक्त विश्वलोचन कोश की एक अन्य पक्ति का मिलान इन कोशो से कियाजा सकता है–

(1)	हेमचन्द्र कृत अभिधान चिंतामणि (पृ 49, श्लोक 62 अ)	-पुलाको भक्तसिक्ते स्यात् सक्षेपा सारधान्ययो ।
(2)	विश्वप्रकाश	-पुलाकस्तुच्छधान्ये स्यात् सक्षेपे भक्तसिक्थके ।
(3)	मेदिनी (पृ १३, श्लोक 122 अ)	-पुलाकस्तुच्छधान्ये स्यात् सक्षेपे भक्तसिक्थके ।
(4)	श्रीधरसेन (पृ 21, श्लोक 117) कृत विश्वलोचन	-पुलाकस्तुच्छधान्ये स्यात् सक्षेपे भक्तसिक्थके ।

इस उद्धरण से भी यह ज्ञात होता है कि हेमचन्द्र के जो उद्धरण विश्वप्रकाश मे परिवर्तित रूप मे आये हैं, वे ही मेदिनी और विश्वलोचन कोश मे भी उसी परिवर्तित रूप मे हीं सम्मिलित हैं । परन्तु निश्चित रूप से यह कहना कठिन है कि श्रीधरसेन ने यह सकलन विश्वप्रकाश से ग्रहण किया है या मेदिनी कोश से ।

इसी प्रकार के अन्य दृष्टान्तो की तुलनात्मक विवेचना से यह सम्भावना व्यक्त होती है कि विश्वलोचनकोश मेदिनी के बाद मे सृजित हुआ हो । ऐसी स्थिति मे श्रीधरसेन का समय मेदिनी के काल के ऊपर अवलम्बित हो जाता है ।

प्रो रामावतार शर्मा ने 'कल्पद्रुम-कोश' की भूमिका मे गवेषणात्मक दृष्टि रखकर मेदिनी का समय बारहवी शताब्दी रखा है । मेदिनी स्वय विश्वप्रकाश (1111 ई) का उल्लेख करता हुआ उसकी आलोचना भी करता है ।[31] पद्मनाभदत्त (1375 ई) ने 'रशोदरादि-प्रथी' मे मेदिनी से उद्धरण दिया है, अत मेदिनी को 13 वी शताब्दी तथा विश्वलोचन को उसके उपरान्त 13 वी से 16 वी शताब्दी के बीच रखा जा सकता है । अधिक स्पष्ट रूप से विश्वलोचन कोश को 1350 और 1550 के मध्य मे रखना उचित होगा क्योंकि पूर्ण निश्चयात्मक प्रमाणो के अभाव मे उक्त समय को और अधिक रूप से स्पष्ट नहीं किया जा सकता । श्री पी के गौड के इस मत से किंचित् भिन्न मत को डॉ नेमीचन्द्र ज्योतिषाचार्य आदि ने प्रस्थापित किया है।[32] श्री नेमीचद्र जी के अनुसार–"शैली की दृष्टि से विश्वलोचन पर हेम, विश्वप्रकाश और मेदिनी इनतीनो कोशो का प्रभाव माना जाता है । चूँकि, 'विश्वप्रकाश' का रचनाकाल ई 1105, मेदिनी' का समय इसके कुछ वर्ष पश्चात् अर्थात् 12वी शताब्दी का उत्तरार्ध तथा हेम का 12वी शती का उत्तरार्ध है । अत विश्वलोचनकोश का समय 13वी शताब्दी का उत्तरार्ध या 14वी शताब्दी का पूर्वार्ध मानना चाहिए । किन्तु प परमानन्द शास्त्री ने श्रीधरसेन का समय 13वी शताब्दी का उत्तरार्ध होने की सम्भावना व्यक्त की है ।[33]

प्रशस्तिगत चतुर्थपद्य मे 'पदविदा च पुरे निवासी' वाक्य से श्रीधरसेन का निवास स्थल ज्ञात तो होता है । परन्तु तत्सम्बन्धी पूर्ण जानकारी के अभाव मे इस ग्राम की स्थिति/अवस्था की निश्चित अवधारण कर पाना सम्भव नही है ।[33B]

विश्वलोचनकोश के कतिपय प्रयोग जैन साहित्य के ग्रन्थो मे भी प्राप्त होते हैं । आचार्य जिनसेन(818 878 ई) कृत आदिपुराण मे "गौ' शब्द के विभिन्न अर्थ बतलाने के लिए इस कोश का उद्धरण किसी का/टिप्पणकार ने किया है ।[34] उक्त ग्रन्थ के सपादक ने

संपादन कार्य में प्रयुक्त चार टीका/टिप्पण वाली प्रतियों में से एक की प्रशस्ति के अनुसार वैशाख कृष्ण सप्तमी, संवत् 1224 का समय उल्लेख किया है। दूसरी प्रति में पं. आशाधर (1173-1243 ई.) के प्रतिष्ठासारोद्धार का उल्लेख है, अतः यह प्रति भी पर्याप्त प्राचीन है। किन्तु इस उद्धरण में प्रति विशेष का उल्लेख नहीं आने के कारण स्पष्टतः काल निर्धारण करने में दुविधा उत्पन्न होती है।

आचार्य वीरनन्दि कृत संस्कृत महाकाव्य 'चन्द्रप्रभ चरित्र' की मुनिचन्द्र विरचित 'विद्वन्मनोवल्लभा' नामक व्याख्या/टीका में भी विश्वलोचन के प्रयोग पाए जाते हैं।[35] चूँकि इनका काल उक्त टीका आदि में उल्लिखित नहीं हुआ है, अतः इसके आधार पर भी विश्वलोचन कोश के काल का पता नहीं लगाया जा सकता।

श्रीमत्सोमदेव सूरि विरचित 'यशस्तिलक चम्पू' में प्राप्त कुछ शब्दों के अर्थ की संसिद्धि विश्वलोचन कोश के माध्यम से की गई है।[36]

पं. भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज) द्वारा लिखित अनेक महाकाव्यों में प्रमुख जयोदय महाकाव्य में समासोक्ति अलंकार के माध्यम से विश्वलोचन कोश तथा इसके रचयिता श्रीधरसेन, दोनों का नामोल्लेख के साथ ही तद्गत विशेषता के भी प्रयोग पदे-पदे उपलब्ध होते हैं।

आचार्य विद्यासागर जी ने भी अपने संस्कृत के पाँच शतकों में विश्वलोचन कोश के माध्यम से चारू प्रयोग किए हैं, जो सद्यः प्रकाशित (समष्टि रूप) 'पञ्चशती' पुस्तक में देखे जा सकते हैं।[38]

पं. पन्नालाल साहित्याचार्य ने जैन-साहित्य के अनेक ग्रन्थों के संपादन तथा अनुवाद के साथ ही कतिपय ग्रन्थों की संस्कृत टीका भी लिखी है, उनमें भी अनेक स्थलों पर विश्वलोचन कोश का सम्यक् उपयोग किया है।[39]

विश्वलोचन कोश तथा विश्वलोचन कोशकार श्रीधरसेन के सम्बन्ध में अभी तक जो भी जानकारी प्राप्त हो सकी है, उसे संकलित कर यह आलेखन किया गया है, जिसमें उसके आंतरिक परीक्षण, हस्तलिखित प्रतियों में उल्लेख, ऐतिहासिक कालनिर्धारण, ग्रन्थकार तथा विश्वलोचन कोश का जैन-साहित्य में हुए कतिपय प्रयोगों को भी दर्शाया गया है। इस माध्यम से उसकी विश्वसनीयता तथा प्रयोगधर्मिता, लोकप्रियता का परिचय मिल जाता है।

सन्दर्भ वाला भाग कदाचित् विस्तृत हो गया है परन्तु सभी सामग्री को संकलित/ प्रस्तुत करने का मात्र उद्देश्य यही है कि इसी माध्यम से जैन-जैनेतर साहित्यकारों, इतिहासकारों/पाठकों/विद्वद्जनों को इस कोश के संबंध में तथा अनेक ग्रन्थों में प्राप्त उसके उद्धरणों के बारे में यथावश्यक जानकारी मिल सके।

सन्दर्भ-सूची

(1) A पञ्चशती-आचार्य श्री विद्यासागर महाराज कृत, 'परिचय' शीर्षकान्तर्गत पृष्ठ ८, प्रकाशक-ज्ञानगंगा, ३०, डिप्टीगंज, सदरबाजार, दिल्ली-६

B भारतीय संस्कृति के विकास में जैन वाङ्मय का अवदान (भाग २) ले. डॉ. नेमीचन्द्र शास्त्री, प्रका. अखिल भारत वर्षीय दिगम्बर जैन विद्वतपरिषद्, कटराबाजार, सागर (म. प्र.), प्र. सं. १९८२, पृष्ठ

(2) इति विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्याम‌व्ययानेकार्थवर्ग । इति श्री पण्डित श्री श्रीधरसेनविरचिते विश्वलोचनेऽपराभिधानाया मुक्तावल्या नानार्थकाण्ड समाप्त ।

(3) Aufrecht–Cat Catalogorum, Part I, Page–586a.

(4) Ibid Part III Page–123b

(5) Cat. catalogorum–Part I Page 586a,–' विश्वलोचन" Parhaps the vishvaprakasa

(6) Aufrecht–Cat Catologorum Part I Page–668b

(7) Ibid–Part I Page 725

(8) श्रीधरसेन कृत 'विश्वलोचन कोश' का समय—लेखक पी के गौड,—जैनसिद्धान्तभास्कर पत्रिका (भाग ४ किरण १, जून १९३७) पृष्ठ १४, श्री देवकुमार जैन ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट आरा (विहार)८०२३०१ ।

(9) सेनान्वये सकलसत्त्वसमर्पितश्री श्रीमानजायत कविर्मुनिसेननामा ।
आन्वीक्षिकी सकलशास्त्रमयी च विद्या, यस्या स वादपदवी न दवीयसी स्यात् ॥१॥

(10) जैन सिद्धान्त भास्कर' पत्रिका (भाग ४, किरण १), पृष्ठ १५ (शेष विवरण उपर्युक्तवत्) ।

(11) जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स द्वारा प्रकाशित, बम्बई, १९०९, पृष्ठ ३१३ ।

(12) जैनधर्म का प्राचीन इतिहास (भाग २), लेखक प परमानद शास्त्री, प्रका मे रमेशचन्द्र जैन मोटरवाले, ७ राजपुर रोड, दिल्ली, वीर निर्वाण सवत् २५००, पृष्ठ ४१८

(13) धरसेन आचार्य के विस्तृत परिचय के लिए देखे–जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश (भाग 1) लेखक-क्षुल्लक जिनेन्द्र वर्णी, प्रका भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय सस्क ई सन् 1990, पृष्ठ 328 340 तथा परिशिष्ट पृ 485 भी ।

(14 15) तस्मादभूदखिलवाङ्मयपारदृश्वा, विश्वासपात्रमवनीतलनायकानाम् ।
श्री श्रीधर सकलसत्कविगुम्फितत्त्व पीयूषपानकृतनिर्जरभारतीय ॥२॥

(16) तस्यातिशायिनि कवे पथि जागरूक धीलोचनस्य गुरुशासनलोचनस्य ।
नानाकवीन्द्ररचितानभिधानकोशा—नाकृष्य लोचनमिवायमदीपि कोश ॥३॥
नागेन्द्रसग्रथितकोशसमुद्रमध्ये नानाकवीन्द्रमुखशुक्तिसमुद्भवेयम् ।
विद्वद्ग्रहादमरनिर्मितपट्टसूत्रे मुक्तावली विरचिता हृदि सनिधातुम् ॥६॥

(17) A गणित तथा ज्योतिषविद्या के विद्वान् दिगम्बराचार्य । कृति गणितसारसग्रह, ज्योतिर्ज्ञानविधि, जातक तिलक, लीलावती (कन्नड), रचनाकाल -ई 799-865. (तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा-लेखक डॉ नेमीचन्द्र जैन शास्त्री 'ज्योतिषाचार्य' भाग-3, पृ 191) ।

B सुकुमाल चरिउ' के कर्ता–अपभ्रश भाषा के कवि । समय-ग्रन्थ रचनाकाल ई 1151 (तीर्थ/13/188)

C 'पासणाह चरिउ' तथा 'वड्ढमाण चरिउ' के रचयिता, अपभ्रश भाषा के रचनाकार । एक भाग्य व पुरुषार्थ उभयवादी । हरियाणावासी बुध गोल्ह के पुत्र । समय ग्रन्थ रचनाकाल वि स 1189 तीर्थ/4/134) ।

D 'भविसयत्त चरिउ' के सर्जक, अपभ्रश कवि, दिगम्बर मुनि । माथुरवशीय नारायण के पुत्र । समय ग्रन्थरचनाकाल वि स 1200 (तीर्थं /4/145) ।

E 'सुकमाल चरिउ' के रचनाकार, अपभ्रंश कवि; गृहस्थ/साहू पाथी के पुत्र । समय-ग्रंथरचनाकाल—वि. सं. 1208 (तीर्थ 4/149) ।

F 'सेनसंघी मुनिसेन शिष्य, काव्यशास्त्रज्ञ, कृति-विश्वलोचन कोश/ तीर्थ।३।१८८) ।

G 'भविष्यदत्त चरित्र तथा श्रुतावतार के रचयिता । समय ई. १४ शताब्दी । (तीर्थ ।३।१८७) ।

नोट–इस संबंध में जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश (भाग ४) लेखक क्षुल्लक जिनेन्द्रवर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, देहली, द्वितीय संस्क. वीर निर्वाण संवत् २५१५, पृष्ठ ५३ भी अवलोकनीय है ।

(18) 'दिगम्बर जैन ग्रन्थ और उनके ग्रन्थकार' पुस्तक में श्रीधरसेन नाम के दो ही ग्रन्थकर्ताओं का उल्लेख है । भविष्यदत्त चरित्र और श्रुतावतार (गद्य) के रचयिता श्रीधर हैं तथा विश्वलोचन कोश तथा नागपंचमी कथा के रचयिता श्रीधरसेन बताये गये हैं । देखें–पं. के. भुजवली शास्त्री का अभिमत जैन सिद्धान्त भास्कर (भाग ४ किरण १) पृष्ठ ११।

(19) A

B विश्वलोचन कोश नामक ग्रन्थ की एक हस्तलिखित प्रति 77 पत्रात्मक तथा 1827 क्रमांक पर यह प्रति श्री लाल भाई दलपतभाई प्राच्य सं. विद्यामंदिर, अहमदाबाद में 10 1/4x4 1/2 इंच वाली मुनिपुण्यविजय ग्रंथसंग्रह में स्थित है । (जानकारी के लिए देखें–'एकाक्षर नाम कोश संग्रह–संपा. प्रन्यासप्रवर मुनि रमणीक विजय, प्रका. संचालक-राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.), प्र. सं. 1964, संपादकीय प्रस्तावना पृष्ठ-१४) ।

C जयपुर (राजघराने) पोथीखाने में उपलब्ध संस्कृत जैन साहित्य लेखक डॉ. प्रेमचन्द्र रॉवका, जयपुर, महावीर जयन्ती स्मारिका १९८२, पृष्ठ ३/७ क्रमांक ४७ पर गोपाल नारायण बोहरा की पुस्तक Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur, page 438 क्रमांक ३३५ से उद्धृत

(20) स्वरकादिक्रमादादिर्निर्णीतोऽन्तश्च कादिभि ।
द्वितीयेऽप्यत्र वर्णेऽपि नियम काद्यनुक्रमात् ॥२॥

(21) (A) एरण्ड उरवूकश्च रुचकश्चित्रकश्च सः' अमरकोश, द्वितीयकाण्ड, वनौपधिवर्ग, श्लोक ५१ तथा–'फलपूरो बीजपूरो रुचको मातुलुङ्गके' । अमरकोश, द्वितीयकाण्ड, वनौषधिवर्ग, श्लोक ७८
तथा–'सौवर्चलेऽक्षरुचके–अमरकोश, द्वितीयकाण्ड, वैश्यवर्ग, श्लोक ४३
तथा–'सौवर्चलं स्याद्रुचक्रम–अमरकोश, द्वितीय काण्ड, वैश्यवर्ग, श्लोक १०९

(B) 'रुचको वीजपूरे च निष्के दन्तकपोतयोः ।
न द्वयोः सर्जिकासारे पश्वाभरणमान्ययोः ॥
सौवर्चलेऽपि माङ्गल्यद्रव्ये चाप्युत्कटेऽपि च ।'— मेदिनीकोश, कत्रिक, श्लोक १४६-१४७

(C) 'रुचको मातुलुङ्गके ।
रुचकं मातुलद्रव्ये दन्ते सौवर्चले स्रजि ।
उत्कटे चाश्वभूपायां विडङ्गे कण्ठभूषणे ॥

वीजपूरेऽपि दीनारे रोचनादेववृक्षयो ।—विश्वलोचन कोश, कतृतीय, श्लोक 145-147

(22) तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा (भाग ४), लेखक डॉ नेमीचन्द्र शास्त्री, प्रका श्री भारतवर्षीय दिगम्बर-जैन विद्वद्परिषद् सागर (म प्र), प्रथमसस्करण, वीर निर्वाण सवत् २५०१, पृष्ठ ६१

(23) Catalogue of manuscripts in Bodleian Library, 1864, oxford, page 135b, Visvalocana (= Visvaprakasa)

(24) प्रोफेसर चारुदेवशास्त्री द्वारा लिखित 'विक्रमोर्वशीय' की भूमिका, पृष्ठ २५, लाहौर, १९२९

(25) Catalogue of manuscripts in Bodleian library, page 1'5 b

(26) Abhidhan Chintamani, part II, Index etc, page 317-322, Edited by Jayanta Vijaya Baroda 1-8-1920

(27) नैषधचरित की भूमिका, पृष्ठ १७ Punjab oriental series, 1941

(28) वही, पृष्ठ ४४६

(29) Belvalker System of Sanskrit grammar, page, 112, Poona 1915

(30) A Duff Indian Chronology Page 152

(30) B विश्वप्रकाश की भूमिका, पृष्ठ १ (चौखम्बा सस्कृत सीरीज, १९११) इस ग्रन्थ के प्रणयन मे ग्रन्थकर्ता ने 'नाम पारायण' को अपना पथ प्रदर्शक माना है और निम्नलिखित ग्रन्थो/ग्रन्थकारो से भी काफी सहायता ली है–राजकोश, भोगीन्द्र, कात्यायन, साहसाक, वाचस्पति, व्याडि, विश्वरूप, अमलमगल, सुभग, गोपालित, और भागुर ।

(31) मेदनी कोश-जीवानन्द विद्यासागर द्वारा सपादित, कलकत्ता १८७२
'अपि वहुदोप विश्वप्रकाशकोशञ्च सुविचार्य ।'

(32) तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा (भाग ४) शेप विवरण पूर्वोक्तानुसार तथा अभिधान चितामणि' की प्रस्तावना, पृष्ठ १२ प्रथमसस्करण वि स २०२४, प्रकाशक—चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी (उ प्र)

(33) A जैन धर्म का प्राचीन इतिहास (भाग २) पृ ४१८

B साहित्यकर्मकवितागमजागरुकै-
रालोकित पदविदा च पुरे निवासी ।
वर्त्मन्यधीत्य मिलित प्रतिभान्वितानाम्,
चेदस्ति दुर्जनवचो रहित तदानीम् ॥४॥
यत्नो मया यमनपायमशेषविद्या,
विद्याधरीपरिवृढस्य मतौ नियोक्तुम् ।
त्यक्त्वा पुनर्विमलकौस्तुभरत्नमन्यो,
लक्ष्मीविनोदरसिको रसिकोऽस्ति धन्य ॥५॥–विश्वलोचन कोश, प्रथमसस्करण, प्रस्तावना पृष्ठ ३-४

(34) गोतमा गौ प्रकृष्टा स्यात् सा च सर्वज्ञभारती ।
ता वेत्ति तामधीपे च त्वमतो गौतमो मत ॥–आदिपुराण (भाग १), द्वितीयपर्व, श्लोक ५२, पृष्ठ ३४

संपादक पं. पन्नालाल साहित्याचार्य, भारतीयज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, तृतीय संस्करण, १९८८ टिप्पण–वाक् । गौः पुमान् वृषभे स्वर्गे खण्डवज्रहिमांशुषु । स्त्री गवि भूमिदिग्नेत्रवाग्वाणसलिले त्रिषु ॥' इति विश्वलो.

नोट—मुद्रित विश्वलोचनकोश के संस्करणों में 'त्रिषु' के स्थान पर 'स्त्रियः' पाठ मुद्रित है । देखें–विश्वलोचनकोश, संपादक दर्शनाचार्य गुलाबचन्द्रजैन, प्रका. मदनमहल जनरल स्टोर्स, राइट टाउन, जबलपुर (म. प्र.) १९९३ पृष्ठ -४६-५७ ।

(35) चन्द्रप्रभचरितम्–श्री वीरनन्दि विरचित (मुनिचन्द्र विरचित विद्वन्मनोवल्लभा व्याख्या तथा गुणनन्दि कृत पंजिका सहित) संपादक एवं अनुवादक पं. अमृतलाल शास्त्री, प्रका. जीवराज जैन ग्रन्थमाला ग्रन्थांक २१ लालचन्द हीराचंद दोशी जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर (महा.) वीर निर्वाण संवत् २४९७, प्रथम संस्क. सन् १९७१

(A) मानोन्नता महाभोगा मत्तवारणशालिनः । बहुभूमिय्रुता यत्र प्रसादाः पार्थिवोपमाः ॥द्वितीयसर्ग, श्लोक १३२ पृ. ६६

विद्वन्मनोवल्लभा टीका–मानेति । यत्र श्रीपुरे । मानोन्नताः मानेन प्रमाणेन पक्षे मानेन गर्वेण् उन्नता उत्तुङ्गा मानं प्रमाणे प्रस्थादौ मानश्चित्तोन्नतो ग्रहे इति विश्वः ।

(B) तव तात न युक्तमाकुलत्वं मयि तिष्ठत्यरिमस्तकैकशूले ।
त्वमिमं प्रविलोकयाद्य मृत्योर्वदने दुष्टनभश्चरं विशन्तम् ॥ षष्ठसर्ग, श्लोक ९८, पृष्ठ १६५

विद्वन्मनोवल्लभा टीका–तवेति । तात भोः पूज्यः 'तातोऽनुकम्प्ये जनके' इति विश्वः ।

(C) मधुविनिहितविभ्रमाभिरामां मदकलकोकिलनादिनीं नरेन्द्रः ।
परिजनपरिवारितोः वनान्तश्रियमबलामिव वीक्षितुं प्रतस्थे ॥ नवम सर्ग, श्लोक १, पृष्ठ २१४

विद्वन्मनोवल्लभा टीका—मध्विति । परिजनपरिवारितः परिजनैः सेवकजनैः परिवारितः परिवृतः । नरेन्द्रः नराणामिन्द्रश्चक्री । मधुविनिहितविभ्रमाभिरामां मधुना वसन्तेन मद्येन च विनिहितेन कृतेन विभ्रमेण शोभया अभिरामां विराजमानाम् पक्षे विभ्रमेण भ्रान्त्या अभिरामां मनोहराम् । मदकलकोकिलनादिनी मदेन कलः कोकिलस्य नादोऽस्या अस्तीति मदकलकोकिलनादिनी ताम् 'मदकलः स्यान्मत्तेभे मदेनाव्यक्तवाचि च' इत्यभिधानात् ।

(D) संतापप्रसरमुषः समाश्रितानां तुङ्गत्वे सति फलसंपदा नमन्तः ।
सच्छायाः सरलतया सदैव यत्र सादृश्यं दधति महीरुहा महद्भिः ॥ षोडशसर्ग, श्लोक ४, पृष्ठ ३८५

विद्वन्मनोवल्लभा टीका–संतापेति । यत्र देशे । समाश्रितानाम् आश्रितजनानांम् । संतापप्रसरमुषः संतापस्य प्रसंर प्रचारं मुष्णनीति तथोक्ताः तुङ्गत्वे औन्नत्ये सति । फलसंपदा फलानां संपदा समृद्धया । नमन्तः विनताः । सच्छायाः अनातापेन युक्ता (पक्षे) कान्त्यायुक्ताः 'छाया स्यादातयाभावे सत्कान्त्युत्कोच कान्तिपु । प्रतिविम्वेऽर्ककान्तायां तथा पङ्क्तौ च पालने ।'.........

नोट— उपर्युक्त ४ प्रसंगों में टीकाकार ने स्वयं २ स्थलों पर 'विश्व' कहकर उल्लेख किया है । जो 'विश्वलोचनकोश' में शव्दशः उसी रूप में पाए जाते हैं । देखें क्रमशः नान्तवर्ग में न द्वितीय, श्लोक, १७, पृष्ठ १८७; तान्तवर्ग-त द्वितीय, श्लोक

१९, पृष्ठ १२२, लान्तवर्ग-ल चतुर्थ श्लोक १६६, पृष्ठ ३५७, तथा यान्तवर्ग-य द्वितीय, श्लोक २१-२२, पृष्ठ २५६ ।

(36) यशस्तिलकचम्पू (महाकाव्य) श्रीमत् सोमदेवसूरि विरचित (यशस्तिलक दीपिका सहित पूर्वखण्ड) सपादक, अनुवादक एव प्रकाशक प सुन्दरलाल शास्त्री, अध्यक्ष श्री महावीर जैन ग्रन्थमाला, बी २०/२५ ए, भेलूपुर वाराणसी (उ प्र) प्रथम सस्क वीर निर्वाण सवत् २४८६, वि स २०१७, जुलाई १९६० ई)

(A) तस्मै सत्कीर्तिपूर्ताय विश्वदृश्वैकमूर्तये । नम शमसमुद्राय जिनेन्द्राय पुन पुन ॥ प्रथम आश्वास कारिका ८, पृष्ठ २
टिप्पण–'पूर्ताय' इति ह लि सटि (क, ग, घ, च) प्रतिपु पाठ । 'पूरिच्छन्नयो पूर्तं पूर्त वातादिकर्मणि ।' इति विश्व

(B) श्री रमणीरतिचन्द्र कीर्तिवधूकेलिकौमुदीचन्द्र । जीयात्क्षितिपतिचन्द्रश्चिराय वसुधाङ्गनाशरच्चन्द्र ।–द्वितीय आश्वास, का १७०, पृष्ठ ९०
–'चन्द्र सुधांशुकर्पूरस्वर्णकाम्पिल्लवारिषु' काम्ये च इति विश्व ।

(C) निष्कण्टकमहीभागो निर्विपक्षमहोदय । निर्व्याबाधप्रज प्राप य पर नाहवोत्सवम् ॥ द्वि आ, पृ १५, का ३९ उक्त तीनो उद्धरण विश्वलोचन कोश मे क्रमश पृष्ठ १२४, २०२ एव ३६४ पर प्राप्त होते हैं ।

(37) जयोदय महाकाव्य (प्रथम भाग, सर्ग १ से १३ तक) महाकवि प भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञानसागर मुनि महाराज) द्वारा लिखित एव स्वोपज्ञ सस्कृत व हिन्दी टीका युक्त, प्रका मत्री, श्री मुनि ज्ञानसागर जैन ग्रन्थमाला, ब्यावर (राज) प्रथम सस्क,

(A) व्यर्थ च नार्थाय समर्थन तु पूर्णो यतश्चार्थ्यभिलापतन्तु ।
स विश्वतोरोचनमृद्धदेश कोप दधौ श्रीधरसन्निवेशम् ॥ प्रथमसर्ग, श्लो १७, पृष्ठ १०
स्वोपज्ञ उभयटीका–व्यर्थमिति । स नरनाथ श्रीधर कुबेरस्तस्य सन्निवेश भाण्डागारमिव विश्वतोरोचन सर्वेषा रुचिकारकम्, ऋद्धो देशो यस्य त कथमप्यरिक्तमित्यर्थ । एतादृश निधान दधौ । यस्य निधानस्य समर्थनमर्थाय कस्मैचित्प्रयोजनाय व्यर्थं न भवति, यथेष्टवस्तु प्राप्ति तत सुलभा बभूव । यतो यस्मादर्थिना याचकानामभिलाषो मनोरथस्तस्य तन्तु सद्भाव पूर्ण । तथा च श्रीधरो नाम ग्रन्थकर्ताऽऽचार्यस्तेन कृत सन्निवेशो रचना यस्य त श्रीधराचार्यनिर्मितमिति, विश्वतोरोचन 'विश्वलोचन' नाम कोप यथेति । अन्यत्सर्व पूर्ववत् ॥१७५॥
अन्वय–स श्रीधरसन्निवेशम् ऋद्धदेश विश्वतोरोचन कोप दधौ । यस्य अर्थाय समर्थन व्यर्थ न, यत (स) अर्थ्यभिलापतन्तु पूर्ण (आसीत्) ।
अर्थ–वह राजा विशाल, भरा-पूरा और विश्व के लिए रुचिकर कुबेर के समान कोप (खजाना) धारण किए हुए था, जिसका समर्थन किसी भी प्रयोजन के लिए व्यर्थ नही होता अर्थात् उस कोप से सभी मनचाही चीजे प्राप्त होती थी । कारण वह याचको, अभिलाषाओं के प्रति सद्भावपूर्ण था ।
विशेष–इस पद्य मे समासोक्ति अलकार के द्वारा 'विश्वलोचन' नामक सस्कृत कोप की ओर संकेत किया गया है, जो श्रीधराचार्य द्वारा निर्मित है ।
इसके अतिरिक्त अनेकसर्गो मे १६, २२, २४, ४६, ४९, ५८, १३६, १४८, १५२, १९२, १९७, २०७, २१२, २३८, २७९, २८० २९०, ३१४, ३५८,

३७१, ३७२, ३७६, ३८४, ३९०, ३९६, ४०१, ४०३, ४०७, ४३६, ४३८, ५०३, ५०६, ५१०, ५१६, ५६१, ६३६, ६३९, ६४९६५५, ६५६, ६६०, ६६५ तथा ६६६ पृष्ठों पर भी विश्वलोचन कोश के विभिन्न प्रयोग देखे जा सकते हैं ।

(B) जयोदय महाकाव्य (द्वितीय भाग, सर्ग १४ से २८) महाकवि पं. भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञानसागर मुनि महाराज, स्वोपज्ञ संस्कृत टीका सहित, हिन्दी अनुवाद एवं संपादक पं. पन्नालाल साहित्याचार्य, प्रका. ज्ञानोदय प्रकाशन, पिसनहारी मढ़िया, जवलपुर ३ (म. प्र.), प्रथम संस्क, १९८९, पृष्ठ ३७+६२६ ।

आहस कमलनालकुलवाहो हृद्भिन्नं तु दाडिमस्याहो ।
जम्भजृम्भितकोमलभावं तवाश्चर्य तोऽभिवीक्ष्य तावत् ॥ सर्ग १४, श्लोक १८, पृष्ठ ६७६-७७

स्वोपज्ञटीका–तदा स नेता आह तावत्–अहो कमलनालकुलवाहो मृणालतुल्यकोमलभुजे ! तव जम्भतां दन्तानां जृम्भितं परिवर्द्धमानं कोमलभावं सौन्दर्यमभिवीक्ष्य तावदाश्चर्यतो तु किलदाडिमस्य करक फलस्य हृद् अन्तो भिन्नं विदीर्णमिति ।'जम्भो दन्तेऽपि जम्भीर' इर्ति विश्वलोचने ।

इसके अतिरिक्त विभिन्न सर्गों में भी विश्वलोचन के सुन्दर प्रयोग पाए जाते हैं ।

(C) सुदर्शनोदय महाकाव्य (९ सर्ग) रचयिता महाकवि पं. भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञान सागर मुनि महाराज), संपादक, पं. हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री, प्रका-प्रकाशचन्द्र जैन, मंत्री मुनि श्री ज्ञानसागर जैन ग्रन्थमाला, ब्यावर (राज.) प्रथम संस्क; १९६६,

वणिक्पथः श्रीधरसन्निवेशः स विश्वतोलोचननामदेश ।
सस्मिज्जनः संस्क्रियतां च तूर्ण योऽभूदनेकाथतया प्रपूर्णः ॥ प्रथम सर्ग, श्लोक ३२, पृष्ठ १५-१६

अर्थ—उस चम्पानगर का वणिक्पथ (बाजार) विश्वलोचन कोष सा प्रतीत होता है । जैसे यह विश्वलोचन कोप श्रीधर (सेन) आचार्य रचित है, उसी प्रकार वहाँ का वाजार सर्वप्रकार की सम्पत्ति से सन्निविष्ट अर्थात् सजा हुआ था । जैसे कोष का नाम विश्वलोचन है वैसे ही वहॉ का बाजार संसार भर के लोगों के नेत्रों द्वारा देखा जाता था अर्थात् संसार भर के लोग क्रय-विक्रय करने के लिए वहॉ आते थे । जैसे विश्वलोचनकोष शव्दज्ञान से मनुष्य को शीघ्र संस्कृत अर्थात् व्युत्पन्न कर देता है, उसी प्रकार वहॉ का वाजार भी खरीदने योग्य वस्तुओं से खरीददारों को संतुष्ट कर देता है। जैसे यह विश्वलोचन कोष एक-एक शव्द के अनेक अर्थो से परिपूर्ण है, वैसे ही वहॉ का वाजार एक-एक जाति के अनेक द्रव्यों से भरा हुआ था । जैसे इस विश्वलोचन कोश में अनेक अध्याय, वर्ग आदि है, उसी प्रकार उस चम्पापुर नगर के भी अनेक विभाग थे और वहॉ के राजमार्ग भी लम्वे-चौड़े एवं अनेक थे ।

सुदर्शनोदय महाकाव्य के संपादक पं. हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ ने अपने संपादकीय वक्तव्य में संकेत किया है–'सुदर्शनोदयकार को अन्त्य-अनुप्रास रखने के लिए कितने ही स्थलों पर अनेक कठिन और अप्रसिद्ध शव्दों का प्रयोग करना पडा है । जैसे–प्रथम सर्ग के सातवें श्लोक (पृष्ठ ३) में (गण्ड) शव्द के साथ समानता रखने के लिए 'पण्डः पण्डे' शव्द पाया जाता है । ग्रन्थकार ने अपनी प्रायः सभी रचनाओं में इसी कोपगत शव्दों का उपयोग किया है । इसी प्रकार विद्वद्‌जन 'तल्प' शव्द के शय्या अर्थ से ही परिचित है पर यह शव्द स्त्रीवाचक भी है जो इसी विश्वलोचन कोप से प्रमाणित है । इंसलिए विद्वानों को यदि किसी खास शव्द के

अर्थ मे कुछ सन्देह प्रतीत हो, तो उसके अर्थ का निर्णय वे उक्त (विश्वलोचन) कोष से कर ले । (पृ ६)

(D) वीरोदय महाकाव्य (२२ सर्ग, सस्कृत एव हिन्दी स्वोपज्ञद्वयटीका सहित) रचयिता वाणी भूषण बालब्रह्मचारी प भूरामल शास्त्री (मुनिज्ञानसागर जी महाराज), प्रकाशक, प्रकाशचन्द्र जैन, मत्री-मुनि श्री ज्ञानसागर जैन ग्रन्थमाला, गणेशीलाल रतनलाल कटारिया, कपड़ा व्यापारी, ब्यावर (राज) प्रथम सस्क वीरनिर्वाणसवत् २४९४ ईस्वी १९६८ पृष्ठ १६८+४८०

वीर ! त्वमानन्दभुवामवीर मीरो गुणाना जगताममीर ।
एकोऽपि सम्पातितमामनेक-लोकाननेकान्तमतेननेक ॥ प्रथमसर्ग, श्लोक ५, पृष्ठ ३

टीका–वीर इत्यादि–हे वीर ! त्वमानन्दभुवामुत्सवस्थानानामवीर सुगन्धिचूर्णविद् भवसि । खलु गुणाना क्षमाधैर्यादीना मीर 'मीरोऽब्धिशैलनीरेषु' इति विश्वलोचन । समुद्र एव किन्तु जगता प्राणिना मध्ये अमीर सर्वश्रेष्ठ इ एव इक काम·खेदो वास न विद्यते यस्य स नेकस्तस्य सम्बोधनम् । त्वमेक केवलो भवन्ननेकान्तमतेन स्याद्वादेमानेनक लोकान पमितया अतिशयेन पालयति । शाब्दिकविरोधालङ्कार ॥(पृ ३५९)

(E) वीरशर्माभ्युदय (महाकाव्य) स्वोपज्ञ सस्कृत वृत्तिसहित—रचयिता प भूरामल शास्त्री (आचार्य श्री ज्ञानसागर मुनि महाराज), अप्रकाशित ।

कोकेन साक शयनाच्चिराद्धि सुविह्वला प्राप्तघनिष्ठकोपाम् ।
अन्वेषयन् शेष इमा हि लक्ष्मी लग्नोऽस्ति काकाभरणच्छलेन ॥ तृतीयसर्ग, श्लोक १७

कोकेनेति—चिरात् कोकेन कृष्णेन साक 'कोकश्चक्रे वृके ज्येष्ठया खर्जूरीमेकविष्णुषु' इति विश्वलोचन , शयनात् सुविह्वला समाकुलामतएव प्राप्तो लब्धो घनिष्ठो निविड कोपो यया ता लक्ष्मीमिमा हि अन्वेषयन् शेषो नागेश्वरो हि काकाभरणस्य काकेति नामधेयभूषणस्यच्छल दम्भस्तेन लग्नो लीनोऽस्ति ॥

(38) पञ्चशती—रचयिता-आचार्य श्री विद्यासागर महाराज, सस्कृत टीका एव हिन्दी अनुवाद डॉ पन्नालाल साहित्याचार्य, प्रकाशक-अजितप्रसाद, करेशचन्द्र व सजय जैन, ज्ञानगगा, ३० डिप्टीगज, सदरबाजार, दिल्ली, -६, प्रथमावृत्ति, १९९१ फरवरी ।

(A) श्रमणशतकम्—प्रणमामि 'कुन्दकुन्द' भव्यपद्मबन्धु धृतवृषकुन्दम् ।
गत च समताकुद परम सम्यक्त्वैककुन्दम् ॥ श्लोक ३, पृष्ठ ४ ॥

टीका—प्रणमामीति-भव्यपद्मबन्धु भव्या एव पद्मानि कमलानि तेषा बन्धु प्रहर्षकर । धृतवृषकुन्द धृतो वृषस्य कुन्दश्चक्र येन त 'कुन्दो माध्येपुमाश्चक्रे, भ्रमी निधिसुरा द्विपो' इति विश्वलोचन । समताकु समता साम्य परिणतिरेव कुर धारित्री ता 'क्षमा धरित्री क्षितिश्च कु ' इति धनञ्जय । परम श्रेष्ठ द च शुद्धि च गत प्राप्त 'द शुद्धौ देवते दास्तु इति विश्वलोचन । सम्यक्त्वैक कुन्द सम्यक्त्वमेव एकोऽद्वितीय कुन्दो निधियस्य त कुन्दकुन्द तन्नामाचार्यप्रवर प्रणामि नमस्करोमि ॥

इसके अतिरिक्त अन्य श्लोको मे भी विश्वलोचन कोश के चारुप्रयोग अवलोकनीय हैं ।

(B) निरञ्जनशतकम्—
नयनयुग्मनिभेन नयद्वय समयनिश्चय हेतु न ! यद्धयम् ।
कलयतीति तदाशयवेदका निजमयाम इव व्यपदेशका ॥ निरजनशतकम्, श्लोक ६,

पृ. ७३-७४ ॥
टीका–हे न ! हे जिन ! 'नकारो जिनपूज्ययोः' इति विश्वलोचनः.........इत्यादि ॥

(C) भावनाशतकम्—
साधव इह समाहितं नमन्ति सतां-समाधृतसमाहितम् ।
कुर्वत् हृदि समाहितं तमहमपि वन्दे समाहितम् ॥ भावनाशतकम्, पद्य १, पृष्ठ १४५ ॥
टीका–इह जगति सतां सत्पुरुषाणां हितं कल्याणकरं समाहितं समसिद्धं युक्त्यागमसिद्धिमित्यर्थः समाहितं समाधिस्थं, ध्याननिमग्नमर्हत्परमेष्ठिनमित्यर्थः । आत्मानं वा 'समाधिस्थे समाहितः त्रिषुन्यस्तप्रतिज्ञातसंसिद्धे यम आत्मनि' इति विश्वलोचनः । ....इत्यादि ॥भावना शतक के भी अनेक पद्यों में इस कोश के अनेक मनोहारी प्रयोग अवलोकनीय है ।

(D) **परीषहजयशतकम्**, पद्य १५, पृष्ठ २२३
चलतु शीततमोवपि सदागति-रमृतभावमुपैतु सदागतिः ।
जगति कम्पवती रसदागतिः स्खलति नो वृषतोऽपि सदागतिः ॥
टीका–चलत्विति । शीततमोऽपि अतिशयेन शीतः शीततमः तथाभूतोऽपि सदागतिर्वायुश्चलतु प्रवहतु । सदागतिरग्निः अमृतभावं सुधात्वं शैत्यनिवारकत्वादिति यावत् । उपैतु प्राप्नोतु । जगति भुवने कम्पवती कम्पनकारिणी रसदा रसं शरीरं घति खण्डयीति रसदा शरीरविदारिणी गतिर्दशा च भवतु तथापि सदागतिर्मुनिः । वृषतो मुनिधर्मतो नो स्खलति भ्रष्टो न भवति । 'सदागतिर्गन्धवाहे निर्वाणेऽपि सदीश्वरे' इति। रसः स्वादेऽपि तिलादौ शृङ्गारादौ द्रवे विषे । पारदे धातुवीर्याम्बुरागे गन्धरसे तनौ' इति च विश्वलोचनः ।
विश्वलोचन कोश के अन्य प्रयोग भी इस शतक में देखे जा सकते हैं ।

(E) सुनीतिशतकम्–(पद्य २०, पृष्ठ २९२)
विना रागेण वधूललाटो विनोद्यमेनापि विभातु देंशः ।
दृष्ट्या विना सद्य मुनेर्न वृत्तं रसेनशान्तेन कवेर्न वृत्तम् ॥
टीका—अत्र भुवि रागेण कुंकुमेन विना वधूललाटो ललनाभालो, उद्यमेन व्यवसायेन विना देशोऽपि जनपदोऽपि, दृष्ट्या सम्यग्दर्शनेन विना, मुनेः सद्वृत्तं सम्यक्चारित्रं शान्तेन रसेन विना कवैः काव्यकर्तुः वृत्तं छन्दोऽपि न विभातु. न शोभताम् । 'त्रिपु वृत्तं तु चरिते वृत्तं छन्दसि वर्तते' इति विश्वलोचन'......इत्यादि ।
इसके अतिरिक्त अन्य पद्यों में भी विश्वलोचन कोश के अनेक स्थलों पर भी प्रयोग प्राप्त है ।

(39) A श्रीमाघनन्दिकृत चतुर्विशति तीर्थकर स्तवन–संस्कृतटीकाकार-पं. पन्नालाल साहित्याचार्य, अप्रकाशित
कामक्रोधकलङ्ककर्मकपटक्रीडाक्रतान्तक्षयः,
क्षामक्षेत्रकायकुञ्जरघटासञ्चारपञ्चाननः ।
हेमक्ष्माधररम्य पाण्डुकशिला जन्माभिषेकोत्सच्छीमान्,
मल्लिजिनेश्वरो दिशतु नः श्रेयः पदं शाश्वतम् ॥–श्रीमल्लिजिनस्तवनम् ॥
टीका–कामो मदनः क्रोधः कोपः कलङ्ककर्म निंद्यकर्म कपटक्रीडा मायाचारकेलिः एषां कृतान्तक्षयो यमगृहं तन्नाशक इत्यार्थः । 'क्षयोऽपचयकल्यान्तनिवासेपुरुगन्तरे' इति विश्वलोचनः ।

(B) पुरुदेवचम्पू प्रबन्धकाव्य महाकवि अर्हद्दास विरचित, पण्डित पन्नालाल जैन साहित्याचार्य कृत 'वासन्ती' संस्कृत टीका एव हिन्दी अनुवाद सहित सम्पादित प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, प्रथम सस्करण, वीर नि स २४९८

–क्रियाद्व कल्याण भ्रमरहितसामोदसुमन
समासेव्य श्रीमान् वृषभ इति विद्वत्सु विदित ।
ददान कल्पद्रु श्रितजनततेरुत्तमफल,
ममासीनो दिव्यध्वनि मृदुलतालकृतमुख ॥ प्रथम स्तवक, श्लोक १, पक्ति २० ॥

वासन्तीटीका–भ्रमरहितसामोदसुमन समासेव्य तत्र वृषभपक्षे-भ्रमेण सयमेन रहिता, आमोदेन हर्षेण सहिता सामोदा । भ्रमरहिता सामोदाश्च मे सुमनसो देवो विद्वासो वा ते समासेव्य कल्पवृक्षपक्षे भ्रमरहिता भृङ्गहितकरा सामोदा सुगन्धिसहिताश्च या, सुमनस पुष्पाणि ताभि समासेव्य । 'सुगन्धिमुदि वामोद', 'सुमना पुष्प-मालत्ये स्त्रिया धीरे सुरे पुमान्' इति च विश्वलोचन । (पृष्ठ २०-२३), अन्यत्र भी प्रयोग अवलोकनीय है ।

(C) गद्यचिन्तामणि—वादीभसूरिकृत, सस्कृतटीका एव हिन्दी अनुवादक प पन्नालाल साहित्याचार्य प्र भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, प्र स १९६८

— यद्ययमाभोग स्तनयो पीनयो क्रीडागिरिरपद कीदृशो भर्तु इति निभृत वल्लभपरिचारिकाभिरनुरागिणी भिरभिष्टूयमानम् अमन्दमृगमदाम्यकिरातगीतिम् ।' (२६२, जीवीधरस्य विवाहवृत्तान्त दशमोलम्भ, पृष्ठ ३९३)

टीका—अमन्दोऽत्यधिको मृगाणा हरिणाना मदो गर्वो यस्या तथाभूतामपि न किराताना गीतिरित्यकिरातगीतिम्ताम्, किरातगीतिस्तु मृगाणाममन्द मदमुत्पादयति सा तथा न तथेति विरोध पक्षे अमन्द प्रचरो मृगमद कस्तूरी यस्या तथाभूतामपि न विद्यते किरातस्येव म्लेच्छस्येव गीतिर्यस्यास्ता सभ्यजनगीतियुक्तामिति यावत् अथवा किरातो भूनिम्ब 'चिरायता' इत्यर्थ तद् विना अकटुका मधुरा गीतिर्यस्या सा 'किरात पुसि भूनिम्ने म्लेच्छस्वल्पशरीरयो 'इति विश्वलोचन ।

ग्रन्थ मे अन्य स्थलो पर भी 'विश्वलोचन' के प्रयोग प्राप्त है ।

(D) धर्मशर्माभ्युदय—महाकवि हरिशचन्द्रविरचित, मण्डलाचार्य ललितकीर्ति के शिष्य प यशस्कीर्ति की सदेहध्वान्त टीका सहित, टिप्पणकार एव अनुवादक प पन्नालाल जन साहित्याचाय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली, प्र स, १९७'

चकार यो नेत्रचकोरचन्द्रिकामिमामनिन्द्या विधिरन्य एव स ।
कुतोऽन्यथा वेदनयान्वितात्ततोऽप्यभूदमन्दद्युति रूपमीदृशम् ॥ द्वितीयमग, श्लोक ६८ पृष्ठ ३८

टिप्पण—वेदनया वार्धक्यजनितपीडया पक्षे ज्ञानेन अन्वितात्महितात् 'वेदना ज्ञानपीडयो' इति विश्वलोचन । इमी प्रकार अनेक प्रसगा पर भी प्रयोग देखे जा सकने हैं ।

(E) नेमिस्तोत्रम्—अज्ञात कवि विरचित—सस्कृत हिन्दीटीकाकार प पन्नालाल साहित्याचाय, महावीर जयन्ती स्मारिका ८८ खण्ड ३, पृष्ठ २, सपा ज्ञानचन्द्र बिल्टीवाला, प्रका राजस्थान जन सभा जयपुर, १९८८ ।

—मानेनान्नामित नाम ननानिम्न ममाननम् ।
ननु नेमीममी मेन मोमाममनमन्निना ॥३॥

टीका—मानेनत्यादि–अमी तदानना । इना राजान श्रीकृष्णवलरामादय इन पत्यौ नृपे सूर्य' इति विश्वलोचन । मानेन प्रमाणेन । उन्नामिनम् उन्नमियुत शीलम् । नानानिम्न

मनम् तेपु जिनेषु नः पुज्यः ननः, अनिम्नः उच्च नमो गमतमध्यास्थितो यो मश्चन्द्रस्तस्येव मा शोभा यस्यतत् अनिम्नममम्, तथाभूतम् आननं मुखं यस्य स अनिम्न ममाननः । ततश्चाऽसौ अनिम्नमानश्चेति कर्मधारयस्तम् । 'नकारो जिनपूज्ययोः' इति च विश्वलोचनः । मोमामम् मा लक्ष्मी, उमा कीर्तिः मा च उमा चेति मोमे ने अमतिगच्छति प्राप्नोति इति मोमामस्तम् । मेनं मायाः लक्ष्म्याः इनः स्वामी मेनस्तम्, अन्तरङ्गबहिरङ्गलक्ष्मीपतिम् नेमिम् - द्वाविंशं तीर्थकरम् । तनु निश्चयेन । अनमन् नमश्चक्रुः । 'उमा गौर्यामतस्यां च हरिद्रा कान्तिकीर्तिषु' इति च विश्वलोचनः नाम इति वाक्यालङ्कारे ॥३॥ (पृष्ठ२)

(F) चतुर्विंशतितीर्थकरस्तुतिः - रचयिता आचार्य श्री ज्ञानसागर मुनि महाराज (पं. भूरामल शास्त्री, संस्कृत टीकाकार पं. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य, रचना अप्रकाशित

पद्मप्रभ चापि सुपार्श्वनाथं चन्द्रप्रभं पुष्परंद किलाथ ।
श्रीशीतलं नाम जिनं मदातं स्तवीम्यहं सम्प्रतिकालजातम् ॥

टीका–पद्मेति अथ पद्मप्रभं तन्नामधेयं षष्ठ तीर्थकरं, सुपार्श्वनाथं तन्नामानं सप्तमतीर्थकरं, चन्द्रप्रभं तन्नामाष्टतीर्थकरं पुष्परदं पुष्पदन्त नामानं नवमतीर्थकरं मदातं हर्षमतति प्राप्नोति इति मदास्तं 'मदो मृगमदे मद्ये दानमुद्गर्वरेतसि' इति विश्वलोचनः ....इत्यादि

❑ ❑

'पउम चरिउ' मे ऋषभदेव और उनके पुत्र वाहूबली की वैराग्यकथा

☆ बुद्धि प्रकाश 'भास्कर'

देश ने अभी हाल ही आदि पुरुप ऋपभ देव और उनके पुत्र वाहूवली क विम्वो का महामस्तकाभिपेक कर उनका जयगान किया है । भ ऋपभदेव ने लौकिक एव पारलौकिक दोनों ही विघाये सिखाई, दोना ही प्रकार के सुखी जीवन का मार्ग प्रशस्त किया । उनके पुत्र वाहूवली ने स्वतन्त्रता को प्राणो से भी अधिक प्यार करना एव उसकी रक्षार्थ शक्ति सम्पन्न होने की मानव को प्रेरणा दी । कैसे महापुरुप थे ये ? वाहूवली लौकिक रूप से परतन्त्र होकर जीने को तो तैयार थे ही नहीं, लेकिन जव लौकिक स्वतन्त्रता का आधा-अधूरापन देखा, उसमे हिसा/अन्य की हार देखी तो सर्व लौकिकता से मुँह मोड़ पारलौकिक स्वतन्त्रता की सिद्धि मे सलग्न हो गये जहाँ कभी किसी अन्य की हिसा/अपमान नही होता ।

—सम्पादक

'पउम चरिउ' अपभ्रश साहित्य का आदि प्रवध काव्य है । जिस प्रकार सस्कृत का प्रथम काव्य 'राम कथा' से सवधित है, उसी प्रकार अपभ्रश का यह आदिकाव्य भी राम कथा का वर्णन करता है । यह काव्य राम कथा को जैन वाङ्मय की दृष्टि से प्रस्तुत करता है । इस काव्य के रचयिता महाकवि स्वयभू है । इस महान् कवि पर सवसे पहले ध्यान डॉ पी डी गुणे का गया । डॉ गुणे के हम ऋणी है जो उन्होने एक ऐसे साहित्यिक रत्न को खोज निकाला जिस रत्न की चमक से सारा साहित्यिक जगत जगमगा उठा । महाकवि स्वयभू के विपय मे महान् साहित्यकार डॉ राहुल साकृत्यायन के विचार थे-हमारे इसी युग मे नही हिन्दी कविता के पाँचो युगो के जितने कवियो को हमने यहाँ सग्रहित किया है उनमे यह नि सकोच कहा जा सकता है कि स्वयभू सवसे वड़ा कवि है । वस्तुत वह भारत के एक दर्जन अमर कवियो मे से एक था । आश्चर्य और क्रोध दोनो होता है कि लोगो ने कैसे ऐसे महान् कवि को भुला देना चाहा ।"

(हिन्दी काव्यधारा)

महाकवि स्वयभू को लोक का व्यावहारिक ज्ञान भी खूव था । उनके काव्यों मे उनका यह अनुभव झलकता है । अपने अमर काव्य 'पउम चरिउ' मे कवि ने 'भरत-वाहूवलि' का वर्णन वड़ा ही रोचक किया है ।

भरत और बाहुबलि प्रथम तीर्थकर भगवान ऋषभदेव के पुत्र थे। जैन जगत में भरत और बाहुबलि का उच्च स्थान है। भगवान ऋषभ के ज्येष्ठ पुत्र भरत के नाम पर तो इस देश का नाम भारत हुआ। भगवान ऋषभ देव ने संपूर्ण मानव जाति को असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प आदि की विद्यायें सिखाईं। इससे पूर्व मनुष्य अपनी दैनिक आवश्यकता की वस्तुयें कल्पवृक्षों से प्राप्त करते थे। शनैः शनैः कालचक्र के प्रभाव से कल्पवृक्ष समाप्त होने लगे। लोग भूख से तड़पने लगे। जीने का उपाय प्राप्त करने के लिए भगवान ऋषभदेव जो उस समय महाराजाधिराज परम भट्टारक ऋषभदेव थे, के पास आए-

"एक्क-दिवसे - गय पय कूवरि। 'देव देव मुअ भुक्खा मारें ॥
जॉह पसाएं अम्हे धण्णा। ते कप्पयरू सव्व उच्छण्णा ॥
एवहि को उवाउ जीवे वए। भोयणे खाणे पाणे, परिहेवएं ॥
तं णिसुणेवि वयणु जगसारउ। सयल कलउ दक्खवइ भडारउ ॥
अण्णहुं असि मसि किसि वाणिज्ञउ। अण्णहुँ विविह पयारउ विज्ञउ ॥

(पउम चरिउ २ - ८)

अर्थात् एक दिन प्रजाजन विलाप करते हुए आए और कहने लगे, हे देव ! जिन कल्प वृक्षों की हम पर कृपा थी, वे अब नष्ट हो रहे हैं। हम भूख से तड़प रहे हैं। हमें जीने का कोई उपाय बताइये। खाने पीने की वस्तुयें बताइये। उनकी बात को सुनकर ऋषभदेव ने उन्हें कलाओं का ज्ञान कराया। असि, मसि, कृषि, वाणिज्य की शिक्षा दी। अन्य विद्यायें सिखाई। सभा में नृत्य करती देवी नीलांजना को देह से च्युत होते देखकर ऋषभदेव ने पुत्रों में राज्य बॉट दिया और स्वयं तप में लीन हो गये।

ऐसे आदि देव के ज्येष्ठ पुत्र भरत चक्रवर्ती सम्राट हुए। संपूर्ण पृथ्वी को अपने पैरों पर झुकाने वाले भरतेश्वर का वैभव देवों से भी बढ़कर हो गया था। पुराणों के वर्णनानुसार उनके ९६ हजार रानियां तथा उनसे उत्पन्न पचास हजार पुत्र थे। चौरासी लाख रथ, चौरासी लाख हाथी, अठारह करोड़ घोड़े, तीन करोड़ उत्तम धनुर्धारी, नौ निधियां और चौदह रत्न थे उनके पास। भरत ने दिग्विजय करके ये सब प्राप्त किया। साठ हजार वर्ष की दिग्विजय यात्रा करने के उपरान्त बड़े अहंकार के साथ वह अपनी राजधानी अयोध्या लौटा। पर आश्चर्य ! चक्रवर्ती के चक्रवर्तित्व का सूचक 'चक्र' अयोध्या की सीमा पर रुक गया। वह आगे नहीं बढ़ा, जो इस बात का सूचक था कि अभी चक्रवर्ती की दिग्विजय पूर्ण नहीं हुई। भरत ने तुरन्त अपने मंत्रियों से एवं सामन्तों से पूछा कि क्या अभी किसी को जीतना शेष है ? मंत्री सोचकर बड़े विनम्र शब्दों में बोले हे महाराज ! आपने जो विचारा उसे पाया, आपकी सफलताओं को गिनाया नहीं जा सकता पर...... ! भरत बोले पर 'क्या ! कहो - कहाँ कमी रह गई है।' मंत्रियों ने कहा 'महाराज ! अभी एक व्यक्ति शेष है, जिसे आपको जीतना है। वह है आपके छोटे भाई बाहुबली !' 'बाहुबली' के बल आदि का वर्णन मंत्री ने जो किया वह महाकवि स्वयंभू के शब्दों में—

पर एक्कु ण सिज्झइ, साहिमाणु। सम पंच सवायधणुप्पमाणु ॥
तित्थङ्कर णन्दणु तुह कणिट्ठु। अट्ठाणवहिं भाइहिं वरिट्ठु ॥

पोअण परमेसरुर चरमदेहु । अखलिय भरहु जय लच्छि - गेहु ॥

दूधार -वइरि - वीरन्त- कावु । णामेय वाहुवलि - वक विसालु ॥

अर्थात् एक व्यक्ति शेष है, वह है सवा पाँचसौ धनुष प्रमाण लवा, तीर्थंकर वृषभदेव का पुत्र, आपका छोटा भाई, शेष 98 भाइयो से बड़ा, पोदनपुर का नरेश चरमशरीरी सभी प्रकार के स्वाभिमान और विजय लक्ष्मी का स्वामी, शत्रुओं के लिए अजेय नाम से वाहुवलि और है भी वास्तव मे विशाल वलवाला ।

यहाँ कवि यह कहना चाहता है कि वाहुवलि के पास, अतुलबल आदि के होते हुए भी वे शान्त थे, दयाशील थे, पर शत्रुओं के लिए महाकाल थे ।

चक्रवर्ती होने का जोश अपनी निधियो का अभिमान इन सबने बड़े भाई को छोटे भाई के स्नेह से शून्य कर दिया, उन्होंने तुरन्त अपने दूत को वाहुवलि के पास भेजकर अपनी अधीनता स्वीकार करने का सदेश भेजा ।

दूत ने जाकर वाहुवली से कहा—हे ऋषभ पुत्र ! आपमे और भरत मे कोई अन्तर नही है, दोनो आप तीर्थंकर वृषभदेव के पुत्र हो, पर भरत आपके बड़े भाई है, पृथ्वीश्वर हैं, चक्रवर्ती हैं, आपके 98 भाई, तथा इस पृथ्वी के समस्त नरेश उनकी अधीनता स्वीकार करके उन्हे अपना सम्राट् मान चुके है, आप भी अहकार छोड़कर उन्हे अपना सम्राट् मानले ।

वाहुवलि वोले, दीक्षा लेने से पूर्व, हमारे पिताश्री ने वटवारे मे जितनी धरती मुझे दी, उस पर मेरा सुखद शासन है । मैंने कभी किसी के साथ अन्याय नही किया, किसी को कष्ट नही पहुँचाया । भरत सारी पृथ्वी के स्वामी है, मै तो केवल पोदनपुर का अधिपति हूँ, न मैं किसी से कुछ माँगता हूँ और न किसी को कुछ देना चाहता हूँ । भाई की दृष्टि से भरत मेरे लिए पूज्य हैं, पर राजा की दृष्टि से वरावर । मैं उनकी कृपा से शासन नही कर रहा हूँ । मैं उनका छोटा भाई हूँ, मेरा रोम रोम उन पर न्योछावर है । आवश्यकता पड़ने पर मैं अपने प्राण भी उन्हे दे सकता हूँ, पर भाई भाई मे यह अधीनता और स्वामित्व ! क्या है ये सब ? वाहुवलि स्वतन्त्र है, वह किसी की अधीनता स्वीकार नही कर सकता । अधीन वनाने के लिए तो मुझसे युद्ध ही करना होगा, क्योंकि राज्य की रक्षा करना राजा का धर्म है । दूत निराश लौट आए । चक्रवर्ती के अहकार को चोट पहुँची । भरत सोचने लगे ऐसा दुस्साहस तो आज तक किसी राजा ने नही किया ।

भरत को तो वाहुवलि को अधीन करना ही था, उन्होंने रणभेरी बजा दी । अपनी अठारह अक्षौहिणी सेना से उन्होने युद्ध के लिए प्रस्थान कर दिया । प्रकृति क्षुब्ध थी । वातावरण मे एकदम सन्नाटा, यदि आवाजे थी तो युद्ध के लिए जा रहे सैनिको की पदचाप की, घोड़ो के हिनहिनाने की और हाथियो की चिघाड़ की । दिन मे धूल का गुब्बार इतना उठा कि रात का आभास होने लगा । विशाल सेना पोदनपुर के पास पहुँच गई । भरत ने देखा - वाहुवलि की सेना भी सामने तैयार है । थोड़ी ही देर मे हुकार के साथ सैनिक भिड़ पड़े । युद्ध का वर्णन महाकवि स्वयभू ने इन शब्दो मे किया है—

"अब्भिट्टइ वड्ढिय कलयलाइ । भरहेसर - वाहुवली - वलाइँ ॥

वाहिय रह चोइय वारणाइ । अणवरयामेल्लिय-पहरणाइ ॥

लुअ-जुण्ण जोत्त, खण्डिय धुराइं । दरिय-णियम्ब-कप्पिय उराइं ॥
णिवट्टिय-भुअ-पाडिय सिराइं । धुय खन्ध, कवन्ध-पणच्चिराइं ॥
गय दन्त-छोह-भिण्णुब्भडाइं । उच्चाइय पडियेल्लिभ-भडाइं ॥
पडिहय-विणिवाइय-गय घडाइं । अच्छोडिय, मोडिय-धयवडाइं ॥
मुसुमूरिय-चूरियं रहवराइं । दलवट्टिय, लोट्टिय हयवराइं ॥
रूहि रोल्लइं । दलवट्टिय, लोट्टिय हयवराइं ॥
रूहि रोल्लइं सरहिं विहावियाइं । णं वे वि कुसुम्भेहिं रावियाइं ॥

अर्थात् भरत और बाहुबलि के मध्य युद्ध होते ही हाहाकार मच गया । चारों ओर कोलाहल मच गया । रथ हांके जा रहे थे । हाथी उकसाये जा रहे थे । लगातार एक पक्ष दूसरे पक्ष पर आक्रमण कर रहा था । रथों की धुरियाँ टूटने लगीं । वीरों के सीने छलनी होने लगे । भुजायें कट कट कर गिरने लगीं । सिर कट कर गिर रहे थे । सिरहीन धड़ नाच रहे थे । बड़ा भयावना दृश्य था । हाथी अपने दांतों से प्रहार कर रहे थे । गज सेना भी घायल होने लगी । जमीन पर लोटने लगी । झंडे गिर रहे थे। बड़े बड़े रथ चकना चूर हो रहे थे । घोड़े मारे जा रहे थे । रक्त रंजित तीरों से दोनों सेनायें भयावह दिखाई दे रही थी । निकलते हुए रक्त से ऐसा मालुम होता था मानों कॅसूवे के फूलों से वीर रंग दिए गए हों ।

इस मानव विनाश को देखकर मंत्रियों ने अपने अपने राजा को परामर्श दिया कि क्यों आप इन निरीह सैनिकों का विनाश कर रहे हैं । अच्छा तो यह हो कि आप दोनों ही आपस में युद्ध करके हार जीत का निर्णय कर लें ।

दोनों भाई ज्ञानी थे । नरसंहार उन्हें भी अच्छा नहीं लगा । मंत्रियों का परामर्श पसन्द आया और विचार कर निर्णय किया गया कि दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध व मल्लयुद्ध करके निर्णय कर लिया जाय। जो तीनों युद्ध जीत ले वही सारे राज्य का और वैभव का स्वामी होगा।

निर्णयानुसार युद्ध प्रारंभ हुए । बाहुबलि भरत की अपेक्षा लंबे थे अतः दृष्टियुद्ध और जलयुद्ध दोनों युद्धों में वाहुवलि को लाभ हुआ । जल युद्ध का वर्णन स्वयंभू के शब्दों में

"जलें पइट्ठ पिहिमि पोयण णरिंद । णं माणस सरवरे - सुर गइन्द ॥ (पउंम-चरिउ)

महाकवि ने इस पंक्ति में वाहुवलि को भरत की अपेक्षा अधिक बलशाली बताने के लिए वाहुवलि को ऐरावत हाथी की तरह बताया । वे लिखते हैं कि पोदनपुर के स्वामी ने सबसे पहले जल में ऐसे प्रवेश किया मानों मान-सरोवर में ऐरावत हाथी ने प्रवेश किया हो ।

दृष्टि युद्ध में पराजित भरत ने क्रुद्ध होकर पानी को इकट्ठा करके अपने भाई वाहुवलि पर जो पानी की वौछार छोड़ी तो वह उनकी पूरी ऊँचाई तक न पहुँचकर उनकी छाती को छूती हुई लौट आई ।

"छुडु वाहुवलिहिं वच्छयल पत्त । णिव्भाच्छिय असइ न पुणु णियत्त ॥"

कितनी बढ़िया उपमा दी है महाकवि स्वयभू ने । पानी बाहुबली की छाती को छूकर ऐसे वापस आ रहा था मानो कोई असती स्त्री भर्त्सित होकर लौट आई हो । बाहुबलि द्वारा फैंके जल के आघात को भरत सह न सके और इस युद्ध मे भी पराजित हो गए ।

अब केवल तीसरा मल्लयुद्ध शेष था । युद्ध के लिए दोनो 'मल्ल अखाड़े मे एक दूसरे के सामने थे । बाहुबलि ने मल्लयुद्ध के जितने दाव होते हैं उन सबसे भरत को खूब थकाया और फिर लपक कर उन्होंने भरत को अपने हाथो मे उठा लिया ।

"उच्चाइउ उभय करेहि णरिन्दु । सक्केण व जम्मणे जिण-वरिन्दु ॥ (प च 4 11 6)

इस पक्ति मे कवि ने बाहुबलि द्वारा भरत को हाथ मे उठाने की कितनी सुन्दर उपमा दी है । उन्होंने लिखा-दोनो हाथो मे राजा भरत को ऐसे उठा लिया जैसे इन्द्र जन्म के समय बाल जिनेन्द्र को उठाता है ।

भरत की स्थिति बड़ी विचित्र हो गई । उन्हे यह निश्चय हो गया कि अब उनकी पराजय निश्चित है । चक्रवर्ती की सेना, उसके मत्री व सामन्त सब घबराये कि अब क्या होगा ? भरत ने इस तिरस्कार से बचने के लिए अपना 'चक्र 'बाहुबली पर चला दिया । नियम से चरम शरीरी और परिवार के व्यक्ति पर चक्र प्रहार नहीं करता । वह उनकी प्रदक्षिणा कर लौट आया ।

चक्र तो लौट आया पर बाहुबलि पर इसका प्रभाव जो पड़ा उसने इस सारे युद्ध की दिशा को ही बदल दिया । बाहुबलि ने विचार किया क्या मैं भरत को जमीन पर पटक दूँ, नहीं नही मुझे धिक्कार है, ये मेरे लिए पूज्य हैं, मैं अपना राज्य छोड़ दूँगा क्योंकि यह राज्य अनर्थो की जड़ है इसने भाई भाई को लड़वा दिया । इसके प्रलोभन मे फसकर भाई-भाई का, बाप बेटे का, बेटा-बाप का घात करता है । इस समस्त धरती के राज्य से क्या प्रयोजन यह तो नश्वर है ।

"कि आए साहमि परम मोक्खु । जहि थम्मइ अचलु, अणन्तु सोक्खु ॥

"मुझे तो मोक्ष को साधना है । जहा, अचल अनन्त व शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है । यह सोचकर वे स्थिर हो गए । इस घटना से उन्हे तुरन्त वैराग्य हो गया । जिनगुरु का नाम लेकर, पचमुष्ठि केश उखाड़कर वे मेरु पर्वत की तरह अचल और शान्तचित्त खड़े रहकर तप करने लगे ।

71 श्री जी नगर, जयपुर 302018

□□

जैन-पुराण-साहित्य में सल्लेखना

☆ डॉ. कस्तूरचन्द्र "सुमन"

> प्रत्येक आत्मा शाश्वत चेतन पदार्थ है । उसका न कभी जन्म हुआ है, न कभी मरण होगा । देह धारण रूप जन्म और उसें छोड़ने रूप मरण वह अनादि से करता चला आ रहा है । यह जन्म और मरण दोनों ही दुःख दायक है । इन दोनों के उच्छेद का पुरुषार्थ ही मोक्ष पुरुषार्थ है । आज हम देहिक स्तर के जीवन में इतने लुब्ध हैं कि जव च्युत या च्यावित रूपों में हमारे मरण की घड़ी आ जाती है तो अप्रासुक से अप्रासुक भी औषधि लेकर हम हमारे देहान्तर गमन को और कलुषित करते हैं । हम नही जानते कि ऐसा कर हम भीषण दुर्गतियों को जन्म दे रहे हैं । साहस के साथ मुँह मोड़ निर्मल चित्त से, शान्ति के साथ समाधि पूर्वक देह त्याग की कला जो जैनाचार्य सिखाते हैं, हमें आ जाये तो यह उन्नत स्तर के जीवन का निश्चय ही आरम्भ होगा, जो प्रत्येक ही समझदार मानव को इष्ट होना चाहिए ।
>
> —सम्पादक

जैन वाङ्मय में जैन पुराणों का महत्त्वपूर्ण योगदान है । आचार्य समन्तभद्र ने त्रेशठ शलाकापुरुषों के जीवन चरित् को पुराण संज्ञा दी है तथा उसे जैन वाङ्मय के चार अनुयोगों में प्रथमानुयोग के अन्तर्गत परिगणित किया है । आचार्य ने जैन पुराणों को बोधि और समाधि अपरनाम सल्लेखना का निधान भी कहा है ।[1]

जैन पुराणों में सल्लेखना का नामोल्लेख शिक्षाव्रतों के साथ हुआ है ।[2] तत्त्वार्थसूत्रकार ने शिक्षाव्रत चार बताये हैं -सामायिक, प्रोषधोपवास, उपभोग-परिभोग परिमाण और अतिथिसंविभाग ।[3]

इन चारों में तीन नाम पुराणों में आये हैं । केवल उपभोग-परिभोग परिमाण (भोगोपभोग परिमाण) का नाम पुराणों में नहीं आया है । उसके स्थान में पुराणकारों ने "सल्लेखना" का नामोल्लेख किया है । तत्वार्थ सूत्रकार ने सल्लेखना का नामोल्लेख इस प्रकार यद्यपि शिक्षाव्रतों में नहीं किया है किन्तु व्रतचर्या में सल्लेखना का उल्लेख करना उन्हें भी इष्ट रहा है । उन्होंने एक पृथक् सूत्र वनाकर व्रतों के नामोल्लेखों के वाद इसका भी उल्लेख किया है ।[4]

सल्लेखना का फल—सल्लेखना अपरनाम समाधिमरण के फल के संवंध में आचार्य रविषेण ने लिखा है "गृहस्थधर्म का पालन कर जो समाधिपूर्वक मरण करता है, वह उत्तम देव

पर्याय को प्राप्त होता है और वहाँ से च्युत होकर उत्तम मनुष्यत्व प्राप्त करता है । समवत सर्वप्रथम इन्होने ही यह घोषणा भी की है कि ऐसा जीव अधिक से अधिक आठ भवों में रत्नत्रय का पालन करके अन्त मे निर्ग्रन्थ हो सिद्धि पद को प्राप्त करता है ।[5]

आचार्य शिवार्य ने भी इसी तथ्य का समर्थन किया है । उन्होंने लिखा है—"जो भद्र एक पर्याय मे समाधिपूर्वक मरण करता है वह ससार मे सात-आठ पर्याय से अधिक परिभ्रमण नही करता उसके बाद वह अवश्य मोक्ष पा लेता है ।"[6]

पुराणो मे समाधिपूर्वक शरीर त्यागने पर भी स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति नहीं होने के उदाहरण भी मिलते हैं । इसका कारण पुराणो मे निदान दोष बताया गया है ।[7]

समाधिपूर्वक मरण से स्वर्गवास प्राप्त होने के अनेक उल्लेख पुराणो मे द्रष्टव्य हैं । राजा मधु के समाधिमरण करके क्षणमात्र मे सनत्कुमार स्वर्ग मे उत्तम देव होने का पद्मपुराण मे उल्लेख किया गया है । इसी प्रकार अन्य व्रतियो द्वारा सल्लेखना द्वारा स्वर्ग प्राप्त किये जाने के भी अनेक उदाहरण हैं ।[8]

सल्लेखना का काल —पद्मपुराणकार ने "सल्लेखश्चायुप क्षये" कहकर आयु का क्षय अर्थात् मरणकाल उपस्थित होने पर सल्लेखना धारण करना बताया है ।[9]

मरणकाल का तात्पर्य यहा ऐसे अवसरो से भी है जिनके कारण मरण समावित होता है । आचार्य समन्तभद्र ने लिखा है कि प्रतिकार रहित तिर्यंच, मनुष्य, देव और अचेतन कृत उपसर्ग, दुर्भिक्ष, वुढ़ापा और रोग इन चारो को मरणकाल जानो । इनके आने पर धर्म के लिए शरीर-त्याग करना मल्लेखना है । पुराणो मे सिह द्वारा उपसर्ग किये जाने पर समाधि धारण करने तथा मरण पर्यन्त अनशनपूर्वक रहने का नियम लेने का उल्लेख भी मिलता है ।[10]

सल्लेखना का स्वरूप—सल्लेखना का स्वरूप पुराणो मे वैसा ही प्राप्त होता है जैसा जैन दार्शनिक ग्रन्थो मे वह निरूपित है । पुराणकार ने वहिरन्तर्हि लेखना" कहकर सल्लेखना के स्वरूप को स्पष्ट कर दिया है । उन्होंने मरणकाल मे भली प्रकार से देह कृश करने को बाह्य सल्लेखना और कपायो के कृप करने को आन्तरिक सल्लेखना कहा है । इस प्रकार सल्लेखना के दो भेद करके पुराणकार ने यह स्पष्ट सकेत कर दिया है कि व्रती मरणकाल मे सल्लेखना धारण करके अपनी देह कितनी ही कृश क्यो न कर ले, यदि कपाय एव मोह कृप नही हो सकी तो देह कृश करने का कोई लाभ नही है । क्योंकि कपायो के वने रहने से जीव कर्मवन्ध से मुक्त नही हो पाता और कर्मवन्धन से मुक्त हुए विना मुक्ति कहाँ ? अत देह कृश होने के साथ-साथ कपायो के कृश होने पर ही सल्लेखना का स्वरूप घटित होता है ।

सल्लेखना-भेद—सल्लेखना-मरण तीन प्रकार का बताया गया है (1) भक्त प्रत्याख्यान (2) इगिनीमरण और (3) प्रायोपगमन । इनमे दिन, मास, वर्प आदि की प्रतिज्ञा लेकर जिसमे अन्न-पान ग्रहण को कम करते हुए शरीर छोड़ा जाता है, वह भक्त प्रत्याख्यान मरण कहलाता है। इसका समय अन्तर्मुहूर्त से लेकर वारह वर्प पर्यन्त का होता है । इसमे साधक अपने शरीर की सेवा स्वय भी करता है और दूसरो से भी कराता है ।

जिसमे साधक अपने शरीर की परिचर्या स्वय करता है, दूसरो से नही कराता उसे इगिनीमरण और जिसमे साधक अपने शरीर की न स्वय परिचर्या करता है और न दूसरो से कराता है उसे प्रायोपगमन सल्लेखना कहते हैं ।

पुराणों में सल्लेखना के तीसरे भेद प्रायोपगमन सन्यास के उल्लेख मिलते हैं। यह तीनों भेदों में उत्कृष्ट भेद है। इस सन्यास में तपस्वी साधु रत्नत्रय रूपी शयूया पर उपविष्ट होता है/बैठता है।

पुराणकारों ने इस क्रिया में ऐसा किया जाने से इसे "प्रायोपवेशन" सार्थक नाम दिया है।[11] इस सन्यास में अधिकतर रत्नत्रय की प्राप्ति होने से इसे 'प्रायेणोपगम" और इससे कर्मरूपी शत्रुओं का अपगम/नाश होने से इसे "प्रायेणापगम" संज्ञाएँ भी दी गई हैं।[12]

प्रायोपगमन का स्वरूप स्पष्ट करते हुए पुराणों में बताया गया है कि इसमें प्रायः संसारी जीवों के रहने योग्य नगर ग्राम आदि त्याज्य होते हैं। किसी वन का आश्रय लिया जाता है। यह हम पहले ही बता आये हैं कि इसमें शरीर का न अपने द्वारा उपचार किया जाता है और न दूसरों के द्वारा उपचार कराया जाता है। यहाँ तक कि उपचार की चाह भी नहीं रखी जाती। शरीर से ममत्व तोड़ दिया जाता है। शरीर से ऐसे निराकुल रहा जाता है जैसे कोई मृत शत्रु से निराकुल हो जाता है।[13]

सल्लेखना विधि —पुराणों में व्रतियों/मुनियों के सल्लेखनात्मक अंश के स्वाध्याय से विदित होता है कि सल्लेखना गुरु की साक्षी में ली जाती है। इसमें शरीर से ममता नहीं रखी जाती तथा वीर शयूया-आसन में रहना होता है।[14]

सल्लेखना कराने वाले गुरु को पुराणों में निर्यापक" कहा गया है।[15] ऐसे आचार्य सल्लेखनाधारी व्रती को सल्लेखना में स्थिर रखने का हर संभव प्रयत्न करते हैं। विधि संबंधी कुछ अन्य बातों का उल्लेख प्रसंगवशात् पहले किया जा चुका है।

सल्लेखना-अतिचार—आचार्य गृद्धपिच्छ[16] और आचार्य समन्तभद्र[17] ने सल्लेखना को दूषित करनेवाली जिन क्रियाओं का उल्लेख किया है उनका पुराणों में भी वर्णन मिलता है। पुराणों में इनके वे ही नाम दर्शाएं गये हैं जिनका पूर्ववर्ती आचार्यो ने उल्लेख किया है। पुराणों में इन्हें अतिचार न कहकर"मल" (दोष) कहा गया है। ये पॉच बताये गये हैं। वे हैं— जीविताशंसा, मरणाशंसा, निदान, सुखानुवन्ध और मित्रानुराग।[18]

पुराण-टीकाकार ने इनका अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि क्षपक का दीनचित्त होकर अधिक समय तक जीवित रहने की आकांक्षा रखना जीविताशंसा, पीड़ा से घवड़ाकर जल्दी मरने की इच्छा करना मरणाशंसा, आगामी भोगों की आकांक्षा करना निदान, पहले भोगे हुए सुख का स्मरण-सुखानुवन्ध और मित्रों से प्रेम रखना मित्रानुराग दोष कहलाता है।[19]

निर्यापक आचार्य इन दोषों का वहुत ध्यान रखता है। वह सल्लेखना लेनेवाले व्रती को इन दोषों से सावधान रखता है, क्योंकि वह जानता है कि इन दोषों के अभाव में ही सल्लेखना सार्थक होती है।

सल्लेखना और पण्डितमरण —मरण पाँच प्रकार का वताया गया है. (1) पण्डित पण्डित, (2) पण्डित (3) बाल-पण्डित (4) बाल और (5) बालवाल मरण।[20] इनमें मरण के दूसरे भेद पण्डित मरण का उल्लेख जैन पुराणों में भी द्रष्टव्य है।[21]

जैन दर्शन में पण्डित मरण के तीन भेद बताये गये हैं। वे हैं (1) प्रायोपगमन (2) भक्तप्रत्याख्यान और (3) इंगिनी मरण। ये तीनों मरण चारित्रधारी मुनियों को प्राप्त होते हैं।[22]

पण्डितमरण के इन तीनो भेदो की व्याख्या इसके पूर्व सल्लेखना-भेद शीर्षक के अन्तर्गत की जा चुकी है ।

सल्लेखना और मरण —ससार मे आकर ऐसा कौन जीव है जिसका मरण न हुआ हो। यौवन के पश्चात् वुढ़ापा जैसे अनिवार्य रूप से ससारी जीव के इस तन रूपी घट मे घटित हो जाता है ऐसे ही जन्म के पश्चात् मरण का अवतरित होना सुनिश्चित है । ससार मे दोनो साथ-साथ रहते हैं ।[23] गीता मे भी (अ 2 श्लोक 27) कहा है-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युध्रुवजन्म मृतस्य च । अर्थात् उत्पन्न होने वाले की मृत्यु और मरनेवाले का जन्म लेना सुनिश्चित है। गीता के इस वाक्याश मे "जो उत्पन्न होता है उसका मरण सुनिश्चित है" इस कथन मे तो यथार्थता परिलक्षित होती है, किन्तु "मरनेवाले का जन्म होना भी सुनिश्चित है, जैन पुराण साहित्य के परिप्रेक्ष्य मे यह कथन तर्क सगत प्रतीत नहीं होता है । महापुराण मे दशरथनन्दन राम को मरकर सिद्ध क्षेत्र प्राप्त करना वताया गया है । अणुमान् के सवध मे भी ऐसी ही स्थिति उल्लिखित है ।[24]

जैनदर्शन मे सिद्ध जीव के सवध मे कहा गया है कि जैसे दग्ध वीज से अकुरण नही होता ऐसे ही कर्मवीज के जल जाने पर ससार रूपी अकुर उत्पन्न नही होता अर्थात् मरकर सिद्धक्षेत्र प्राप्त करने के वाद जीव को पुन जन्म मरण नहीं करना पड़ता ।[25] अत जन्म के वाद मरण जैसा सुनिश्चित है वैसा ही पुरुपार्थ से कर्मों का नाश करने पर मरण के वाद पुन जन्म नही लेना भी सुनिश्चित है ।[26]

जीवो का मरण तीन प्रकार से होना जैनाचार्य ने वताया है (1) आयु पूर्ण होने पर शरीर का छूटना (2) आयु शेप रहने पर भी शरीर का रोग, उपसर्ग आदि द्वारा छूटना और (3) स्वय शरीर का त्याग कर देना । इनमे प्रथम मरण को च्युत, दूसरे को च्यावित और तीसरे को त्यक्त कहते है ।

इन तीनो मे आदि के दोनो मे देह त्याग करना पड़ती है । इनमे देह-त्याग स्वेच्छानुसार नही होता । जिस त्याग मे परवशता होती है, निज इच्छा नही होती, उसमे वस्तु के वियोग मे दु ख ही होता है, सुख नही । अत मरण के दोनो भेदो-च्युत और च्यावित मे दु ख का अनुभव होता है । वे दोनो दु ख के ही स्रोत हैं ।

मरण का तीसरा भेद-त्यक्त मरण सुखकर है क्योंकि इसमे देह का त्याग स्वेच्छानुसार होता है । स्वेच्छानुसार त्याग मे वस्तु के वियोग मे भी हर्प ही होता है । दर्शक भी सुख का अनुभव करते हैं । अनुभव मे भी यही आता है ।

ससार मे जैसे वस्त्र जीर्ण हो जाने पर जीर्ण वस्त्र हटाकर नया वस्त्र धारण किया जाता है इसी प्रकार देह जीर्ण होने पर उसके स्थान मे देही नयी देह धारण कर लेता है ।[27] इस रहस्य को विरले ही समझ पाते है । जो समझ लेते हैं वे मरण से नही डरते । मरणकाल मे जैन मुनियो को कोई शल्य नही रहती । वे अपने गुरू के निकट शात परिणामो से आत्मध्यान मे लीन रहते हुए स्वेच्छापूर्वक शरीर से निर्लिप्त होकर देह त्याग देते हैं । यथार्थ मे सल्लेखना प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर वढ़ने, आत्मकल्याण करने का ससारी जीव का अन्तिम यत्न है ।

संदर्भ

1. आचार्य समन्तभद्र रत्नकरण्डश्रावकाचारः द्वितीय परिच्छेद, श्लोक 2
2. आचार्य रविषेण, पद्मपुराणः पर्व 14, श्लोक 199 ।
3. तत्त्वार्थसूत्रः अध्याय 7, सूत्र 21
4. वही, सूत्र 22 ।
5. गृहधर्ममिमं कृत्वा समाधिप्राप्तपंचतः । प्रपद्यते सुदेवत्वं च्युत्वा च सुमनुष्यताम् ॥ भवानामेवमष्टानामन्तः कृत्वानुवर्तनम् । रत्नत्रयस्य निर्ग्रन्थी भूत्वा सिद्धिं समश्नुते ॥ पद्मपुराणः पर्व 14, श्लोक 203-204 ।
6. (अ) आचार्य जिनसेन, हरिवंशपुराण : 18. ।2।
7. ते समाधिं समासाद्य कृत्वा देहविसर्जनम् ।
   वासुदेवादितां यान्ति निदानकृतदोषतः ॥
   आचार्य रविषेण, पद्मपुराणः पर्व 2, श्लोक 189 ।
8. वही, पर्व 89, श्लोक ।15। महापुराण :62. 410, 70. 49, आचार्य जिनसेन, हरिवंशपुराण :34, 42, 43, 214-115,
9. पद्मपुराण : पर्व 14, श्लोक ।99।
10. कृत्वानशनसद्यर्यामवमोदर्यमप्यदः
    यथोचितनियोगेन योगेनान्तेऽत्यजत् तनुम् ॥
    आचार्य जिनसेन, आदिपुराण : पर्व 5, श्लोक ।42।
11. ततः स्वायु : क्षयं वुद्ध्वा स्वयंवुद्धान्महावलः ।
    तत्त्यागे मतिं धीमानाधत्त विधिवत् तदा ॥
    वही, श्लोक 226
12. उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे ।
    धर्माय तनुविमोचनमाहु : सल्लेखनामार्या : ॥
    रत्नकरण्ड श्रावकाचार : अधिकार 5, श्लोक 1,
13. आचार्य जिनसेन, हरिवंशपुराण : सर्ग 49, श्लोक 30 ।
14. रत्नत्रयमयीं शय्यामधिशय्य तपोनिधिः ।
    प्रायेणोपविशत्यस्मिन्नित्यन्वर्थमापितम् ॥
    आचार्य जिनसेन, आदिपुराण, : पर्व ॥ श्लोक 95 ।
15. प्रायेणोपगमो यस्मिन् रत्नत्रितयगोचरः ।
    प्रायेणापगमो यस्मिन् दुरितारिकदम्बकान् ॥
    वही, श्लोक 96 ।
16. स्वपरोपकृतां देहे सोऽनिच्छंस्तां प्रतिक्रियाम् ।
    रिपोरिव शवं त्यक्त्वा देहमास्त निराकुलः ।88।
    वही, श्लोक 97-98 तथा पर्व 5, श्लोक 234 ।
17. यावज्जीवं कृताहार शरीरत्याग संगर : ।
    गुरुसाक्षि समारक्षद वीरशय्याममूढधी : ॥
    वही पर्व 5, श्लोक 230 । पाण्डवपुराण : पर्व 9, श्लोक ।27।

18 आरुह्याराधनानाव तितीर्षुर्भवसागरम् ।
निर्यापक स्वयबुद्ध बहु मेने महावल ॥
आचार्य जनसेन, आदिपुराण पर्व 5, श्लोक 23 ।

19 तत्त्वार्थसूत्र अध्याय 7, सूत्र 37 ।

20 रत्नकरण्डक श्रावकाचार

21 आचार्य जिनसेन, हरिवशपुराण सर्ग 58 श्लोक 184 ।

22 प पन्नालाल जैन साहित्याचार्य, वही ज्ञानपीठ प्रकाशन ईसवी 1962, पृष्ठ 679 ।

23 पडिदपडिदमरण पडिदय वालपडिद चेव ।
वालमरण चउत्थ पचमय वालवाल च ॥
भगवती आराधना गाथा 26 ।

24 ईद्रग्गुणी विधिज्ञ प्रासुविहारी मय प्रशान्तात्मा ।
पण्डितमरण प्राप्तोऽभूदीशाने सुरश्रेष्ठ ॥
आचार्य रविषेण पद्मपुराण पर्व 80 श्लोक 208 ।

25 भगवती आराधना गाथा 29 ।

26 जम्म मरणेण सम, सपज्जइ जोव्वण जरा सहिय ।
लच्छी विणास सहिया इय सव्व भगुर मुणह ॥
स्वामी कार्तिकेय, कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा 5 ।

27 आचार्य गुणभद्र, महापुराण 68 श्लोक 718-720

28 दग्धेवीजे यथाऽत्यन्त प्रादुर्भवति नाङ्कुर ।
कर्मवीजे तथा दग्धे न रोहति भवाङ्कुर ॥
राजवार्तिक अध्याय 10 2/3 जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश

29 असरीरा जीव धणा चरमसरीरा हवति किचूणा ।
जम्मण मरण विमुक्का णमामि सव्वे पुणो सिद्धा ॥
तत्त्वार्थसार गाथा 72 ।

30 वासासि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि सयाति नवानि देही ॥
श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2 श्लोक 22 ।

प्रभारी,
जैनविद्या सस्थान
श्रीमहावीरजी (राज)

❑ ❑

भारत-भाषा (पांडव पुराण) : एक समीक्षा

☆ मेवा राम कटारा
प्राध्यापक

जैन पुराण उन मानव पुंगवों की कथा है जिन्होंने धर्म-अर्थ-काम रूप त्रिवर्ग को साधा अथवा नहीं साधा, पर चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्ष को सफलता पूर्वक साधकर कैवल्य प्राप्त किया, मुक्त परमात्मा बने। वैदिक/वैष्णव पुराण जहाँ त्रिवर्ग के साधने पर इनकी कथा समाप्त कर देते हैं, राम को सरयू में प्रवेश करता बताते हैं, पाण्डवों में युधिष्ठिर को स्वर्ग जाता और अन्य भ्राताओं को बर्फ में गलता हुआ चित्रित करते हैं, वहाँ जैन पुराण इन्हें सर्व परिग्रह त्याग तप करते और मुक्त होते निरुपित करते हैं। उनके अनुसार लौकिक त्रिवर्ग (स्वर्ग प्राप्ति भी) बड़े से बड़े मानव को भी जन्म-मरण के क्लेश से मुक्त नहीं करते और इसीलिये मोक्ष पुरुषार्थ के अभाव में उसे हमारा आराध्य होने का पात्र नहीं बनाते। तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, रूद्र, नारद, आदि महापुरुषों के गीत जैन पुराण इसीलिये गाते हैं कि या तो वे मुक्त हो चुके अथवा आगे मुक्त होंगे। मोक्ष पुरुपार्थ रूप आत्मविद्या को तेजस्वी क्षत्रियों की विद्या के रूप में उपनिषद् आख्यान पुनः पुनः चित्रित करते हैं। अतः ये महापुरुष मोक्षार्थी जैन पुराणकारों के श्रद्धा भक्ति के पात्र हों, यह उचित ही है।

कवि बुलाकी दास तो गृहस्थ हैं, आचार्य जिनसेन आदि गृहत्यागी मुनियों ने भी इन महापुरुषों के जीवन के विभिन्न पक्षों–भोग-विलास, युद्ध, त्याग-वैराग्य, सभी का अस्खलित लेखनी से वर्णन किया है। जो केवल त्याग-वैराग्य का वर्णन कर सके और भोग-विलास अथवा युद्ध का वर्णन न कर सके, कि भोग-विलास के वर्णन से उसमें वासना जागेगी और युद्ध का वर्णन हिंसा का भाव पैदा करेगा; तो उस दुर्बल मति को चरित्र निरुपण के क्षेत्र में लेखनी चलाने से बचना चाहिए। ज्ञान की साधना समता की साधना है, सभी प्रकार के ज्ञेयों के बीच निर्लिप्त रहने की साधना है। बुलाकीदास श्रृंगार आदि जीवन के सब पक्षों का सफलता पूर्वक चित्रण कर पाये हैं यह उनकी मति की प्रौढ़ता का, आत्मनियंत्रण का ही परिचायक है।

—सम्पादक

भारत की भव्य भूमि के वक्षस्थल पर स्थित वीरभूमि राजस्थान के पूर्वी तोरण द्वार भरतपुर जनपद की दक्षिण सीमा के रक्षक की तरह पर्वत श्रेणी में घिरा हुआ बयाना नगर। अति प्राचीन इस नगर के अनेक नामों का उल्लेख पाया जाता है। महाभारत काल और

पुराणकाल मे श्रीप्रस्थ, गुप्तकाल मे श्रीपथ तत्पश्चात् विजय मन्दिरगढ़, शोणितपुर और वयाना नामो से प्रसिद्ध हुआ ।

इस नगरी के भव्य भवन अपनी प्राचीनता का प्रमाण देते हुए अपनी गरिमा के गीत गाते हैं । इस नगरी के भवनो की वास्तु कला से पता चलता है कि कभी उस पर जैन मतावलम्वियो का किसी रूप मे आधिपत्य अवश्य रहा था । इस वात का दूसरा प्रमाण है यह शिला लेख–

"आसीन्निवृतिकान्वयैकतिलक श्री विष्णु सूर्यासने श्रीमत्काम्यकगच्छतारक पथ श्वेताशुभान्चिश्रुत ॥ श्रीमान्सूरि महेश्वर प्रशमभू श्वेताम्वर श्रामणी राज्यश्री श्रीविजया विराज नृपतेश्री श्रीपयाया पुरि ॥"

यह कहना अतिशयोक्ति नही होगी कि इस पुरी का पत्थर-पत्थर इतिहास का पन्ना है। ऐसी इस पुरी मे साहित्यिक प्रवृत्ति का भी अभाव नही रहा । यही पर विजयपाल रासो जैसे वीरगाथा कालीन रासो काव्य के रचयिता नल्लभट्ट हुए । यह क्षेत्र साहित्य का सागर रहा है, कभी मात्र गोता खोरो की है जो रत्न ढूँढ कर लाऐं । इसी साहित्य सागर मे अनेक जैन कवि भी रत्न स्वरूप दवे पड़े हुए हैं जिनकी ओर किसी का ध्यान भी नही गया । इस धरा पर वहुत से पुराण और चरित काव्य लिखे गये, सस्कृत और अपभ्रश के ग्रन्थो का व्रजभापा मे अनुवाद हुआ । उस काल खण्ड मे हुये अनुवाद तत्कालीन व्रजभापा गद्य और पद्य की उत्कृष्टता का वोध कराते हैं । व्रजभापा के जैन काव्यो और अनूदित रचनाओं मे प्रमुखत पुराण, महापुराण, चरितकाव्य, नीति काव्य, दूत काव्य और नाटक थे जिनके माध्यम से तीर्थङ्करो के सन्देशो को जन सामान्य तक पहुँचाया गया है ।

इन्ही जैन मुनि और कवियो की परम्परा मे हुए पुराण लेखक लाला वुलाकी दास । लाला वुलाकी दास का असली नाम वूलचन्द गोयल था । आज से लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व वयाना मे एक गोयल गोत्रीय अग्रवाल वैश्यो का परिवार था । ये कसावर वैंक से पुकारे जाते थे । इसी कुल मे साहू अमरसिह हुये जिन्होंने सर्वप्रथम जैनमत मे दीक्षा ग्रहण की । ये धर्मात्मा एव धनवान् थे । राजा भी इनसे समय समय पर ऋण लिया करते थे । इनके पुत्र प्रेमचन्द, प्रेमचन्द जी के श्रवण दास हुए । श्रवण दास व्यापार समृद्धि क्रम मे वयाना छोड़कर आगरा चल गये । ये भक्त, वुद्धि-निवास और सर्वसम्पदाओं के स्वामी थे । इन्ही के पुत्र लाला नन्द लाल हुए । इनकी शिक्षा प हेमचन्द गर्ग के चरणो मे सम्पन्न हुई । इनकी वुद्धि से प्रभावित होकर प हेमराज ने अपनी पुत्री का विवाह इनके साथ कर दिया जिसका नाम जैनी, जैनुल और जैनुलदे वताया गया है । इसी विद्वद् दम्पति से जन्म हुआ लाला वुलाकी दास का।

इनकी शिक्षा दीक्षा पडित अरुणरत्न के चरणो मे हुई । यहा इन्होंने विभिन्न शास्त्रो का अध्ययन किया । यही पर इन्होंने सस्कृत भापा का ज्ञान प्राप्त किया । इनके साथ ही माँ जेनुलदे के शुद्ध सस्कारो से उनका अज्ञान रूपी अन्धकार हट गया । पडित अरुणरत्न के ज्ञान प्रकाश से प्रकाशित होने के कारण उसकी जिह्वा पर जिनवाणी का निवास हुआ ।

एक दिन जैनुलदे ने अपने पुत्र से अपने मन की व्यथा वताते हुए कहा—वेटा, सर्वज्ञ सर्वार्थ सिद्धि ने तुझे सव प्रकार का सुख दिया है । आठो सिद्धि और नौ निधि तुम्हारे

आंगन में नृत्य कर रही हैं। इसलिए अब तू कुछ ऐसा कर जिससे तेरा यश-प्रदीप युग-युग तक जगमगाता रहे। इसके लिए तू महापुरुषों का गुणगान कर। शुभचन्द मुनि ने संस्कृत में पांडव पुराण का वर्णन किया है जो जन सामान्य की समझ से परे है। अतः तू उसका अनुवाद कर जनभाषा में रच कर श्रवण करा।' लाला बुलाकीदास ने माँ के आदेश को शिरोधार्य मानते हुए गुरु पं. अरुण रतन के श्री चरणों में बैठकर संस्कृत सीखकर तथा मुनि वीरनाथ जिन देव के चरणकमलों में बैठ कर पांडव पुराण की 'भारत भाषा' के नाम से सरल एवं सरस ब्रज भाषा में रचना की। कवि ने इसे आध्यात्मिक पुराण बताया है। योंतो सभी पुराण प्रायः आध्यात्मिक होते हैं, परन्तु यह पुराण कवि की दृष्टि में प्रतीकात्मक पुराण है। तथापि, इसके सभी रूपक ऐसे नहीं हैं जो पुराण को आद्योपान्त प्रतीकात्मक सिद्ध करते हों। इसका प्रतीक तत्व निर्बल है। संस्कृत के प्रतीक नाटक 'प्रबोध चन्द्रोदय' तथा हिन्दी के 'कामायनी' महाकाव्य की तरह पूर्ण प्रतीकात्मक नहीं है। कवि का मत है- इस पुराण में अनेक स्थलों पर संघर्ष चलते हैं परन्तु अन्त में मनुष्य धर्म का पल्ला पकड़ कर ही केवल ज्ञान को प्राप्त करता है। ऐसा ही भारत घर-घर हो रहा है तथा मन में जो जोड़-तोड़ चलते रहते हैं वे भी धर्म को धारण करने पर नष्ट हो जाते हैं—

घर में भारत इहि विधै, ज्ञानवन्त के होत।
कायर जड़ जानें नहीं, ज्यों जन्मन्ध उदोत ॥२६।६१

पाण्डव पुराण की परम्परा—

सर्व प्रथम दिगम्बर सम्प्रदाय के आचार्य कुन्द कुन्द ने यह पुराण अप्रभंश में लिखा। तत्पश्चात् इस पुराण के दूसरे भाव के अनुसार पुष्पदन्त ने नागकुमार चरित की रचना की। सन् 800 ई. में वीरसेन के शिष्य जिनसेन ने संस्कृत में पांडव पुराण की रचना की। ज्ञानभूषण की शिष्य परम्परा में हुए शुभचन्द्र ने अपने 'पांडव पुराण' की रचना संस्कृत में वि. सं. 1608 में की। इसी शताब्दी में वादिचन्द्र ने इसका गुजराती में भावानुवाद किया तथा श्री भूषण ने भी पांडव पुराण लिखा। लाला बुलाकीदास ने जिनसेन के लिखे हुए पुराण का भाषानुवाद ब्रज भाषा में 'भारत भाषा पांडव पुराण के नाम से किया है। यद्यपि इसे पांडव पुराण का अनुवाद कहा गया है परन्तु वास्तविकता तो यह है कि संस्कृत पांडव पुराण तो मात्र इसका आधार है, बाकी सब कुछ तो कवि की कला का ही कमाल है। अतः यह संस्कृत पुराण का अविकल अनुवाद नहीं है। यह पूर्णतः मौलिक काव्य ही प्रतीत होता है। निःसन्देह इसमें कवि ने अपनी काव्य प्रतिभा का प्रयोग कर उत्कृष्ट श्रेणी का काव्य रच दिया है।

तत्कालीन अन्य कवियों की तरह बुलाकीदास ने भी विद्वान तथा मूर्ख, सभी से भूल चूक के लिए क्षमा याचना की है। इसके साथ ही ग्रन्थ की चिरायु के लिए मंगल कामना भी की है—

जौलों तारा गन सदन गुर ईस को, सागर सु भूमि रहै जोति दुतिमान की।
भूमि वासी भौनवासी गिरिगिर ईस वासी, वसं, सिर जोति जौलो ससि के विमान की।
गंगा आदि नदीनद कर्म भूमि कल्पतरु है, आन जौलो जग वीतराग ग्यान की।
भारत सुजैत मांहि तीनों सु निकाम लसै, भारत विलास भाषा पांडव पुरान की ॥२६।९३

इस पुराण की रचना वुलाकी दास ने सस्कृत पढ़ कर गुरु वीरनाथ जी के चरणों में वैठ कर की—

अरुन रतन गुरु धन्य है जाके वचन प्रभाव ।
सस्कृत ते भाषा रच्यौ, पाइ सवद अरथाव ॥
वीरनाथ जिनदेव के, जाके चरन प्रसाद ।
यह पुरान पूरन भयौ सुख दाइक सुख आदि ॥ २६।९७-९८

अनेक शीलवान महापुरुषो की प्रेरणा लेकर माँ जैनुलदे की आज्ञा पाकर यह 'भारत भाषा पाडव 1754 की आषाढ़ शुक्ला द्वितीय को सम्पन्न किया—

सवत सतरह सौ चउन सुदि अषाढ़ तिथिदौज ।
पुण्य रिक्ष गुरुवार को कीन्यौं भारत चाज ॥२६॥ १०।

भारत भाषा पाण्डव पुराण को शास्त्रीय कसौटी पर कसे तो इसमे पुराण के लक्षण अधिक तथा महाकाव्य के लक्षण कम है । दूसरी ओर हिन्दी अथवा व्रज भाषा मे पौराणिक परम्परा का अभाव ही है, अत सस्कृत पुराणो का जैसा स्वरूप इस व्रजभाषा पुराण मे नही है। किसी भी वैष्णव कवि ने परम्परा का काव्य नहीं लिखा है । यह परम्परा मात्र जैन कवियो मे ही पाई जाती है ।

सक्षिप्त परिचय—

'भारत भाषा' पाडव पुराण छब्वीस प्रभावो मे वटा हुआ है । पुराण का श्रीगणेश सभी तीर्थङ्करो के नमन से किया है, तत्पश्चात् पुराण की परम्परा कविवशवेल, सृष्टि का आरम्भ तथा पुराण के लक्षणो के अनुसार चौदह मन्वन्तरो का उल्लेख किया है । चौदहवे मनु नाभि हुये जिन से आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव जी का जन्म हुआ । इस प्रकार सृष्टि सूत्र का आरम्भ प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव जी से जोड़ दिया गया है । वैसे तो सनातन धर्म के अनुसार भी प्रथम विष्णु-अवतार ऋषभदेव ही माने गये हैं परन्तु उन्हे मनु-पुत्र नही वताया गया है । उस वशवेल के फल इस पुराण के पात्र पाडव और कौरव हैं । पुराण के सभी प्रभावो के अन्त मे पुराण और पुराण कार के नाम के साथ प्रभाव का शीर्षक भी लिखा गया है । सभी प्रभाव किसी न किसी तीर्थंकर की वन्दना से आरम्भ हुए हैं । छब्वीस प्रभावो मे क्रमश चौवीसो तीर्थंकरो का आह्वान कर लिया गया है । सक्षेप मे इसका वर्ण्य विषय इस प्रकार है—प्रथम सात प्रभावो मे श्रेणिक द्वारा जिन वन्दन, जय कुमार प्राप्ति, जय सुलोचना उपाख्यान, शान्तिनाथ, कुथनाथ तथा अरनाथ जी की उत्पत्ति का वर्णन हुआ है । आगे के प्रभावो मे कर्ण तथा पाडवो की उत्पत्ति वताते हुए महाभारत के विभिन्न प्रसगो का विस्तार से वर्णन किया गया है । स्थान-स्थान पर अनेक आख्यान उपाख्यानो के नायक और नायिकाये जिनमत की शरण मे चले गये है ।

कथा सूत्रो का वैज्ञानिक प्रतिपादन—

वैष्णव पुराणो एव महाभारत की कथाओं को कवि ने वैज्ञानिक अर्थ दिया है । उन्हे इस प्रकार से प्रस्तुत किया है जिससे कि आख्यान कोई मात्र गप्प या चमत्कार सा प्रतीत न हो। महापुरुषो की उत्पत्ति कथा इस तरह से प्रस्तुत की है कि सुनने मे स्वाभाविक हो तथा वैष्णव पुराणो मे कही हुई वात भी झूठी न हो । यह कहिए कि इन्होने वैष्णव पुराणो का

खण्डन नहीं अपितु मण्डन ही किया है। एक प्रकार से वैष्णव पुराणों में कहे हुए शब्दों को यथार्थ अर्थ प्रदान किया है। जैसे कर्ण का जन्म वैष्णव पुराणों में कान से माना जाता है तथा उसे सूर्य पुत्र भी बताया गया है। इन दोनों बातों से कर्ण का, कुन्ती का तथा पाण्डु का चरित्र हनन होता है तथा साथ सूर्य का भी परस्त्रीगमन सिद्ध होता है। परन्तु लाला बुलाकी दास के तर्क के आधार पर प्रस्तुत कथा इन सभी कलंकों को धो देती है, कुन्ती की लाज की रक्षा करती है, कान से जन्म होने जैसी अनहोनी बात का निराकरण करती है, कर्ण को कुलीन बताया है तथा सूर्य का परस्त्री गमन का दोष दूर कर दिया है। कर्ण की उत्पत्ति बताते हुए बुलाकी दास का कहना है—

सुनिश्रेनिक संसार में महामूढ़ हैं लोग। ऐसे कर्ण कुमार कौं कर्णज कहत अजोग॥

कर्ण-कर्ण बातें चलीं, जनम समै पुर ग्राम। तातें अन्धक वृष्टि नृप कर्ण धर्‌यौ तिस नाम॥१४

इस प्रकार से कवि ने अनेक नामों की सार्थकता स्पष्ट की है। विभिन्न महापुरुषों के नामों की व्युत्पत्ति कर उन्हें अन्वर्थनाम सिद्ध किया है, प्रसंगों को नया अर्थ दिया है ताकि जन सामान्य एवं विद्वान लोग आख्यान पर विश्वास कर सकें।

पुराण का काव्यत्व—

यद्यपि यह पुराण है परन्तु जब इसे काव्य की कसौटी पर कसा जाये तो एक अच्छे काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। पुराण की भाषा तत्कालीन प्रचलित ठेठ ब्रज भाषा है। भाषा पर कवि की जन्म भूमि के देशज शब्दों का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होता है। भाषा सीधी सादी, मधुर, प्रांजल और निर्मल गंगा की तरह प्रवाह मयी है। स्थान-स्थान पर जो दार्शनिक पुट दिया गया है उससे तो भाषा कबीर की जैसी लगती है। भाषा में बनावटी पन किञ्चिन्मात्र नहीं है। अतः जन सामान्य के लिए बोधगम्य है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उसमें लालित्य, माधुर्य प्रसाद या ओज का अभाव हो। वह पूर्णतः काव्यधारा बनने में सक्षम है।

प्रमुख्यतः यह पुराण चौपाई छन्द में लिखा हुआ है, परन्तु जिस स्थान पर कवि ने जो उचित समझा है, प्रसंग या कथ्य के अनुसार उसी छन्द का उपयोग किया है। जैसे स्तुति, रूप-वर्णन तथा दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रतिपादनार्थ उन्होंने मत्तगयन्द सवैया या घनाक्षरी कवित्त का सहारा लिया है। यहाँ तुलसी की तरह निश्चित चौपाई संख्या के उपरान्त दोहा या सोरठा का विधान नहीं है। यद्यपि दोहों और सोरठों का प्रयोग तो इसमें बहुत पाया जाता है परन्तु उनकी कोई विशेष व्यवस्था नहीं है। इस तरह यह सम्पूर्ण पुराण चौपाई, दोहा, सोरठा, छप्पय, अडिल्ल, पद्धडी, सवैया, कवित्त, करपा, भुजंगिनी और संस्कृत के अनुष्टुप् छन्द में लिखा हुआ है। पुराण के अन्त में इन सभी छन्दों की संख्या का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया है। कुल छन्द 4472 बताये गये हैं। इन छन्दों में अडिल्ल, पद्धडी, करपा और भुजंगिनी तो कुछ भूले बिसरे से लगते हैं। अडिल्ल चार चरणों का मात्रिक छन्द है जिसके एक चरण में 21 मात्राओं का विधान है। बीसवाँ प्रभाव तो पूरा ही अडिल्ल छन्द में लिखा हुआ है। भुजंगिनी छन्द संस्कृत का भुजंगप्रयात छन्द है जिसका लक्षण 'भुजङ्गप्रयातश्चतुर्भिर्यकारैः' किया गया है।

हिन्दी साहित्य मे सस्कृत छन्दो का प्रचुर प्रयोग प अयोध्या सिंह जी उपाध्याय 'हरि औध' के काव्य से आरम्भ बताया गया है। परन्तु ऐसा नही है, ब्रज भाषा मे इनका प्रयोग बहुत दिन पहले से ही लाला बुलाकी दास ने करना आरम्भ कर दिया था। पाधडी या पद्धडी चार चरणो वाला मात्रिक छन्द है जिसके एक चरण मे सोलह मात्राएँ होती हैं। चरण के अन्त मे गुरु लघु का विधान होता है। करपा चार चरणो का सैंतीस मात्रा वाला छन्द है। मत्तगयन्द सवैया का नाम 'सवैया तेईसा' तथा घनाक्षरी कवित्त का नाम 'सवैया इकतीसा' बताया गया है। इस प्रकार इस पुराण मे कुल ग्यारह छन्दो का प्रयोग किया गया है।

कुछ पुराणो के अतिरिक्त पौराणिक भाषा नीरस सी प्रतीत होती है, परन्तु 'भारत भाषा' की भाषा सालक्रार है। अनुप्रास, श्लेष, यमक आदि शब्दालकारो तथा उपमा आदि अर्थालकारो की शोभा दर्शनीय है। अलकार स्वाभाविक हैं जिन्हे बलात् कविता सुन्दरी के कलेवर पर लादा नही गया है। कविता उनके भार से गतिहीन न होकर गतिवती हुई है। कुछ अलकारो के उदाहरण यहाँ उद्धृत हैं—

अनुप्रास— जो नर भव्य भनाय मने भनि भावन सो यह भारत-भाषा।
आदर धारि लिखाय लिखै लिखि देहि सुनाइ सुनि साषा ॥
सोधि सुधाइ सुधारि सुधारहि सत्य सुधार सकै बुध चाखा।
तेहि नरिंद महापद पावहु तै सिव भासा कै अभिलाषा ॥२०॥९१-९२

यमक— नमो पद्म-पद पद्म के पद्मासन सुखलीन।
पद्मालकृत पद्म द्युति, पद्माकर परवीन ॥१२॥

उपमा— पिक वसन्त तजि तरु सकल बैठे बर सहकार।
त्यो सुलोचना भूपगन त्यागि वर्‌यौ जयसार ॥३।१।
मन्दिर सोहे सुरग विमान, अमर पुरी सम नगरी जान ॥३।२२

मालोपमा— इन बातन कौ ऐसौ मेल, सिकता पीडन कारन तेल।
नीर मथै ज्यो घृत के हेत, ज्यो पाहन पै बोवै खेत ॥२।४७

उत्प्रेक्षा— नगर बनारस तामे लसै, स्वेत सदन सौ मानो हसै ॥३।२२
जनिये सरिता सील की वनिता ताके गेह।
नाम अनन्दी तासु कौ मानो रति की देह ॥१।३२
जुग कपोल दरपन मनो रवि ससि कुडल कर्ण।
नासा बस सुगन्ध पा, नयन कमल त्रय वर्ण ॥९।९६

अनन्वय— और न उपमा या सम जग मे देखिये।
ताही ते इनही की उपमा इनको लेखिये ॥३।६८

सन्देह— गुनज कौ धाम किधो काम अभिराम किधो,
जपै जाहि आठौ जाम राम नाम नरु है।
सुर है सुरिंद है कि ससि है कि सूर किधो
किन्नरी कौ पती है कि किधो कल्पतरु है ॥
पति है सुहाग के कि भाग पति नागपति

गुनी जन हंसन कौ भांनु मानसर है ।
सोभा कौ निवास सुत व्यास कौ प्रकाश
किधों जैनी जन मत है कि सारदा कौ वरु है ॥८।६२

इस प्रकार के उपर्युक्त अलंकारों के साथ-साथ रूपक, सांगरूपक, अतिशयोक्ति, भ्रांतिमान, स्वभावोक्ति, दीपक और प्रहेलिका आदि अनेक अलंकारों के अनेको उदाहरण उपलब्ध हैं । अन्तर्लाप और बहिर्लाप के क्रम में प्रहेलिका का एक उदाहरण-

कहा होतु गूंथे कुसुम, को तन पर आवन्न ।
देह दहन.को यह कहै आदि वर्ण करि भिन्न ॥ (प्रश्न)
कुसुम सु गूंथत होय सृग, त्वग ते तन आवन्न ।
देह दहन रुग जानिये, यह उत्तर भिन्न भिन्न ॥ (उत्तर)

कला पक्ष की तरह भारत भाषा पांडव पुराण का भाव पक्ष भी प्रवल है । यद्यपि कहीं कहीं वंशवर्णन प्रकरण नीरस प्रतीत होते हैं परन्तु फिर भी सरस स्थलों की कमी नहीं है। यहॉ शम और निर्वेद स्थायी भावों के आधिक्य के कारण प्रमुख (अंगी) रस तो शान्त है परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि अन्य रसों का प्रवेश ही न हो । गौण रूप में सभी रसों का समावेश आलोच्य पुराण में द्रष्टव्य है ।

पाण्डु और कुन्ती के काम क्रीडा प्रसंग में निष्पन्न श्रृंगार रस की धारा किस प्रका प्रवाहित होती हैं—

कुच परसन चुम्वन वदन कल भासत स्मित हास ।
ईक्षण करत कटाक्षतें दम्पति प्रीति प्रकासि ॥५९॥

पाण्डु की मृत्यु का सन्देश पाकर कुन्ती विलाप करती हुई वेहाल हो जाती है । उस विरहन की विरहदशा को देख कर किस सहृदय का हृदय विदीर्ण नहीं होगा—

तन कुन्ती सोचित अती सुनतहि निज पति मीचु
तिसी ठौर निरखत चली अंसुवन करती कीच ॥

युद्ध-वर्णन में अनेक स्थानों पर वीर एवं वीभत्स रस की अजस्र धारा प्रवाहित हो रही है—

लगे जुद्ध कौ जोधा रन में धइके,
धनुष साधि सर छोडत अधर चवाइकें ।
हृदय शत्रु कौ तकि तकि मारत सरनि कौं,
वार-वार धसि जाय सु जीवन हरन कौं ॥

यहाँ वीर रस भी दया एवं करुणा से अनुप्राणित है । अन्तिम चरण में कवि को प्राणी के प्राणों के प्रति दया भी जागृत हो गई है ।

पांडु को देखने के लिए दौड़ती हुई स्त्रियों के इस हास्यमय आखों देखे से वर्णन को देखें । कवि प्रतिभा से चित्र कितना सजीव बन गया है

कोउक मज्जन करते तिया, आवत राम श्रवण सुन लिया ।
धाइ चली पहिरत अधचीर, सखत जात कचन ते नीर ॥
कोउक भोजन करत सुभाम पाडु समागम सुनिके नाम ।
निकसि ग्रह ते भोजन त्यागि, झूठौ अन्न रट्यौ मुख लागि ॥
रोवत सिसु अपनो तजिदीये, औरहि अर्भक अकहिं लीये ।
दरपन वदन विलोकत कोई, लीने दरपन भाजी सोई ।
कठाभरन सु कटि मे धारि, कोउक धाई विह्वल नारि ।
अजन मस्तक तिलक सजोय नैनतिलक करि निकसी कोइ ॥
कचुक ते वाहिर कुच लसै, कोउक जाइ, हसै जन तिसै ॥९।४०-४६

पुराण का कवि प्रकृति चित्रण मे भी किसी से कम नही । ऋतुओं का उल्लेख तो किया है परन्तु पुराण मे आवश्यक न समझते हुए तथा विस्तार से बचने के लिए वर्णन नही किया है ।' अन्य वर्णन भी अत्यन्त सजीव है । बाल वर्णन, युद्ध एव चतुरगिणी सेना का वर्णन, नायिकाओं का रूप वर्णन ऐसे वन पड़े हैं कि मानो दृष्टि के सम्मुख घट रहे हो । यहाँ युधिष्ठिर का बाल वर्णन दृष्टव्य है—

अव सिसु तन पीवत पय उरै, मानौ सुजस दस दिशि अनुसरै
हसत-हसत मचलत मुसकाइ वचन कहत रसना तुतलाइ ।
रतन जडित गृह अगन भूमि तिहिं पर चलै सुघुटुवन घूमि ।
जुगम सुखी मिलि पकरत वाह चलत कहत सुख पावो वाह ।
गद गद वचन भनत सिसु जवै, जनक जननि अति हरपित तवै । १।८८-९०

इस वाल वर्णन को पढ़ कर ऐसा लगता है मानो स्वय सूरदास ही जन्म लेकर आ गये हो । इसी प्रकार युधिष्ठिर के चढ़ते हुए यौवन का वर्णन, माद्री के साथ पाडु की काम-क्रीडा का वर्णन भी किसी प्रकार से निर्बल नही है ।

भक्त कवि बुलाकीदास को अपनी मातृभूमि से भी उतना ही प्रेम था जितना कि जैन तीर्थंकरो मे श्रद्धा एव आस्था । इन्होंने अपने पुराण मे प्रसग वश देश की सस्कृति, प्रकृति, प्रजा एव रीतिरिवाजो को पूर्णत उजागर किया है । वह मातृभूमि पर समर्पित हैं—

जवू दीप अनूपम लसै, पडित जन बहु ज्यामे लसै ।
भारत खेत अति सोभित मही, आरज खण्ड सुमण्डित मही ॥१।९३

अपने पूर्वजो की जन्म भूमि का वर्णन अत्यन्त लगन के साथ किया है । यद्यपि उनका जन्म यहाँ नही हुआ परन्तु अपने पूर्वजो का जन्म स्थान होने के कारण उसके प्रति कृतज्ञ है—

नगर वयानो वसै मध्यदेस विख्यात ।
चारु चरन जहँ आचरै च्यार वर्ण बहु भाति ॥
जहाँ न कोऊ दालिदी सवदीसे धनवान ।
जप तप पूजा दान विधि, मानहि जिनवर आन ॥

लालाजी भारतीय संस्कृति के पक्के पुजारी थे । क्षत्रिय शब्द का अर्थ बताते हुए वर्ण व्यवस्था का सम्मान रखा है जो महाकवि कालिदास से प्रभावित है—

जो छति की इच्छा करत ते छत्री रण सूर ।
पर दुख भंजन हार ते तेई सब दुख दूर ॥
कारज द्वै छत्री धरत करत न कोऊ और ।
तजत राज दीच्छा करत मरत जुद्ध में दौर ॥१९॥१८-१९

यही बात कालिदास के शब्दों में 'क्षतात् किल त्रांयते इति उदग्रः क्षत्रस्य शब्द भुवनेषु रूढ़ । (रघुवंश) 'भारत भाषा' पर संस्कृत कवियों का प्रभाव अन्यत्र भी देखने को मिलता है। प्रस्तुत हैं कुछ उदाहरण—

कूलन पातनि सरिता सही, कुल की पातक बनिता कही ।
सरिता वनिता अन्तर नहीं, रस सिंगारहि धारत सही ॥८।२०९

कालिदास- व्यवदेशमाविलयितुं किमीहसे, जनमिमं च पातयितुम् ।
कूलंकषेव सिन्धुः प्रसन्नमभस्तट तरुं च ॥ शाकुन्तल ५।२१

निम्न चौपाइयों को पंचतन्त्र से मिलाइये

नाग नखी नारी नर दुष्ट, इनकौ ही न पतीयै सुष्ट ।
तजिये नित प्रति तीय विसवास अरु विशेष उन्मत्ता तास ।१८।२१०

पंचतन्त्र— नदीनां शस्त्र पाणिनां नखिनां श्रृंगिणां तथा ।
विश्वासो नैव कर्त्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च ॥

दार्शनिक तत्त्व

जैन दर्शन में कर्मवाद का अपना प्रमुख स्थान है । जीव अपने कर्म के अनुसार ही फल भोगता है । जैन धर्म में इसे कर्म बन्ध कहा गया है ।

प्राप्तव्यो नियति बलाश्रयेण योऽर्था ।
सोऽवश्यं भवति नृणां शुभोऽशुभो वा ॥
भूतानां महति कृतेऽपि प्रयत्ने नाभाव्यं,
भवति न भाविनोऽस्ति नाशः ॥सूत्रकृताङ्ग टीका ।१।१।२

इसी सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हुए बुलाकीदास ने कहा है

करम उदय नहीं तार्यो जाय, देइ सुभासुभ फलकों आय ।
सज्जनकरि भी दुर्जन एहि, तिनकों भी यह सुख दुख देहि ॥
ऐसे करम करत क्यों जन्तु, तासों सुख दुख पावे अन्तु ।
करम कलित जे जग में साधु, तिन कहुँ भी बहु लागत व्याधु ॥
करम जोग सुत सगर के, भसमित भये समस्त ।
कर्म सुभासुभ गुर रासि, होत उदय नित अस्त ॥१३।१२४-१२८
कर्म महाअरि भर्म बढ़ावत नृत्य करावत है भवमांही ।
माही दुःख भयो दुखिया जग यांही सों सुख मढ़े छिनमाही ॥

इस प्रकार का कर्मवन्ध विवेचन आगे के 23 छन्दो मे किया है । इन्हीं कर्मों के वन्धो से मुक्त हुई जीवात्मा अर्हन् आत्मा कहलाती है । इस तथ्य की पुष्टि सभी भारतीय दर्शनो, गीता, चरक सहिता तथा अन्य वैष्णवशास्त्रो ने की है । कर्म वन्धन से मुक्त हो जाना ही जीव का मोक्ष है । यह जीवित रहते हुए भी प्राप्त किया जा सकता है, यही केवल ज्ञान है। कवि ने स्थान-स्थान पर केवल ज्ञान, लोकालोक प्रकाश, निर्जरा, सँवर, आश्रव आदि शव्दो का समुचित प्रयोग किया है ।

पुराण के अन्तिम प्रभाव मे अनुप्रेक्षाओं का विषद वर्णन किया है । छव्वीसवे प्रभाव के छन्द सख्या इक्यावन से आरम्भ कर वासठ तक वारह अनुप्रेक्षाओं का विवेचन किया है । ये वारह अनु-प्रेक्षाएँ है-अनित्यानुप्रेक्षा, अशरणानुप्रेक्षा, ससारानुप्रेक्षा, अनित्यानुप्रेक्षा, असुचित्वानुप्रेक्षा, आश्रवानुप्रेक्षा सवरानुप्रेक्षा, निर्जरानुप्रेक्षा, लोकानुप्रेक्षा, वोधिदुर्लभभानुप्रेक्षा तथा धर्मानुप्रेक्षा ।

आत्मा को अलख और अगोचर माना है परन्तु वह कर्मवन्ध मे फस कर ससार भर मे भ्रमण करता है—

ज्यो ससि मदा गगन मे गमे ।
त्यो यह जीव जगत मे भ्रमे ॥

२ससे जीव का विभिन्न योनियो मे पुनर्जन्म सिद्ध होता है । 'भारत भाषा' का कवि ससार को नाशवान मानता है । इस मत का प्रतिपादन उन्होने अनेक स्थानो पर किया है-

विनासीक जग जीवन एम, अजुलि की जल नासै जेम ।
अहो कान या भव मे जीव, जीया चाहै मूढ सदीव ॥१।२६
जलद पटल जिम विनसै महा, जगथित मे मति कीजै कहा ॥१।२७
* * * *
जीवत हेत गहै धन धाम, मो जीवन तिन वूदि समान ।
जलद वृद निरखत जिम नसै, तिम ए छिन छय भव सुख लसै ।३।९४

जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास एक ओर 'कर्म प्रधान विश्व कर राखा, जो जस करई सो तस फल चाखा' कह कर कर्म को महत्व देते है तथा दूसरी ओर 'होइहै सोइ जो राम रचि राखा, क्यो कर तर्क वढावहु साखा' कह कर उन्होने नियति का आश्रय लिया है, उसी प्रकार बुलाकीदास भी कर्म को प्रधान मानते हुए नियति मे विश्वास रखत है । पुण्य, पाप, स्वप्न, शकुन, अपशकुन आदि का अनेक स्थानो पर उल्लेख हुआ है । नवे प्रभाव के 69वे छन्द से 75वे छन्द तक स्वप्न दर्शन तथा उसके फल का निराकरण वताया गया है । कुन्ती को अच्छा पति मिलना उसके किसी पुण्य के कारण माना गया है । (9 50 54) । इसी नियतिवाद का एक उदाहरण—

इहि विधि पूरव पुन्यते, नाना विधि के भोग ।
पाडु राय भुगते सदा द्वै वनिता सजोग ॥९।६४

धर्मतत्व—

भक्त कवि का धर्मतत्व निश्चित रूप से प्रबल होता है । जैन धर्म की शरण में चले जाने से सभी वन्ध कट जाते हैं, दोषदूर हो जाते है तथा इसी से मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है, सिद्धान्त को मानते हुए जैन धर्म की ओर अनुप्रेरित करना ही बुलाकीदास का लक्ष्य रहा है । कुंथनाथ जी की स्तुति में यह भक्तिदर्शन द्रष्टव्य है—

कुंजर कुंथु व आदिक जीव पूरि रहे वहु या जगमाहीं ।
है तिनकों अति प्रीतम जीवन जाके गये तन सों छुट जाहीं ॥
ताहि ते निर्भय सर्व किए जिन कुंथ जिनेसुर सत्य कहाहीं ।
देह जजै नीकौ ताहि जजै जाके जजै रस कर्म नसाहीं ॥६॥

लोक तत्व—

लोक-व्यवहार लाला जी का भोगा हुआ सत्य है । लोक में रहकर उन्होंने जो भी लोकानुभूति की है उसका समावेश अपने काव्य में किया है । अनुभूत सत्य को उन्होंने सीधी सादी सरल और सरस भापा में इस प्रकार से प्रस्तुत किया है कि जन सामान्य के लिये सुग्राह्य तथा आकर्षक हो । कन्या धर्म वताते हुए कहते हैं—

जो कुलवंती कन्याहोय, मात-पिता वच मानत सोय ॥८।८५ ऐसी सुशील कन्या कैसे वर को दी जाय और कैसे को नहीं दी जाय इस वात का निष्कर्प वे इस प्रकार देते हैं—

वय में अधिक महा मदवन्त, दीजै ताहि सुता किहि भांति ।
जात्यादिक नव गुन जु धरेइ ऐसौं वर लखि कन्या देइ ॥
जाति अरोगी वय समां सील श्रुती जप जांन ।

लच्छि पच्छि परिवार ए नव गुण वरहि वखांनि ॥४।२५-२६ । परन्तु अपने से वड़े व्यक्ति के साथ कभी सम्वन्ध नहीं करे, क्योंकि सम्वन्ध तो सम अर्थात् समान स्तर वाले लोगों का ही वन्ध है ।

होयवडौ जो आपते, ताकौं संग सनमंध ।
पंडित जन चाहै नहीं, चाहै मूरख अध ॥
आप वरावर देखिकें, सनमंध करौह विचार ।
जग में जस ज्यों विस्तरै अरु सुख होय अपार ॥

विवाह के अवसर पर अगवानी आदि रीति रिवाजों का सजीव चित्रण किया है । होली का चित्र दृश्य को साकार करने वाला है—

कवहुंक चन्दन मिश्रित नीर, डारत तिय वसनन परिधीर ।
कवहुंक तिय की ऐंचत चीर, काहू के मुख मलत अवीर ॥१०।११०

व्रज अंचल में पैदा होने वाले अन्न, धान, वनस्पति, पकवान आदि की लम्बी सूची देकर काव्य में लोक को प्रतिविम्वित किया है ।

नीति तत्व—

भक्त कवि होने के कारण यह लोकानुभूति नीति उपदेशो का आधार वन गई है। अत जन सामान्य का मार्ग दर्शन करने हेतु उन्होंने अपने काव्य मे अनेक सूक्तियो का समावेश किया है जो नीति से पूर्ण है। निन्दा प्रसार का वर्णन करते हुए कहते हैं—

तेल कना ज्यो जल मे परै, त्यो यह निंद्या फैले खरै ॥८।२२

जुआ की निन्दा करते हैं—

वहु कष्ट दाइ दुरगति निवास, इक दूत जानि सव विसन रासि।
वच झूठ भनै नर घूत कार, मास खाइ पुनि मदिरा धार ॥

जो स्वामी की वात नही मानता वह दु ख पाता है—

नाथ वचन ज्यो माने नाहि, सोई निवसै बहु दु ख माहि ॥३।४३

दोपो को प्रस्फुटित होते ही नष्ट कर देना चाहिए—

ज्यो निपजत विपतरु अकूर, ताहि छिन्नवै कीजै दूर ।४।६८

कामी पुरुप आज्ञा उल्लघन मे कोई दोप नही मानता —

मदन वान उर लागै जिन्है, अग्या लघन भय नही तिन्हे।

खल और सज्जन के स्वभाव का वर्णन इस तरह किया है—

जो असन्त हैं सहज सुभाइ, ते पर अर्थहि दूर्षे धाइ।
ज्यो दिन अन्ध लगावत् दोप, देखत रवि कु धारत रोप ॥
ज्यो दमन्त धरै वहु खेद, हेयाहेय न जाने भेद।
ज्यो जग मे नर खल जो होइ, सवही को खल माने सोय ॥
जलधर महिमा जग मे कही, अवु दान दै पोपत मही।
त्यो सव जग को सज्जन लोग, देहि सदा सुभ सिप्या जोग ॥
सतासन्त सुखासुख करै, सोम सरप सम उपमा धरै।
कोविद जन सव जानत एम, ता विचार सो हमको केन ॥ १।६१-६४

पुराण पद्यात्मक होने के साथ-साथ गद्यात्मक भी हो सकता है। 'भारत भापा' के कवि ने अन्तिम प्रभाव का कुछ दर्शन अश गद्य मे लिखा है जो तत्कालीन व्रजभापा गद्य का नमूना तो है ही साथ ही हिन्दी गद्य की भूमिका भी कही जा सकती है। जो विधा दर्शन जेसे गूढ विपय को व्यक्त करने मे समर्थ हो सकती है वह विधा उत्कृष्ट ही कही जा सकती है। यहा लेख के विस्तार को ध्यान मे रखते हुए उदाहरण स्वरूप कुछ पक्तियाँ उद्धृत है—

"प्रथम ही सुर वोल्यो हे राजन जीवादिक सप्त तत्व नव पदार्थ के विचार विपै तुम पडित हो ताते तुम कहौ पर्यायी-पर्याई विपै भेद है कि नाही जो तुम कहोगे कि पर्यायी ते पर्याय भिन्न है तो वस्तु को अभावहोयगो जैसे घट के अभाव ते माटी को अभाव होय अरु जो

एकत्व कहोगे कि एक ही है तो द्रव्य अरु पर्याय असो भिन्न कथन को अभाव होयगो........।"

इस गद्य में कोई विराम चिह्न नहीं है। इससे ब्रजगद्य का सामर्थ्य सिद्ध होता है तथा हिन्दी गद्य की सम्भावना। कवि ने गुरु को कबीर की तरह सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। इन्होंने भी गोविन्द से पूर्व गुरु का ही स्मरण किया है। सभी प्रभावों का आरम्भ क्रमशः तीर्थंकरों की स्तुति से हुआ है परन्तु उनसे भी पूर्व अर्थात् सर्व प्रथम वीरनाथ जी की स्तुति की है।

सारांश यह है कि लाला बुलाकी दास भक्त और धर्म प्रचारक कवि थे; परन्तु काव्य की उत्कृष्टता को देखते हुए अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन में जायसी नीति और तत्व ज्ञान में कबीर, लोक व्यवहार में रहीम, सुधार समन्वय और शील में तुलसी, बाल वर्णन तथा संयोग वियोग श्रृंगार वर्णन में सूर, श्रृंगार और भक्ति में बिहारी, लोक तत्व ज्ञान में कालिदास और करुण रस में भवभूति के समान हुए। इस पुराण में सभी जैन ग्रन्थों का निचोड़ है।

36, जसवन्त नगर
प्रदर्शनी मार्ग,
भरतपुर 321001 (राज.)

❑ ❑

तिमिरहरा जइ दिट्ठी

☆ *मिश्रीलाल जैन*
एडवोकेट, गुना (म प्र)

तिमिर हरा जइ दिट्ठी, जणस्य दीवेण णत्यि कायव्व
जह सोक्ख सयमादा विसया कि तत्य कुव्वति ॥

तिमिर हरा जइ दृष्टि
तिमिर विनाशक हो यदि दृष्टि
दीपक का क्या करना
तू अनन्त की दीप शिखा है
वुझने से क्या डरना ?
तिमिर खोजने पर न मिलेगा
वन जा सम्यक्-दृष्टि
तिमिर हरा जइ दृष्टि

तरस रहे वट-वृक्ष छाँह को
किससे माँगे छाया ?
वदरी नीर विना घिर आई
मन पछी है प्यासा
सरिताओं के सूखे आँचल
तल की दिख रही मिट्टी
तिमिर हरा जई दृष्टि

काया के मन्दिर मे आकर
अजर-अमर है ठहरा
वाहर देखो घात लगाये
मरण दे रहा पहरा
अपनी ही काया को वाधा
देता मिथ्या दृष्टि

❑❑

आचार्य कुमुदचंद्र का कल्याणमंदिर स्तोत्र

☆ लादूलाल जैन
एम. ए. बी. टी. साहित्य रत्न

जिनेन्द्र भक्ति अपने ही शुद्ध आत्मा की भक्ति है, उसमें तल्लीनता का सरल मार्ग है। निश्चय में अर्हन्त हमारे ज्ञान में ज्ञेयाकार हैं, हमारे ही 'स्व' है और उसमें मग्न होना केवल शुभ भाव नहीं है वरन् तल्लीनता के क्षणों में ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय का भेद मिट कर एक कर्मनिर्जरा कारक शुद्ध आत्मानुभूति हमें प्राप्त होती है। अर्हन्त को सृष्टि कर्त्ता रूप में नहीं स्वीकार करते हुए, साथ ही राग-द्वेष से रहित स्वीकार करते हुए भी जैन दर्शन में भक्ति लौकिक-पारलौकिक अभ्युदय एवं निश्रेयस् सम्पादिका कही गई है। अर्हन्त स्वरूप के ज्ञाता के यह शुभ राग से आरम्भ हो चाहे, पर यह प्रकट शुद्ध आत्मानुभूति भी है। इसीलिये मानतुंग, कुमुदचन्द्र आदि महान् आचार्यों ने भाव विभोर हो लोक प्रसिद्ध भक्तामर, कल्याण मन्दिर आदि भक्तिपूर्ण स्तोत्रों की रचना की है।

—सम्पादक

मोक्ष मार्ग में भक्ति का महत्त्व पूर्ण स्थान है। सम्यक्त्व की उत्पत्ति में आप्त, आगम तथा गुरुके प्रति श्रद्धा, भक्ति एक प्रवल निमित्त है। आप्त के प्रति भक्ति हमें उनके गुणों का स्मरण कराकर उनके समान ही हमारी आत्मा को वनाने की प्रेरणा देती है।

'गुणानुरागो भक्ति' गुणों के प्रति-अनुराग होना ही सच्ची भक्ति है। रत्नत्रय धारी वड़े-वड़े आचार्यों ने अपने आराध्यदेव आप्त के प्रति भक्ति से प्रेरित होकर स्तोत्रों की रचना की है जो भक्ति से ओत-प्रोत है। जैन समाज में भक्तामर स्तोत्र वहुत ही लोकप्रिय है। यह आवाल युवा, वृद्ध सभी के गले का हार वना हुआ है। भक्तामर स्तोत्र के समान ही एकीभाव स्तोत्र, विषापहार स्तोत्र, कल्याणमंदिर स्तोत्र, जिन चतुर्विंशतिका स्तोत्र भक्ति के अजस्रस्रोत हैं जिनसे जनसाधारण प्रायः अपरिचित हैं। मैं यहाँ कल्याणमंदिर स्तोत्र के संवंध में कुछ निवेदन करना चाहूंगा।

कुमुदचंद्र रचित कल्याण मंदिर स्तोत्र भक्ति-रस का एक ऐसा अपूर्व निर्झर है जिसमें स्नान कर प्राणी अपनी आत्मा को निर्मल एवं पावन वनाकर मुक्तिधाम का निराकुल सुख प्राप्त कर सकता है। आचार्य मानतुंग रचित भक्तामर स्तोत्र एवं कल्याण मंदिर स्तोत्र में जहाँ पर्याप्त समानताएँ हैं वहाँ दोनों की अपनी विशेषताएँ भी हैं। दोनों ही आचार्यों ने प्रारंभ में अपने आराध्यदेव की स्तुति करने में अपनी असमर्थता प्रकट की है। भक्तामर स्तोत्र में मानतुंग

कहते हैं कि हे भगवन् ! मैं बुद्धिहीन होकर भी आपकी स्तुति करने को उसी प्रकार उद्यत हुआ हूँ जिस प्रकार बालक जल मे पड़े हुए चद्रमा के प्रतिबिंब को पकड़ने की प्रबल इच्छा करता है । हे भगवन् ! आपके गुणो का पार देव-गुरु बृहस्पति भी नहीं पा सकते हैं, जिस प्रकार प्रलयकाल की प्रचड वायु से उद्वेलित मगर मच्छादि से भरे समुद्र को कोई अपनी भुजाओं से तैर कर पार नही कर सकता है । मैं अपनी शक्ति का बिना विचार किये भक्ति वश ही आपकी स्तुति मे प्रवृत्त हो रहा हूँ, जिस प्रकार हिरणी अपने मृग शिशु को बचाने हेतु अपनी शक्ति का बिना विचार किये हुए सिह का सामना करती है । (काप स ३-५)

यही भाव आचार्य कुमुदचन्द्र ने कल्याणमदिर स्तोत्र मे व्यक्त किये हैं । वे कहते हैं। हे भगवन् ! आपका स्वरूप अगम्य, अथाह, सुखद एव अति सुदर है, मुझ जैसा मन्दबुद्धि उसका वर्णन कैसे कर सकता है ? क्या उल्लू जो दिन मे अधा होता है, सूर्य के स्वरूप का वर्णन कर सकता है ?

मोहनीय कम के क्षय, उपशम अथवा क्षयोपशम होने पर भी अन्य कर्मों के उदयवश, प्राणी आपके गुणो की गणना करने मे असमर्थ होता है जिस प्रकार प्रलय काल मे समुद्र के पानी के बाहर फैल जाने तथा समुद्र तल से रत्नराशि के ऊपर प्रगट होने पर भी उसे गिनने मे कौन समर्थ हो सकता है ।

यद्यपि आपके अनुपम गुणो को मुनिगण भी कहने मे असमर्थ हैं, फिर भी मैं अबोध आपकी स्तुति करने को उद्यत हुआ हूँ जिस प्रकार पक्षीगण अपनी भाषा मे कुछ न कुछ बोलते ही हैं—

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितु स्वरूप, मस्मादृशा कथमधीश भवन्त्यधीश ।
धृष्टोऽपि कोशिक शिशुर्यदि वा दिवान्धो रूप प्ररूपयति कि किलधर्मरश्मे ॥३॥
मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथमर्त्यो नून गुणान्गणयितु न तव क्षमेत ।
कल्पात-वान्त-पयस प्रकटोऽपि यस्मा न्मीयेतकेन जलधेर्ननु रत्नराशि ॥४॥
ये योगिनामापि न यान्ति गुणास्तवेश वक्तु कथ भवति तेषु ममावकाश ।
जाता तदेवमसमीक्षित कारितेय जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥६॥

भक्तामर स्तोत्र पद ९ मे आचार्य मानतुग कहते हैं हे भगवन् ! आपकी स्तुति करना तो दूर रहे आपकी कथा मात्र ही जगत के जीवो के पापो का नाश करती है, जिस प्रकार सूर्य तो दूर ही रहे उसकी प्रभा ही तालाबो मे कमलो को प्रकाशमान कर देती है (खिला देती है) ।

यही भाव आचार्य कुमुदचद्र मे कल्याण मंदिर मे व्यक्त किये है—

हे जिनेन्द्र ! अचित्य माहात्म्य से युक्त आपका स्तवन तो दूर रहे । आपका नामोच्चारण मात्र भी प्राणियो का संसार से (चतुर्गतिरूप दु खो से) रक्षण करता है, जिस प्रकार ग्रीष्मऋतु मे तीक्ष्ण सूर्य किरणो से व्याकुल हुए पथिको को कमल से शोभायमान तालाब का जलकणा से युक्त वायु भी सतुष्ट करता है ।

आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन सस्तवस्ते नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्रातपोपहपाथजनान्निदाघे प्रीणाति पद्मसरस सरसोऽनिलोपि ॥७॥

आचार्य मानतुंग जिनवर की स्तुति का महत्त्व बताते हुए पद ७ में कहते हैं—

हे भगवन् ! आपके स्तवन से जीवधारियों के जन्म-जरा-मरणरूप संसार परम्परा से वंधे हुए पाप क्षण भर में नाश को प्राप्त होते हैं, जिस प्रकार जिसने संसार को ढँक लिया है और जो भ्रमर के समान काला है, ऐसे रात्रि के संपूर्ण अंधकार को सूर्य की किरणें शीघ्रता से नष्ट कर देती हैं ।

यही भाव आचार्य ने कल्याणमंदिर में व्यक्त किये हैं—

हे विभो । आपके चित्त में निवास करने पर इस प्राणी के अत्यंत दृढ़ भी कर्मबंधन क्षण मात्र में शिथिल हो जाते हैं, जिस प्रकार वनमयूर के चंदन के वृक्ष के मध्य भाग में आ जाने पर सर्परूपी वंधन उसी समय शिथिल हो जाते हैं ।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथली-भवंति जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबंधाः ।

सद्यो भुजंग मम या इव मध्य भागमभ्यागते वन-शिखंडिनी चन्दनस्य ॥८॥

इस प्रकार दोनों स्तोत्रों में कई श्लोकों में भावों की समानता है । मानतुंगाचार्य ने भगवान के अष्ट प्रातिहार्यो का वर्णन श्लोक २८ से ३५ वें श्लोक तक विभिन्न अलंकारों से सुसज्जित कर वड़े ही मनोहारी रूप में किया है । कुमुद्रचंद्राचार्य ने भी श्लोक १९ से २६वें तक अनेक उपमाओं उत्प्रेक्षाओं द्वारा अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन बड़े ही मनोरम रूप में किया है। भगवान के ऊपर ढुरते हुए चॅवरों के प्रातिहार्य का वर्णन दोनों आचार्यो ने जिस रूप में किया है उसकी छटा देखिए । आ. मानतुंग पद ३० में कहते हैं—

हे जिनेन्द्र ! ढुरते हुए कुन्द के समान उज्ज्वल चॅवरों से मनोहर हो रही है शोभा जिसकी ऐसा सोने सरीखी कांतिवाला आपका शरीर उदयरूप चन्द्रमा के समान निर्मल झरनों की जलधारा जिसमें वह रही है, ऐसे सुमेरु पर्वत के ऊँचे तटों की भाँति शोभित होता है ।

आ. कुमुदचन्द्र कहते है-हे स्वामिन ! आपके मस्तक पर ढुरने वाले पवित्र चमर नीचे तक नम्र होकर (नीचे जाकर) पुनः ऊपर जाते हैं वे चमर प्राणियों को यह कहते हैं कि जो इस मुनिश्रेष्ठ (जिनवर) के लिए अति नम्रभाव से विनयपूर्वक नीचे झुकता है (नमस्कार करता है) वह शुद्धभाववाला होकर निश्चय से ऊपर उठता है अर्थात् ऊर्ध्वगति को प्राप्त होता है अर्थात् मोक्ष जाता है ।

स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः ।

येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुगवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥ कल्याण मंदिर २२

भक्तामर स्तोत्र मे अनेक श्लोकों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों की छटा दर्शनीय है । अंतिम श्लोकों में भगवान की स्तुति से आठ प्रकार के भय किस प्रकार दूर हो जाते हैं, वड़े ही प्रभावोत्पादक ढंग से वर्णन किया गया है । मानतुंगाचार्य द्वारा भगवान के गुणों की गूंथी हुई माल जन-जन के गले का हार वनी हुई है उसी प्रकार कुमुदचंद्राचार्य का कल्याणमंदिर स्तोत्र भव्यजनरूपी कुमुदिनि के लिए चन्द्रमा के समान है । कल्याणमंदिर स्तोत्र की अपनी ही कुछ विशेष छटा है जो भक्तों को कल्याणकारी संदेश देती है ।

कल्याणमंदिर स्तोत्र में आचार्य ने आराध्यदेव पार्श्व प्रभु के प्रति अपने आपको पूर्णरूपेण समर्पित किया है । वे सांसारिक दुःखों से संतप्त होकर अपने आराध्य देव से करुणा

भरी पुकार करते है कि वे उनका उद्धार करे, भव भव मे उनके चरणो मे भक्ति बनी रहे। उन्हे बड़ा दु ख है कि इस अपार ससार मे भ्रमण करते हुऐ उन्होंने पार्श्वप्रभु का सच्ची श्रद्धा, भक्ति, लगन से स्मरण नही किया, उनका ध्यान नही किया, उनकी पूजा नही की जिस कारण उन्हे असीम दु ख सहने पड़े जिनका स्मरण कर उनका हृदय रो उठता है। वे अपनी करुण दशा का निवेदन करते हुए कहते है —

अस्मिन्नपारभव-वारिनिधौ मुनीश मन्ये न मे श्रवणगोचरता गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मत्रे कि वा विपद्विषधरी सविध समेति ॥३५॥
जन्मातरेऽपि तव पाद-युग न देव मन्ये मयामहित मिहित-दान-दक्षम्।
तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवाना जातो निकेतनमह मथिताशयानाम् ॥३६॥

हे मुनीश। इस अपार ससार रूपी समुद्र मे आप मेरे कर्णगोचर नही हुए अर्थात् अभी तक मैंने आपका नाम नही सुना। यदि मैं आपका नामरूपी मत्र सुन लेता तो यह आपतिरूपी सर्पिणी (सासारिक दु ख) कभी मेरे पास नही आती ।३५॥

हे मुनीश ! मुझे ऐसा मालूम पड़ता है कि एक जन्म मे भी मैंने आपके इच्छित फल देने मे समर्थ पाद युगल की पूजा नही की है। हे देव इसलिये मैं इस पर्याय मे व्यथित करने वाले दु खो का घर वना हुआ हूँ ।३६॥

अपने दु खो के मूल कारणो का और स्मरण कर वे व्यथित हो उठते हैं—

नून न मोहतिमिरावृत्तलोचनेन पूर्वम् विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्था प्रोद्यत्प्रवध गतय कथमन्यथैते ॥३७॥
आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षतोऽपि नूनन चेतसिमया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जन-वाधव दु खपात्र यस्मात्क्रिया प्रतिफलन्ति न भावशून्या ॥

हे प्रभो ! मोहरूपी अधकार से जिसके ज्ञानचक्षु वद हो गये है ऐसे मैंने पहिले एक वार भी आपके दर्शन नही किये। यदि आपके दर्शन किये होते तो उदयरूप, कर्मवध के कारण और मर्म को भेदने वाले ये दु ख मुझे कैसे प्राप्त होते ? ॥३७॥

मैंने आपका नाम सुना, पूजा की और आपको देखा भी परतु भक्ति पूर्वक चित्त मे एक वार भी धारण नही किया। हे जनवाधव। इसीलिये मुझे दु खो का पात्र होना पड़ा है, कारण भावशून्य क्रिया फलदायी नही होती है ॥३८॥

ऐसी स्थिति मे अव एक मात्र भावपूर्वक प्रभु के प्रति अनन्यभक्ति ही परम शरण है, अत आचार्य अपने आराध्य से अत्यत करुणापूर्वक स्वरो मे प्रार्थना करते हैं—

त्व नाथ दु खि-जन-वत्सल हे शरण्य कारुण्य-पुण्य-वसते वशिना वरेण्य।
भक्त्या नते मयि महेश दया विधाय दु खाकुरोद्दलन-तत्परता विधेहि ॥३९॥
दीन दु खी जीवो के रक्षक, हे करुणासागर प्रभुवर
शरणागत के हे प्रतिपालक, हे पुण्योत्पादक जिनेश्वर ॥
हे जिनेश। मैं भक्तिभाव वश, शिरधरता तुमरे पग पर।
दु ख मूल निर्मूल करो प्रभु, करुणा करके अव मुझ पर ॥३९॥

निःसंख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य-मासाद्य सादित-रिपु-प्रथितावदातम् ।
त्वदपाद-पंकजमपि प्रणिधान-वंध्यो वन्ध्योऽस्मि तद्भुवन-पावन हा हतोऽस्मि ॥४०॥

हे शरणागत के प्रतिपालक, अशरण जन की एक शरण ।
कर्म विजेता त्रिभुवन नेता, चारु चंद्रसम विमल चरण ॥
तव पद-पंकज पा करके हे, प्रतिभाशाली बडभागी ।
कर न सका यदि ध्यान आपका, हूं अवश्य तब हतभागी ॥४०॥

यद्यस्ति नाथ ! भवदंघ्रि-सरोरुहाणां भक्तेः फलं किमपि संतत-संचितायाः ।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥४२॥

एक मात्र है शरण आपकी ऐसा मैं हूँ दीनदयाल ।
पाऊँ फल यदि किंचित करके चरणों की सेवा चिरकाल ॥
तो हे तारनतरन नाथ, हे अशरण शरण मोक्षगामी ।
बनें रहे इस परभव में बस । मेरे आप सदा स्वामी ॥४२॥

वास्तव में कल्याणमंदिर स्तोत्र भक्ति का एक ऐसा अपूर्व स्तोत्र है जिसके भावों को भलीभाँति हृदयंगम कर यह प्राणी भावपूर्वक प्रभु के प्रति अनन्यशरण होकर अपने को समर्पित कर दे तो संसार के दुःखों से मुक्ति पाकर कल्याण का पात्र हो सकता है । आचार्य का भव-भव में भटके हुए दुःख सतंप्त प्राणियों के प्रति पावन संदेश है—

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन मागत्य निर्वृतिपुरी प्रति सार्थवाहम् ।
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुंदुभिस्ते ॥२५॥

नभ-मंडल में गूंज-गूंज कर, सुरदुंदुभि कर रही निनाद ।
रे रे प्राणी आतम हित नित, भज ले प्रभु को तज परमाद ।
मुक्ति धाम पहुँचाने में जो सार्थवाह बन तेरा साथ ।
देंगे त्रिभुवन पति परमेश्वर, विघ्न विनाशक पारसनाथ ॥

आइए ! ऐसे पार्श्वप्रभु के प्रति-अपने आपको समर्पित कर उनकी अर्चा कर आचार्यदेव के साथ अपने भी भव-समुद्र से पार हो, कल्याण के पात्र बनें—

कल्याण-मंदिरमुदारमवद्य-भेदि भीताभय-प्रदमनिन्दितमघ्रि पद्मं ।
संसार सागर निमज्जदशेष-जंतु पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥

अनुपम करुणा की सुमूर्ति शुभ, शिवमंदिर अघनाशक मूल ।
भयाकुलित व्याकुल मानव के, अभयप्रदाता अति अनुकूल ॥
विन कारण भविजीवन तारन, भवसमुद्र में यान समान ।
ऐसे पाद पद्म प्रभु पारस के, अर्चूं मैं नित अम्लान ॥

□□

जयोदय महाकाव्य में राष्ट्रीय चेतना के स्वर

☆ ऐलक अभयसागर
(संघस्थ आ॰ विद्या सागर)

भगवान आदिनाथ से आरभ होने वाले युग मे यदि स्वय ऋपभदेव आदि ब्रह्मा/प्रथम तीर्थंकर थे, भरत प्रथम चक्रवर्ती थे, राजा श्रेयास प्रथम दान-दाता थे तो जयकुमार प्रथम सेनापति रत्न थे और सुलोचना का स्वयवर भी प्रथम स्वयवर था। इन प्रथम सेनापतिरत्न, जो त्याग-तप के पथ का अनुसरण कर मुक्त परमात्मा बने, की यशोगाथा जयोदय काव्य मे गायी गई है और कवि श्रेष्ठ ने आधुनिक भारत के प्रथम राष्ट्रपति, प्रथम प्रधानमत्री आदि का भी श्लेप से चित्र खींच दिया है।

—सम्पादक

भगवान महावीर की दिव्यदेशना को लोकसामान्य तक प्रसारित करने मे ऋपि-मुनियो का अप्रतिम योगदान सदेव रहा है। उन्होने कभी प्राकृत तो कभी सस्कृत या अपभ्रश आदि जन प्रचलित भापाओं के माध्यम से साहित्य सृजनकर अध्यात्म, दर्शन, कर्मसिद्धान्त, न्याय, व्याकरण, योग आदि विपय चिंतन प्राणीमात्र के अभ्युत्थान के लिए उपलब्ध किया है।

सस्कृत भापा के माध्यम से अनेक जैनाचार्यों/मनीपियो ने विपुल साहित्य सृजन कर जिनवाणी की अभिवृद्धि की। बीसवी शताब्दी के सुविख्यात दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर मुनि महाराज के दीक्षा एव शिक्षा गुरु बालब्रह्मचारी आचार्यप्रवर श्री ज्ञानसागर मुनि महाराज (पूर्वनाम वाणी भूपण पण्डित भूरामल शास्त्री–विक्रम सवत् १९४६-२०३०) द्वारा मौलिक साहित्य की रचना की गई है।इस युग मे जबकि सस्कृत साहित्य लेखन ही दुर्लभ हो गया है, तब इस भापा में जयोदय, वीरोदय, सुदर्शनोदय, भद्रोदय एव वीरशर्माभ्युदय जैसे पाँच महाकाव्य, दयोदय चम्पूकाव्य के साथ ही सम्यक्त्वसार शतक मुनिमनोरजनाशीति (शतक), ऋपि कैसा होता है ? तथा आचार्य कुन्द कुन्द के ग्रन्थ प्रवचनसार का श्लोकबद्ध रूपान्तरण जैसे ग्रन्थो की रचना चकित, विस्मयाभिभूत कर देने वाला कार्य है। ये समस्त रचनाये जहाँ अपने विपयभूत/प्रतिपाद्य का वर्णन करती है वही काव्यशास्त्रीय दृष्टि से मूल्याकन करने पर शत-प्रतिशत खरी उतरती हैं। आपके द्वारा सृजित महाकाव्य वस्तुत 'बृहत्त्रयी' के कोटि के है। 'जयोदय महाकाव्य' शैली मे नैपधीय चरित का, अर्थगौरव मे 'किरातार्जुनीय' का, प्रकृति वर्णन मे 'शिशुपाल वध' का, दार्शनिक विवेचन मे 'सौन्दरानन्द' का तथा वैराग्य-प्रसग मे 'धर्मशर्माभ्युदय' का स्मरण करा देता हे। समीक्षको ने इसे भारवि, माघ ओर श्रीहर्प के काव्यो के समकक्ष रखा है तथा काव्यकार को सस्कृत साहित्य का आधुनिक अश्वघोप की सज्ञा प्रदान की है।[2]

दो हजार नौ सौ बानवे (२९९२) श्लोक प्रमाण एव अन्त्यानुप्रास की मनोहारी छटा से युक्त 'जयोदय महाकाव्य' का अपर नाम 'सुलोचना स्वयवर' भी है।[3] आदि ब्रह्मा भगवान

आदिनाथ के ज्येष्ठ पुत्र तथा इस देश का नामकरण ही जिनके नाम को सदा स्मरण दिलाता है, ऐसे चक्रवर्ती सम्राट् भरत के सेनापति जयकुमार एवं उसकी पत्नी सुलोचना के स्वयंवर की पौराणिक कथा से युक्त इस महाकाव्य की रचना विक्रम संवत् १९८३ (१९२३ ई.) वर्ष की श्रावण सुदी पूर्णिमा को पूर्ण हुई थी। महाकवि पं. भूरामल शास्त्री ने इसकी स्वोपज्ञ संस्कृत वृत्ति भी निर्मित की है।

कवि/लेखक किसी भी धर्म/मजहब/सम्प्रदाय का अनुयायी हो तथा गार्हस्थिक जीवन जीने वाला या वैराग्ययुक्त होकर अध्यात्म की शीतल छाँव में आत्मलीन रहने वाला भले ही हो किन्तु समकालीन धार्मिक राजनैतिक, सामाजिक, भौगोलिक एवं प्राकृतिक गतिविधियों/परिवर्तनों से परिचित अवश्य रहता है। इसी कारण से उसके रचनाकर्म में इन क्षेत्रों में व्याप्त विषमताओं तथा उनसे बचने/हटने के नीति-न्याय सम्मत रास्ते और सुझाव भी उसकी रचनाओं में यत्किंचित् स्थान पर अवश्य ही प्राप्त हो जाते हैं।

जयोदय महाकाव्य का सृजन उन क्षणों में हुआ था जब भारतवर्ष परतन्त्रता की हथकड़ियों से जकड़े बंधन को पृथक करने में सतत् उन्मुख हो रहा था। स्वतन्त्रता-आंदोलन अनेक राजनैतिक नेताओं के संरक्षण में अपने जोश के साथ समग्र राष्ट्र में एक नूतन चेतना/जागृति पैदा कर रहा था। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के मार्गदर्शन में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, पं. जवाहरलाल नेहरु, सरदार बल्लभ भाई पटेल, सरोजिनी नायडू प्रभृति अनेक राजनेता स्वतन्त्रता की प्राप्ति हेतु एवं अँग्रेजों से अपने मौलिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु संघर्ष रत थे, वहीं 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा' का नारा बुलंद करने वाले सुभाषचन्द्रबोस भी नवयुवकों में नवचेतना और क्रान्ति के मंत्र फूँक स्वतंत्रता संग्राम की बागडोर संभाल रहे थे। उस समय कुछ राजनेता इन समस्त गतिविधियों से अपने आपको पृथक रखकर कुछ और ही कर गुजरने की लालसा से भी प्रयासरत थे।

इस महाकाव्य के अठारहवें सर्ग में कथा-प्रसंग के अनुसार स्वयंवर से हस्तिनापुर वापिस लौटते समय कथानायक जयकुमार के रात्रिविश्राम के वर्णन के अनन्तर ही प्रभातकालीन वर्णन है, जिसमें कवि ने अपनी अलौकिक काव्य-प्रतिभा का पदे-पदे कुशल प्रयोग कर श्लेषालंकार के माध्यम से स्वतंत्रता संग्राम/आंदोलन में प्रयासरत रहकर राष्ट्र को स्वतंत्रता का आस्वाद कराने वाले एवं स्वतंत्र भारत के नवनिर्माण से प्राप्त आत्मिक आल्हाद को प्राप्त कराने वाले कुछ राजनेताओं का नामोल्लेख भी किया है। काव्य के निम्न पद्यों से प्रभात वर्णन के साथ में श्लेष के द्वारा दूसरा अर्थ का परिचय भी प्राप्त किया जा सकता है—

सत्कीर्तिरुच्चति किलाभ्युदयं सुभासा
स्थानं विनारि-मृदुवल्लभराट् तथा सः।
याति प्रसन्नमुखतां खलु पद्मराजो
निर्याति साम्प्रतमितः सितरुक्समाजः ॥१८।८१॥

हे अजातशत्रु तथा कोमल प्रकृति वाले मनुष्यों को प्रिय राजन् जयकुमार प्रभातवेला में सूर्यदीप्ति की समीचीन कीर्ति इस समय अभ्युदय को प्राप्त हो रही है, पद्मराज प्रसन्न मुखता को प्राप्त हो रहा है और सितरुक्समाज यानी चन्द्रमा के परिवार रूप नक्षत्रगण यहाँ से निकल

अन्यत्र जा रहा है । उसी पद्य का श्लेप के माध्यम से स्वोपज्ञ सस्कृत वृत्ति मे अर्थान्तर करते हुए आपने वताया कि हे देव । विक्रम सवत् २००९ (ईस्वी १९५२) मे 'सुभापबोस' की उज्ज्वलकीर्ति अभ्युदय को प्राप्त हो रही है, अजातशत्रु तथा कोमल प्रकृति वालो को प्रिय डॉ राजेन्द्रप्रसाद राष्ट्रपति के पद को प्राप्त हुए हैं । जिनकी पत्नी दिवगत हो चुकी है तथा जो कोमल प्रकृतिवालो को प्रिय लगने वाले हैं ऐसे 'वल्लभ भाई पटेल' राजनेता के प्रतिष्ठित पद को प्राप्त हुए हैं, 'पद्मराज' देश के स्वतन्त्र होने से प्रसन्नमुखता-हर्पको प्राप्त हो रहे हैं और गौराङ्ग-अग्रेजो का परिवार या समूह भारत से निकलकर अपने देश को प्रयाण कर रहा है ।

जयोदय की स्वोपज्ञ वृत्ति के माध्यम से रचनाकार ने अर्थान्तर रूप विभिन्न श्लेपार्थक अर्थो का परिचय कराया है । स्वतत्र भारत के निर्माण होने से भारतीय गणतत्र की सफल प्रतिध्वनि निम्न पक्तियो मे झकृत होती है—

मञ्जुस्वराज्यपरिणामसमर्थिका ते
सम्भावितक्रमहिता लसतु प्रभाते ।
सूत्रप्रचालनतयोचितदण्डनीति
सम्यग्महोदधिपणासुघटप्रणीति ॥१८।८२॥

हे जयकुमार ! प्रभात काल मे आपकी दण्डनीति अच्छी तरह सुशोभित हो । अपने राज्य के सुन्दर परिणाम/रूप का समर्थन करने वाली, उत्तम क्रम से सहित, प्रजा का कल्याण करने वाली, उत्सव या तेज को देने वाली बुद्धि का जिसमे उत्तम प्रयोग हुआ है तथा राज्यशासन सचालन के लिए जो उचित कारण रूप है ऐसी आपकी नीति है ।

भारतवर्ष मे प्रात काल दही मथन का कार्य होता है उसी को अर्थान्तर से प्रस्तुतकर आपने बताया-हे जयकुमार ! प्रात काल आपकी उत्तम कुम्भ व्यवस्था श्रेष्ठ रीति से शोभा को प्राप्त हो रही हे । मथन के समय जिसमे 'कलछल' रूप सुन्दर शब्द हो रहा है, जो घृत रूप फल का समर्थन करने वाली/देने वाली है, तैयार होने वाली छॉछ से जो उत्तम है, रस्सी के चलने से मन्थन दण्ड (मथानी) से जो अच्छी तरह घूम रही है तथा उत्सव या तेजरूप दही के ज्ञान एव निर्णय से युक्त है, ऐसी आपकी कुम्भव्यवस्था समीचीन है ।

श्लेपालकार निपुण कवि ने इसी काव्य का तीसरा नूतन एव तात्कालीन गणतत्र व्यवस्था को अभिव्यक्त करते हुए कहा-हे तेज या प्रताप को देने वाले ! आपकी ऐसी बुद्धि हो जो मनोहर भारतीय गणतत्र की सफलता की समर्थक हो, असेम्बली (ससद) मे अच्छी तरह विचारित कार्यप्रणाली से युक्त हो, शासनतत्र के सचालन की अपेक्षा से उचित दण्डनीति सहित हो तथा सुसगत प्रतीति-व्यवहार्य कार्यों को करने वाली हो ।

भारत-पाकिस्तान विभाजन की अप्रिय स्थिति के अतिरिक्त महात्मा गाँधी के राष्ट्र के प्रति विनम्र योगदान को प्रतिपादित करते हुए अपने निम्न पद्य मे भावाभिव्यक्ति की है-

यद्वा सुगाधियमिता विनतिस्तु राज
गोपाल उत्सवधरस्तव धेनुरागात् ।
हृद्या सरोजिनि अयो विपमेपु जिन्ना-
नुष्ठानमेति परमात्मविदेकभागात् ॥१८।८३॥

हे राजन्। आपकी विनम्रता श्रेष्ठ गतिशालिनी बुद्धि को प्राप्त है। राज्य के सभी गोपाल (ग्वालेजन) आपकी गोरक्षा प्रीति के कारण आनन्द/उत्सव मना रहे हैं। इस प्रभातकाल में कमलिनी हर्षित/विकसित हो रही है और अपने आपको परमब्रह्म का अंश मानने से मदनविजयी पुरुष संध्यावन्दन आदि प्रशस्त अनुष्ठान कार्यों में दत्तचित्त हैं।

अर्थान्तर रूप श्लेष अर्थ को वाणी प्रदान करते हुए कवि ने तत्कालीन राष्ट्र की विषम परिस्थिति की ओर ध्यान दिलाते हुए बताया कि हे राजन्। आपकी विनम्रता या शिक्षा 'महात्मागाँधी' की विनम्रता या शिक्षा का ही अनुसरण कर रही है। आपके गोसंरक्षण प्रेम के कारण 'राजगोपालाचार्य' आनन्द काअनुभव कर रहे हैं तथा 'सरोजिनी नायडू' राजनेत्री भी हर्ष को प्राप्त हो रही है। किन्तु यवननेता (मुस्लिम नेता) 'जिन्ना' अखण्ड भारत होते हुए भी उसका एक भाग 'मेरा है' ऐसी बुद्धि से हिन्दू-यवन विरोधी अनुष्ठान में आसक्त होकर हिन्दुस्तान पाकिस्तान के विभाजन रूप कार्य में दत्तचित्त हो रहे हैं।

भारतवर्ष के संरक्षण में दत्तचित्त रहने वालों के प्रति हार्दिक उद्गार को प्रकट करते हुए कवि ने इस पद्य में अपना राष्ट्रप्रेम व्यक्त करते हुए लिखा है कि–

गान्धीरूषः प्रहर एत्यमृतक्रमाय
सत्सूत नेहरुचयो बृहदुत्सवाय।
राजेन्द्रपरिरक्षणकृत्तवाय–
मत्राभ्युदेतु सहजेन हि सम्प्रदायः ॥१८।८४॥

हे राजाओं के इन्द्र जयकुमार ! प्रातः काल के पहर में मोक्ष के अभिलाषी उत्तम पुरुषों की बुद्धि अमृतत्व प्राप्त करने के लिए पुण्य पाठ रूप वाणी को प्राप्त होती है। इस समय प्रशस्तनक्षत्रों में दीप्ति महान् उत्सव के लिये नहीं होती यानी नक्षत्र निष्प्रभ हो जाते हैं। अतः राष्ट्र की रक्षा करने वाला आपका यह समीचीन भाग्य सहज स्वभाव से वृद्धि को प्राप्त हो।

राष्ट्रपिता महात्मागांधी के रोष को दूर करने में समर्थ नेहरु परिवार के पं. जवाहरलाल नेहरु प्रधानमंत्री के पद को प्राप्त हो कर भारतवर्ष की सुरक्षा में तत्पर हो रहे हैं। गाँधी शांतिवादी थे तथा कदाचित् जव नेहरु उग्र हो जाते तव उनकी उग्रता को देखकर गाँधीजी उनके रोष को दूर कर देते थे, फलतः नेहरु भी शांति प्रिय हो जाते थे। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद राष्ट्र के परिरक्षण हेतु भारतवर्ष के प्रथम राष्ट्रपति पद पर आसीन हुए। इस प्रकार राष्ट्र को नेतृत्व प्रदान करने वालों के श्रेष्ठ परिकर होने से यह भारत वर्ष सहज ही अभ्युदय को प्राप्त कर रहा है।

संस्कृत पद्यों में श्लेप रूप से गर्भित अर्थो की रोचक अभिव्यक्ति स्वोपज्ञ वृत्ति से सहज ही प्राप्त हो जाती है। विभिन्न राजनीतिज्ञों की श्लेपार्थ से सहज अभिव्यक्ति, गणतन्त्र की सफलता का समर्थन करने वाली असेम्वली (संसद) का महत्त्व प्रतिपादन एवं काव्य के राष्ट्रीयता रूप सुधारस से परिपूर्ण होने के कारण डॉ. भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी इन पद्यों को शाकुन्तलम् के पद्यों के समान चिरस्मरणीय मानते हैं।[4] जयोदय महाकाव्य की पूर्ववर्ती महाकाव्यों से यही नूतनता है जो उसके राष्ट्रीयता के महत्त्व को सूचित करने वाले भावबन्धों में दृष्टिगोचर होती है। डॉ. त्रिपाठी के अनुसार जयोदय महाकाव्य इस शताब्दी की सर्वश्रेष्ठ काव्यकला का निदर्शन है, प्राचीनता के साथ नवीनता का असाधारण समन्वय प्रस्तुत करता है। 'अपारे काव्यसंसारे कविरेव प्रजापतिः' इस उक्ति का निदर्शन एतद्युगीन किसी काव्य में

देखना हो, तो वह है 'जयोदय महाकाव्यम्' । यह अलकारो की मजूषा, चक्रवधो की वापिका, सूक्तियो और उपदेशो की सुरम्य वाटिका है । इसमे कवि के पाण्डित्य एव वैदग्ध्य का अपूर्व सम्मिलन काव्य की उदात्तता का परिचायक है । काव्यक्षेत्र के अन्धकार युग को गौरव प्रदान करने वाला यह गौरवमय महाकाव्य है । प्रकृति निरीक्षण मे महाकवि की सूक्ष्मेक्षिका शक्ति को उसकी कल्पनाशक्ति ने पूर्णत परिपुष्ट किया है ।[5]

डॉ प पन्नालाल जैन साहित्याचार्य के अभिमत से यह काव्य सस्कृत के उपलव्य महाकाव्यो मे परिभाण की अपेक्षा जहाँ अद्वितीय है, वहाँ काव्य की समस्त विधाओं के सुविस्तृत वर्णन तथा अलकारो के चमत्कारपूर्ण सयोजन से अद्वितीय भी है ।[6]

जयपुर राज्य के अन्तर्गत राणावली (राणौली, जिला सीकर) ग्राम स्थित सेठ चतुर्भुज प्रसाद छावड़ा एव श्रीमती घृतवरी देवी के द्वितीय पुत्र प भूरामल शास्त्री ने इस महाकाव्य के अन्त मे राष्ट्र, राजा, धनवानो, लोक नेताओं के प्रति अपनी मगल-भावना निम्न पक्तियो मे प्रस्तुत की है–

राष्ट्र प्रवर्ततामिज्या तन्वन्निर्वाधमुद्धुरम् ।
गणसेवी नृपो जातराष्ट्रस्नेहो वृपेपणाम् ॥
वहन्निर्णयधीशाली ग्राम्यदोपातिग क्षम ।
स्थिरत्व मनुजाश्चेत श्रीमन्तोऽवन्तु सूक्तिमत् ॥
चमत्कुर्यात् जगन्नेतुर्भुवनेपु वृपो निज ।
नित्यमभ्येय ससर्गं महता शुभकर्मसु ॥२८।१००-१०४॥

सोजन्य से सुरेश जैन,
भारतीय स्टेट वैंक
शहडोल (म प्र)

□□

---

१ जयोदय महाकाव्य का शैलीवैज्ञानिक अनुशीलन, लेखिका डॉ (कु) आराधना जैन, प्रका श्री दिग जैन मुनिसघ चातुर्मास सेवा समिति, भगवान महावीर, गजवासौदा (विदिशा) म प्र, पृष्ठ XI प्रथमसस्क १९९४

2 (डॉ चेतन प्रकाश पाटनी) भक्ति सग्रह, आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज कृत, प्रका निर्ग्रन्थ साहित्य प्रकाशन समिति कलकत्ता, प्रथम सस्क, १९९४, पृष्ठ ११

3 जयोदय महाकाव्य–आचार्य श्री ज्ञानसागर महाराज, प्रका ज्ञानोदय प्रकाशन, पिसनहारी, जवलपुर ३(म प्र) प्रथम सस्करण वीर निर्वाण सवत् २२१५, पृष्ठ ७०६
'इति वार्णीभूपण ब्रह्मचारी प भूरामलशास्त्रि विरचिते जयोदयापर नाम सुलोचना स्वयवरनाम महाकाव्ये सरिदम्वलम्वनामा चतुर्दश सर्ग समाप्त

4 जयोदय महाकाव्य (उत्तराश) आचार्य श्रीज्ञानसागर कृत, भूमिका पृ २१, शेप वही ।

5 जयोदय महाकाव्य (उत्तराश) भूमिका पृ २३ शेप वही ।

6 जयोदय महाकाव्य (उत्तराश) सम्पादकीय प्रस्तुति, पृ २७, शेष वही ।

राजस्थानी दूहा :

सुख-दुःख रा दूहा

☆ स्व. डॉ. नरेन्द्र भानावत

(१)

जोसुख नै भोगै नहीं, वीं सुख पावै नित्य ।
दुःख री रातां नष्ट वै, अंग-अंग आदित्य ॥

(२)

धरती रो दुःख देखणै, करुणा जगै अकास ।
आंसूड़ा टपू-टपू पड़ै, दोड्यौ आवै पास ॥

(३)

सुख-दुःख दिन अर रात ज्यूं, आवै कुदरत नेम ।
ला मत हरख-विषाद मन, कर दोन्यां सूं प्रेम ॥

(४)

दुःख सुख दोन्यूं भायला, एकल जीवन डार ।
कारो-गोरो रंग पण, एकल प्राण-अधार ॥

(५)

दुःख पिघलावै प्राण नै, हिलै-मिलै वै एक ।
सुख संचै धन-सम्पदा, खैंचै भेदक रेख ॥

(६)

सुख ज्यूं चमकै बीजली, दुःख घन घटा अपार ।
सुख ज्यूं आटा में नमक, दुःख तो पारावार॥

(७)

दुख जीवन भर साथ दै, सुख छोड़ै अध बीच ।
पार उतरणो जो चहै, दुःखं सुं सुख नै खींच ॥

(८)

दुख कड़वो पण राम रो, सुख विसरावै राम ।
राम विना रूलतो फिरै, पोंचै नहीं मुकाम ॥

सी. २३५ ए, दयानन्द मार्ग तिलक नगर
जयपुर-4

□□

आधुनिक हिन्दी काव्यों में भगवान महावीर

☆ डॉ कस्तूर चन्द कासलीवाल

तीर्थंकर महावीर जैसे शलाका पुरुषो के गुण वैभव का/अभ्युदय का वर्णन करने मे अन्य छद्मस्थ मानव की क्या विसात है, गणधर जैसे चार ज्ञान के धारी तक उनके आत्म वैभव का पार पाने मे असमर्थ बताये गये हैं। तथापि, इन का यथाशक्ति वर्णन कर लेखनी धन्य हो उठती है और वह लेखन सरस्वती के भण्डार की अमूल्य निधि बन जाता है, युग युग तक मानव को मुक्त आनन्द लोक की दिशा का निर्देश करता रहता है।

—सम्पादक

विगत 50 वर्षो मे हिन्दी मे भगवान महावीर पर सबसे अधिक महाकाव्य लिखे गये। यह सयोग की बात है कि इन वर्षो मे महावीर का 2500 वा परिनिर्वाण महोत्सव वर्ष भी आ गया, जिसके कारण वीरेन्द्र कुमार जैन को अनुत्तर योगी तीर्थकर महावीर, छैल विहारी गुप्त को तीर्थकर महावीर एव रघुवीरशरण मित्र को वीरायन जैसे महाकाव्य लिखने की अन्तर्प्रेरणा प्राप्त हुई और उन्हे महावीर के जीवन को महाकाव्यो मे उतारने मे सफलता मिली। वीरेन्द्र कुमार जैन ने सस्कृत मे निवद्ध महाकवि वाण की कादम्वरी की स्टाइल पर अनुत्तर योगी तीर्थंकर महावीर की रचना कर हिन्दी गद्य साहित्य को नया रूप प्रदान किया। प्रस्तुत महाकाव्य 4 भागो मे प्रकाशित हो चुका है। वर्ष 1974 75 मे लिखे गये महाकाव्यो के अतिरिक्त सन् 1961 मे श्री अनूप शर्मा ने वर्द्धमान" नामान्तक जैसे महाकाव्य लिखने का गौरव प्राप्त किया। सन् 1961 मे कविवर श्री धन्य कुमार सुधेश ने "परम ज्योति महावीर" नामक महाकाव्य लिखकर हिन्दी महाकवियो मे अपना नाम लिखवाया। उक्त काव्यो के अतिरिक्त श्री गणेश मुनि, श्री वीरेन्द्र कुमार जैन आदि कवियो ने महावीर काव्यो की सर्जना करके जन साधारण को महावीर के जीवन को पढ़ने, समझने का सुअवसर प्रदान किया। इन सभी काव्यो से महावीर भगवान के प्रति साहित्यिक क्षेत्र मे भी श्रद्धा के भाव उत्पन्न हुए।

वैसे तो भगवान महावीर के देवोपुनीत जीवन को काव्यवद्ध करना कठिन है। प्राकृत, सस्कृत एव अपभ्रश के वड़े-बड़े आचार्यों ने भी अपनी लघुता प्रकट करते हुये लिखा है कि भगवान महावीर के जीवन को छन्दोवद्ध करने का उनका वैसा ही प्रयास है जैसे बालक द्वारा थाली के पानी मे दिखायी देने वाले चन्द्रमा को पकड़ने का प्रयास करना है। कविवर सुधेश ने भी निम्न पक्तियो मे अपनी लघुता प्रकट करते हुए ऐसा ही कुछ लिखा है-

उनके ही मन की करुणा सी उनकी यह करुण कहानी है
यह मसि से लेख्य नही, इसको लिखता कवि दृग का पानी है।

महावीर का जन्म चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ। तीर्थंकर का जन्मोत्सव देवों एवं मनुष्यों ने सबने मिलकर मनाया। चारों ओर आनन्द ही आनन्द छा गया। नृत्य गान होने लगा। स्वयं देवराज इन्द्र ने भी ताण्डव नृत्य किया। यह बड़ा दुर्लभ अवसर था जब चारों ओर हर्ष एवं प्रसन्नता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। "तीर्थंकर महावीर" काव्य में इन्द्र के ताण्डव नृत्य का बहुत सुन्दर एवं रोमांचकारी वर्णन किया गया है, जिसकी कुछ पंक्तियां निम्न प्रकार है—

नृत्य पारंगत कला प्रवीण
नृत्य में थे जब सुरपति लीन
कल्पतरू से लगते सुरराज
फूल सा लगता देव समाज
सभी रस का ताण्डव में योग
पुष्प वर्षा करते सुर लोग
अप्सरायें करती गुणगान
जयति जय महावीर भगवान

कविवर सुधेश ने ताण्डव नृत्य का वर्णन निम्न प्रकार किया है—

तदन्तर ही आरम्भ किया सुरपति ने ताण्डव नृत्य स्वयं
अवलोक जिसे हर दर्शक ने निज दृग माने कृत कृत्य स्वयं

तीर्थंकर बालक का नाम वर्धमान रखा गया। यह नाम सबकी सहमति से रखा गया था, लेकिन नाम रखने के पूर्व स्वयं वर्धमान के पिता राजा सिद्धार्थ ने निम्न प्रकार अपना प्रस्ताव रखा -

यह पुत्र गर्भ में आते ही मम कुल में वैभव कोष बढ़ा
धन धान स्वर्ण की वृद्धि हुई औ गोधन का भी कोष वढ़ा
इससे ही इसको वर्धमान कहना उपयुक्त दिखाता है।

महावीर वर्धमान का बाल्य जीवन खेल कूद में व्यतीत न होकर चिन्तन मनन में लगा रहा। इनके माता-पिता अपने पुत्र के बाल्य काल में ही चिन्तन की स्थिति देखकर स्वयं चिन्तित हो जाते। एक वार वर्धमान के सखा जव माता के पास आये और वालक के साथ खेलने की इच्छा प्रकट की तो माँ वड़ी प्रसन्न हुई और अपने पुत्र के साथ खेलने की तत्काल स्वीकृति प्रदान कर दी-

खेलो कूदो हिल मिल गाओ, एकान्त योग कर चुका वहुत।
दुनियां में उसे खींच लाओ, दुनियां से वच कर लुका वहुत।

वर्धमान वचपन से ही प्रतिभावान थे। विना पढ़े ही ज्ञान की वातें करते थे। वे ऐसी तत्व चर्चा करते कि उनके साथी एक दूसरे का मुँह देखने लगते। वे सभी मिल अपने साथी वालक महावीर से कहने लगे—

हम पढ़ते पढ़ते भी भूले, तुम विना पढ़े ही ज्ञान ग्रन्थ।
सन्मति ! तुम सरस्वती के मुख, तुम मानव के उत्थान ग्रन्थ।

तुम लेख लिखाया करो हमे, तुमं पाठ पढ़ाया करो हमे,
दाये, वाये, आगे, पीछे, तुम राह बताया करो हमे ।

महावीर युवा हो गये । विवाह की जव चर्चा चलने लगी तो उन्होंने विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया । प्रजाजनो के अनुनय विनय पर स्वीकृति नही दे सके । उन्होंने सभी को निम्न प्रकार स्पष्ट उत्तर दिया—

वर की भूपा मे मुझे नहीं देखेगा कुण्डन नगर कभी
और नही कहेगे 'प्रिय' किसी को भी मेरे ये अधर कभी ॥

रघुवीर शरण मित्र ने अपने वीरायन महाकाव्य मे विरक्ति का बहुत सुन्दर, भावपूर्ण एव प्रभावक वर्णन किया है । ऐसे प्रसग को पढ़ना आरम्भ किये पश्चात् उसे छोड़ने को मन नहीं कहता । युवा महावीर अपनी माता को विविध प्रकार से समझाते हैं कि उसे विवाह के वन्धन मे मत डालो । वे कहते हैं -

व्याह वड़ा जजाल सा, व्याह वड़ा उत्पात
वड़ी वड़ो को डस कई, सुन्दरता की घात
नारी के व्यवहार मे, तरह तरह के रूप
रूप रूप मे लुट गये, योगी, योद्धा, भूप

पिता ने युवा महावीर का राज्याभिपेक करना चाहा । शासन करने की प्रार्थना की । सिर पर राजमुकुट देखने की वर्पो की इच्छा की पूर्ति करने का अनुरोध किया । प्रजाजनो ने प्रार्थना की । माता ने अपना दु खडा रोया । लेकिन वर्धमान महावीर को राज्य शासन कभी स्वीकार नही था । उन्होने अनेक अकाट्य तर्को से राज्य शासन को मधु से लिप्त खडग् की धार वताया तथा उसे पापो की चटशाला कहा क्योंकि शासन के भीतर अन्धकार ही अन्धकार है केवल वाहर से जो उजाला दिखता है, वह सव झूठा है । इस प्रसग को कवि के शव्दो मे देखिये—

राजा वन नही मिटाया जा सकता, जनता का क्लेश कभी ।
कारण, न किसी को सच्चा सुख दे सकते राज्यादेश कभी ।
अत एव अलकृत राजमुकुट से करना तात । न शीश मुझे ।
इस कुण्डग्राम का नही अपितु, वनना जगका जगदीश मुझे ।

महावीर ने वैराग्य धारण करके घोर तपस्या की । भीपण सर्दी, गर्मी, वर्पा उनका कुछ विगाड़ नहीं सकी । शेर के दहाड़ने तथा सर्प एव दूसरे विपैले पशु-पक्षियो के उपद्रवो की ओर कभी ध्यान ही नही गया । उनकी कठोर तप साधना के सामने वड़े-वड़े ऋपि मुनियो की तपस्या फीकी लगने लगी—

मृगपति दहाड़ते रजनी मे पर दृष्टि न हटती नासा से
सम्मुख से व्याघ्र निकल जाते पर कपते न वे दुराशा से ।

वैराग्य लेने के वाद तीन दिन तक वे समाधिस्थ रहे । इस वीच कौन आया और कौन चला गया, इसका उन्हे कुछ भी ध्यान नही रहा । इसके पश्चात् उनका प्रथम आहार कूलग्राम के

नृपति के यहां हुआ। 'परम ज्योति महावीर' काव्य में प्रथम आहार की घटना का बहुत सुन्दर वर्णन हुआ है।

जब तक आहार न पूर्ण हुवा, वे पूर्णतया ही मौन रहे
संकेत मात्र तक किया नहीं, यांचा करने की कौन कहें।

महावीर ने 12 वर्ष तक कठोर साधना की। वे पूर्णतया मौन रहे। एक बार वे उज्जैन के बाहर शमशान में जाकर तपस्या करने लगे। वे ध्यानस्थ हो गये, लेकिन वहाँ स्थित रुद्र ने उनकी तपस्या की परीक्षा लेना चाहा। उसने स्वयं ने अपना विकराल रूप बना लिया। स्वयं ही शेर, चीता, अजगर, मदोन्मत्त हाथी बन गया और लगा महावीर को तपस्या से डिगाने, भयभीत करने। 'तीर्थंकर महावीर' काव्य में इस घटना का बहुत ही विस्तृत वर्णन किया गया है–

मारता था दहाड़ भीषण
प्रकम्पित था वह मरघट वन
सभी थे पशु पक्षी भयतीत
किन्तु प्रभू फिर भी शांत विनीत
ध्यान चलता ही रहा अबाध
रुद्र की पूरी हुई ना साध
वन गया था वह गज मदमत्त
मांगते दन्त मनुज का रक्त।

रुद्र ने झंझावत चलाया, दावानल से पूरे वन को जला दिया। शिकारी वन कर अपना तीर चलाने लगा। लेकिन महावीर प्रभु पर उसका कोई असर नहीं पड़ा। वे तपस्या में आत्मलीन हो गये और बाहर क्या हो रहा है, इस ओर प्रभु का ध्यान ही नहीं रहा। अन्त में वह रुद्र घवरा कर प्रभु के चरणों में आकर गिर पड़ा।

अन्त में हो कातर वल क्षीण
गिरा आ दौड़ चरण में दीन
करो रक्षा जीवन आधार,
शरण में आया तेरे द्वार।

वारह वर्ष की घोर तपस्या के पश्चात् वैशाख शुक्ला दशमी को उन्हें कैवल्य प्राप्त हो गया। वे सर्वज्ञ वन गये। भूत भविष्यत्, वर्तमान की घटनाएं उनके ज्ञान में झलकने लगी। चारों ओर भगवान महावीर के जय के नारे गूंजने लगे। उनकी धर्म सभा रूप समवशरण लगा, जिसमें मानव मात्र को ही नहीं अपितु पशु, पक्षी को भी जाने का अधिकार था। देवगण उनके समवशरण में आकर प्रभू की वाणी सुनते थे। धर्मात्मा, साधु, मुनि, धनपति, दरिद्र, पापी सभी वहाँ जाते और भगवान की वाणी को सुन कर अपना जीवन सफल वनाते थे।

ज्योतिषी सुरो ने समवशरण, इतना अभीराम लगाया था,
जिसको विलोक कर लगता, भू पर स्वर्ग उतर कर आया था।

समवशरण का देवो द्वारा निर्माण कलापूर्ण, सुन्दर एव विशाल था । कविवर छैलबिहारी गुप्त ने समवशरण का इतना विस्तृत एव सूक्ष्म वर्णन किया है, जिसका गभीर अध्ययन करके कोई भी पाठक उसकी सरचना को समझ सकता है । ऐसा लगता है, मानो कवि ने समवशरण के कभी दर्शन किये हो ।

सवके सुमध्य थे रत्नजडित सिहासन
प्रतिमा जिनेन्द्र की शोभित पूर्ण सुदर्शन
दैदीप्यमान थी रत्नो की आभा से
ज्यो प्राणहीन पाता है प्राण सुधा से

समवशरण के पश्चात् वेद वेदाग के ज्ञाता, यज्ञो के पडित गौतम ऋषि द्वारा भगवान महावीर के प्रधान गणधर बनने की ऐतिहासिक घटना है, जिसका सभी महाकवियो ने अपने-अपने काव्यो मे उल्लेख किया है । याज्ञिक कर्मकाण्ड पर महावीर की यह प्रथम विजय थी । महावीर के सभी गणधर वेदो के महान् पाठी थे और यज्ञो मे उनका पूर्ण विश्वास था । लेकिन भगवान के अलौकिक ज्ञान एव सर्वज्ञता से प्रभावित होकर वे महावीर के शिष्य वन गये और उन्ही के धर्म का प्रचार करने लगे । कवि अनूप शर्मा ने अपने काव्य वर्धमान मे इस घटना को थोड़ा मोड़ दिया है, लेकिन अन्त मे लिखा है—

प्रधान एकादश विप्र शीघ्र ही
जिनेन्द्र के उत्तम शिष्य हो गये ।

इसके पश्चात् लगातार तीस वर्ष तक भगवान महावीर ने अपने शिष्यो के साथ देश के पूर्वोत्तर प्रदेशो मे विहार करके अहिसा, सत्य, सयम, अनेकान्त एव अपरिग्रह का प्रचार प्रसार किया । इस दृष्टि से 'परम ज्योति महावीर' काव्य मे वर्णित पद्यो का रसास्वादन करने योग्य है—

सुख शाति विश्व मे ला सकता है, मात्र अहिसा धर्म स्वय ।
ओ पूर्ण अहिसा पालन से, तो क्षय हो सकते कर्म स्वय
तज सप्त व्यसन, गुण अष्ट मूल, धारण कर द्वादश वृत पालो
तप, त्याग, शील ओर सयम से, निज आत्म ज्योति को चमकालो ।

इस प्रकार हिन्दी के उपरोक्त सभी आधुनिक महाकाव्य भगवान महावीर के सदेश को जन जन तक पहुँचाने मे सहायक वने है । महावीर भगवान के अहिसा, अनेकान्त एव अपरिग्रह के सिद्धान्तो को इन महाकाव्यो के पठन-पाठन से जन साधारण तक पहुचाया जा सकता है जो वर्तमान युग की सबसे वड़ी आवश्यकता है ।

867 अमृत कलश,
वरकत नगर, किसान मार्ग, जयपुर

□ □

सप्त व्यसन' विरोध की काव्य परम्परा

☆ डा. गंगा राम गर्ग

जीव स्वभाव से अर्हन्त समान सर्व दोष मुक्त आकारण ही है। प्रासुक आहार-पान ही उसकी स्वभाव से च्युति, दुर्वलता का सूचक है, मॉस-मदिरा सेवन तो भॅयकर दुर्वलता/विकृति है। पर, विकृति की भी ऐसी गाड़ पकड़ है कि जिनकी देह में मॉस-मदिरा का एक बार विष प्रवेश कर जाता है वह उन्हें न मिले तो उनके प्राण कण्ठगत हो जाते हैं। यही सव व्यसनों की कथा है। व्यसन के कीचड़ में, खेलल में भी, एक वार पैर रख देने पर मानव अपने को अवश उसमे धँसता हुआ पाता है, साक्षात् दुर्गति होते देखकर भी स्वयं को निरूपावय अनुभव करता है।

—सम्पादक

जैन धर्म में सात व्यसनों के त्याग पर वड़ा वल दिया गया है। ये व्यसन हैं—द्यूत क्रीड़ा, मॉस भक्षण, मदिरापान, वेश्यागमन, शिकार, चोरी, और परनारी सेवन। व्यक्ति को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने की दृष्टि से चोरी, द्यूत क्रीड़ा और मदिरापान; समाज में शील की मर्यादा स्थापित करने के लिए वैश्या गमन और परनारी सेवन; पर्यावरण-संरक्षा और 'वसुधैव कुटुम्वकम्' की भावना से शिकार और माँस भक्षण; निंप्दनीय ठहराकर जैन साधकों ने लोकहित को ही प्राथमिकता दी है।

उक्त सभी व्यसन प्राचीनकाल से अद्यतन समर्थ और वैभवसम्पन्न व्यक्तियों के स्वभाव के अंग निरंतर रहें, उत्तर मध्यक-काल में सामन्तों के निरंकुश हो जाने के साथ-साथ ये दुर्गण उनके जीवन के अंग वन गये। वर्तमान लोक तंत्र में स्वछंदता के विस्तार के कारण इन दुर्गणों का अधिक सामान्यीकरण हो जाने से सामाजिक समस्या विशेप कष्टकारी हो गई है।

लोक हित को लक्ष्य मानने वाले साहित्यकारों ने निरन्तर इन दुर्गुणों के विरोध में अपना स्वर उग्रतया मुखरित रखा है। मद्यपान के विरोध में प्राचन नीतिकारों में आचार्य वसुनंदि और शुक्र के कथन अधिक तीखे हैं।

आचार्य वसुनदि के विचार से नशे में वेसुधि हुए शराही के धन को अन्य लोग छीन ले जाते है। उनकाय भी कहना है कि वह अधिक निदंनीय काम करने में भी नहीं चूकता। नीतिकार शुक्र का मानना है कि शराव के नशे में उन्मत्त कुलीन पुरुप भी अपनी माँ के साथ कुकृत्य करने का साहस कर लेता है।[2] वौद्ध धर्म के महत्वपूर्ण आचार ग्रन्थ विनयपिटक में

मैथुन, चाँदी सोने के सेवन के अतिरिक्त सुरापान को भी भिक्षुओं के लिए वर्जित कहा गया है।[3] हिन्दी सतकाव्य मे मद्यपान के विरोध के स्वर न प्राप्त कर सकने से ऐसा प्रतीत होता है कि साधारण जनता मे इसका प्रचलन अथवा कष्टप्रद पभाव कम रहा होगा। जैन कवि बनारसीदास ने शरावी की मर्यादाहीनता की स्थिति अग्नि/दाह से प्रमाणित की है।

जेसे आग पपान काठ मे, लखिय न पर लगार

मदिरापान करत मतवारो, ताहि न कछू विचार। पद12

पार्श्वदास ने शराब के वनाने मे होने वाली हिंसा की और इगित करते हुए उसे मनुष्य के स्वास्थ्य और विवेक दोनो के लिए हानिकार कहा है।

दारू मे हिसा धणी, भापी श्री जिनदेव।

ज्ञान विगाडे जीव को, देह विनासै एव। पार्श्वदास पदावली, पद 117

आचार्य वसुनन्दि के अनुसार द्यूत क्रीडा मे आसक्त मनुष्य खाने की परवाह नही करता तथा किसी काम मे उसका मन नही लगता। वह रात दिन चिन्तातुर रहता है।[4] नीतिवाक्यामृत म सगृहीत एक श्लोक (पृ 245) मे जुआरी की अविश्वसनीयता के सम्वन्ध मे कहा गया है कि उसकी पत्नी भी प्रेमपूर्वक नीवी खींचे जाने पर भी इसलिए उससे दूर भागती है कि कही वह वेचने के लिए उसके वस्त्रो को भी नही छीन ले।

सत कवीर ने परनारी गमन, मुखविरी, चुगली के साथ-साथ व्याज, रिश्वत, चोरी और जुआ जैसे सभी आर्थिक अपराधो को भगवान के दर्शन मे वाधक कहा है—

जुआ चोरी मुखविरी, व्याज घूँसपर नार।

जो चाहे दीदार को, एती वस्तु नियार। सतवानी सग्रह भाग 1 2 7 4

जैन कवि द्यानतराय ने सप्तव्यसनो की भयकरता प्रदर्शित करने के लिए लिखी गई स्वतन्त्र रचना ''व्यसन त्यागपोडशी', मे द्यूत क्रीडा को यश, सुख, पुण्य, प्रभुता, ऐश्वर्य तथा सर्वस्व नष्ट करने वाला वतलाकर स्थिति को दु खप्रद प्रमाणित किया है-

आरति अपार करे, मार साच सौं विगार

जस सुख त्रिपति नाहि, हारै पै न गाठि माँहि,

लेत है उधार देत महा दु ख रास है।

और कौन वात, तात की न इतवार,

नारि को नहि, सुहात मात हूँ न पास है। छद 6

पार्श्वदास ने समाज के हर वर्ग से वहिष्कृत हो जाने का भय दिखलाकर चोरी की निन्दा की हे। चोर को प्रतिष्ठित व्यक्ति और राजा ही दण्डित नही करते, उसके हितैपी लोग भी उसके साथ मे लज्जा महसूस करते है—

हितू मिलापी लपि करि लाजै, सुप सपनै नहि छाजै

राजा दडै लोका भडै, सज्जन पच विहडै। पद 252

द्यानतराय ने भी चोरी को विनाश का लक्षण माना है-

चोरी करि परनारी सेई, डूबे परिग्रह धारा । पद 172

बुंदेलखंडी जैन कवि देवीदास ने "चोरी" के अर्थ में व्यापकता लाते हुए किसी से अधिक सामग्री तोलने और उसे कम देने तथा स्वर्ण आदि धातुओं, रस और गंध युक्त द्रव पदार्थों में मिलावट को दोषपूर्ण ठहराया है । मूर्खतापूर्ण उक्तियाँ कहना, दूसरे को कुशिक्षा देना अथवा झूठी गवाही देना या किसी से प्रवंचनकारी वचन कहना निर्यंच गति का कारण मानते हुए इन दोषों को वर्जनीय ठहराया है । संस्कृत के स्मृति साहित्य और बड़े-बड़े नीति ग्रंथों में अनुपलब्ध दो सौ पचास वर्ष पूर्व देवीदास द्वारा कही गई ये उक्तियाँ आज के व्यवसायिक, शैक्षणिक और न्यायिक क्षेत्र में बड़ी महत्वपूर्ण आदर्श बन जाती है ।

धरत गति तिरजंच, जे मरि धरत गति तिरंजच

धातु न जु रस, गंध, सुद्ध असुद्ध देत षिभंच ।

तौल मांप सुदेत घटि बढ़ी, लेत भूलि निबंच ।

भरत झूठी साषि, कुवचन कहतु जुत परपंच ।

क्रिया चोर कुधर्म उपदेसत, कुधी उकतंच ।

परमानंद विलास पद -26

अमरीका, फ्रान्स आदि तथाकथित सभ्य और विकसित देशों में "काम" का अमर्यादित रूप वेश्या प्रेम और परनारी गमन के रूप में प्राचीन काल से प्रचलित है । अब यह वहॉ के समाज के लिए एक वड़ी समस्या बनने लगा है । भारतीय समाज में "काम" की मर्यादा एक वड़ी सांस्कृतिक धरोहर है । प्राचीन नीतिकार शुक्र, गुरू, हारीत सभी ने वेश्या प्रेम वर्जित कहा है । गुरु के अनुसार शील और परिजनों से परित्यक्त होकर ही वेश्या की अभिलापा संतुष्ट की जा सकती है ।[5]हारीत की दृष्टि में परनारी और वेश्या प्रेम दोनों से सुख और धन की क्षति होती है ।[6] वसुनंदि ने वेश्या को सर्वस्व हरण कर चर्मावशेष वनाकर छोड़ देने वाली कहा है।[7] संत कवीर ने वेश्या के प्रेम की अस्थिरता के तो कई संकेत दिए किन्तु उससे उत्पन्न पुत्र का जीवन भर समाज-वहिप्कार से पीड़ित रहना उन्हें अधिक वेदना पहुँचाता है—

"गनिका कौ पूत पिता कासौ कहैं ।" कवीर ग्रन्थावली, पृ. । 28 । पद126

जैन कवि देवीदास ने मदिरा पान के अतिरिक्त वेश्या प्रेम को भी अपयश का कारण वतलाया है-

खाइ मदिरा पान अति घूमत सुमति हरि है ।

रमत तन गनिका सुजस, जग मांहि डरी मरि है ।

परमानन्द विलास प-27

प्राचीन आचार्यों में ऋषिपुत्रक ने परनारी गमन का दुष्परिणाम दरिद्रता एवं अपयश कहा है ।[8] गौतम ऋषि ने इस दोप को दुःख, वंधन और मरण समझ कर वर्जित कहा है ।[9] आचार्य वसुनंदि ने तो परनारी की अभिलापा मात्र को दोपपूर्ण मानकर इस दोष की भँयकरता स्वीकार की है ।[10]

परधन हरण और परनारी गमन के विरोध मे गुरुनानक और गुरु तेगवहादुर का उक्तियाँ डॉ मोतीनाथ मिश्र ने अपने शोध-प्रवन्ध "सत साहित्य मे प्रतिविम्वित समाज" (पृष्ठ -351_मे उद्धृत की है । सत नामदेव भी इन दोनो दोपो को त्याग देने वाले को भगवान के समीप पाते हैं-

परधन परदारा न हरी, ताके निकट वसहि नरहरी । सक्षिप्त सुधासार पृष्ठ -288

सत कवीर परनारी प्रेम को भावात्मक स्तर पर आनन्ददायी न मानकर सर्वनाशक मानते है—

परनारी कै राचणै, औगुण है गुण नाहि ।

पार समुद मै मछला, केता वहि वहि जाहि । कवीर वचनामृत पृ 114, 127

रीतिकाल के सामन्ती शासन मे वढ़ती हुई परकीया प्रेम की प्रवृति की भर्त्सना करते हुए सद्‌गृहस्थ वनने की प्रेरणा जैन कवि वुधजन ने प्रेरक स्वरो मे दी है-

डगर-डगर डीले है यो ही, आव आपनी पीरी । पद -23

देवी दास ने लौकिक और अलौकिक दोनो ही सुखो से वचित होने का हेतु परकीया प्रेम वतलाय है—

सेवे पर कामिनी जे जन धृक है ।

विघन करत भारी, कुल को लगावे गारी, टुक सुप हेत मूढ़ परत भटकन है ।

सुरग मुकति दोई, तिनि कौ कठिन सोई, सुगत सहज गति नियरे नरक है ।

सील सुतरू पीवे, विप कौ विरप वीवे, जाके दुप के सुकवि कौन विवरक है । पद-40

पार्श्वदास की दृष्टि मे परनारी स्पर्श करने अथवा देखने से ही नही, स्मरण करने मात्र से व्यक्ति का विनाश कर देती है । अत यह मद्यपान से अधिक भैंयकर है—

मदिरा पीये होत बावरे, लख्या सपरस्या नाई ।

लख्या सपरस्याँ सुमरन कीया, या मारै सहजाई । पार्श्व पदावली पद 155

पर्यावरण सरक्षा की दृष्टि से विश्व के अनेक देशो मे जीव हिसा का विरोध होने लगा है । किन्तु प्राचीन भारत मे वसुधैव कुटुम्वकम् की भावना से ही जीवहिंसा अथवा शिकार को वर्जित ठहराया गया था । व्यास के अनुसार निरपराध प्राणियो के वध से समस्त पुण्य क्रियाये क्षीण हो जाती हैं ।[12]

सत रैदास जीव हिसा को यमपुर अथवा नरक का मार्ग वतलाते हैं

जिभ्या कारन खून कीये, वॉधि जमपुर चले (शव्द, 28)

सत कवीर को माँस भक्षण से इतनी घृणा है कि माँस भक्षक को राक्षस मानकर वह उसका साथ भी पसद नही करते-

माँस अहारी मानव, परतक्ष राक्षस अग ।

ताकि संगत मत करो, परत भजन में भंग ॥

(संत बानी संग्रह पृ.61)

भीम के द्वारा युद्ध में पछाडे गए बकुराय के उदाहरण द्वारा माँस-भक्षण से अधिक शक्तिशाली न हो सकने की स्थिति प्रतिपादित की गई । देवीदास की दृष्टि में जिह्वा के स्वाद के लिए माँस भक्षण नरक का पंथ ही है ।

भषे माँस जिह्व जीभ के स्वाद काजै, सु जे मूढ़ पापी चले नर्क जै है ।

नहीं सुख है लेस किचक जहाँ घोर, संकट महा कष्ट करिकै सहै ।

पछारे सु बकुराय दै भिम्म नै, माँस के पाप तैं देह दुर्गति धरे है ।

सघन पाप के भरसुए मैं बषानै सु ते पाप लोगनि खिलौना करै हैं ।

संस्कृत के विभिन्न नीति ग्रन्थों की सप्त व्यसन की निन्दा हिन्दी के संतकाव्य में भी रही । रीतिकालीन जैन कवियों ने अपने पदों- कवित्त, छप्पाय आदि छंदों के माध्यम से सप्त व्यासन के विरोध को निरन्तर जारी रखा । लम्बी काव्य परम्परा में समान विचारधारा के अनेक उद्धरण देखकर भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि की एकलक्ष्यता प्रकट होती है ।

श्रमण विचारधारा में प्रमुख्ता से प्रतिपादित नैतिक दृष्टि का अन्य मतावलम्बियों में उपलब्ध होना श्रमण परम्परा की प्रभावकता को भी प्रमाणित करता है ।

उपाचार्य

राजकीय महाविद्यालय, स. माधोपुर

❑ ❑

1- वसुनंदि श्रावकाचार छंद, 73,10

2. नीतिवाक्यामृतम् पृ247

3- विनयपिटक पृ-549/59

4- वसुनंदि श्रावकाचार, छंद 68

5.-6 नीति वाक्यामृतम् पृ-353 एवं 497

7- ढूँढारप्रदेश की साहित्यिक धारायें पाण्डुलिपि में उद्भूत पृ-288

8-9 नीतिवाक्यामृतम् पृ-56 एवं 59

10- वसुनंदि श्रावकाचार छंद-112

11- कबीर ग्रंथावाली पृ-39/ सभी -6

12 नीतिवाक्यामृतम् पृ. 18-

13- उत्तरायण छंद 6-

'तेरा तुझको अर्पण'

☆ ज्ञानचन्द बिल्टीवाला

या तो हम आत्मा के लोक मे जीते हैं या अनात्मा के। इन दो के सिवा तीसरा कोई विकल्प हमारे सामने नही है। इन्ही मे हमे चुनाव करना है। जो अनात्म लोक मे जीता है वह मिथ्या दृष्टि है, जो आत्मा के लोक मे जीता है वह सम्यग्दृष्टि है। मिथ्यादृष्टि अनात्मा से प्राप्त सामग्री अनात्मा को चढ़ा रहा है और सम्यग्दृष्टि आत्मा से प्राप्त अर्घ आत्मा को चढ़ाता है। अपने दाता से प्राप्त करना और दाता की वेदी पर चढ़ा देना यह ही सब जीवो की नियति है। इसका कोई अपवाद नही है। जड़ पदार्थ भी यह ही किये जा रहे हैं। वे अपने द्रव्य से पर्याय प्राप्त कर द्रव्य को समर्पित किये जा रहे हैं। उनके पास आत्मा-अनात्मा का विकल्प नही है। यह विकल्प जीवो के पास ही है। अनादि से जीव कर्मबद्ध है। कर्मोदय से होने वाले क्रोध, मान, चिन्ता, भय आदि कषाय, भूख प्यास आदि दोष अनात्मा हैं। ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्यमय तथा भूख-प्यास-रोग आदि दोषो से सर्वथा मुक्त आत्मा है। वर्तमान मे दोनो ही लोक, एक भाग अनात्मा का और बहुभाग आत्मा का, मानव के सम्मुख है। चुनाव उसका है कि वह किससे सामग्री प्राप्त करता है और किसे चढ़ाता है।

सम्यग्दृष्टि मानव आत्मा की शरण छोड़कर अनात्मा की शरण नही जाता, वह दाता से मुँह मोड़कर अदाता-कुदाता रूप अनात्मा से कुछ भी नही लेता। वर्तमान मे जघन्यता के स्तर पर जीते भूख-प्यास को शात करने हेतु भोजन-पानी के ग्रहण को भी वह त्याग देना चाहता है, आत्मा के उन ऊर्ध्व लोको मे वह जीना चाहता है जहाँ भूख-प्यास आदि दोषो के प्रपच नहीं हैं, क्रोधादि की तो बात ही क्या।

आत्म-वेद वेदो का कोद्धा, मुसलमानो का खुदा एव जैनो का जिनेन्द्र है। उसके गुण वैभव का पार कोई छद्मस्थ नही पा सकता। उसका घर अच्छेद्य वज्र प्रदेशो का बना है। उसके ज्ञान साम्राज्य मे तीन लोक तीन काल टापू जैसे हैं। तीन लोक-तीन काल की हर धड़कन, हर स्फुरण से आत्मा के लोक मे सम्यक् ही ग्रहण होता है और उससे उसके प्रदेश-आगन मे प्रतिक्षण अमृत वर्षा होती है। जो अनन्य-शरण हो आत्मा के लोक मे प्रवेश करता है। उस पर तीन लोक-तीन काल चारो ओर से अमृत वर्षा करते हैं, अकेले उस पर, और उसके पोर-पोर को आनन्द से भिगो देते हैं। अनात्मा के लोक मे इनकी उल्टी रीत है। जो इस अनात्मा की शरण ग्रहण करता है उस पर हर क्षेत्र और काल मे चारो ओर से पीड़ा दायक शूल बरसते हैं। आत्मा के लोक मे जीने वाला सम्यग्दृष्टि क्षण-क्षण नूतन अनुभूति मणियो को आत्म लोक मे अपने हर योग और उपयोग के द्वार से प्राप्त करता है और उन्हे अपने खुदा, अपने दाता आत्मा को समर्पित कर गद्‌गद् होता है।

□□

तृतीय खण्ड

इतिहास एवं पुरातत्त्व

मंगल कामना सहित

कपूरचन्द जैन

वादीकुई (राजस्थान)
फोन 22554

डीलर

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लि

प्रो. मातादीन अग्रवाल

तेल बचाओ

देश की उन्नति में
हाथ बटाओ

माथुरी शिल्प में संभव जिन

☆ *डॉ. शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी*
सहायक निदेशक पुरातत्व
लखनऊ संग्रहालय

ई. सन् 126 में प्रतिष्ठित संभव जिन की मथुरा से प्राप्त प्रतिमा के, खंडित रूप में ही सही, दर्शन कराके रस्तोगी जी ने तीर्थकरों की श्रमण परम्परा को ही नही, मानव सभ्यता को कुछ हजार, लाख वर्षो की सीमा में बाँधने के भ्रम पर प्रहार किया है। भगवान संभव नाथ तो असंख्यात वर्ष पूर्व इस धरा पर अवतीर्ण हुए थे ।

—सम्पादक

जैन धर्म के चौबीस तीर्थकरों में 'संभव' तीसरे तीर्थकर हैं । 'तिलोय पण्णती' में यतिवृषभ के अनुसार इनके जननी-जनक श्रावस्ती की राज्ञी सुषेणा व जितारि थे । जैन ग्रन्थों में वर्णन है कि पिता के राज्य में ताउन विकराल रूप से त्राहि-त्राहि मचाए था । जव इनके जनक ने इनके जन्म की सूचना सुनी तो सोचा कि संभव है इस बालक के जन्म से अच्छा समय आये । इसीलिए इनका नाम संभव पड़ गया ।[1]

राजपद के उपभोग के वाद 'सम्भव' ने सहस्त्राम्रवन में दीक्षा ली । 14 वर्ष कठोर तप के वाद श्रावस्ती नगर में शालवृक्ष के नीचे संभव को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ । ये भी अन्य उन्नीस तीर्थकरों की भाँति सम्मेद शिखर, विहार में निर्वाण अर्थात् मोक्षगामी हुए ।

इनकी मूर्तियाँ उड़ीसा, नवमुनि, वारभुजी एवं त्रिशूला गुफाओं में ध्यानस्थ उत्कीर्णित हैं।[2] गुजरात, राजस्थान के जैन मंदिरों व वंगाल में इनकी कोई भी प्रतिमा अव तक उपलब्ध नहीं हुई है ।[3]

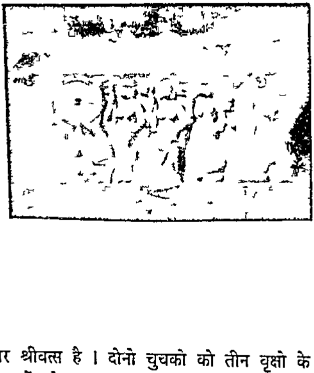
उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के क्षेत्र देवगढ़, विजनौर तथा खजुराहो में संभवनाथ की मूर्तियाँ मिली है,[4] जिसकी आसन चौकी पर इनका नाम खुदा है ।

---

1. यद्‌वगर्भगतेऽस्मिन् घूते राज्ञा जननीनजितेत्यजिशसुखमवत्यस्मिन्स्तुतेशम्भवः । यद्‌वागर्भगतेप्यस्मिन्नभ्यधिकायस्य सम्भवात् सम्भवोपि ।। भट्टाचार्य, वी. सी. जै. आइ. पृ. 39, दि. सं. दिल्ली 1974 स्टीवेंसन एस-हार्ट ऑफ जैनिज्म, पृ. 5 ।
2. कुरेशी, मुहम्मद हमीद 'राजगिरि' पृ. 28 दिल्ली 1970
3. तिवारी, मारुति नन्दन प्रसाद, जैनप्रतिमा विज्ञान, पृ. 97 वाराणसी 1981 ।
4. वाजपेयी के. डी., पार्श्वनाथ किले के अवशेष, चन्दाबाई अभि. ग्र पृ. 359 आरा 1954

इन पक्तियो के लेखक का ज्ञात हुआ है कि जैन समाज का श्रावस्ती के जीर्ण सभवनाथ मदिर का जीर्णोद्धार करवाकर आगामी वर्ष मे वही प्राप्त सभव प्रतिमा की प्रतिस्थापना भव्य समारोह पूर्वक करने का विचार है ।





भारत के हृदस्थल उत्तर प्रदेश के प्राचीनतम एव विश्व-विश्रुत स्थल राज्य सग्रहालय मे जैन मूर्तियो के मकलन की अक्षय-पूर्णिमा है । किन्तु सभवनाथ की सग्रह म मात्र तीन प्रतिमाएँ हैं । दो मूर्तियाँ मध्यकाल अर्थात् 9 10 व 12-13वीं शती की क्रमश श्रावस्ती व मैहर मध्य प्रदेश की है ।[5] ये दोनो ही खड्गासन मे है ।

चौमुखी, पचतीर्थों या चौवीसी किसी मे भी इनका मूलनायक के रूप मे अकन नही पाते है । किन्तु माथुरी कला अर्थात् लाल चितीदार पत्थर मे घढ़ी सभव नाथ की मूर्ति कई दृष्टियो से महत्व पूर्ण है ।[6] सभवनाथ को पद्मासनस्थ-ध्यानलीन दर्शाया गया है। तीर्थंकर को दो सिहोयुत सिहासन पर आसीन किया गया है। दुर्भाग्य से इन की वाईं भुजा ओर शिर अनुपलव्ध हैं । वक्षस्थल पर श्रीवत्स है । दोनो चुचको को तीन वृक्षो के द्वारा ओर नाभि को गभीर तथा हथेली व तलुओं को चक्राकन युत वनाया गया है । चरण चौकी पर की ऊपर कोर व नीचे की कोर पर कुषाण ब्राह्मी मे क्रमश दो-दो पक्तियो का लेख उत्कीर्ण किया गया है । दोनो कोनो पर

---

5 रा स स जे 885 ओ 118 । (राज्य सग्रहालय सख्यक)

6 रा स स जे 19 आकार 60 x 41 से मी । देखिए लेखक का अप्रकाशित शोध प्रवध, राज्य सग्रहालय की जैन प्रतिमाए लख वि वि 1988 (एक प्रतिमा शास्त्रीय अध्ययन) पृ 121, चि 22 फलक

पृथक दिशा की ओर निहारते एक-एक सिंह बने हैं। मध्य में त्रिरत्न अर्थात् ऊपर चक्रमध्य में नन्दीपाद व नीचे दो शंखों के बीच वृत्ताकार में पुष्प बना है । ठीक ऐसा ही चिह्न सुव्रत तीर्थकरकी प्रतिमा की चरण चौकी पर भी दृष्टिगोचर होता है ।[7] त्रिरत्न बौद्ध[8] एवं जैन[9] दोनों ही धर्मों में महिमा मंडित हैं । यहां पादपीठ पर जो चार पंक्तियों में लेख है इसकी भाषा संस्कृत है। वैसे अन्य चरण चौकियों लेखों की भाषा प्राकृत अर्थात् अपभ्रंश मिलती है । प्रथम पंक्ति में 'हुविष्कस्यसंवत्सर 48 है । अर्थात् कनिष्क बहुमान्य सन् 78 को आधार मानते हैं तो यह प्रतिमा 48 + 78 = 126 ई. की मूर्ति है

चरणा चौकी की चौथी पंक्ति के कुछ अक्षर ही बचे हैं; लेकिन तीसरी पंक्ति सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी पंक्ति में संभवस्य प्रतिमा......अर्थात् संभव की प्रतिमा अभिलिखित पाते हैं ।

अस्तु, सन् 126 ई. की संभव नाथ तीसरे तीर्थकर की यह ज्ञात सर्वप्राचीन प्रतिमा कंकाली टीला, मथुरा उत्तर प्रदेश से प्राप्त है । अब से एक सौ पाँच अर्थात् 1888 ई. में लखनऊ संग्रहालय के जर्मन अध्यक्ष श्री ए. फ्यूहरर द्वारा कंकाली टीले के उत्खनन में उपलब्ध विपुल जैन मूर्तियों के साथ इसे भी लाया गया था । जहाँ तक मुझे ज्ञात है सर्वप्रथम यह सचित्र प्रकाशित भी हो रही है ।

'सर्वत्र देव का ध्यान करने वाला ध्यानी अन्य शरण से रहित हो, साक्षात् उसी में संलीन मन जिसका ऐसा हो, तन्मयता को पाकर, उसी स्वरूप को प्राप्त होता है ।[29/32] उस सर्वज्ञ देव के ध्यान में अभ्यास करने के प्रभाव से निश्चल हुए योगी गण सर्व अवस्थाओं में उसी परमेष्ठी को देखता है ।[29/36] योगी उस सर्वज्ञ देव परमज्योति को आलंवन वनाकर उसके गुणों में रंजायमान होता हुआ मन में विक्षेप रहित होकर उसी स्वरूप को प्राप्त करता है ।[29/37] इस प्रकार उस सर्वज्ञ देव की भावना से उत्पन्न हुए आनंद रूप अमृत के वेग से आनंद रूप हुआ मुनि स्वप्नादि अवस्थाओं में भी ध्यान से च्युत नहीं होता है ।[29/38] जव अभ्यास के वश से उस मुनि के उस सर्वज्ञ के स्वरूप से तन्मयता उत्पन्न होती है उस समय वह मुनि अपने असर्वज्ञ आत्मा को सर्वज्ञ स्वरूप देखता है।[29/42] जिस जिस भाव से यह यंत्रवाहक (जीव) जुड़ता है उस उस भाव से तन्मयता को प्राप्त होता है-जैसे निर्मल स्फटिक मणि जिस वर्ण से युक्त होता है वैसा ही वर्ण स्वरूप हो जाता है।[29/43-1] भव्यत्व भाव जीवो के साक्षात् मुक्ति का कारण है । भव्य के निःसन्देह सर्वज्ञता होती ही है ।[29/44]

—आ. शुभचन्द्र कृत ज्ञानार्णव से

---

7 रा. सं. सं. जे-20

8. बौद्धमतानुसार बुद्ध, धर्म एवं संघ ।

9. सम्यग्दर्शन बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं ।
अर्थात् निर्दोपसम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का समन्वय ही रत्न त्रय है ।
देखिये । मङ्गलाष्टकम् श्लोक २, श्री स्तोत्र संग्रह सार्थ, जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता

आचार्य विद्यासागर :
जिन्हें बुन्देलखण्ड रास आ गया है

☆ *डॉ स्नेह रानी जैन*

प्रात स्मरणीय आचार्य परमेष्ठी श्री विद्यासागर के चरणो का स्पर्श पाने का बुन्देल खण्ड को विशेष सौभाग्य प्राप्त हो रहा है । धन्य है वह प्रदेश और सौभाग्यशाली है वहाँ की जनता । राजस्थान को गर्व है कि सन्त श्रेष्ठ की मुनि दीक्षा अजमेर मे और आचार्य पद ग्रहण नसीराबाद मे हुआ था । विदुषी लेखिका के द्वारा सुललित, भाव भीनी भाषा मे प्रस्तुत किये गये विविध शब्द चित्रो से पाठक को आचार्य श्री के प्रत्यक्षवत् दर्शन प्राप्त हो जाते हैं ।

—सम्पादक

श्रद्धायुक्त हृदय से गृहिणियाँ 'चौको' मे 'आहारो' की व्यवस्था कर रही थी । उधर जिसे जितने बच्चे पकड़ मे आये, अपने-अपने साथ ले कर गाँवो से ट्रेक्टर-ट्रॉलियो मे आना उनका लगातार बर्फीली सुबह से ही चालू था । मन्दिर की छतो और प्रागण मे जगह नही बची थी । पुरुष और युवा-वर्ग किसी तरह रास्ता बनाते मन्दिर के अदर आते दिखता और फिर कुछ देर इन्तजार के बाद मन्दिर के बाहर बैठ टकटकी लगाये मन्दिर के द्वार को ताक रहा था कि कही साधुओं का 'गमन' (ग्राम से प्रस्थान') तो नही ? प्रात की गुरुभक्ति के बाद आध्यात्मिक चर्चाये भीतर चल रही थी । कुछ विद्वान् और प्रतिष्ठित समाजसेवी साधुओं के चरणो मे बैठकर चर्चा का आनन्द ले रहे थे । दो साधु शौच के लिए पिच्छी-कमण्डलु लिए बाहर निकले तो जनता मे बैचेनी छा गयी । हा ! गमन हो रहा है !! किन्तु जब वे साधु लौट कर आ गए तो सन्तोष की साँसे-सी लौट आयी । औरते, जो यही मन्दिर मे बैठी थी उठ-उठ कर अपने घरो की ओर भागी आहारो की व्यवस्था करनी थी न । आखिर उस दिन गमन नही हुआ । इक्के-दुक्के साधु देव-दर्शन हेतु वेदियो की ओर आते-जाते रहे ।

लगभग सवा-दस बजे साधु आहारो हेतु उठे । शुद्धि ली और 'हे स्वामी ! नमोस्तु-3 का वातावरण हरेक गली मे गूँज उठा । कलशो पर कलश, कलश-पर-नारियल, फल, सुपारी आदि लिये श्रावक जहाँ-तहाँ से साधुओं को पड़गाहन हेतु आह्वान थे। साधु पडग भी गये । और आहार भी निपट गये । लोग अपने-अपने आहारो मे जुट गये । मन्दिर मे ही मुखचर्चा सुनी गयी कि 'दो बजे प्रवचन होगे' और बस पुरुष बातो ही बातो मे पाण्डाल बनाने चले । अभी बारह ही बजे थे अत सामायिक शुरु हो गयी । इधर औरते

बर्तन-चौकों में जुट गयीं, उधर पुरुष मचान जुटाने लगे, दरियाँ बिछने लगीं, रस्से बंधने लगे। युवकों ने अपनी-अपनी कमीज-कुर्तों पर गर्वसे 'स्व-रचित' पीले-पीले बिल्ले सजा लिये और अब पाण्डाल भी जल्दी-जल्दी से भरा जा रहा था..........औरतों, बच्चों, पुरुषों से।

कुछ लोग दरियों पर, कुछ दरियों से भी बाहर, जिसे जहाँ जगह मिली वह वहीं समाता जा रहा था। दो बजते-बजते पांडाल नर-नारियों, बालकों से खचाखच भर चुका था। कोई सोच नहीं सकता कि बगैर किसी प्रचार-प्रसार के इतनी भारी संख्या में, इतनी सारी जनता 'टड़ा' (केसली-जिला सागर (म. प्र.) जैसे गाँव में कहाँ से आ गयी और कैसे व्यवस्थित हो गयीं। अचानक बाजों की आवाज गूँजी और साधु-समूह को लिये जनता का खासा हुजूम पाण्डाल की ओर आ पहुँचा। बैठे जन-समूह को घेरे लगभग उतना ही जन-समूह पाण्डाल के बाहर खड़ा आतुरता से प्रवचनों की प्रतीक्षा कर रहा था। साधुगण बनाये गये मंच पर आसीन थे। जैसे ही निवेदन के बाद मंगलाचरण के स्वर उठे, उद्‌बोधन प्राप्ति हेतु पाण्डाल में निःस्तब्धता छा गयी जैसे कि साँसें भी रुक गयी हों.........। जादू-सा छा गया था वातावरण में, सारी ऑखें उस वक्ता के चेहरे पर आ थमीं थीं।

दमकता-सुनहरा-गौर वर्ण, गंभीर मुस्कराहट से-प्रदीप्त वह तेजोपुंज-सा केश विहीन चेहरा, जो शायद2-4 दिवस पहले ही केश-लुंचित हुआ था, गहरी भारी आवाज, बड़ी-बड़ी झुकी ऑखें जिनकी कच्चे नारियल सी धवल सफेदी में गहरी काली पुतलियाँ आत्मा को आर-पार पढ़ लेने में सक्षम लगती हैं। बाजू में, कुछ नीचे मंच पर एक लंगोटी-धारी ऐलकों की कतार, जिसके पीछे उत्तरीय और लंगोटी-धारी क्षुल्लकों की कतार। शेष फिर नीचे श्वेत वस्त्रीय ब्रह्मचारीगण। यही था उन यतियों का संघ। सभी की नासादृष्टि, स्वयं-संयमित आकृतियॉ, तेजोमय, विचारलीन चेहरे। यही उस दिगम्बर जैनाचार्य विद्यासागर मुनिमहाराज का संघ था, जो पूरे एक बारह वर्षीय युग से भी अधिक काल से बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक माटी को महकाता, गॉव-गॉव पदयात्रा करके सोये मानव-समाज को उसके आध्यात्मिक गौरवपूर्ण ऐतिहासिक-अहिंसा-पाठों को सुना-सुनाकर जगा रहा है, माँ के दुलार-सा दुलराता!

संपूर्ण पाण्डाल में एकाएक किलकारियॉ सी तुमुक उठी। कारण था वक्ता का 'ऊँसई-ऊँसई' कह देना। हमेशा की तरह आज भी प्रवचन के दौरान पर्याय की गंभीर विवेचना चल रही थी। 'जो जन्मता है वह मरता अवश्यमेव है; क्योंकि वह पुद्‌गल या जड़ की 'पर्याय' है—'पर्याय' का जन्म और मरण है। आत्मा न जन्मता है—न ही मरता। वह शाश्वत है; किन्तु मलकर्मों से ढँका वह, संसारी बना बगैर पुरूषार्थ किये अनुभव में नहीं आ सकता.....।' और संपूर्ण सभा गहरे-गहरे डूब उतर कर अध्यात्मरस ले रही थी कि विसाय मुड़ गया और अचानक उसी कर्नाटकी मुख से उच्चरित बुन्देलखण्डी के शव्दोद्‌गार सभी को बेहद मीठे लगे और समां वदल गया। बुन्देलखण्डी भूमि पर अपनी ही वोली के शव्द कानों से आत्मा तक वसी खुशी की फुहार फैला गये। प्रसंग चल पड़ा 'गमन का' आने और जाने का।

जेसीनगर से टड़ा तक की 20-25 कि.मी. लम्वी पहाड़ों-वनों से होती पैदल-यात्रा में मुझे तो 10 किलोमीटर चलते-चलते ही भारी कठिनाई लगने लगी। मैं वेहद पिछड़ गयी और

हार कर मैंने तो पीछे आ रहे एक ट्रेक्टर-ट्रॉली का सहारा लिया, किन्तु साधु-सघ ने 4 घण्टा म ही उस मार्ग को पूरा कर लिया । यो तो आचार्य जी ने कभी-कभी तो प्रतिदिन 40-45 किलोमीटर के हिसाव से भी पदयात्रा की है, किन्तु यह रास्ता वेहद खराव, कच्चा, पहाड़ी और ऊवड़-खावड़ भी था । आचार्य श्री सुना रहे थे कि "वह रास्ता वेहद दुरूह सा लगता था पेर साथ नही दे पा रहे थे मैंने सोचा आज पहुँचना नही हो सकेगा टड़ा परन्तु साथ चल रहे युवको मे उत्साह देख मैं चलते चला आया ' वस अव इतईं तो है—पास मेई थोडई दूर रह गओ है' कहते वे आगे वढ़ रहे थे सो हम भी ढुलकते ढुलकते चले आये । सास-वहु की टोरिया पैसे । कहीं पाँव पड़े तो कही हम पड़े । और हमे एक कहानी याद आ गयी कि ऐसा ही वह घना जगल रहा होगा जहाँ चलते चलते भूख का समय हो गया । घना जगल । राम, लक्ष्मण, आर सीता तीनो तीन दिशाओं मे चले गय कि तोड़ेगे नही जो भी पके फल पड़े मिलेगे उन्ही मे पेट भरेगे और इकट्ठा करगे । जव तीना लोट कर आ गये तव एक ने दूसरे से पूछा क्यो तुमने कुछ खाया ? कुछ मिला या नही ? हॉ, खाया न खूव भरपेट खाया । आज तो खूव ही अच्छे खूव-खूव अच्छे मीठे फल मिले ।' 'अच्छा ! क्या खाया ? मैंने भी खूवई मीठे फल भरपेट खाये ।' क्या थे ? दिखलाइये मुझे भी । 'ये ही तो थे देखो न ! सीता SSS फल ओर तुम दिखाओ कि तुमने क्या खाया था ? मैंने ? ओ! मैंने तो ये मीठे-मीठे स्वादिष्ट रामफल खाये थे ।' ओह हो । म सवसे फायदे मे रहा । मैंने दोनो ही फल खाये रामफल भी ओर सीताफ्ल भी ।' चटक कर लक्ष्मण ने कहा । सीता ने पूछा—'सच ? के ऊँसई, ऊँसई ? ता लक्ष्मण ने चट से फल दिखला दिये ओर म दावे से कह सकता हूँ कि भवनो मे भी उन्हे ऐसा सुख मिलना असभव होगा ।' ओर सारा जन-समूह विभोर हो उठा। इस सुन्दर प्रसग की भावपगी वुन्देलखण्डी अभिव्यक्ति पर ।

आचाय विद्यासागर अपने-आपको वुन्देलखण्डी ही पाते हे । सागर विश्वविद्यालय वुन्देलखण्ड पीठ से प्रकाशित 'ईसुरी' के तीन अको मे प्रकाशित वुन्देलखण्डी सवादो को उन्होन वड़े ही चाव मे स्वर ओर लय सहित रस ले-लेकर पढ़ा आर पसद भी किया । हिन्दी के आदि-ग्रन्थो मे इस भापा का काफी उपयोग दिखता हे, क्योंकि इसमे शोरसेनी प्राकृत (जेन प्राकृत) के अनेक शव्द ह । आचार्य श्री ने छह भापाओं का उपयोग सहजता से उनके अपने प्रवचनो आर माहित्य मे तो किया ही है, वुन्देलखण्डी का भी वे काफी उपयोग करते ह ।

वेलगाम जिला, कर्नाटक प्रान्त के सदलगा ग्राम मे 10 अक्टूवर, 1946 को पिता श्री मल्लप्पाजी अष्टगे एव उनकी पत्नी श्रीमती श्रीमतिजी को द्वितीय सन्तान के रूप मे रात्रि के 11 वजे एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई थी जिसका नाम उन्होंने 'विद्याधर' रखा । इस वालक के गर्भ मे रहते हुए ही माता का तरह-तरह के शुभ स्वप्न आते जिनका सकेत किसी अनोखी भव्य आत्मा का ही आगमन लगाया गया था । माता-पिता दोनो ही धार्मिक सस्कारो के थे, अत वह गभवती माँ अक्सर आस-पास क मन्दिरो क्षेत्रा के दर्शन करने चली जाती । शरदपूर्णिमा की रात एक ज्योतिर्पुज का उन्होने जन्म दिया था । इसीलिये वह वालक वचपन से ही शान्तवृत्ति आर आध्यात्मिक रुचि वाला हुआ ।

पाँच वर्ष की आयु में उसने प्राइमरी की शिक्षा शुरू की। जल्दी ही संस्कृत के अनेक सूत्र-पाठ उसने कण्ठस्थ कर लिये। मात्र 9 वर्ष की उम्र में वह बालक दिगम्बर मुनि आचार्य श्री शान्तिसागर जी के प्रवचनों से प्रभावित हो एक चिन्तक बन गया। गाँव के बाहर की वावड़ी में बैठा-बैठा वह सूत्र पढ़ता, या चिन्तन करता। छोटे भाई-बहनों के लिए वह एक गरिमामय मार्ग-दर्शक तो था ही, दुलराने, खाना बना कर खिलाने वाली माँ भी और अनुशासन रखने वाला दूरदृष्टि पिता भी। कुशाग्र बुद्धि ऐसा कि कक्षा में हरदम प्रथम उत्तीर्ण। करुणा के सागर और निर्भीक माता-पिता ने उसके लक्षण देख बचपन में ही उसका विवाह कर देने की ठानी तो वह बालक 9 वीं कक्षा पास होते होते 14 वर्ष की वय में ही ब्रह्मचर्य व्रत ले बैठा और पहुँच गया आचार्य देशभूषण जी के चरणों में। उसने ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर लिया तो अब मन घर से उसका उचटने लगा। एक दिन मौका पाकर वह पैदल ही घर से आगे वढ़ लिया। सुन रखा था कि जयपुर के निकट वृद्ध मुनि ज्ञानसागर जी के वारे में। गाँव को छू कर जाने वाली बस इशारा दे कर रोकी और पकड़ी। फिर ट्रेन में बैठकर बम्बई आ गया। अपार जन समूह में एक अनजान एकाकी कन्नड़ भाषी जिसे न तो हिन्दी का ज्ञान था, न ही इंग्लिश में बोल सकता था। वहाँ जयपुर के लिये ट्रेन बदलती थी तो किसी तरह वदलकर अन्य ट्रेन में बैठ पाया। व्रत-धारण के कारण बगैर स्नान और देवदर्शन के वह ट्रेन में भोजन तो दूर, फल भी नहीं खा, ले सका, अतः दो-तीन दिन के रास्ते भर वह निर्जल और निराहार ही रहा। जयपुर के निकट अजमेर होकर मदनगंज-किशनगढ़ पहुँच कर सीधे मुनि ज्ञानसागर जी के चरणों में वन्दन कर उसने अपनी ज्ञानेच्छा को प्रकट कर दिया। जब गुरु ने उदासीनता सी दिखलायी तब आजन्म वाहन-त्याग का संकल्प प्रकट कर दिया। मुनि श्री ज्ञानसागर जी उसके साहस और लगन को देखकर प्रसन्न हो गये और उन्होंने उस 'विद्याधर' को अपना शिष्य, ब्रह्मचारी रूप में स्वीकार कर लिया।

मुनि श्री ज्ञानसागर जी अत्यन्त वृद्ध हो गए थे; अतः अतिशीघ्र ही वे अपने इस नये शिष्य को, जिसकी प्रतिभा उन्होंने उसी क्षण पढ़ ली थी जब उसे शिष्यत्व दिया था, अपनासारा ज्ञान दे देना चाहते थे। और नया शिष्य अपना एकांश क्षण भी विना खोये ग्रहण किये जा रहा था, अपनी अनन्त प्यास की तृप्ति पाता सा। अल्पकाल में ही ब्रह्मचारी विद्याधर ने प्रमुख ग्रन्थों का न केवल अध्ययन पूर्ण कर लिया, बल्कि राजस्थानी और हिन्दी भाषाओं का परिज्ञान भी। गुरु ने उन्हें अपने जीवन के अनुभवों से जो परिचित कराया वह तो उनकी दृष्टि को और अधिक प्रौढ़ वना गया। गुरु ने अव इस शिष्य को संयम के ढाँचे में ढालने हेतु सन् 1968 में अजमेर नगर में मुनि-दीक्षा 30 जून 68 को दे दी। 22 वर्ष का खिलता यौवन, आध्यात्मिक प्रौढ़ता की ऊँचाइयाँ छूता अभूतपूर्व दिगम्बर साधु के रूप में राजस्थान की राजधानी जयपुर के निकटवर्ती अजमेर, मदनगंज किशनगढ़ व्यावर नसीरावाद, दांता, मदनगंज, रेनवाल, आदि में अपार जनसमूह के सम्मुख अपने वीतरागी गांभीर्य और तपो तेज से मुनि विद्यासागर के रूप में दमक उठा। गुरु को विश्वास हो गया कि उन्हें सही रथी मिल गया और उन्होंने 22 नवम्बर सन् 1972 को अपने इसी शिष्य को समीपवर्ती नसीरावाद नगर में आचार्य पद दे कर उसी की छाँव में शिष्यत्व ग्रहण कर 1 जून 1973 को अपनी लगभग 82 वर्ष की उम्र में समाधिसाधना पूर्ण की। मुनि विद्यासागर अव आचार्य विद्यासागर थे। एक

सद्य दीक्षित 27 वर्षीय आचार्य । गुरु ज्ञानसागर ने उन्हे बुन्देलीमाटी की धर्म-पात्रता और धर्मप्रेम का अनुभव तो बतलाया ही था । फलत आध्यात्मिक चिन्तन की ऊँचाइयो म उड़ानें भरता, कवित्व की गहराइयो मे डुबकी लगाता, अपने चरित्र और तप से स्वय को निखारता, प्रवचनो से जन-जन मे आत्मज्ञान जगाता, स्व-पर भेद विज्ञानी, जागृत चेतन, अपने चेहरे की मुस्कान से सबको ही बाँधता/छूता बढ़ा चला आया बुन्देलखण्ड की ओर । वह जिस तरफ मुड़ जाता अपार जन-समुह उसके पीछे होता । कभी किसी वृक्ष के नीचे पड़ाव, तो कभी किसी नदी किनारे की शिला पर । और जगल मे ही मगल हो जाता । निकला तो वह अकेला ही था, पर अब उसके साथ भीड़ थी, भक्तो और शिष्यत्व के प्यासो की । उसके चक्षुओं में भवो-भवो के चिन्तन की गहराई हर उस मानव को जगा देती जिसकी आँखो मे वह झाँक कर रोशनी की खिड़की खोल देता इसीलिये युवा वर्ग उसके साथ हो लिया । 'खदान हीरो को सजोती है, किन्तु कीमत केवल पारखी ही जानता है' और वह डुबकी लगा-लगाकर सागर से मोती बीन चला । वह हँसते हँसते कभी-कभी जनसमूह को सम्बोधित करते कि बुन्देलखण्ड मे उनकी 'दुकान अच्छी चल रही है' । गाँव-गाँव से युवक युवतियाँ उनके शरणत्व मे ब्रह्मचर्य लेने आने लगे । अपनी शिक्षा पर छह भाषाओं का ज्ञान-कन्नड़, मराठी, हिन्दी, ससृत प्राकृत और अग्रेजी और अन्य अनेक भाषाओं का परिचय (बगाली, गुजराती, राजस्थानी, बुन्देलखण्डी) उन्हे सहज ही था । अपनी नि स्पृही, अपरिग्रही और अचूक साधना से श्वेताम्बर दिगम्बर जैनो के अलावा सभी धर्मो के श्रोताओं के मन पर अपनी अमिट छाप छोड़ता यह नग्न साधु घूमता फिरता पिछले लगभग 19 वर्षो से अब बुन्देलखण्ड मे महावटवृक्ष की तरह ज्ञान और तप की जड़े जमा चुका है । गाँव-गाँव स बच्चे, बूढ़े युवा उनके साथ हो लेते हैं और फिर घर लौटने का उनका मन नही करता । बुन्देली माटी है कि उसे सिर-माथे ले-ले कर दुलार रही है । जिस तरफ भी अब इस सत के चरण पड़ते है वहाँ की माटी चन्दन सी पवित्र हो जाती है । अब वे अकेले नही उनका चतुर्विध सघ है, जिसमे लगभग 125 पिच्छिकाधारी साधुजन हैं, 150 से अधिक बालब्रह्मचारिणियाँ और 30 से अधिक ब्रह्मचारी अधिकाश उच्चशिक्षा प्राप्त और फिर सभी बाल योगी ।

बचपन के उस छबीले बालक का जो कभी 'तोता' कभी 'पीलू' कभी 'मरी' कभी 'गिनी' और कभी 'विद्या' के नाम से पुकारा जाता है, अभूतपूर्व विकास है । आधुनिक युग मे भ्रमित दिशाओं के कोलाहल मे कौन जानता था कि यह सलोना व्रती बालक कभी न्याय व्याकरण, साहित्य, दर्शन और भाषाओं का प्रकाण्ड विद्वान् होगा ? अध्यात्म-योगी ओर श्रमण सस्कृति के रक्षक के रूप मे एक विशाल सघ का कुशल रथी होगा ? मानव-जागरण और अहिंसा का ऐसा उद्घोषी जो द्वार-द्वार गाँव-गाँव जा कर आत्म-चेतना और ज्ञान-ज्योति जगा देगा ? सकल्पित समाज-सेवक ओर नि स्पृह देश-सेवी होगा । ?

बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक सदियो से खडित खड़े, उपेक्षित जीर्ण-शीर्ण अमूल्य क्षेत्रो की शताब्दियो से उठती आहत-कराहो को उसने सुन कर उनकी जो सेवा की उसे शताब्दियाँ क्या सहस्राब्दियाँ भी भुला न सकेगी । एकाकी जगलो में पड़े उन क्षेत्रो मे उसके पहुँचते ही 'अर्थ' रूप रखने लगता है । बगैर किसी पुलिस या अन्य सरकारी व्यवस्था के भी सम्पूर्ण स्वयमेव व्यवस्थित । डकैती से बदनाम चबल के भरखे भी जिसकी पदचाप सुन कर अपने डाकुओं को नहीं रोक पाते और जो बावले से उसके चरणो आ पड़ते थे । नैनागिरि (छतरपुर) म प्र की

वह घटना सहसा याद हो आती है—मन्त्र मुग्ध-सा बँधा हुआ सैकड़ों नर-नारियों का बैठा हुआ वह समूह, मंदिर प्रांगण में 'आचार्य श्री' का प्रवचन सुन रहा था। कहीं कोई संकेत या अटपटाहट नहीं थी। किन्तु अचानक 'आचार्यश्री' के ही सम्मुख खाकी वर्दी में एक लम्बी ऐंठी मूंछों वाला व्यक्ति कूद कर आ पड़ा और चरणों में हाथ जोड़ कर बैठ गया। सारी सभा स्तब्ध सी रह गयी, कोई भी समझ न पाया कुछ, और अपनी-अपनी जगह पर कीलित-सा हो गया। जनेऊ सी कारतूसों की माला थी वक्ष पर और हाथ में दुनाली। बजरंग मुद्रा में बैठ कर तथा हाथ जोड़ कर करारी आवाज में वह बोला—'महाराज ! इतनी बिनती है के अबै एक सत्ता और रूकने आहे आपने नईं मानी तो हमार बच्चों पै होके जाने पड़हे।' आचार्य श्री उसका मन्तव्य समझ गये थे क्योंकि दीपावली के पश्चात् उनके चौमासा समापन के कारण अब उनके गमन के भय से वह अर्ज कर रहा है। उन्होंने मुस्कराते हुए अभय का हस्त दर्शाया, आशीर्वाद रूप ! नौजवान ने नमन किया और मिनिटों में ही गायब हो गया। उसके ही साथ 8-10 पुरुष और भी उठ कर देखते ही देखते गायब हो गये उस बैठे जन-समूह में से। और सव सबों ने जाना कि यह कोई डाकू था, जो अपने पूर्व इंतजाम के साथ इस तरह उनके दर्शनों को, और अपनी माँग रखने आया था। सुना गया कि उसने डाकूपना भी संकल्प लेकर छोड़ दिया था और माँस मंदिरा का त्याग कर अहिंसक जीवन जीने का संकल्प ले लिया था। भले ही कुछ दिनों बाद षड्यंत्रकारियों द्वारा वह मार डाला गया।

कितने ही पापियों ने आकर उनके चरणों में नया जीवन पाया है और नयी दिशा पकड़ी है। वह कहते ही हैं..... 'इतिहास सबका इति.....हास (ह्रास) रूप ही है।' बुन्देलखण्ड भला ऐसे बुन्देले को कैसे भूल सकता है जिसके नाम की पुकार गली-गली में गूँजती..... 'हर माँ का वेटा कैसा हो ? विद्यासागर जैसा हो'—आज वह जन-जन के गौरव का प्रतीक वन वैठा है। आटो, वाहनों, बसों, दुकानों, शिक्षण-संस्थाओं, यहाँ तक कि पान की दूकानों को भी उसके नाम से पुकारने में लोग अपना गौरव समझते हैं और पुण्य का प्रतीक भी।.......(विद्यासागर पान भण्डार)। हर दूकान पर उस संकल्पित वाल वैरागी बुन्देले की छवि सहज ही नजर आ जाती है अपनी मुस्कराती वीतरागी मुद्रा में, जो हैं अहिंसा, करुणा, दया और अभय का असीम प्रतीक।

आचार्य विद्यासागर ने अव तक खासा साहित्य जनता के सामने दे दिया है उपयोग हेतु, भले ही वे लिखते मात्र स्वान्तः सुखाय ही हैं। उनके काव्यानुवाद स्वरूप आज उपलब्ध हैं—गुणोदय, समाधिशतक, इष्टोपदेश, जैन-गीता, समन्तभद्र की भद्रता, रयणमंजूषा, कुन्दकुन्द का कुन्दन, निजामृत पान, गोम्मटेश थुदि, प्रवचनसार, द्वादशानुप्रेक्षा, द्रव्यसंग्रह, नन्दीश्वर भक्ति, पंचास्तिकाय, नियमसार आदि जैनाचार्यो के प्राकृत संस्कृत ग्रन्थों का सहज, सरल वोधगम्य पद्यानुवाद उपलब्ध है। उनके द्वारा उपदेशित 'प्रवचन सार-संग्रह' भी पाठकों को दिशा वोध दे रहे हैं जिनमें मुख्य प्रवचनामृत, न धर्मो धार्मिके विना', भक्त का उत्सर्ग, मूर्त से अमूर्त की ओर, ब्रह्मचर्य चेतन का भोग, मर हम मरहम वने, जयन्ती से परे, प्रवचन प्रमेय, जैनदर्शन का हृदय, सत्य की छाँव में, गुरुवाणी, प्रवचन पारिजात, प्रवचन पंचामृत, प्रवचन पीयूष, चरण आचरण की ओर, धीवर की धी, आत्मानुभूति ही समयसार है, डबडवाती आँखें, आदर्श कौन, तीन में एक, व्यामोह की पराकाष्टा, भोग से योग की ओर, मानसिक सफलता आदि अनूठी

कृतियाँ जन जागरण का हेतु बनी हुई हैं । उनके संस्कृत शतक सुनीति शतक, श्रमण शतक, निरजन शतक, परीपहजय शतक एव भावना शतक के अतिरिक्त इन्ही पाचो शतको के हिन्दी पद्यानुवाद के साथ ही निजानुभव शतक, स्तुति शतक, मुक्तक शतक भी राष्ट्रभाषा के उन्नयन म सहायक हुए है । आपकी तोता क्यो रोता, डूबो मत्त लगाओ डुबकी, नर्मदा का नरम ककर, चेतना के गहराव मे जैसी काव्य कृतियाँ चिन्तन मनन का अनूठा पथ-प्रशस्त करती हैं । अभी नवीनतम महाकाव्य के रूप मे 'मूक माटी' एक ऐसी अनुपम कृति है, जो अध्यात्म का खजाना समेटे सरलतम भाषा मे पाठको के मन को वाँध लेती है । 'मूक माटी' के माध्यम से माटी जैसी तुच्छ वस्तु को उन्होने सर्वोच्च ऊचाइयो पर पहुँचा दिया है—एक विशेष जीवन यात्रा करवाकर । माटी जो कभी आत्मा को परिलक्षित करती है तो कभी पद-दलिता नारी-समाज को, कभी भटकती हर उस जिन्दगी को, तो कभी व्यावहारिक जगत् की सनती हुई उसी माटी को जो कुभकार के हाथ मे आकृति पा कर कुभ का रूप ले लेती है, और तपने की लबी अग्निपरीक्षा के वाद निखरती है कलशबन कर, प्यासो को शीतल जल देने वाले कुभ के रूप मे ।

माता की दृष्टि जिस प्रकार अपनी मूक सतान की आँखो ही आँखो मे झाँक कर उसकी सारी व्यथा पढ़ लेती है, इस वाल गुरु ने वैसी ही ममतामयी, मर्मभेदी दृष्टि से उस घुटती सिसकती आत्मा की आँखो मे अन्तर्मन तक जा कर पढ़ डाला है, जो शरीर से कही गहरे, भीतर दूर, केद आत्मा की घुटन रूप, माटी की अनेक चलती फिरती काया मे भवोभवो से छटपटा रही थी 'प्रभु, कब मिले थे ? कहाँ बिछड़े, कैसे राह छूटी ? भटके भवो-भवो मे ! अव तो उबारो ! वद है जग द्वार सारे, उन्हे भी तो खोलो ! कैसे पहुँचूँ तुम तक आत्मन् !!! वद हैं द्वार सारे, उन्हे भी तो खोलो, और मन के वार्तालाप को मुखरित करती चल पड़ी उनकी कलम और लिख डाला वह महाकाव्य अपना उद्वोधन ! हर सोई आत्मा को जगाने ! ऐसा महाकाव्य जो वेहद सरल और व्यावहारिक तो लगता ही है, किन्तु साहित्य की दृष्टि से न जाने कितने ऐतिहासिक कवियो की प्रतिभा को अपनी कलम के रगो से भी फीका छोड़ता सबसे अधिक स्पष्ट, सहज, सक्षम । कही कोई अर्थ देखना चाहे या छद अलकार या बध, विविधता या व्यग ओर सौष्ठव या प्रसग, सभी कुछ उसमे उपलब्ध प्रस्तुत है । अत्यन्त सुन्दर सृजन है वह, इस नि स्पृही तपो पूत का जिसके लिए यह माटी उसकी चिर ऋणी रहेगी , अपने अन्तिम धाम तक !

उद्वोधन के रूप मे यह कृति जन-जन को आत्म-चितन की राहे, सहज और व्यावहारिक उदाहरणो द्वारा दर्शाती है, भटकनो की विडम्वना से सतर्क करती है, मानवीय कमजोरियो को दर्शाकर उनसे ऊपर उठाती है और 'नारी' की भूमिका को भारतीय सस्कृति के अनुकूल सर्वोच्च गरिमा प्रदान करती है, उसके सोये पुरुषार्थ को जगाती है—एक समर्पित कुँभकार की तरह ।

सासारिक दैनिक घटनाओं का इस जागृत योगी को पूरा-पूरा ज्ञान रहता है, दिशाओं का पूरा-पूरा भान रहता है, जन-जन से सपर्क रहता है, अध्ययन रहता है, चिन्तन भी और काव्य सृजन भी । उसका हर उद्‌गार' काव्यमय छद सा होता है और प्रवचन भी वैसा ही ।

उसके इस 'मूक माटी' महाकाव्य में शब्दों को बहुअर्थी और विलोमार्थी विलक्षण आयाम मिला है। कान हरदम व्याकुल रहते हैं उसकी वाणी सुनने, आँखें व्याकुल रहती हैं उसके दर्शन पाने, मन व्याकुल रहता है उसके आसपास और उसके चरणों को पखारने में, हाथ व्याकुल रहते हैं वैयावृत्ति हेतु और पैर व्याकुल रहते हैं उसके साथ पद-यात्रा करने हेतु.......ऐसी दशा रहती है उसके श्रोताओं की, जो उसे हरदम घेरे ही रहना चाहते हैं।

आहार ? जी हाँ, प्रत्येक दिगम्बर जैन साधु की तरह उनका आहार (यदि विघ्न/अंतराय न हुआ तो) 24 घण्टों में एक ही बार और उसी के साथ एक ही बार गर्म उबला हुआ जल भी...., करपात्र में (नमक, मीठा एवं फलों के बगैर) नीरस उबला हुआ सा भोजन जिसमें दाल-रोटी और गिनी चुनी एक या दो लौकी, मटर आदि हरी सब्जियां मात्र। गरम पानी भी वह जो उन्हें श्रावकजन अपने ही आहार में से देता है। आश्चर्य न करें......। यदि अंतराय हो गया तो मुंह का ग्रास भी आकुलता रहित होकर उगल कर तथा कुल्ले कर वे उठ जाते हैं अगले दिन के लिए। यदि कर्मों का उदय/संयोग हुआ तो अगले दिन आहार प्राप्त होगा वर्ना पुनः 24 घंटों बाद.... फिर भी हरदम प्रसन्न मुद्रा, वही उत्साह। रात्रि के चार प्रहरों में से वीच के दो प्रहरों में एक करवट का शयन वह भी बगैर किसी ओढ़न-बिछावन के एक काष्ठ फलक पर ही। धूप, ठण्ड या बरसात रूपी सभी ऋतुओं में सदा नग्न, आवरण-आभरण रहित रहना ही उनका जीवन है क्योंकि आकाश ही उनका उढ़ौना और धरती ही उनका बिछौना बन गया है। वही बालरूप, निष्पाप और निर्विकार काया और तपःलीन, सामायिक स्थित चेतनापुंज के साक्षात् प्रतीक हैं वे।

उनका सम्पूर्ण परिवार उन्हीं के पावन पथ पर बढ़ गया है। मात्र बड़े भाई महावीर जिनका विवाह हो चुका था **गृहस्थी** में अपने आपको कैदी स्वीकार कर गृहस्थधर्म का पालन कर रहे हैं....और संतुष्टि से अपना छोटा सा बिजनेस संभालते हैं।

पिता श्री मल्लप्पा पारिसप्पा अष्टगे अब श्रमण दीक्षा अंगीकार करके मुनि श्री मल्लिसागर के रूप में है। माता श्रीमती जी अष्टगे ने आर्यिका पद पर रहकर श्री समयमती जी संबोधन पाया और आत्मसाधना कर 1984 में समाधिग्रहण कर कोछोर (राज.) में समाधिमरण को प्राप्त हुई। बहनें सुवर्णा और शान्ता ने भी यही पथ स्वीकार कर व्रत अंगीकार किए। दोनों ही छोटेभाई मुनिव्रत लेकर इन्हीं को गुरु मान कर इनके चरणों में ही संघस्थ हैं। अनन्तनाथ जो अब मुनि श्री योगसागर हैं और शान्तिनाथ जो अव दिगम्बर मुनि श्री समय सागर जी के नाम से श्रावक समुदाय को धर्म की राह वता रहे हैं और स्वसाधना में अविरल तत्पर रहते हैं।

इस महातेजस्वी महावट की सुदीर्घ जटाएँ वुन्देलखण्ड से भी वाहर फैलकर कभी अजमेर, व्यावर, नसीरावाद, मदनगंज, जयपुर आदि राजस्थान प्रान्त में फैली तो आगरा, मथुरा फिरोजावाद, झाँसी, ललितपुर, आदि उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों तक भी पहुँची हैं। वहीं वुंदेलखण्ड से होकर रामानुजगंज, डाल्टनगंज, हजारी वाग, ईसरी, सम्मेद शिखर में फैलकर विहार प्रान्त मे भी जा पहुँची तो कभी पश्चिम वंगाल की राजधानी कलकत्ता में विराम पाई। पूर्व की दिशा में उड़ीसा की हृदयस्थली कटक, भुवनेश्वर, संवलपुर आदि को स्पर्श करके

रामपुर, दुर्ग, राजनादगाँव मे फैली तो महाराष्ट्र प्रान्त के अमरावती, गोंदिया नागपुर आदि शहरों मे भी जाकर अपने वटवृक्ष की जड़ें स्थापित की । बुन्देलखण्ड और म प्र के जबलपुर, सागर दमोह, टीकमगढ़, बैतूल आदि जिलो मे स्थित विभिन्न तीर्थस्थलो—कुण्डलपुर, बहुरिवद, पानागर, कुण्डलगिरी (कोनी जी), पिसनहारी मढ़िया, नैनागिर, पपौराजी, आहार जी थूबौन जी, सोनागिरि रामटेक, द्रोणागिरी, खजुराहो, सैरोन जी, देवगढ़, करगुँवाजी मुक्तागिरी, बीना, बारहो, पवाजी, आदि मे धर्म प्रचार का विगुल बजाकर अब विन्ध्य प्रान्त, छत्तीसगढ़ एव महाकौशल के त्रिकोण मे स्थित पवित्र नर्मदा (रेवा), सोन एव जुहिल नदी की उद्गम स्थली 'सर्वोदयतीर्थ' अमरकण्टक मे स्व-पर कल्याण हेतु साधनारत रह कर मानव को आत्मिक उत्थान के लिए दिशा बोध देकर जनजन मे एक नई जाग्रति, नयी प्रकाश की किरणे फैलाकर उनके भीतर बैठे अज्ञात तिमिर को हटाकर नये मानव समाज बनने का पथ प्रशस्त कर रहे हैं ।

रीडर—फार्मेसी विभाग
डॉ हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय
सी -58 गौर नगर, सागर (म प्र)

□□

'सभी भविष्य दृष्टा कहते है कि मनुष्य द्वारा निर्मित विचार तरगे उन सारे घटको के सा: पारस्परिक क्रिया करती हैं जो भूचालो, ज्वालामुखियो, भूगर्भीय गतिविधियो एव पर्यावरणीय परिवर्तनो के लिये उत्तरदायी है,' गुडमैन (पुरातात्त्विक अनुसधान परिषद, अरीजोना, अमेरिका का निदेशक) । उनका यह भी कहना है कि विचार तरगे किसी क्षेत्र मे होने वाली वर्षा की मात्रा को घटा बढ़ा सकती हैं-जैसा कि रेड-इडियन्स का अपने वर्षा नृत्यो मे विश्वास है ।– सभवत भूकम्पो की आवृत्ति व विध्वस शक्ति उन क्षेत्रो मे कम होगी जहाँ के निवासी प्रकृति के साथ समस्वरता मे जीएगे बजाय उन क्षेत्रो के जो हिसक, विप्लवी विचार-तरगो से भरे होगे ।—क्या इसका अर्थ यह है कि ध्यान करने वाले तथा जीवन के प्रति विधायक दृष्टि रखने वाले लोग किसी क्षेत्र को भूकप द्वारा विनष्ट होने से वचा सकते है ? सक्षेप मे इसका उत्तर है-हा । सच तो यह है कि आदमी ही भूकप है और आदमी ही उससे वचने का उपाय है, इलाज है ।'

—डा अनिल कुमार अग्रवाल के लेख
'सावधान ! महाभूकप आने को है',
राजस्थान पत्रिका 17 अप्रेल, 1994

आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव

☆ डॉ. प्रेमचन्द रांवका

वैदिकों और श्रमणों दोनों के आराध्य/पूज्य प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव इस देश को सांस्कृतिक/धार्मिक एकता प्रदान करते हैं। हिमवान पर्वत से निकलने वाली गंगा सिन्धु दो नदियों की भांति ऋषभदेव से आरंभ हुई ये दोनों धारायें देश के सांस्कृतिक जीवन को सींचती आ रही है। ऋषभदेव के उपदिष्ट मार्ग पर देश को और विश्व को चलाने की शुभतर चुनौति आज इन दोनों धाराओं के सम्मुख उपस्थित है। इतिहास लेखन संकीर्ण/अति संशयपूर्ण/पश्चिमी फरेब, जो कोहरे की तरह छाकर कुछ हजार वर्षो से ऊपर ही अतीत में दृष्टिपात नहीं करने देता, से मुक्त होकर पौराणिक/धार्मिक साहित्य की ठोस आधार पर खड़े ऋषभदेव, भरत, बाहूबली आदि तीर्थंकर। महापुरुषों के उदात्त चरित्र से जन-जन को परिचित कराने का भार श्रमण (जैन) और वैदिक दोनों समुदायों का है। इन महापुरुषों के आदर्श चरित्र दृष्टि के विषय बने बिना मानव को आत्म-बोध होना संभव नही है और इसके बिना वह सदा क्षुब्ध-विक्षुब्ध ही रहेगा।

—सम्पादक

भारतीय धर्म-दर्शन, ज्ञान-विज्ञान और कला-संस्कृति की दो प्रमुख विचार धाराएं आदिकाल से ही मिलती हैं। एक विचार धारा ब्रह्मवादी रही। दूसरी विचारधारा पुरुषार्थ श्रमण प्रधान रही, जिसमें आत्मोत्थान/आचरण को प्रमुखता दी गई। ये दोनों—वैदिक एवं श्रमण विचार धाराएं इस राष्ट्र के सांस्कृतिक विकास में प्राचीनतम काल से अनवरत प्रपूरक एवं निरन्तर प्रवहमान रही है। इस राष्ट्र की बौद्धिक एकता को बनाये रखने में इन दोनों का समान रूप से महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

श्रमण प्रधान विचारधारा के जनक तीर्थकर थे। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखा है कि बौद्ध धर्म की अपेक्षा जैन धर्म बहुत अधिक प्राचीन है, बल्कि यह उतना ही पुराना है जितना वैदिक धर्म। आश्रम व्यवस्था वाली वैदिक परम्परा और तपोप्रधान श्रमण परम्परा दोनों में श्रम की प्रतिष्ठा होने से भारतीय साहित्य के इतिहास में 'विण्टरनीत्ज' को यह लिखना पड़ा जिस 'श्रम' धातु से श्रमण शब्द बना है; उसी से 'आश्रम' शब्द भी निष्पन्न हुआ है। श्रमण-परम्परा किसी ईश्वर को सृष्टि कर्ता न मानकर अपने श्रम/पुरुषार्थ द्वारा सब को ईश्वर बनने का अधिकार देती है।

जैन आगमानुसार अन्तिम १४वें मनु नाभिराय थे। उन्हीं के पुत्र ऋषभदेव हुये जिन्होंने कर्म की महत्ता प्रतिपादित की। सद्योजात शिशु की लम्बी नाभिनाल के काटने की

विधि वतलाने से वे १४वे मनु नाभिराय कहलाये । नाभिराय की रानी मरुदेवी से चैत्र, कृ ९ को ऋषभदेव का जन्म हुआ । जिस समय ये गर्भ मे थे, देवताओं ने स्वर्ण-वृष्टि की । अत ये 'हिरण्यगर्भ' भी कहलाये । दाहिने चरण मे वैल का चिह्न होने से ये वृषभनाथ कहलाये ।

युवा होने पर ऋषभ का विवाह नन्दा एव सुनन्दा कन्याओं से हुआ । नन्दा से भरत आदि सौ पुत्र और ब्राह्मी नाम की पुत्री तथा सुनन्दा से वाहुवली नामक पुत्र एव सुन्दरी पुत्री हुई । राजा ऋषभ ने दोनो पुत्रियो को भी पुत्रो के समान ही शिक्षा दी । ब्राह्मी को अक्षर ज्ञान की शिक्षा देने से प्राचीन ब्राह्मी लिपि का और सुन्दरी को अक ज्ञान कराने से अक विद्या का आविष्कार हुआ ।

नाभिराय के समय मे जन साधारण को कल्पवृक्षो से भोजन, वस्त्रादि जीवन सामग्री का मिलना दुर्लभ हो गया था । तव प्रजा महाराजा नाभिराय के पास पहुँची । उन्होंने अपने ज्ञानी सुपुत्र ऋषभ की ओर सकेत किया, तव ऋषभ ने अपने ज्ञान-वल से अन्न उत्पादन की विधि वताई । इक्षु दण्डो से रस निकाल कर पीना सिखलाया । इसीलिये इनका वश इक्ष्वाकुवश कहलाया और ऋषभ इस वश के आदि पुरुष । प्रजा को कृषि, असि, मषी, शिल्प, विद्या, वाणिज्य इन षट् कर्मों से आजीविका सिखलाने से इन्हे प्रजापति भी कहा गया । सामाजिक व्यवस्था को चलाने के लिये इन्होंने (कर्म, रुचि एव प्रवृत्ति के अनुसार) क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र वर्णों की स्थापना की ।

प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के ज्येष्ठपुत्र एव उत्तराधिकारी महाराज भरत थे । भरत ने अपने समय मे धर्मात्मा, सन्तोषी और ज्ञान ध्यान मे लीन रहने वाले व्यक्तियो को ब्राह्मण सज्ञा देकर चतुर्थ वर्ण की स्थापना की । ये भरत ही सभ्य ससार के प्रथम चक्रवर्ती सम्राट थे । इन्ही भरत के नाम पर यह देश भारत कहलाया ।

जैन धर्म की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है । भगवान महावीर जो अन्तिम तीर्थंकर थे, उनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद है । इनसे पूर्व 23 तीर्थकर और हो चुके है जिनमे ऋषभ प्रथम तीर्थकर थे । इसीलिये उन्हे आदिनाथ कहा जाता है । आ मानतुग ने इन्हे वुद्ध, शकर विधाता, पुरुषोत्तम आदि नामो से अभिवन्दित किया है—

> वुद्धस्त्वमेव विवुधार्चितवुद्धि वोधात्
>
> त्व शकरोऽसि भुवनत्रय शकरत्वात् ॥
>
> धातासि धीर शिवमार्ग विधेर्विधानात् ।
>
> व्यक्त त्वमेव भगवन् पुरुषोभोऽसि ॥२५॥

इन आदिनाथ ऋषभदेव का भारतीय कला मे अकन घोर तपश्चर्या की मुद्रा मे मिलता है । श्रीमद्भागवत मे विस्तार से ऋषभदेव के चरित्र के साथ उनके सात पुत्रो मे ज्येष्ठ भरत तथा उनके नाम पर भारत देश का उल्लेख है—

> येषा खलु महायोगी भरतो,
>
> ज्येष्ठ श्रेष्ठ गुणश्चासीत् ।
>
> येनेद वर्ष भारतमिति ।
>
> व्यपदिशन्ति ॥ भागवत—5/4/9

मार्कण्डेय पुराण (अ. ५०) के अनुसार अग्नीन्ध्र पुत्र नाभि के पुत्र ऋषभ हुये, जो अजनाभ भी कहलाते थे। जिनके नाम पर यह देश अजनाभ वर्ष कहलाया। भरत को राज्य देकर ऋषभदेव ने प्रवृज्या ग्रहण की। वायु पुराण (अ. ३६.), अग्नि पुराण (अ. १०), नारदपुराण (अ. ४८) तथा विष्णु पुराण (अ. २) में ये उल्लेख मिलते हैं।

ऋषभाद् भरतो जज्ञे
ज्येष्ठः पुनः शताग्रजः।
ततश्च भारतं वर्षम्
एतल्लोकेषु गीयते ॥

श्रीमद्भागवत् में ऋषभ पुत्र भरत के गुणों की प्रशस्ति करते हुये लिखा है—"राजर्षि भरत के पवित्र गुण और कर्मों की भक्तजन भी प्रशंसा करते हैं। उनका यह चरित्र बड़ा कल्याणकारी, आयु और धन की वृद्धि करने वाला, लोक में सुयश बढ़ाने वाला और अन्त में स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति कराने वाला है। इक्ष्वाकुवंश के मुकुटमणि भरत चक्रवर्ती ने प्रजाओं का वहुत अच्छी तरह भरण-पोषण किया, इसलिये वे भरत कहलाये।

श्रमण संस्कृति के प्रवर्तक और अनुवर्तक आद्य तीर्थकर ऋषभदेव और उनके पुत्रद्वय भरत-वाहुवली ही थे। उनका उपदिष्ट धर्म जैन धर्म प्राक् ऐतिहासिक धर्म है। पुरातत्व सामग्री एवं प्राच्य वाङ्मय से उपलब्ध प्रमाणों से इनकी प्राचीनता निर्विवाद सिद्ध है। वैदिक युग में व्रात्यों तथा श्रमण ज्ञानियों की परम्परा का नेतृत्व ऋषभ/भरत धर्म ने ही किया। ज्ञान के पुरोधा प्रथम तीर्थकर आदिनाथ ही थे। मनुस्मृति में भ. आदिनाथ का स्मरण तीर्थ यात्रा के समान वताया है—

अष्टषष्टिषु तीर्थेषु
यात्रायाः यत्फलं भवेत्।
श्री आदिनाथ देवस्य
स्मरणेनापि तद्भवेत् ॥

अड़सठ तीर्थो की यात्रा करने से जो फल होता है, उतना फल भ. आदिनाथ के स्मरण मात्र से हो जाता है।

इसीलिये मानतुंगाचार्य ने भक्ति की है—

तुभ्यं नमस्त्रि भुवनार्ति हराय नाथः।
तुभ्यं नमः क्षितितलामल भूषणाय ॥
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय।
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि शोपणाय ॥

प्राचार्य :
रा. शा. सं. महाविद्यालय, महापुरा (राज.)

'गाड़ी हो रत्नत्रय वाली'

☆ वैद्य प्रभुदयाल कासलीवाल

लक्ष्य हीन मिथ्यादर्शक है सम्यक्त्वी की बात निराली ।
लक्ष्य बिना व्रत तप सयम भी करते केवल राते काली ॥१॥

सागर मे वहना है वहलो लक्ष्य बिना सब डुबकी खाली ।
लक्ष्य बना जो डूबकी मारे सीप बटो रे मोती वाली ॥२॥

शरद ऋतु मे भटके राही, आम्र न मिलते रहता खाली ।
कैरी मिलती ग्रीष्म ऋतु मे पुष्ट और मीठे रस वाली ॥३॥

इस विधि जो निज आत्मा जाने ज्ञानानन्द पूर्ण रस वाली ।
अनन्त चतुष्टय महिमा जाने विकृतियो से बन करके खाली ॥४॥

यदि वह लक्ष्य बनावे ध्यावे मन मे मूर्ति बसे गुणवाली ।
राह चले उस ही पथ की पावे निश्चित अक्षय सुखवाली ॥५॥

ध्यान लगावे निज का निज मे रमण करे निज मे ही खाली ।
लक्ष्य सधे तब ही अर्जुनवत् आत्म दृष्टि हो प्राप्त निराली ॥६॥

'प्रभु' कहे तुम लक्ष्य बनावो रात्रि बितावो ध्यानो वाली ।
मुक्ति पन्थ के राही तेरी गाड़ी हो रत्नत्रय वाली ॥७॥

□□

भारतीय कला में जैन कला की भूमिका

☆ कु. शकुन्तला जैन
एम. ए., एम. फिल.

> कला ज्ञान का चारित्रिक/व्यवहारिक पक्ष है । कलाकार में जब ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय की एकता घटित होती है तो उस एकता/तल्लीनता से चालित योगों-वाणी, हाथों, पाँव आदि से बाह्य में कागज, पाषाण आदि पर कला उभरती है । विज्ञान की भाँति कला भी रागी विषयासक्त जनों के हाथों में पहुँच कर मानव का पैसा लूटने और चारित्रिक प्रदूषण उत्पन्न करने में सहायक हुई हो, पर वीतरागी, आत्मार्थीजनों के हाथों इन का लोक कल्याणकारी रूप प्रस्फुटित हुआ है । सबसे बड़ी कला के सफल उपासक तो वे मुनि जन है जो अनन्त चतुष्टय धारी अर्हन्त समान अपने आत्म रूप को अपनी दृष्टि में धारण कर योग-उपयोग के हाथों केवल ज्ञान रूप दिव्य स्वरूप को प्रकट कर परमात्मा हो जाते हैं। जैन चित्रकला, मूर्तिकला आदि सब उस ही परम रूप को अपने में प्रकट करने के उपक्रम है ।
>
> —सम्पादक

कला का संबंध किसी धर्म, जाति, दर्शन से नहीं होता है । कला मन की अभिव्यक्ति है । यह विशुद्ध, निष्पक्ष सामाजिक तत्त्व है । लेकिन जब धर्म शासन में समाहित होता है, या धर्म शासन वन जाता है तो उसका अनुकरण करने वाला समाज बनता है । ऐसे में कला का विकास भी उसी समाज या धर्म के सहारे होता है ।

भारतीय संस्कृति में 'कला'' को विभिन्न अर्थो में निरूपित किया गया है । लेकिन जैन परम्परा में कला शव्द वहुत ही व्यापक अर्थ में व्यवहृत हुआ है । भगवान ऋषभदेव ने अपने राज्यकाल में पुरुषों के लिये 72 क़लाओं और स्त्रियों के लिये 64 कलाओं का निरूपण किया है ।[1] टीकाकारों ने कला में लेख, गणित, चित्र, नृत्य, गायन, युद्ध, काव्य, वेशभूषा, स्थापत्य, पाक, मनोरंजन आदि अनेक परिज्ञानों का समावेश माना है ।

अन्य कलाओं के समान धर्म भी एक कला है । सभी कलाओं में इसका सर्वोच्च स्थान है । इसके संवंध में कहा गया है कि— 'जो व्यक्ति सव कलाओं में प्रवर धर्म कला को नहीं जानता, वह वहत्तर कलाओं में कुशल होते हुवे भी अकुशल है ।[2] जैन धर्म का आत्मपक्ष धर्म कला के उन्नयन में ही संलग्न रहा । समाज विस्तार के साथ-साथ ललित कला का भी विस्तार हुआ ।

जैन चित्रकला का प्रारभ तत्व प्रकाशन से होता है । तत्व प्रकाशन हेतुक स्थापना के आधार पर चित्रकला और स्मृति हेतुक स्थापना के आधार पर मूर्तिकला का विकास हुआ । ताड़पत्रो पर ग्रथ लिखे गए और उनमे चित्र किये गए । विक्रम की दूसरी सहस्राब्दी मे हजारो ऐसी प्रतिया लिखी गयी जो कलात्मक चित्राकृतियो के कारण अमूल्य है ।

ताड़पत्रीय या पत्रीय प्रतियो के पुट्ठो, चातुर्मासिक प्रार्थनाओं, चित्रा कृतियो, कल्याण मदिर, भक्तामर आदि स्तोत्रो के चित्रो को देखे विना मध्यकालीन चित्रकला का इतिहास अधूरा रहता हे । उपरोक्त विपयक चित्र भारतीय मध्यकालीन कला मे अपना महत्वपूर्ण स्थान जैन चित्रकला के रूप मे रखते हैं ।

चित्रकला के समान ही लिपि कला भी महत्वपूर्ण कला है । यह एक सुकुमार कला है। लिपि कला को जैन साधुओं ने वहुत अधिक विकसित किया है । वे सौन्दर्य और सूक्ष्मता दोनो दृष्टियो से इसे उन्नति के शिखर पर ले गए । 1500 सौ वर्प पहले लिखने का कार्य प्रारभ हुआ और वह अव तक नदी की धारा के समान वहता हुआ विकास की ओर वढ़ता रहा है । लेखन कला मे यतियो का योगदान वहुत महत्वपूर्ण रहा है । तेरापथ के साधुओं ने लिपिकला मे चमत्कार प्रदर्शित किया है । सूक्ष्म लिपि मे यह अग्रणी है । कई मुनियो ने ग्यारह इच लम्वे व पाँच इच चौड़े पत्रे पर लगभग अस्सी हजार अक्षर लिखे है ।[3] ऐसे पत्र आज तक अपूर्व माने जाते है । ये भारतीय कला को महत्वपूर्ण देन हैं ।

चित्रकला, लिपिकला के साथ-साथ मूर्तिकला एव स्थापत्य कला का भी अपना विशेप महत्व है । कालक्रम से जैन-परम्परा मे प्रतिमा-पूजन का कार्य प्रारम्भ हुआ । जैन धर्म म सिद्धातत दो प्रमुख धाराए हैं । कुछ जैन सम्प्रदाय मूर्ति-पूजा करते है और कुछ नही करते है। जो मूर्ति-पूजा करते है उन्होने मूर्तियो, मदिरो का निर्माण कर इतिहास जगत मे कला के इतिहास को वनाये रखने का प्रशसनीय व महत्वपूर्ण कार्य किया है । मदिर कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण विपय है ।

ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार वर्तमान मे सवसे प्राचीन जैन मूर्ति पटना के लोहनीपुर स्थान से प्राप्त हुई है ।[4] यह मूर्ति मौर्यकाल की मानी जाती है और पटना म्यूजियम मे रखी हुई है । इसकी चमकदार पालिस अभी तक भी ज्यों की त्यो वनी हैं । लाहौर, मथुरा, लखनऊ प्रयाग आदि के म्यूजियमो मे भी अनेक जैन मूर्तियाँ रखी हुई है । इनमे से कुछ गुप्तकालीन है। श्री वासुदेव उपाध्याय ने लिखा है कि मथुरा मे चौवीसवे तीर्थकर वर्धमान महावीर की एक मूर्ति मिली है जो कुमारगुप्त के समय मे निर्मित की गई थी । मथुरा मे जैन मूर्तिकला की दृष्टि से भी वहुत काम हुआ हे । श्री राय कृष्णदास ने लिखा है कि मथुरा की शुगकालीन कला मुख्यत जैन सम्प्रदाय की है ।[5]

खण्डगिरि और उदयगिरि में ई पू 188 30 तक की शुगकालीन मूर्ति-शिल्प के अद्‌भुत चातुर्य के दर्शन होते है । वहाँ पर इस समय की कटी हुई सौ के लगभग जैन गुफाएँ हैं, जिनमे मूर्ति शिल्प भी हे । दक्षिण भारत के अलगामले नामक स्थान मे खुदाई से जैन मूर्तियाँ उपलव्ध हुई हें, उनका ममय ई पू 300 200 के लगभग वताया जाता है । उन मूर्तियो की सौम्याकृति द्राविड़कला मे अनुपम मानी जाती है । श्रवणवेलगोला की प्रसिद्ध जैन

प्रतिमा संसार की अद्भुत प्रतिमा है । उसका शिल्प अकथनीय है । वह अपने अनुपम सौन्दर्य और अद्भुत शांति से प्रत्येक आँख को अपनी ओर आकृष्ट करने की क्षमता रखती है । श्रवणबेलगोला की यह विशाल प्रतिमा जैन मूर्तिकला की अनुपम देन है । मौर्य और शुंग-काल के पश्चात् भारतीय मूर्तिकला की तीन मुख्य धाराएं दृष्टिगोचर होती है—

1. गांधार-कला यह कला उत्तर पश्चिम में पनपी ।
2. मथुरा-कला यह कला मथुरा के समीपवर्ती क्षेत्रों में विकसित हुई ।
3. अमरावती की कला-जो कृष्णा नदी के तट पर पल्लवित हुई ।

जैन मूर्तिकला का विकास मथुरा कला से माना जाता है । जैन स्थापत्य कला के सर्वाधिक प्राचीन अवशेष उदयगिरि, खण्डगिरि एवं जूनागढ़ की गुफाओं में मिलते हैं । उत्तरवर्ती स्थापत्य की दृष्टि से चित्तौड़ का कीर्ति-स्तम्भ, आबू के मंदिर एवं रणकपुर के जैन मंदिरों के स्तम्भ भारतीय शैली के रक्षक माने जा सकते हैं ।

इस प्रकार कला के क्षेत्र में जैन कला का चित्रकला, लिपिकला, मूर्ति एवं स्थापत्य कला के रूप में भारतीय संस्कृति को अनूठी देन है । यदि हम कला की चर्चा करें तो जैन कला की चर्चा के बिना भारतीय कला का विषय अधूरा है । जैन कला इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में बिखरी पड़ी है ।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, वक्ष 2
2. बावत्तरिं कला कुसला, पंडियपुरिसा अपंडिया चेव । सव्व कलाणं पवरं, धम्मकलं जे न याणंति ॥
3. जैन दर्शन मनन और मीमांसा-मुनि नथमल पृ.104
4. वही
5. ारतीय मूर्तिकला, पृ.56

99 श्रीकृष्ण कालोनी,
अंकपातमार्ग, अवंतिपुरा
उज्जैन (म. प्र.) पिन 456006

□ □

कलातीर्थ बादामी, पट्टदकल, एहोले

☆ महेन्द्र कुमार पाटनी

देश मे चारो ओर खडित/अखडित रूप मे विद्यमान तीर्थंकरों के बिम्ब एव कलावशेष वीतरागता एव अहिंसा की प्रभा विकीरण करते मानव को उसकी मुक्ति की दिशा का अगुली निर्देश करते हैं । वाह्य मे पाषाण को परमात्मा बनाते हुए अतीत के वे महापुरुष तो परमात्मा होने की राह पर अपने कुछ कदम बढ़ाकर परलोक गमन कर गये और भावी पीढ़ियो को अपना उद्बोधन इन कलावशेषो के रूप मे छोड़ गये हैं । कषाय-कलुषित किन्ही को यह उद्बोधन कर्ण-कटु लगा और उन्होंने उन्हे खडित/विद्रूप किया, ऐसे आत्म-घातियों/अज्ञान मे अपने हाथो अपने को दुर्गति मे ढकेलने वालो के प्रति करुणा का स्वर भी इस उद्बोधन मे जुड़ गया है । उन मरो को मारने/गाली देने अथवा उनकी सन्तानो से बदला लेने की प्रेरणा तो यह मानव को कभी देती ही नहीं, पिता हैमलेट के द्वारा पुत्र हैमलेट को बदले (revenge) की आग मे झौंकने का दुष्कृत्य मुक्ति के/ वीतरागता के इस सुपथ मे न कभी हुआ है न कभी होगा ।

—सम्पादक

भगवान बाहूबली के महामस्तकाभिषेक के अवसर पर अपनी यात्रा के दौरान हम लोग आचार्य देश भूषण जी महाराज की जन्म भूमि कोथली मे आचार्य देशभूषण आश्रम मे पहुँचकर वहाँ के मदिर के दर्शन पर बादामी की ओर रवाना हुए । शाम को बादामी पहँचे । वहाँ वीर पुलकेशी कालेज के प्रिन्सीपल से निवेदन कर रात्रि विश्राम वही किया । प्रात बादामी की गुफाओं को देखने के लिए रवाना हुए । इस क्षेत्र मे 3 कला तीर्थ हैं जिनके नाम हैं बादामी, पट्टदकल व एहोले हैं । तीनो 50 कि मी के अन्दर है । इन स्थानो पर छठी से आठवी शताब्दी तक चालुक्य राजाओं का शासन रहा है । पहले एहोले उनकी राजधानी थी, बाद मे चालुक्यो ने अपनी राजधानी एहोले से हटाकर बादामी मे स्थापित की । पट्टदकल मे किसी एक मदिर मे चालुक्य राजाओं के राज्याभिषेक हुआ करता था । ये तीनो ही स्थान इतने कलापूर्ण हैं कि यूनेस्को ने इन तीनो स्थानो का चयन इनके समुचित विकास के लिए किया है ।

चालुक्य शासक वैष्णव धर्मावलम्बी थे, परन्तु वे सभी धर्मो का आदर करते थे । बादामी इसका प्रत्यक्षउदाहरण है । यहाँ थोड़ी-थोड़ी दूरी पर वैष्णव शैव और जैन गुफाए हैं । बादामी मे वस्तुत 5 गुफाए है । सड़क रास्ते से इन गुफाओं पर जाने के लिए पहाड़ पर

सीढ़ियाँ बनी हैं। इन गुफाओं के सामने एक स्वच्छ सरोवर है। गुफा के पार्श्व में तथा पहाड़ पर बादामी का किला है। गुफा नं. 4 जैन गुफा है। यह गुफा जैन कला की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट है। यह जैन गुफा 31 फीट चोड़ी व 16 फीट गहरी है। यह गुफा सबसे आखिर में है, यहीं तक सीढ़ियाँ आती हैं। गुफा में कोई स्थान खाली नहीं है जहाँ या तो तीर्थंकर मूर्तियाँ या सुर-सुन्दरियाँ या आकाशचारी विद्याधर न हों। वास्तव में गुफा मूर्तिकला का अदभुत केन्द्र है। यहाँ 9 इंच से लेकर आठ नो फुट की कितनी ही तीर्थंकर मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं।

इस गुफा मंदिर में 1300 वर्ष पुरानी भगवान बाहुबली की करीब 8 फुट की सुन्दर प्रतिमा है। यह प्रतिमा चट्टान पर उत्कीर्ण है। इस प्रतिमा के दोनों कंधों पर केशों की2-2 लटें लटक रही हैं। दोनों पैरों के पास एक-एक सर्प दिखाया गया है। बाहुबली की बहन सुन्दरी व ब्राह्मी का भी इसके साथ अंकन है। यह मूर्ति बहुत ही मनोज्ञ है। यहाँ भगवान ऋषभदेव की भी करीब 8 फुट की प्रतिमा है। इसके ऊपर 3 छत्र है जिनमें एक पद्मासन मूर्ति अंकित है। यह प्रतिमा कायोत्सर्ग मुद्रा में है तथा कन्धों तक जटाएं प्रदर्शित हैं। यक्ष-यक्षी भी दिखाये गये हैं।

बाईं ओर भगवान सुपार्श्वनाथ की 5 फणवाली करीब 8 फुट की कायोत्सर्ग मुद्रा में मूर्ति अंकित है। एक भक्त स्त्री उनके पैरों के पास बैठी दिखाई देती है। मंदिर के गर्भ गृह में पद्मासन में भगवान महावीर की प्रतिमा है। प्रतिमा पर तीन छत्र हैं। यहाँ छत पर आकाशचारी विद्याधरों का अंकन किया गया है। गुफा में एक सात फणों वाली कायोत्सर्ग मुद्रा में भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति भी बहुत ही सुन्दर है। यह स्थान भारतीय पुरातत्व विभाग के संरक्षण में है।

बादामी से पट्टदक 20 कि. मी. दूरी पर है। यह स्थान भी सम्पूर्णतः पुरातत्व विभाग के संरक्षण में है। एक सुन्दर उद्यान में बहुत से जैनेतर मंदिर है, जिनमें से 10 मंदिर दर्शनीय है। इस समूह से आधा किलोमीटर दूर बादामी रोड़ पर चर्च की पिछली दीवार के पास यहाँ का एक मात्र जैन मंदिर अवस्थित है। यह मंदिर बलुवा पत्थर से निर्मित है तथा दक्षिण भारतीय शैली का है। इसका निर्माण राष्ट्रकूट शासकों ने आठवीं शताव्दी के अन्त में करवाया था। मंदिर ध्वस्तहाल में है, मूर्ति भी नहीं है। यहाँ की मूर्ति जैनेतर मंदिरों के समूह में स्थित म्यूजियम में सुरक्षित रखी गई है। इस म्यूजियम के वाहर जैन व जैनेतर भग्नावेश संग्रहित हैं। यह मंदिर वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है। इस मंदिर में दोनों ओर दो आठ-नो फुट के पत्थर से निर्मित हाथी वने हैं जिन पर महावत वैठे हैं। ये हाथी मंदिर की विशेपता है। मंदिर के वाहर भी जगह-जगह पद्मासन तीर्थकर मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। मूर्ति न होते हुए भी इस जैन मंदिर की कला देखने योग्य है।

एहोले—एहोले पट्टदकल से 21 किलोमीटर है। एहोले चालुक्य राजाओं की वादामी से पूर्व राजधानी थी। यह स्थान वास्तव में मंदिरों की ही नगरी है। यहाँ ईसवी सन् 450 से 650 के वीच करीव 100 मंदिरों का निर्माण उत्तर भारतीय व दक्षिण भारतीय दोनों शैलियों में हुआ। अभी भी करीव 70 मंदिर ध्वस्तस्थिति में मौजूद हैं। यह जैनियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पूरे ग्राम के मंदिर पुरातत्व विभाग के संरक्षण में हैं, कई मंदिरों को जनता ने अपने

आवास मे परिवर्तन कर लिया है। उन्हे अव मुआवजा देकर हटाने के प्रयल हो रहे हैं। पुरातत्व विभाग यहाँ सक्रिय है। इनका एक टूरिस्ट वगला भी है। ग्राम मे एक सग्राहलय भी है जिनमे खण्डित जिन प्रतिमाए हैं। जैन पुरातत्व की दृष्टि से यह वड़ा ही समृद्ध स्थान कहा जाता है।

मेगुटी मदिर—सवसे पहले जैन यात्रियो के लिए महत्वपूर्ण मेगुही मदिर है। एक छोटी पहाड़ी पर यह मदिर स्थित है। इस मदिर मे आचार्य रवि कीर्ति का शिलालेख (ईस्वी सन् 634) भी लगा है। यहाँ खडित पद्मासन तीर्थंकर प्रतिमाए हैं, शासन देवी अम्विका की वहुत ही सुन्दर मूर्ति भी है। कहा जाता है कि आचार्य रविकीर्ति यहाँ उस समय जैन गुरुकुल चलाते थे और अकलक ने भी आचार्य रविकीर्ति से शिक्षा ग्रहण की थी।

मीन वसदि—मेगुटी पहाड़ी के दक्षिण पूर्व मे एक जैन गुफा है, इसे मीन वसदि कहते हैं। इसमे एक सातवी शताव्दी की भगवान अरहनाथ की मूर्ति है। इसी मदिर मे वाहुवली की एक सुन्दर मूर्ति है, यह कायोत्सर्ग मुद्रा मे है जो सातवी शताव्दी की है। कन्धो पर केश व नीचे दोनो ओर सर्प दिखाये गये है। इसी मदिर मे एक पार्श्वनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा मे मूर्ति है। धरणेन्द्र व पद्मावती को खड़े दिखाया गया है तथा कमठ को उपसर्ग करते हुए दिखाया गया है। मदिर मे भगवान महावीर की पद्मासन प्रतिमा भी है, अन्य कई मूर्तिया भी हैं। गुफा एक तल की है, ऊपर चट्टान है।

पार्श्व वसदि—यह मदिर ग्यारहवी शताव्दी मे निर्मित हुवा है। इसमे पार्श्वनाथ की सात फण की पद्मासन मूर्ति है। प्रतिमा घिस गई है। मदिर वहुत वड़ा है। द्वार पर तीर्थंकर प्रतिमाए उत्कीर्ण है। यह मदिर भी पुरातत्व विभाग के सरक्षण मे है।

चारन्टी मठ—गाँव की पूर्व दिशा मे यह स्थित है। यह कभी समृद्ध जैन मदिर रहा होगा। मदिर कम से कम 1500 वर्ष पुराना है। इसके गर्भ गृह मे भगवान महावीर की प्रतिमा है। प्रवेश द्वार पर सवसे ऊपर 12 तीर्थंकर मूर्तियाँ कायोत्सर्ग मे हैं। उसके नीचे पद्मासन मे तीर्थंकर मूर्तियाँ है। शिखर द्रविड़ शैली का है। उत्तर की ओर एक छोटा मदिर इसी मठ मे है जिसमे दरवाजो पर 24 तीर्थंकर मूर्तियाँ उत्कीर्ण है।

एहोले जैन मदिरो से भरा हुआ है, परन्तु यहाँ सभी मदिर पुरातत्व विभाग के अधीनस्थ है। सभी कला के भण्डार हैं। वहुत से मदिरो पर लोगो ने कब्जे कर रखे हैं। कई मदिरो मे दिगम्बर मूर्तियो के स्थान पर अन्य मूर्तियाँ विराजमान करदी गई है

जो शिव मदिर है उनमे भी जैन अवशेष मिलते हे। इस स्थान पर जैन यात्रियो को अवश्य जाना चाहिये। पूरा एक दिन यहाँ लगाने से सभी देखने योग्य स्थानो को देखा जा सकता है। इनका अवलोकन/दर्शन कर हमे अपनी प्राचीन धरोहर पर गौरव का अनुभव होगा।

डी—127, सावित्री पथ,
वापूनगर, जयपुर -302015

चतुर्थ खण्ड

विविध

शुभ कामनाओं सहित .

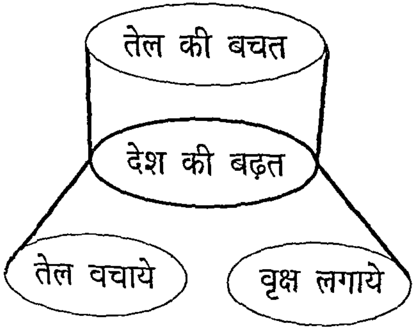
छाजूराम छीतरमल

महुवा (दौसा) राज

☎ 55

डीलर

भारत पैट्रोलियम कारपोरेशन लि.



ज्ञान की शक्ति अचिंत्य है

☆ प्रकाशचन्द ठोलिया

ज्ञान प्रतिक्षण कार्य करने वाला आत्मा का गुण है । उसकी शक्ति अचिंत्य है अर्थात् मानव को परम स्वस्थ देह धारी केवल ज्ञानी परमात्मा भी वह ही बनाता है और मिथ्या/मलिन रूप में सेवन करने पर अन्तर्बाह्य चारों ओर दुर्गति के अंधकूपों में भी वह ही डालता है । प्रथम रूप में उसे ज्ञान कहाजाता है, दूसरे रूप में उसे अज्ञान/कुज्ञान कहा जाता है। प्रथम उर्ध्वमुखी होता है, द्वितीय भाँति-भाँति से अर्धामुखी/तिर्यकमुखी होता है। प्रथम कर्मोदय की कृत्रिम काई/परदे के पीछे के जीव के तात्विक स्वरूप से परिचित होता है । ऐसा ज्ञानी मानव उसके एकदेश प्रकाशन लोक में, जो पूर्णतया कभी लुप्त नहीं होता, पूर्ण आश्वासन से निशंकित होकर विश्राम करता है/रमण करता है और कर्मोदय की काई से यथा संभव बचता हुआ ध्रुवतारे की भांति अपने अविचल परमात्म स्वरूप की ओर कदम बढ़ाये जाता है । वह अन्यों को भी अपने तात्त्विक स्वरूप में इसी प्रकार अच्युत/प्रतिबद्ध देख उनके सम्बन्ध में भी आश्वस्थ रहता है, उनका सम्मान करता है, स्खलित देख करुणा करता है । अधोमुखी/तिर्यक्मुखी दृष्टि वाला मानव कर्मोदय जनित अल्पताओं/विकारों को भूख-प्यास, नींद, थकान, जन्म-मरण आदि को अपने अस्तित्व पर आया मैल न मानकर उसका अंग मानता है । उसे तात्विक और कृत्रिम का अंतर ज्ञात नही होता, उसे अपनी ज्ञानादि तात्त्विक शक्तियों के अवचेतन/परदे के पीछे विद्यमान घनत्व का अहसास नहीं होता, अतः 'अलब्ध भूमि' वह निरन्तर प्रकट रह रहे स्वरूप में न टिक कृत्रिम काई की गंदगी (कषाय/दोष आदि) में ही क्षुब्ध-विक्षुब्ध बना दुःख-दुर्गति रचता रहता है ।

—सम्पादक

आज का युग भौतिक वाद का है । मनुष्य की आँखें आज की सांसारिक वस्तुओं पर डटी हुई है । उसे रहने को महल चाहिये और चाहिये गाड़ी, फ्रीज, वी. सी. आर., पहनने को मुलायम कपड़े आदि । मनुष्य की सबसे बड़ी कमजोरी है कि इनके विना वह समझता है कि समाज में मेरी कोई इज़्ज़त नहीं है । इज़्ज़त पाने के लिये वह कुकर्म से कुकर्म तक कर डालता है, अपना विवेक खो देता है, छलकपट करता है, घूँस लेता है, फिरोती के रूप में धन ऐंठने हेतु बच्चों को गायब कर देता है और उनकी हत्या तक कर देता है, घी में चर्वी मिलाता है, बूचड़ खाना खोलता है आदि । केवल ऐश और आराम के लिये मनुष्य न जाने क्या क्या करता है ? जबकि वास्तविक शान्ति सुख इनमें नहीं है । यह बात सब जानते हैं और महसूस करते हैं कि ये कुकर्म व्यक्ति और समाज के जीवन को नर्क बना रहे हैं ।

इस ससार मे ज्ञान के अतिरिक्त सुख देने वाली और अन्य कोई वस्तु नही है । ज्ञान ही जन्म जरा, मृत्यु एव रोगो को नाश करने के लिये उत्तम औषधि है । मिथ्यादृष्टि केवल बाहरी वस्तुओं मे सुख समझता है पर वह क्षणिक है । धन, सम्पत्ति, परिवार, नौकर चाकर, हाथी, घोड़ा तथा राज्यादि कई पदार्थ आत्मा को सुख देने मे सहायक नही होते । तीनो काल मे भूत वर्तमान और भविष्य मे जो सर्व दुखो से मुक्त हुए हैं, हो रहे हैं और होवेंगे वह सब ज्ञान की आराधना का ही फल है ।

क्या है यह ज्ञान की आराधना ? क्या आज का वैज्ञानिक, इन्जीनियर, वकील, डॉक्टर आदि ज्ञान की आराधना नहीं करत ? सीधा सा उत्तर है वे नही करते । ज्ञान उनका आराध्य, साध्य नहीं है, वे ज्ञान मात्र से सतुष्ट नही है, वे बाह्य पदार्थों को बनाने, बिगाड़ने उनमे परिवर्तन करने मे सलग्न है । ज्ञान उनका साध्य न होकर साधन भूत है । यह ज्ञान के प्रति अपराध है । आज मानव के लिये देह और उनकी बाह्य सुविधाये साधन न होकर साध्य बन गई हैं, वे द्वितीय न होकर प्रथम हो गई है । जिन्हे प्राप्त करने, बनाये रखने में वह ज्ञानदि समस्त आत्म शक्तियो को झोंके जा रहा है । परिणाम स्वरूप ज्ञानादि आत्म शक्तियाँ रीत जाती है । उनके क्षीण पड़ने पर उनके प्रकाश मे पनपते देह और बाह्य सुविधाएँ भी रुग्ण/क्षीण हो जाते हैं । क्या यह सब ज्ञान का कार्य है ? यह तो घोर अज्ञान है ।

ज्ञान को जैनाचार्य स्वधातु पोषक कहते हैं । अत ज्ञानी मानव मान कर चलता है कि उसकी देह तो स्वत स्वस्थ स्वधातुओं से पोषित है । वह अपनी देह को दुर्बल, हीन, क्षीण मानता ही नही जिसे कोई सर्दी, गर्मी के विशेष परीषह हो, जिस पर कोई आक्रमण हो सके, जिसके नीहार, कवलाहार की समस्या हो । बहुभाग साधारणतया सभी मानव स्वभाव से ऐसे ही है । ज्ञानी की दृष्टि इस बहुभाग पर ही रहती है । अत अनुभूति मे यह ही छाया रहने से वह ज्ञान मे लोका लोक को, स्व तथा पर के तात्विक रूप को निराकुल होकर ग्रहण करने मे निश्चित हो तल्लीन रहता है । बहुभाग यह विश्व सुन्दर है । कुन्दकुन्द "सव्वत्थ सुदरो लोए' कहते हैं । इनके ज्ञान से सन्तुष्ट रहने वाले मानव को रोग, दु ख विपरीतताये कैसे हो सकती हैं ? रोग आदि यदा कदा ही होते हैं । उनको जानने से भी उनके न बीज पड़ते है, न पनपते हैं । वे तो तनाव, चिन्ता भय, क्रोध लोभ आदि कषायो से जन्मते, पनपते हैं । ज्ञान तो उन्हे क्षीण ही करता है, स्वय ज्ञानी के ही नही, उसके सानिध्य मे रहने वालो के भी । क्योंकि कषाय से मुक्त ज्ञान के साथ आनन्द का अनिवार्य सहचरण है और आनन्द के प्रवाह मे कैसे क्लेश उत्पन्न करने वाला कुछ भी टिक सकता है ?

D-31 चिकित्सालय मार्ग
बापू नगर, जयपुर

□□

भगवान महावीर का अपरिग्रहवाद: सुख शान्ति का श्रोत

☆ हरख चन्द्र साह

जगत के सब पदार्थ अपनी-अपनी सत्ता लिये स्वतन्त्र हैं। धर्म, अधर्म, आकाश, काल और पुद्‌गल में कौन सा पदार्थ है जो अन्य पर निर्भर है और बिना अन्य के सहज ही उपलब्ध हुए नष्ट हो जायेगा। संसारी जीवों ने, विशेपकर मानव ने, अपने को कृत्रिम रूप से ऐसा बना लिया है कि अन्याश्रय प्राप्त हुए बिना उसे लगता है वह जी न सकेगा। खेद की बात तो यह है कि वह अन्याश्रय की इस वृत्ति को बढ़ाने में अपना छोटापन न मान बड़ापन मानता है। बड़ापन तो महावीर आदि महापुरुषों का है जिन्होंने तन ढँकने को वस्त्र, उदर पूर्ति के हेतु आहार, रहने को मकान, चलने को सवारी आदि को त्याग स्वयं को मुक्त परमात्मा बना लिया। पौद्‌गलिक पदार्थों का परिग्रह ही जीवों का संसार है, वह उन्हें जिलाता हुआ लगता है पर वस्तुतः वह उन्हें पुनः पुनः मारता है।

—सम्पादक

आज अमीरी व गरीबी की जो चौड़ी खाई समाज के समक्ष है उस समय भी पूर्णरूप से व्याप्त थी जिस समय भगवान महावीर ने अपनी जन्म-जात प्रतिभा से इस वसुन्धरा को पवित्र किया था। भगवान महावीर ने इस खाई को समाप्त करने के लिए "अपरिग्रहवाद" का वह सिद्धान्त प्रतिपादित किया, जिसका आधुनिक नाम समाजवाद है, जिसके द्वारा ही भगवान महावीर ने अपने समय की बढ़ती हुई इस अमीरी व गरीबी पर ब्रेक लगाया जिससे प्रजा को शान्ति व सान्त्वना मिली। उस अपरिग्रहवाद रूप मे समाजवाद से आज भी शान्ति व सान्त्वना मिल सकती है किन्तु आवश्यकता है उसको—"जीवो और जीने दो" के सिद्धान्त के साथ अपनाने की।

आज संसार के प्रत्येक मनुष्य के सामने भोजन, वस्त्र और आवास की समस्यायें मुँह बायें खड़ी हैं। इन समस्याओं का समाधान अपरिग्रह के द्वारा ही हो सकता है। आज जो समाज में अनाप-शनाप परिग्रह की दौड़ लग गई है उसमें मुख्य रूप में तीन बुराइयों ने जन्म लिया है। वह हैं (1) विषमता, (2) विलासिता और (3) क्रूरता। जब वस्तुओं का संग्रह एक स्थान पर हो जाता है तब दूसरे लोग उन वस्तुओं के अभाव में दुःखी हो जाते हैं। गरीब-अमीर ऊँच-नीच आदि समस्यायें इसी के परिणाम हैं। परिग्रह की वृत्ति सामाजिक जीवन में कटुता, घृणा और शोषण को जन्म देती है। अपने पास उतना ही रखना जितना आवश्यक है, बाकी

शेष समाज को अर्पित कर देना ही अपरिग्रह पद्धति है । धन की सीमा, वस्तुओं की सीमा य सव स्वस्थ समाज के निर्माण के लिये जरूरी है । धन हमारी सामाजिक व्यवस्था का आधार होता है और कुछ हाथो मे उसका एकत्र हो जाना समाज के वहुत वड़े भाग को विकसित होने से रोकता है। जीवनोपयोगी वस्तुओं का सग्रह समाज मे अभाव की स्थिति पैदा करता है । भगवान महावीर ने कहा था कि यदि गृहस्थ मानव को परिग्रह आवश्यक भी है तो आवश्यकता से अधिक वस्तुओं को सग्रह न करे । आवश्यकता के अनुसार उसकी सीमा निश्चित कर ले । यह सवके हित के लिये उत्तम है । लेकिन आज मानव को विश्व के सारे पदार्थ मिल जाये पर उसका मन और अधिक पाने को लालायित रहता है । लालसा के कारण ही मानव झूठ वोलना, चोरी करना, दूसरो से ईर्ष्या व द्वेष करना आदि घृणित कार्य भी कर वैठता है । यदि हम अपनी आवश्यकताओं को कम और सीमित करले, इच्छाओं पर अकुश लगाले तो अशान्ति का कारण ही नही रहेगा । सन्तोष से प्राप्त वस्तुओं मे शान्ति और सुख का अनुभव करने लगेगे । आवश्यकता से अधिक वस्तुऐं एक स्थान पर सग्रहित न रहने पर वे सबके लिये सुलभ हो जावेगी । अभाव से जो विरोध व सघर्ष होते हैं स्वत समाप्त हो जावेगे । वास्तव मे विश्व मे आवश्यक सुविधाओं की कमी नही है पर जो अभाव आज दिखाई देता है उसका प्रधान कारण है कुछ व्यक्तियो द्वारा आवश्यकता से अधिक सग्रह, जिसे आज हम जमाखोरी की सज्ञा देते हैं । हम सब अच्छी तरह जानते हैं कि कोई भी प्राणी न कुछ साथ लेकर आता है और न साथ ले जाता है । फिर यह सग्रह क्यो ? रात दिन सोते वैठते हाय हाय व तृष्णा क्यो ?

यदि सम्पूर्ण मानव समाज सुख व शान्ति चाहता है तो भगवान महावीर के अपरिग्रह रूपी दीपक से अपने हृदय व मन को आलोकित करे, जिससे पूजीपति व मजदूर की, अमीर व गरीव की दूरी समाप्त हो सके, समाज मे से अशान्ति मिट सके ।

मनु विला
5 झ 5 जवाहर नगर, जयपुर

□□

'जो धन रूपी पिशाच से पीडित है ऐसे योगी मुनि भी यम, नियम व शान्त-भावो से उत्पन्न राज्य को तथा तप और स्वाध्याय के ग्रहण को छोड़ देते है ।[16/23] धन का सग्रह पुरुषो के पुण्य कार्यों से उत्पन्न हुई समस्त मनोवाछित दनेवाली सिद्धियो मे विघ्न करता है ।[16/24] कदाचित् सूर्य तो अपना प्रकाश छोड़ दे और सुमेरू पर्वत (अचलता) छोड़ दे, परन्तु परिग्रह सहित मुनि कदापि जितेन्द्रिय नही हो सकता ।[16/26] जो पुरुष वाह्य के परिग्रह को भी छोड़ने मे असमर्थ है वह नपुसक आगे कर्मों की सेना कैसे हनेगा ?[16/27]

—आ शुभ चन्द्र कृत 'ज्ञानार्णव' से

प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव एवं चौबीसवें महावीर

☆ राजेन्द्र कुमार गोदीका
प्रधानाचार्य

इस अवसर्पिणी में चतुर्थकाल के पूर्व तीर्थंकर ऋषभदेव आत्मविद्या के प्रथम प्रणेता थे और चतुर्थकाल के अन्त में आत्म कल्याण का मार्ग बताकर चौबीसवें अंतिम तीर्थंकर महावीर मुक्ति को गमन कर गये । प्रथम की आयु करोड़ों वर्षो की थी तो अंतिम की 72 वर्ष, प्रथम की देह 500 धनुष्य थी तो अंतिम की सात हाथ, प्रथम ने गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया, राज्य भार संभाला तो अंतिम ने कुमार काल में ही संसार त्याग कर दिया । वाह्य परिस्थितियों में भी दोनों के काल में बड़ा अन्तर था । प्रथम के काल में लोग ऋजु/सरल परिणामी थे, अंतिम के काल में वक्र परिणामी थे, हिंसादि पापों में धर्म के नाम पर, और अन्यथा भी, लिप्त हो रहे थे । इन भेदों के बीच त्याग-तप का मार्ग दोनों का एक ही था ।

—सम्पादक

जैन धर्म के प्रवर्तक भगवान महावीर को माना जाना भ्रांतिपूर्ण है । वास्तव में जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ के समय से अब तक समस्त विश्व को सन्मार्ग पर चलाने वाले तीर्थंकर, मुनि व आर्यिकाओं द्वारा समाज सुधार एवं आदर्श मार्गदर्शन की प्रक्रिया चलती रही है । प्रकृति परिवर्तनशील है । इसमें नित्य परिवर्तन होते रहते हैं । सदा ही आंशिक विनाश के समानान्तर आंशिक उत्पाद भी होता रहता हैं । जीवन-कल्प के प्रारंभ में मनुष्य ज्ञान विज्ञान की विविध शाखाओं से अपरिचित था । इस वन संस्कृति एवं भोग काल में अति सूक्ष्म परिवर्तनों के साथ समस्याओं एवं आवश्यकताओं का उदय हुआ । इसी व्यवस्था के अन्तिम कुलकर नाभिराज द्वारा परिवार का विकास व नेतृत्व प्रगट हुआ । ऐसे में नाभिराज के यहाँ असाधारण एवं लोकातिशायी महापुरुष भ. ऋषभदेव का जन्म हुआ । जन्मस्थल नगरी का नाम "अयोध्या" था–जहाँ कोई युद्ध नहीं—एवं इनकी माता मरू देवी विश्ववंद्य, रूप, बुद्धि, द्युति और विभूति में अद्वितीय थी । बालक मतिज्ञान श्रुतज्ञान एवं अवधिज्ञान का धारक एवं सूर्य के समान तेजस्वी था । इनका सरस वर्णन अपभ्रंश भाषा के महाकवि पुष्पदंत ने "महापुराण" में किया है ।

ऋषभदेव के भरत आदि सौ पुत्रों एवं दो पुत्रियों का जन्म हुआ । भरत चक्रवर्ती एवं महाप्रभावी था । इन्हीं के नाम से आज यह देश भारत कहलाता है । सौ पुत्रों के जन्म का विवरण महाभारत में भी मिलता है ।

भगवान ऋषभदेव द्वारा ही लिपि एवं अंक विद्या का आविष्कार किया गया । उन्होंने जनता को विविध ज्ञान एवं विभिन्न कला, आयुर्वेद, वस्त्र निर्माण आदि का शिक्षण दिया । यहीं से भोग काल की समाप्ति पर कर्मकाल का प्रारम्भ हुआ । मानव ने इसी समय से कृषि को अपनाया । आदिपुराण मे वर्णित लेख के अनुसार भगवान ने असि, मसि, कृषि विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन छः कर्मों का उपदेश दिया । इस प्रकार पृथ्वी पर सहयोग एवं समानता के जीवन की स्थापना कर भगवान वैराग्य को प्राप्त हो गये । इनके विचारों में परिवर्तन आया, शरीर आत्मा नहीं है, आत्मा अनन्त गुण का पिण्ड है, ज्ञान-दर्शन-वीर्य की

अनन्त विभूतियो का स्वामी हैं । शरीर को प्राप्त समस्त सुख साधन भौतिक हैं, वैभव क्षणिक हैं, इनसे सुख की कल्पना भी क्षणिक हैं—यदि चिरस्थायी है तो वह है आत्मा की विभूति, आत्मा के गुण, और इसी चिन्तन मे लीन भगवान ने राज्य का विभाजन कर सिद्धार्थक वन मे प्रवेश किया । समस्त सुखो के साधनो को त्याग कर दिगम्बर हो गये एव पुरिमताल (प्रयाग) मे दीक्षा ली । छ प्रकार के वाह्य तप एव छ प्रकार के आभ्यन्तर तपो को अभ्यास करते हुए आत्मध्यान मे लीन-भगवान ऋषभदेव अक्षय-वट के नीचे अक्षय ज्ञान को प्राप्त कर तीर्थंकर वने । यही इनके मुख से प्रथम दिव्य ध्वनि खिरी ।

सन्मतिर्महतिर्वीरो महावीरोऽन्त्य काश्यप ।

नाथान्वयो वर्धमानो य तीर्थमिह साम्प्रतम् ॥(धनन्जयकृत अनेकार्थमाला-श्लोक-115)

शरीर सौष्ठव से परिपूर्ण शक्ति के धनी, शूरवीर महावीर को आज सारा ससार जानता है । इन्हे वचपन से ही सासारिक भोगो से विरक्ति — शाश्वत जीवन प्राप्ति के लिए साधना को उद्देश्य मानकर हमेशा चिन्तन करना तथा जीवन के वास्तविक सुख की खोज मे लगे रहना ही महावीर का कार्यक्षेत्र था । तीस वर्ष की आयु मे मुनि दीक्षा, एकाकी जीवन और वाह्य परिग्रह के साथ-साथ आभ्यन्तर परिग्रह का त्याग किया। वारह वर्ष की कठोर तपस्या एव चिन्तन के पश्चात् तीर्थंकर महावीर ने समाज को जीवन की वास्तविकता से स्वय के प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा आदर्श उपस्थित कर अनुभव कराया तथा शिक्षा दी कि इन्द्रियो पर नियत्रण, सयमित जीवन, अपरिग्रह, अहिसा व दया का आचरण जीवन मे आत्मिक सुख के लिए आवश्यक है । अहिसा को आधार वनाकर भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त की । भगवान के मौन स्वरूप चिन्तन का लाभ मूढ़ व्यक्ति कैसे ले सकता था, अत भगवान द्वारा समस्त जनमानस को जीवन की शिक्षा दी गई । इनके विशाल सघ मे ॥ गणधर, 9900 शिक्षक, 1300 अवधिज्ञानी, 700 केवलज्ञानी, एक लाख श्रावक व तीन लाख श्राविकाये तथा असख्य भक्त थे। उनका उपदेश अर्द्धमागधी भाषा मे होता था । उनके उपदेशो का प्रभाव निर्धन से लेकर राजाओं तक समान रूप से पड़ता था ।

इस प्रकार ऋषभदेव के काल से महावीर तक चौवीस तीर्थंकरो ने अपने अपने आयुकाल मे भारतभूमि के जनमानस को प्रेरणा व उपदेश अपने स्वय के जीवन को आदर्श के रूप मे प्रस्तुत करते हुए देकर समाज मे जागृति उत्पन्न की ।

आज के तनावपूर्ण वातावरण मे तीर्थंकर ऋषभदेव से लेकर महावीर तक के आदर्श इतने महत्वपूर्ण हो गये है कि इनकी अनुपालना एव उनके द्वारा प्रशस्त किये गये मार्ग पर चलकर हम आत्मसुख प्राप्त कर सकते हैं एव ससार को शान्ति के मार्ग पर चला सकते हैं ।

जैन धर्म के सिद्धान्त पूर्णत वैज्ञानिक आधार पर वनाये गये हैं । वालक वालिकाओं मे ये सस्कार वचपन से ही उत्पन्न किये जाये । इसके लिए आवश्यक है कि हम सभी का विश्वास एव इच्छाशक्ति भी इस सीमा तक दृढ़ वने कि हम अपने दैनिक जीवन के प्रत्येक कर्म करते हुए जैन सिद्धान्तो का अनुसरण करते रहे तथा समस्त समाज के समक्ष ऐसा आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करे कि सव लोग शान्ति एव सहयोग के साथ अहिसा व अपरिग्रह के मार्ग पर चल सके ।

2128, मनिहारो का रास्ता
नेहरु वाजार, जयपुर

□□

सभा द्वारा आयोजित वरिष्ठ छात्र प्रतियोगिता में प्रथम-

"पर्यावरण रक्षा हेतु जैन धर्म के सिद्धान्तों की भूमिका"

-अनेकांत जैन, XIA
श्री दि. जैन संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर

प्रस्तावना—विश्व के मानचित्र पर उभरने वाले प्रमुखतम् विचारणीय मुद्दों में से एक मुद्दा है—पर्यावरण के गहराते संकट का समाधान कैसे हो ? मानव को शुद्ध जल, वायु तथा वनस्पतियाँ किस प्रकार उपलब्ध हों ? पर्यावरण में निरन्तर फैल रहा प्रदूषण आज जन-जन की समस्या वन चुका है ।

मनुष्य का जनजीवन जिस आदिम एवं वर्वरपन से निकल कर नये परिवेश में आया है उसका रखरखाव एवं प्राकृतिक संतुलन हेतु प्रयास हमारी संस्कृति, धर्म और सभ्यता का महान् लक्ष्य होना चाहिए । इस हेतु जैन **धर्म के सिद्धान्त** मूल तत्व है जो पर्यावरण को संतुलित रखने में एक अहम् भूमिका का निर्वाह करते हैं ।

हमारा जीवन व्यवहार और संयम पर्यावरण के अस्तित्व की आधार शिला है । जैन सिद्धान्त संयम का प्रतिपादन करता है उसके विचार हमारे व्यावहारिक जीवन को सात्विक वनाते हैं जिससे वातावरण पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है ।

षट् आवश्यक के संदर्भ में पर्यावरण—

जैन सिद्धान्तों में जैन अनुयायियों अर्थात् श्रावक के लिए सामान्य, संयमी तथा व्यवस्तित जीवन जीनें के लिए छः आवश्यकों का प्रतिपादन किया गया । इन छः आवश्यको को शास्त्रों में इस श्लोक के माध्यम से समझाया गया है—

"देव पूजा गुरुपास्ती स्वाध्यायः संयम स्तप
दानेञ्चेति गृहस्थानां षट कर्माणि दिने दिने"

(1) देव पूजा (2) गुरु की उपासना (3) स्वाध्याय(4) संयम (5) तप (6) दान — इन छः आवश्यक कर्तव्यों में गृहस्थ को आचरण करना चाहिए । व्यक्ति के मानसिक भाव जितने निर्मल होंगे वह उतना ही कम उत्तेजित होगा । इन छः आवश्यकों के माध्यम से पर्यावरण के वातावरण को सुधारने में व्यक्ति समर्थ हो सकता है । संयम और तप उसके जीवन के यदि आदर्शन है तो उसके मन अशांति फैलाने के भाव ही उत्पन्न नहीं होगें ।

जैन धर्म के पाँच सिद्धान्त और पर्यावरण—

हम चाहें तो पृथ्वी को प्राकृतिक विस्फोट से बचा सकते हैं । इसके लिए हमें स्वयं में सुधार करना होगा । इसका कारण कहीं और नहीं हमारे भीतर ही छुपा है । वे कारण है-

(1) हिंसा (2) झूठ (3) चोरी (4) कुशील (5) परिग्रह

ये मनुष्य के पाँच विकार है ये ही पाँच विकार हमारे जीवन मे उथल पुथल मचा कर अशात भाव पैदा करते हैं । ये वहिष्कार के योग्य हैं । इन पाँच विकारो के विरोध स्वरूप जैन धर्म ने पाँच सिद्धान्तों का जय घोष किया । वे हैं

(1) अहिसा (2) अस्तेय (3) अचौर्य (4) ब्रह्मचर्य(5) अपरिग्रह

(1) **अहिंसा का सिद्धान्त**—"अहिसा" नामक शव्द ही जैन धर्म उसके दर्शन और सिद्धान्तो का पर्यायवाची रूप वन चुका है । सपूर्ण जैन दर्शन की पृठ भूमि इसी अहिंसा के सिद्धान्त पर आधारित है । अहिसा ने अपनी जड़ के द्वारा जैन धर्म के करुणा प्रधान रूपी वटवृक्ष को खड़ा रखा है । इस सवध मे कहा है—

"स्याद्वादो यत्र विद्यते तत्र पक्षपात्रो न विद्यते
अहिसाया प्रधानत्व जैन धर्म स उच्यते"

वास्तव मे अहिंसा से वढ़कर पूरे विश्व मे कोई सिद्धान्त नही जो पर्यावरण के रक्षण मे इससे वड़ी भूमिका अदा कर सके । अहिसा का अर्थ है किसी भी जीव को न मारना । किन्तु जैन धर्म मे यह मात्र सतही नही है यहाँ त्रस और स्थावर दोनो प्रकार की हिंसा को त्याज्य वताया है । निरन्तर वढ़ रहे माँसाहार के प्रचलन से तथा अन्यान्य सामग्री तैयार करने के माध्यम से जो वन्य जीवो का ह्रास हो रहा है उसने पर्यावरण के सतुलन पर गहरा कुठाराघात किया है । इस सिद्धान्त का अनुसरण करने से पर्यावरण को पूर्णत सतुलित किया जा सकता है । जैन धर्म मे वनस्पती कायिक जीवो की हिसा को भी त्याज्य वताया है । निरन्तर वढ़ रही वनो की कटाई, वृक्षो के उन्मूलन को इस सिद्धान्त के माध्यम से अकुश लगाया जा सकता है । और वनस्पती तो पर्यावरण के सतुलन की जान है । इस सिद्धान्त के माध्यय से तो पर्यावरण की पूरी समस्याओं का समाधान सभव है ।

(2) **अस्तेय का सिद्धान्त**—अस्तेय का अर्थ होता है झूठ न वोलना । झूठ हमारे आसपास के वातावरण को प्रदूपित करता है । इससे द्वेप की भावनाये पनपती है । यह अशाति का कारण है । इस सिद्धन्त के माध्यम शाति का वातावरण तैयार किया जा सकता है। ताकि पर्यावरण सतुलित रहे ।

(3) **अचोर्य का सिद्धान्त**—अचौर्य का अर्थ होता है चोरी नही करना । चोरी हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र म किसी न किसी रूप म विद्यमान रहती है । वैद्य हथियारो का निर्माण, अवैध सामग्रीयो का कारखानो मे अवैध निर्माण जिनके निर्माण से धुओं द्वारा हवा जहरीली होती है । वातावरण प्रदूपित हो जाता है इस सिद्धान्त के माध्यम से इन सभी चोरियो पर अकुश लगा कर पर्यावरण रक्षण मे योगदान दिया जा सकता है ।

(4) **ब्रह्मचर्य का सिद्धान्त** —पर्यावरण को असतुलित करने मे मात्र प्रकृति ही कारक नही हे वरन् उसका मूलवूत कारण एक और है वह है "असयम", सयम की अर्धवेक्ता को जाने विना जीवन व्यवहार वास्तव मे विकृत हो जाता है ।

सयम अर्थात् (ब्रह्मचर्य) मनुष्य के भावो की शुद्धता का मुख्य कारक है । सयमी व्यक्ति कभी हिसा नहीं करता वह व्रतो का पूर्णत पालन करता है । ब्रह्मचर्य के माध्यम से

कषायों का अभाव करके वातावरण को शुद्ध किया जा सकता, यह पर्यावरण के रक्षण में मूल तत्व है ।

(5) **अपरिग्रह का सिद्धान्त** —अपरिग्रह का अर्थ होता है उपयोग में आने वाली वस्तुओं का आवश्यकता से अधिक संग्रह नहीं करना । पूरे विश्व में फैले असमानता के वितरण की समस्या का यह उत्कृष्ठ समाधान है । यह किसी कानून के माध्यम से नहीं रोका जा सकता वरन जव व्यक्ति को इस सिद्धान्त की उपयोगिता समझ में आ जाये तो पर्यावरण की समस्याओं का समाधान दुर्लभ नहीं । अनाज भंडारन करने की प्रवृत्ति,धन एकत्र करने का लोभ इत्यादि कारक वातावरण को प्रदूषित करते हैं । इस सिद्धान्त के माध्यम से दूसरी रोकथाम भी संभव है ।

सहअस्तित्व के सिद्धान्तों की भूमिका —जैन धर्म में सहअस्तित्व के सिद्धान्त पर वल दिया गया है । सह अस्तित्व से तात्पर्य मात्र अपने विपय में न सोचना हमारे अलावा अन्य भी है इसकी मानसिकता का विकास करना सहअस्तित्व की धारणा फेलती सांप्रदायिका, जातिवाद और भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए उपयोगी हैं । हम जो कुछ करते हैं, सीखते हैं, जानते हैं — मात्र अपने लिए इसलिए पर्यावरण की रक्षा के उद्देश्य से इस भावना को भी विकसित करना होगा कि इस जगत में "दूसरा" भी है । यदि इस भावना का विकास हुआ तो पर्यावरण की रक्षा में कोई शंका ही नहीं रहेगी । वातावरण व्यक्ति स्वयं विगाड़ता है । जव व्यक्ति के विचार शुद्ध हो जायेंगे वह अपने क्रियाकलापों पर नियंत्रण कर लेगा तव पर्यावरण स्वमेव शुद्ध हो जायेगा ।

आहार शुद्धि का उद्घोष—आधुनिक युग में पर्यावरण अशुद्धि के कारणों में एक और कारण प्रकाश में आया वह है "आहार की अशुद्धि" । आहार की अशुद्धि अर्थात् मॉंसाहार, तामसिकता । इस मांसाहार ने व्यक्ति की मनोवृत्ति को खराव कर दिया । मांसाहार से अन्याय, वेकसूर प्राणियों की हत्या तो होती ही है । अशांति भी फैलती है । "जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन" । मॉसाहार ने व्यक्ति की मानसिकता में क्रूरता भर दी है । इसलिए जैन धर्म ने आहार शुद्धि अर्थात् शाकाहार का उद्घोष किया ताकि पर्यावरण रक्षण में हिंसा का फैलता काला साया रुके और अहिंसा का प्रकाश जगमगाये ।

उपसंहार—जैन दर्शन में विश्व दर्शन वनने की क्षमता ही यह तथ्य निर्विवाद है । इस जैसी महनता व्यापकता करुणा अन्य दर्शनों में दुलर्भ है । वैज्ञानिकता से परिपूर्ण यह दर्शन संपूर्ण दर्शनों में श्रेष्ठ है क्योंकि कही विज्ञान की व्यापकता है तो धर्म की नहीं कही धर्म की व्यापकता है तो विज्ञान की नही किन्तु जैन दर्शन ने सभी चीजों को अपने में समाहित किया है ।

आज इस वात की महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि जैन सिद्धान्तो और उसकी उपयोगिताओं को जन-जन तक पहुँचाया जाय । हमारी आरंभ से ही यह कमजोरी रही है कि हमने जैन धर्म के सिद्धान्तों और उसकी मर्यादाओं की सीमा मे कैद रखा । न जाने किस भय से इस मानव धर्म को हम समान्य जनता से इतने दूर रखे रखा आज वह जैन धर्म का नाम सुनकर अचरज करती है कि ऐसा भी धर्म है । आज जव कि हमने इन महत्वपूर्ण सिद्धान्तों तथा उपयोगिताओं को जन साधारण में समझाने का प्रयास शुरू किया है तव हमें यह वतलाना होगा कि जैन धर्म के महान सिद्धान्तों में भी पर्यावरण रक्षण का समुचित समाधान खोजा जा सकता है ।

जैन धर्म के अनुसार मेरी जीवन चर्या

-सुश्री तरुण लता यादव, VIIIB
श्री पद्मावती जैन उ मा विद्यालय, जयपुर

रूपरेखा —

1 जैन धर्म के प्रमुख सिद्धान्त

2 जैन धर्म के अनुसार जीवन,

3 जैन धर्म के अनुसार मेरी जीवन चर्या

4 जैन धर्म के सिद्धान्तो के अनुसार चलने से लाभ

5 उपसहार

1 जैन धर्म के प्रमुख सिद्धान्त—भारत वर्ष मे सभी धर्मों को विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ है । जैन धर्म परम्परा के अनुसार काफी प्राचीन है । जैन के अन्तिम व चौबीसे तीर्थंकर महावीर स्वामी थे । इनसे पहले 23 तीर्थंकर हो चुके थे । जैन धर्म के उपदेश सरल तथा उच्च हैं । इस धर्म के अनुसार विश्व मे दो बुनियादी वस्तुएँ है—जीव और अजीव। जैन धर्म का कहना है कि मनुष्य को उसके कर्मों के अनुसार फल भोगना पड़ता है। अत मनुष्य को अच्छे कर्म करने चाहिए । बुरे कर्मों का परिणाम भी बुरा ही होता है । मनुष्य को उनसे मुक्ति पाना परमावश्यक हैं ।

आकिचनस्य दान्तम् ान्तस्य समचेतसमचेतस
सदा सतुष्टमनस सव सुखमया दिशा

जैन धर्म के प्रमुख सिद्दात निम्नलिखित हैं—

1 अहिंसा 2 सत्य 3 अचौर्य 4 ब्रह्मचर्य 5 अपरिग्रह

1 अहिंसा—जैन धर्म ने अहिसा पर अत्यधिक बल दिया है । प्रत्येक जीव त्रसस्थावर, चेतन आदि मे भी आत्मा निवास करती है । इसके अतिरिक्त वायु, जल आदि मे भी आत्मा का निवास होता है । प्रत्येक जीव की रक्षा कर अहिंसा का आत्मवत् पालन करना चाहिए । महात्मा गाँधी ने भी अहिंसा के बल पर ही देश को आजाद कराया । मन, वचन, काय से कोई भी ऐसा कार्य नही करना चाहिए जिससे किसी जीव को चोट पहुँचे । यहाँ तक की मन मे भी ऐसी भावना लानेसे पाप लगता है । अहिंसा का पालन करने से मनुष्य मे अच्छे विचार आने लगते हैं । अहिंसा एक ऐसा मत्र है जिससे हमे स्वर्ग की प्राप्ती होती है । अत अहिसा का पालन करना चाहिए ।

2. **सत्य**—जैन धर्म ने सत्य तथा मधुर वचन बोलने को कहा है । असत्य वचन बोलने से हमें पाप का भागी बनना पड़ता है । हमें क्रोध तथा लोभ को जीतकर झूठ से बचना चाहिएं । हमें राजा हरिशचन्द्र की तरह सत्य के पथ पर चलना चाहिए । सत्य का मार्ग बहुत सकड़ा है । अतः लोग इस मार्ग को छोड़ कर असत्य वाला मार्ग जो बहुत चौड़ा पर चलते हैं । लेकिन सही मार्ग सत्य वाला है । मनुष्य सत्य का पालन करने से अन्त से स्वर्गप्राप्त करता है । इसलिए जैनधर्म ने सत्य पर बहुत बल दिया है ।

3. **अचौर्य**—किसी की वस्तु को बिना अनुमति के नहीं लेना चाहिए और न ही लेने की इच्छा ही करनी चाहिए । किसी की भौतिक वस्तुओं को चाहे वे भूली हुई, पड़ी हुई या गिरी हुई को छूना भी नहीं चाहिए । मन में भी ऐसी भावना नहीं रखनी चाहिए । ऐसी बुरी भावनाओं से मनकलुषित हो जाता है और ऐसा कार्य करने से हमें नरक की प्राप्ती होती है जबकि यदि हम अचौर्य का पालन करेगें तो हमें स्वर्ग की प्राप्ती होगी ।

4. **ब्रह्मचर्य**—अपनी विवाहिता स्त्री के सिवाय किसी अन्य स्त्री के साथ काम सेवन नहीं करना, न ही ऐसी भावना रखना । अन्य स्त्री को बुरी नजर से नहीं देखना चाहिए । ब्रह्मचर्य ऐसा व्रत है जिससे मनुष्य पूर्ण रूप से स्वतंत्र है । ब्रह्मचर्य का पालन सुखदकारी है । इससे मन में जो वासनाएँ जन्म लेती हैं नष्ट हो जाती है । तथा मन शान्त तथा संतुष्ट हो जाता है ।

5. **अपरिग्रह**—मनुष्य को अपनी आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह नहीं करना चाहिए । मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं के अतिरिक्त वस्तुओं को प्राप्त करने की लालसा बनी रहती परन्तु यह उसके लिए हानिकारक है । अपरिग्रह का पालन करने से मनुष्य चिंताओं से मुक्ति पा सकता है । उसकी आवश्यकताएँ सीमित तथा आशाएँ कम होती जाती है । जिससे मनुष्य को लाभ होता है । तथा अन्त में स्वर्ग का मार्ग सरलता से प्राप्त होता है। 'बढ़त-बढ़त सम्पत्ति सलिल मन सरोज बढ़ी जाए । घटत-घटत फिर ना घटे, घटे तो कुम्लाह जाए ।

2. **जैनधर्म के अनुसार जीवन**—जैन धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार मनुष्यों को इनका पालन करना चाहिए । जैन धर्म के अनुसार जीवन सादा तथा उच्च होना चाहिए । अहिंसा का पालन, सत्य का पालन, अचौर्य का पालन, ब्रह्मचर्य का पालन तथा अपरिग्रह का पालन करने से मन संतुष्ट तथा शान्त रहता है । जैन धर्म के अनुसार हमें माँस नहीं खाना चाहिए । मादक पदार्थो (शराब सिगरेट, धूम्रपान) का सेवन नहीं करने से शरीर ठीक रहता है । हमें दान भी देना चाहिए । जैन धर्म में कहा गया है कि मनुष्य को कभी भी लोभ नहीं करना चाहिए । हमें किसी भी जीव को मारना या सताना नहीं चाहिए । माता-पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिए कोई वस्तु जो कि जीव हत्या या जीव के मृत शरीर से प्राप्त हुई हो । उसका उपयोग नहीं करना चाहिए । कोई ऐसा वस्त्र भी नहीं पहनना चाहिए जिसमें जीव की हत्या हुई हो जैसे रेशमी वस्त्र । तथा चमड़े की वस्तुओं जूते, बेल्ट, पर्स का उपयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि उनमें कई त्रस जीव उत्पन्न तथा मरते रहते हैं । प्रातः उठकर नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करना चाहिए । देवदर्शन प्रतिदिन करने चाहिए । इससे आत्मा को शांति प्राप्त होती है तथा मन का मैल धुल जाता है । सूर्य उदय के बाद तथा सूर्य अस्त के

पहले ही भोजन करना चाहिए । रात्रि भोजन का तो पूर्ण रूप से त्याग कर देना चाहिए । डाक्टरो का भी कहना है कि भोजन के 6 घण्टे तक नही सोना चाहिए । ऐसा करने से शरीर ठीक रहता है । नाखूनी करने लिपिस्टीक तथा पाउडर आदि प्रयोग नही करना चाहिए क्योंकि ये जीव हत्या से प्राप्त होते है । कृत्रिम मोतीयो की मालाए भी हड्डी से बनायी जाती है अत इनका उपयोग नही करना चाहिए । पानी भी छानकर पीना चाहिए । जैन धर्म के अनुसार जीवन साफ तथा सादा होना चाहिए ।

3 **जैनधर्म के अनुसार मेरी जीवन चर्या**—जैन धर्म अनुसार मेरी जीवनचर्या बहुत अच्छी है । मैं सुबह उठकर णमोकार मत्र का जाप करती हूँ । प्रतिदिन देवदर्शन के लिए जाती हूँ किसी भी जीव की मन, वचन तथा काय से रक्षा करती हूँ । झूठ नहीं बोलती हूँ । किसी की वस्तु को बिना अनुमति के ग्रहण नही करती हूँ । आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का सग्रह नही करती हूँ । क्रोध तथा लोभ को त्याग कर इन सिद्धान्तो का पालन करती हूँ । जैन मुनियो, शास्त्रो तथा णमोकार मत्र का आदर करती हूँ । ऐसी किसी वस्तु, वस्त्र, का उपयोग नही करती हूँ जिसमे जीव हत्या हुई हो । रात्रि भोजन का त्याग करती हूँ । पानी भी छानकर पीती हूँ । मादक पदार्थो का सेवन नही करती हूँ । जैन धर्म के अनुसार मेरी जीवन चर्या सुखद है । यह हम पर निर्भर है कि हम सही रास्ता चुने या गलत । जैन धर्म के बताये मार्ग के अनुसार जीवन चर्या आदर्श जीवनचर्या है ।

4 **जैन धर्म के सिद्धान्तो के अनुसार चलने से लाभ**—जैनधर्म के अनुसार चलने से लाभ अधिक है । जीवन मे नियमितता आजाती है । मन सतुष्ट तथा सुख का अनुभव करता है । चिता तथा चिता मे एक बिन्दी का ही अन्तर है जब चिता का कारण ही नही रहेगा तो चिता होने के साथ जीवो के हितकारी भी होगे । सत्य तथा मधुर वचन बोलने से प्रत्येक व्यक्ति हमसे बात करना पसन्द करेगा । देवदर्शन करने से मन के विचार अच्छे होगे । तथा अन्त मे इन सिद्धान्तो के पालन के प्रभाव से मोक्ष प्राप्ती होगी । अत जैन धर्म अपनाने से लाभ ही लाभ है । हानि एक भी नहीं है ।

5 उपसहार—जैन धर्म ने समाज सेवा पर भी बल दिया हे । हिन्दु धर्म मे भी जैन धर्म ने कई प्रभाव डाले । इसी के प्रभाव से वैदिक काल मे पशुबलि प्रथा धीरे-धीरे समाप्त हो गयी । जेन धर्म समन्वय प्रधान धर्म है ' जैन की कई लोग निन्दा भी करते है परन्तु जैन धर्म कभी भी अपने सत्य मार्ग से विचलित नही हुआ । जैन धर्म ने सामाजिक समानता पर भी बल दिया जिससे लोगो मे समानता के भाव उत्पन्न हुए । और लोगो मे जागृति हुई । अत जैन धर्म एक मोक्ष प्राप्त का साधन है ।

☐☐

पंचम खण्ड

English Section

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

MAYUR GROUP OF COMPANIES

MAYUR SALES

(Manufacturers Automobile Interiors Original Equipments)

WE GIVE MEANING TO VEHICLE

- ☆ Welded Door Trims for Cars, LCV & Vans
- ☆ High Class Welded velvet seat covers for Cars
- ☆ Perforated Rooflining and Welded Rooflining
- ☆ Full set of Interior with High Quality Seatcover, colour matching Door Trims and Rooflining for cars
- ☆ Gypsy Hood and Canopies

AUTO INTERIOR INDUSTRIES

- ☆ Creating a class in Home furnishing through quilted fabric in wide range of designs

MAYUR LEATHER PRODUCTS (P) LTD

MANUFACTURERS AND EXPORTERS OF HIGH QUALITY

- ☆ Leather Shoe Upper
- ☆ Leather Shoes and other leather products

MAYUR UNIQUOTERS LIMITED

MANUFACTURERS OF HIGH QUALITY

- ☆ PU/PVC Leather Cloth

Office

MADHAV MANSION
1, Gopinath Marg
JAIPUR 302 001
Phones 361468 378897 365691
Telex 365 2191 MYUR IN
Gram MAYURSALES

Factories

Plot No 387, Road No 9F,
V K I Area, JAIPUR 302 013
Phones 832270, 832469
G 60 UDYOG VIHAR
Sikar Road
JAITPURA (Jaipur)
Phone 4353

THE ANTIQUITY & CORRECTNESS OF JAINISM :

☆ *M. P. JAIN*
M.A. LL.B.,
Deputy Registrar,
University of Rajasthan, Jaipur

Statements quoted from Vedic literature make Shri Jain hold Hinduism (Vedic tradition) an offshoot of Jainism in its inception. It is a daring hypothesis so far as modern scholarship is concerned. However, it has its support in the Jain Pauranic tradition. When the first Tirthankara Rishabh deva renounced the world, 4000 kings too renounced imitating him. Not knowing what to do (for 1000 years Rishabadeva spoke nothing) they began to propound different philosphies and religious practices of their own thinking. Though these currents flowed independantly, yet they all venerated Tirthankaras, as even today non-Jain laity and sadhus vernarate Tirthankara idols of Keshariaji (Rishabh deva) in Udaipur district, of Mahavir at Chandan goan (Rajasthan) etc. Upnishadic anecdotes stating Brahmin rishis as learning the concept of soul from Kshatriya princeces, in lite with shri Jain's thesis, admit an ameliorating influence of the Kshatriya religion of Tirthankaras i.e, Jainism on the vedic tradition. (See S. N. Das Gputa in his History of Indian Philosophy Vo 1, p 31)

Shri Jain's second thesis regarding the correctness invites serious attention. While he notes growth/change in Hindu/Vedic tradtion, for Jainism he says 'nothing of importance has been added or subtracted from its teachings through the long ages, Indeed this unshifting structure of basic principles, uncontradicted by man's sense perpception and reason, is necessary for an austere living that Jainism prescribes for his emancipation.

—Editor

The origin of the creed of Tirthankaras as that is Jainism, has been a fruitful source of speculation and error for the moderns who have advanced all sorts of hypotheses concerning its rise. It was at one time thought that it originated as an offshoot of Buddhism in the sixth century A.D. Recent research has, however, fully demonstrated the fact that it has existed at least for 300 years before Buddha, and modern Orientalists are now agreed on the point that Bhagwan Parasva Nath, the 23rd Tirthankara, is not a mythical figure, but a real historical being.

The following quotations would demonstrate the fact that Buddhism cannot possibly be regarded as the source of Jainism–

We cannot trace any relıable history of Jaınısm beyond Vardhmana Mahavıra This much, however, ıs certaın that Jaınısm ıs older than Buddhısm and was founded probably by some one, eıther Parasvanatha or some other Tırthankara who has lıved before the tıme of Mahavıra' Dr T K Laddu ın Jaın Gazette Vol X No 1

'The Buddhist hıstorıcal records, then, would seem to support the tradıtıonal Jaına representatıon of Mahavır as the last not the first, as Western scholars untıl recently have ınsısted of the Jaına 'crossıng Makers through the torrent of rebırth to the yonder shore" (ı e, The Tırthankaras) And there ıs good reason as we have seen, to concede that the crossıng Maker just precedıng hım, Parshwaratha, may have been an actual hıstorıcal personage But before Parshwanatha stands Arıstanemı (or Nemınath) the twenty second Tırthankara With thıs Tırthankara Jaına tradıtıon breaks beyond the bounds of recorded hıstory ınto the reaches of the mythologıcal past And yet ıt does not follow that the hıstorıan should be justıfied ın sayıng that some great renewer and teacher of the Jaına faıth perhaps named Arıshanemı dıd not precede Parshwanatha We are sımply not ın a posıtıon to know how for back the ımagınataon should be permıtted to go ın followıng the lıne of the Tırthankaras Dr Heınrıch Zımmer ın Phılosophıes of Indıa' PP 224-226

All Upper Western North Central Indıa was then, say 1500 to 800 B C and ındeed, from unknown tıme - ruled by Turanıans, convenıently called Dravıds and gıven to tree, serpent and phalık worshıp but there also then exısted throughout upper Indıa an ancıent and hıghly organızed relıgıon, phılosophıcal, ethıcal and severely ascetıcal vız Jaınısm, out of which clearly developed the early ascetıcal features of Brahamanısm and Buddhısm

Long before Aryas reached the Ganges or even the Sarsvatı, Jaınas had been taught by some twenty two promınent Bodhas, saınts or Tırthankaras prıor to the hıstorıcal 23rd Bodha Parsva of the 8th or 9th century B C and he knew all hıs predecessors-pıous Rıshıs lıvıng at long ıntervals of tıme, and of several scrıptures even then known as Purvas or Puranas that ıs, ancıent which had been handed down for ages ın the memory of recognısed anchorıtes, Vanaprasthas or forest recluses Thıs was more especıally a Jaına Order, severely enforced by all theır 'Bodhas and partıcularly ın the 6th century B C by the 24th and last Mahavıra of 598-526 B C Thıs ascetıc Order contınued ın Brahamanısm and Buddhısm throughout dıstant Baktrıa and Dacıa, as seen ın our Study I and S Books E, Vol XIII and XLV' Major General J G R Forlong FRAS MAI (Short Studıes ın the Scıence of Comparatıve Relıgıons pages 243-4)

The above expressions of opinion of non-Jaina writers while not always recognising the historicity of the first twenty-two Tirthamkaras of Jainism, fully establish the fact that it has prevailed in the world for at least 2800 years, that is to say, from a period of 300 years before Buddha.

Now the correctness and antiquity of Jaina faith is shown (proved) on the basis of evidence from scriptures of the other faith viz. Hindu religion whose some followers use to claim that Jainsim is its offshoot.

To begin with Hindu writings consist of Vedas, Brahamanas, Upanishads and Puranas. Of these the Vedas are the oldest; the Brahamanas come next in the order of time; the Upanishads follow still later and the Puranas last of all. All the Vedas also do not belong to the same period; that known by the name of Rig Veda being the oldest. Thus Hinduism is one of those creeds which are charcterised by periodic evolution and growth.

The fact speaks for itself, and gives rise to the inference that Hinduism has not always been what it is today; and it is clear that important additions have been made to it, from time to tome, to impart to it that look of perfection which it undoubtedly lacked in the Vedas, notwithstanding the highly mystic tone of their sacred hymns.

When we turn to Jainism we find a very different state of affairs. It is a purely scientific system of religion and insists on a thorough understanding of the problem of life or soul. Far from having received periodic additions, it has descended to us in its original form, and although a few schisms have taken place in its constitution during the last 1800 years or so, nothing of importance has been added to or subtracted from its teaching.

Early Hinduism, if taken in its esoteric sense, differs from the creed of the Tirthamkaras as much as any two dissimilar and disconnected things can differ from one another. The Jains cannot be Hindu dissenters. Whenever there is a division in a religious community the bulk of the creed remains the same. The differences arise only in respect of a few matters. If we regard Hinduism as non-allegorical and then compare it with Jainism, the differences are very great; their agreement is only in respect of a few particulars, excepting those matters which concern the ordinary mode of living (civilization). Even the ceremonies which appear to be similar are, in reality, different in respect of their purport, if carefully studied. The Jainas regard the world as eternal; the Hindus hold it to have been made by a creator. In Jainism worship is not offered to an eternal and eternally pure God; but to those Great ones who have realized their high ideal and attained to Godhood themselves; in Hinduism worship is performed of one Lord who is the creator and ruler of the world. The significance of worship in Hinduism is also not the same as that in Jainism. In Jainism it is a kind of idealatry that is practiced; there is no offering of food and the like; nor is a prayer made to the deity for boons. In Hinduism the attainment of the object is

by the will of certain divine beings who are to be propitiated In respect of their scriputures too, there are great differences between Hinduism and Jainism Not one of the Books of the Hindus is accepted by the Jains nor do the Hindus accept a single Sastra of the latter The contents too of the scriptures of the two religions differ Not one part of the four Vedas and the 18 puranas recogised in Hinduism is included in the Jaina Scripturers Nor is any part of the Socred Books of the Jainas included clearly or expressly in the Hindu Books The matters in respect of which there seems to an agreement between the Jainas and the Hindus are merely social their significance wherever they have a religious bearing is divergent Ordinarily agreement in respect of social matters is to be expected among communities that have been living together for a long time, especially when intermarriages take place between them, as amongst the Jainas and the Hindus There are several social customs which are common to the Jainas the Hindus and the Muhammadans but they have no special significance with reference to religion

The following quotations from Hindu Scriputures would prove not only the antiquity of Jaina religion but also superiority in terms of the fact that it finds a mention of either the Great Souls or the principles enunciated by them –

The Bada Yoga Vashishtha is equal to 36 000 verses (couplets) In its chapter on the negation of egotism under renunciation topic in the dialogue between Vasishtha and Rama it is described that

रामोवाच

नाह रामो न मे वाछा भावेषु च न मे मन
शान्तिमास्थाऽमिच्छामि, स्वात्मन्येव जिनो यथा ॥

Here in this verse Lord Rama has expressed his desire "Neither I am Rama not I have any desire nor my mind is entangled in the thoughts and objects rather I want to establish or attain peace in my own soul similar to the Jina (the conqueror omniscient Lord)" Thus Rama has expressed his desire to become like a Jina hence the supremacy and the antiquity of Jinadeva is proved in comparison to Lord Rama

And in Dakshinamurty-Sahasranaama it is said–

शिवोवाच

जैन मार्गरतो जैन जित क्रोधो जितामया

Here Bhagwat s name is described to be a Jain who is engrossed in the Jaina path (Jaina way of life) This also proves the prominence and antiquity of Jaina Path

In Prabhasa Purana it is stated that

पद्मासनासीन श्याममूर्ति दिगम्बर
नेमिनाथ शिवेत्येव नाम चक्रे अस्यवामन ॥

Here Vamana is said to have got the Darshana (glimpse) of Digamber God Neminath in Padmaasana posture and He is described as Shiva also.

In the same Purana it is further stated that :

रेवताद्रौ जिनो नेमिर्युगादिर्विमलाचले

ऋषीणामाश्रमादेवः मुक्तिमार्गस्य कारणाम् ॥

Here also Lord Neminath is called Jina, His abode is described as the hermitage of saints and the cause of liberation and the abode of Yoga etc. Hence he (Neminath) is proved to be supreme and adorable.

In the Rigaveda it is mentioned thus :

ओऽम त्रैलोक्य प्रतिष्ठान् चतुर्विशंति तीर्थकरान ऋषभाद्यान वर्धमानन्तान सिद्धान् शरणं प्रपद्ये । ओऽम पवित्र नग्नमुपविस्पृसामहे एषं नग्नं येषां जातं वीरं सुवीरं....इत्यादि

Here it is stated that I (the aspirant of liberation) take the refuse of 24 Tirthankaras from Rishabha etc. to Vardhman all liberated souls who are worshiped by whole of the universe... etc. and in the Yajurveda it is written so–

ओऽम नमो अर्हतो ऋषभाय and in the same veda it is furtuer stated ओऽम् ऋषभपवित्रं पुरुहूतमध्वज्ञं यज्ञेषु नग्नं परमं माहस्तुतं वरं शत्रुं जयंत पशुरिंद्र माहतिरिति स्वाहा । ओऽमूत्रातारमिंद्र ऋषभं वदन्ति । अमृतारमिंद्र हवे सुमतं सुपार्श्वमिंद्र हवे शक्रमर्जित तद्वर्द्धमान प्ररुहूतमिंद्र माहरिति स्वाहा । ....अरिष्ठनेमि स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु । ओऽम रक्ष रक्ष अरिष्ठनेमी स्वाहा ।

यजुर्वेद अ. २५ म १६ अष्ट ९१ अ ६ वर्ग ।

So here whatever names of Jaina Tirthankaras are spelled out above those are stated to be adorable. This proves that the Vedas were written after the incarnations of Jaina Tirthankaras.

If the hypothesis evolved out in these pages is correct, neither of these (old) theories can be said to be true, for the poet- sages were not intellectual babes, as they ae supposed to be, nor were they inspired by an omniscient God. Hinduism in its very inception was an offshoot of Jainism, though it soon set itself up as an independent system of religion. In course of time it fell under demoniacal influence in the form of animal sacrifice, the reaction against which is characterised by the intellectualism of the Upanishads and the metaphysical subtlety of the world-famous Darshans (schools or systems of philosophy)-Nyaya, Vedanta and the like.

References taken from :

(1) The Key of Knowledge : C. R. Jain (2) Moksha Marg Prakashaka : Pt. Todarmal. (3) The Religion of Tirthankaras : Dr. Kamta Prasad Jain

☐☐

RELIGION OF NON-POSSESSION

☆ *DR S C JAIN*

Murccha (Swoon) is Parigraha Murccha is in fact the unnatural phenomena of weaknesses and needs we have developed in our being that we have to depend variously on external things To root out every such weakness and become totally independent even of clothes food, house etc is the ideal in Sraman culture It is only on attaining this ideal that Mahavira could possess the infinite four knowledge perception, bliss strength We should understand that the desire of and dependence on external possessions is venomous to our godly divine spiritual riches The principle of aparigraha does not only help the individual to cleanse away the dirt of karmas which is the root of all his miseries from his soul but also when extended in a mini form to society at large would mitigate pollution and,as shri jain explains render nationl economy healthy and strengthen international peace

—Editor

Very closely connected with the principle of non-violence or rather more fundamental and important than it is the principle of non possession or aparigraha propounded in Jainism In Jainism violence is undesirable, because it goes against the spiritual nature of the soul Possession as its sanskrit equivalent parigarha etymologically means, implies the entrapping or being clutched of the soul from all sides and for that reason it is also undesirable Under the effect of possession the soul loses its purity and freedom and becomes subject to the enslavement of what is called the non soul, the antithesis of soul Umasvami defines 'parigarha by the term 'murccha'[1] thereby meaning that possession is responsible for generating a sort of perverted consciousness or forgetfulness or delusion in the soul, for which it is bound to go astray Says Amrtacandra, "By murccha we must understand this parigraha The manifestation of consciousness appearing in the form of belongingness and possession due to the operation of the deluding karma is called murccha "[2] Structurally speaking external possession becomes effective, when it is supported by the operation of karmas It is like emphacising the psychological view of the phenomenon of

possession. If a person entertains feelings of belongingness and possession, he is suffering from murccha even though he may have no external possession. Still there is a close tie between the internal and the external possession, though not admitted in an absolute manner. Hence the acarya states. "giving up of the two types of possession is non-violence, and owning them is violence."[3] The measure of murccha directly depends on the internal possession, the external possession is connected with it only indirectly. To hold the external possession absolutely ineffective is to jump to the other extreme, and is not a consistent way of thinking. For practical purposes it is advisable to hold the correspondence between the two. Such is the ideal form of the principle of aparigraha in Jainism. Non-violence and non-possession, thus, seem to be only the two sides of the same coin, and with a purpose of emphasis in view either of them can be brought to the front: Tirthankara Mahavira, one of whose appelatives is nirgrantha, can be said to be as much an apostle of non-possession as of non-violence.

With this philosophical back-ground the principle of non- possession descends to the level of society and the house-holders in the form of a minivow of delimiting the external possessions. This vow is the fifth cardinal virture prescribed for the householders, the other four being ahimsa, truth fulness, non-stealing[4] and chastity. It means putting a limit to welath, corn etc. in an avowed way and to charish no desire for things beyond the fixed limit[5]. For the sake of ethical discipline limits on ones possession are necessary. They help one to inculcate a sense of detachment with possessions beyond limits, because the practice is prompted by the basic philosophy behind the vow. Thus the observance of this vow brings a double gain in the realm of spirtuality for the individual. Considered socially this principledirectly helps the release of means for the uplift of the society and the country. It adversely hits the practice of hoarding which is one of the greatest evil even of the modern days and a hurdle in the upward way for the country. The minivow of non-possession is bound to lead to a balanced distribution of means of livelihood among the people. It will train the people in the sobre habits which a state or a society would like to inculcate among them.

The minivow of non-possession, while requiring delimitation of ones possessions, also implies truthfulness and honesty in industry trade and other professions with a view to bring about an equitable distribution of the national production, "Trade and industry for a profit motive is a base social ideal. The ideal is well expressed in the term mahajana which is a word for the business community in India and which means a noble person."[6] This reduces the businessmen to only agents to carry out the social plans. The gradually developing sense of detachment from the worldly and material objects will tend to what Mahatma Gandi desired under his theory of trusteeship Everyone, whether rich or poor, will think himself only as a trustee of the possessions

under his control and will not use them for his selfish satisfaction disregarding the interests of the society The right of private ownership will gradually lose its grip on the minds of the people, and thus many an economic problem of the present world will meet their solution

A socialistic state directs its activities with the same aim in view It emforces the principle of non possesson with its legislation Where there is some obstruction in voluntary limitation of possessions, the state devises various means to achieve it with its laws and regulations The success in this respect depends on the good intention and temperament of the state and on the honesty and devotion of the people who are meant to work for it It also depends on the fact how far the people are able to abstain from devising ways for defying and evading the state laws The laws relating to ceiling of property, imposition of various taxes the schemes of rationing and control of various items of necessity are examples of measures adopted to achieve the limitation of possessions by the people The law-abiding persons follow them out of a sense of duty, the rest are expected to train themselves to live a lawful life All these measures adopted by the individuals and the state, in a truthful spirit, are bound to solve many problems of the present world

We have been so far viewing the application of the pritniple of non possession extending from individuals to society and nation This extension can enter the international field as well and cover the various countries of the world Just as we are rquired to devise a machine to apply the principle within the bounds of a nation, so also in the international field a well thought out plan in the form of international institutions and laws is necessay These will aim at raising the status of the weak and back-ward nations with the means which the richer and the stronger ones are prepared to spare for their sake Thus all nations attaining a status of equality the possibility of wars will be reduced considerably, and the world s a whole can be expected to achieve peace and happiness for humanity to great extent. Whatever may be the origin of the principle of non possession, whether it is Jaina, Gandhian or stamped with any other label, it is bound not only to serve the interests of humanity but also those of the entire sentient world as Jainism would like to hold and emphacize

❑❑

विज्ञापन

Advertisement

राजस्थान जैन सभा उन सभी विज्ञापन दाताओं की आभारी है जिन्होंने इस स्मारिका में अपने प्रतिष्ठान का विज्ञापन देकर अपना सहयोग प्रदान किया है ।

महालक्ष्मी

प्रॉपर्टी डीलर

(रजि.)

1, शॉपिंग सेन्टर, जवाहर नगर, जयपुर-302 004

☎ 43576

☆ जमीन

☆ जायदाद

☆ मकान

☆ दुकान

के क्रय-विक्रय हेतु एक मात्र विश्वसनीय प्रतिष्ठान

ब्रांच आफिस

रेल्वे लाइन के पास
अग्रवाल फार्म रोड़
दुर्गापुरा, जयपुर-302 015
दूरभाष 551408

रूम न 6,
डीलक्स होटल, नूर बिल्डिंग,
एम आई रोड़, जयपुर-302 001
फोन 373489

With best compliments from :

A Renowned House For Quality :

PRINTING by Process of :

★ *OFFSET* ★ *LETTER PRESS* ★ *SCREEN* ★ *LEAF*

JAYNA PRINTERS & STATIONERS

673, Bordi Ka Rasta, Kishanpole Bazar, JAIPUR-3
Gram : 'JAYNAPRINT' Phone : 313068, 315881

JAYNA CALENDARS & PLASTICS

Leading Manufacturers & Suppliers of :

✲ DIARIES ✲ CALENDARS ✲ GIFT NOVELTIES
✲ WEDDING CARDS ✲ KEYCHAIN ✲ PLASTIC COVERS
✲ CONFERENCE FOLDERS ETC.

30, Chaura Rasta, (Near Prem Prakash)
JAIPUR-302003
PHONE : 313539

An Enterprise of – *Kailash Chand Sah*

With best compliments from

Jaydee Agrochemicals Ltd.

★

Administrative Office
C 9 Prithvi Raj Road
C Scheme, JAIPUR 302 001 (India)
Phone 375679 362241
Gram JAIJAINEX

★ ★ ★

Factory & Registered Office
C-113, Road No 8
Vishwakarma Industrial Area
JAIPUR 302 013 (India)
Phone 330787 330780
Gram JAIJAINEX

★ ★ ★

Branches
1116 Dalamal Tower,
211 Nariman Point BOMBAY-400 021
Phone 2835094
Gram JAINEX BOM Fax 022 2021578

★ ★ ★

5A Narendra Chand Dutt Sarani
CALCUTTA 700 001
Phone 2205772 2205773
Gram JAINEX CAL

★ ★ ★

Manufacturer of

PHCB ★ DHCB ★ OHCB ★ DCHB

With Best Compliments From :

PUNJAB ENGINEERING WORKS

Manufacturers of :

- ☐ Brake & Brake Parts
- ☐ Clutch & Clutch Parts
- ☐ Pins & Bushes
- ☐ Malleable Components, Sheet Metals & Other items
- ☐ Engine Transmission & Diff. Gear Components
- ☐ U-Clamps & Centre Bolts.
- ☐ Wheel Studs, Nuts & Axle Studs.
- ☐ Fastners (Nuts & Bolts)

BRAND : EVEREST

On Rate Contract with :

Association of State Road Transport Undertakins

EVEREST brand products are the first choice of fleet owners and State Road Transport Undertakings

M. D. Road
JAIPUR-302 004
Phone : 46164
Gram : EVEREST
Fax : 0141 47544

परिग्रह से मनुष्य मे भय उत्पन्न होता है

हार्दिक शुभ कामनाएं

छीतरमल भूरामल जैन

बी-30, सूरजपोल अनाज मण्डी, जयपुर

फोन 40681, 48184 (R) 562005, 563569

* * * * *
* * * *
* * *
* *
*

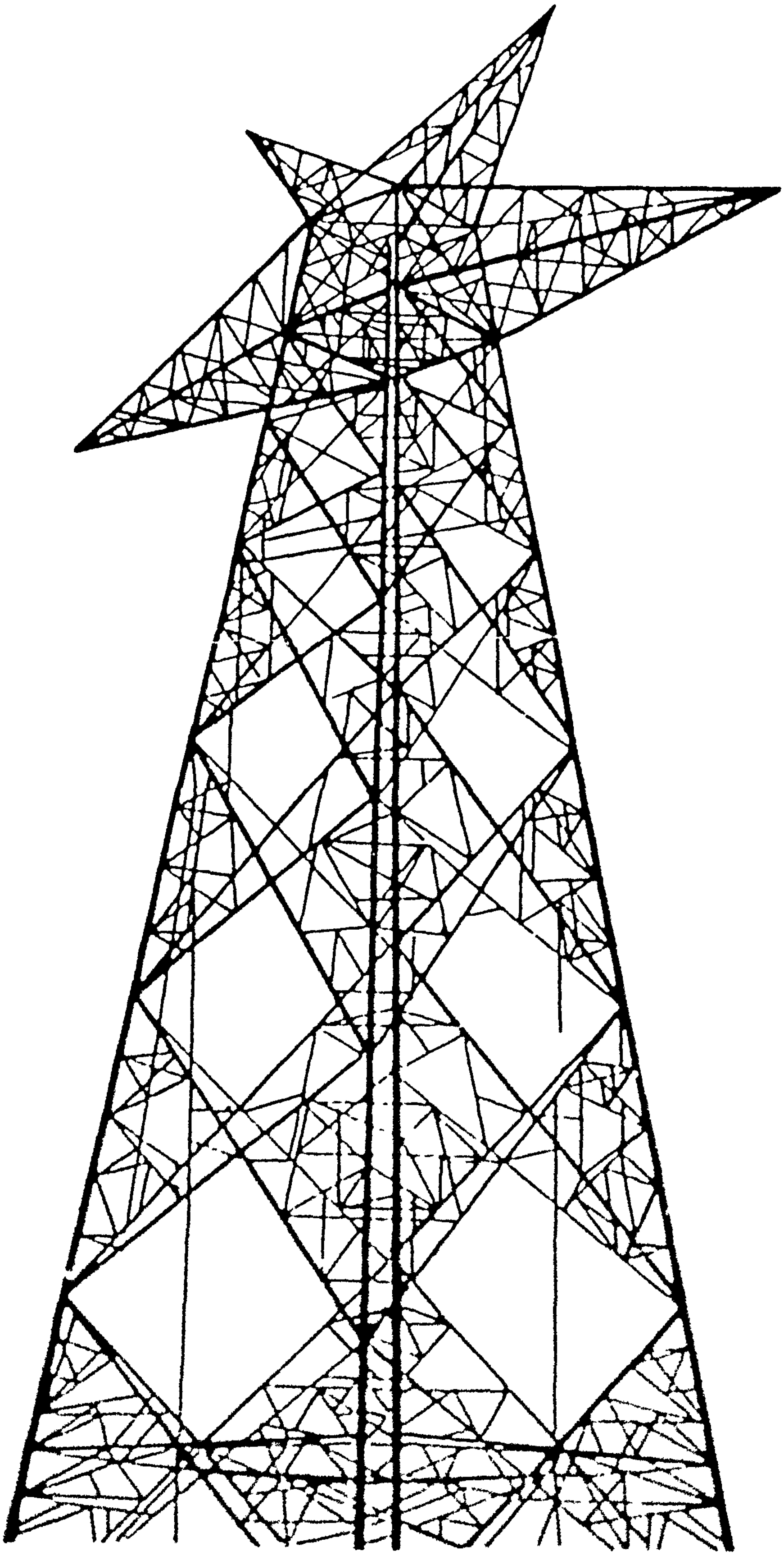
छीतरमल भूरामल जैन एण्ड कम्पनी

अनाज मण्डी, चादपोल बाजार, जयपुर

फोन 376741

KEC International Ltd.
Climbing to greater heights in the field of power transmission

RPG ENTERPRISES



KEC International Ltd are the pioneers of the transmission line industry in India Today it is the largest organisation of its kind in India and the second largest in the world Millions of homes, villages and cities in 23 countries throb with electric power transmitted by KEC towers Tower by tower, country by country, KEC has virtually put a transmission girdle twice around the world

Today, over 1,000 prototype towers upto 500 kV have been tested

KEC were the first to design, test and supply 500 kV towers in India, the first to design, test and supply 400 kV towers with quadruple conductors per phase in India, and the first to design, test and supply multicircuit 220 kV towers in India And these are only three of a long list that makes KEC s achievements read like the Guinness Book of Records

Yes! Today KEC are fully geared to take up any challenge in transmission of electric power both at home and abroad

KEC International Ltd

[illegible]

With Best Compliments From

MAN STRUCTURALS LIMITED

P O BOX 189, NEAR LOCO
JAIPUR 302 006

Phone 363231-2
Gram MANTOWER
Fax 0141-375540

☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

Manufacturers of High Tension Transmission Line Towers, Substation Structuers, Antenna Masts, Microwave Towers, Heavy and Medium Fabrication, Irrigation Gates and Hot-dip Galvanising

With Best Compliments From :

Katariya Implements

AGRICULTURAL IMPLEMENTS SMALL TOOLS & HARDWARE MANUFACTURERS

70, Industrial Area, Jhotwara,
JAIPUR-302 012
Phone : (O) 842508, (R) 317548, 312588

Only place of Improved Horti Cultural and Garden Tools in India

* * *
* *
*

Paras Chand Katariya
Champa Lal Katariya

शुभ कामनाओं सहित

मैसर्स मोहन सर्विस स्टेशन

सिकन्दरा चौराया (दौसा)

* * * * *
* * * *
* * *
* *
*

आज की आवश्यकता
तेल संरक्षण

मोहन सिह

With Best Compliments From :

JAIN MEDICAL STORES

Film Colony, S.M.S. Highway
JAIPUR-302 003
Phone : (S) 313337 (R) 48129, 40155

Distributors/Stockists for

- IND-SWIFT
- MPI
- REKUINA
- SSM
- SYSTOPLE
- VIWREK
- GUJARAT TERCE

Retail Shop :
Opposite Govt. Dispensary
Moti Katla,
JAIPUR-302 002
Phone : 42301

JAIN AGENCIES

Dooni House
Film Colony
JAIPUR-302 003

"जो धन पाप रहित निष्कलक रूप से प्राप्त किया जाता है,
उससे धर्म और आनन्द का श्रोत वह निकलता है"

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

G. Kartika Enterprises Limited

15-, Saraogi Mansion, M.I Road
JAIPUR 302 001
Phone Office 562170
Resi 564833, 562178

श्रेयान्स कुमार गोधा

With Best Compliments From :

M/s Mohindra Auto Body Builders

JAIPUR

C/o Shri Choudhary Body Building Section

RSRTC, Chomu House
JAIPUR

- ★ Bus Body Fabricaters of Best Quality
- ★ Largest bus body fabricators for RSRTC

With Best Compliments From

UMA

Polymers Pvt. Ltd.

Manufacturers of

Multilayer H D, LLDPE, P P LDPE, Polyester & H M ROTO Printed Film, Multicolour Pouches & Sheet

QUALITY

★

SERVICE

Regd Office

2, Abhay Chambers, B-Wing 2nd Floor,
Jalori Gate
JODHPUR-342 001 (Raj)

Works

G 155, Ambaji Industrial Area,
Santpur,
ABU ROAD-307 026
Phone (029741) (F) 2481 (R) 2491

SHRIPAL LODHA
DIRECTOR

With Best Compliments From :

SHRENIK MARBLES (P) LTD.

Manufacturers & Suppliers of :

MARBLE SLABS & TILES

Makrana Road

Madanganj-Kishangarh-305 801 (Raj.)

☎ (01463) 2832, 3538 (F)

3038, 2571 (O&R)

Regd. Off. : Jaipur Road, Madanganj-Kishangarh (Raj.)

महावीर जयन्ती पर शुभ कामनाओं सहित

मै. कंचन इलोक्ट्रिकल्स

107, वापू बाजार
उदयपुर
फोन 29895

✳ ✳ ✳
✳ ✳
✳

मै कंचन कम्प्यूटर कन्सलटेन्सी सर्विसेज

दुर्गा नर्सरी
उदयपुर

★ ★ ★
★ ★
★

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

RAKESH RARA

(STOCK & SHARE BROKER)

MEMBER OF
JAIPUR STOCK EXCHANGE LTD.
(16-J-066)

526, RARA BHAWAN
BORDI KA RASTA
KISHANPOLE BAZAR
JAIPUR - 302 001

PHONE : 312491, 312538, 314062

अहिंसा परमो धर्मः

श्री १००८ महावीर भगवान के पावन उपदेशों पर
चलते हुए हम सब विश्व शान्ती व अमन
चैन की ओर अग्रसर होते रहें,
इन्हीं शुभकामनाओं
के साथ

जैन साड़ी स्टोर

90, बापू बाजार
जयपुर-302 003
फोन : 563520

With Best Compliments From .

NEELAM INDUSTRIES

OFFICE
AJMER ROAD,
MADANGANJ KISHANGARH 305 801

PHONE OFF 3143, FACT 2228 BADGAON 27
RESI 3205 STD 01463

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

BARDIYA RECON EXPORT LTD.

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

9, BARDIYA COLONY,
MUSEUM ROAD,
JAIPUR

PHONE : 43162, 40503
FAX : 40504

लोभी व्यक्ति सदा दु खी रहता है

भगवान महावीर

With Best Compliments From

UNIGEMS

Highest Export Award Winners

Manufacturers Exporters & Importers of

DIAMONDS, JEWELLERY & CONSULTANTS

H O 2032 A, Street Barafwali, Kinari Bazar, DELHI–110 006
Tel 3275472, 3273396 Tlx 3166900
Cable 'TUPAS' DELHI

B O Le Meridien Hotel Show Room No 3
Lobby Level, Janpath New Delhi–110 001
Tel (F) 3714163 3710524

B O Mahavir Bhawan 9 Hospital Road
C Scheme Jaipur–302 001
Tel 366438, 364893

B O 101, Vardhman Johari Bazar Jaipur
Tel (F) 565017

B O 403 Dharam Palace, Hughes Road, Bombay–400 007

Nanag Ram & Co.

H O 1201, Maliwara, Delhi–110 006
Tel 3276924

B O Gopalji Ka Rasta Jaipur–302 001
Tel 563246

Santosh Jewellers

H O 2032 A Street Barafwali
Kinari Bazar Delhi–110 006
Tel 3275472

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

OM METALS & MINERALS LTD.

(A UNIT OF OM KOTHARI GROUP OF INDUSTRIES)

SPECIALISTS IN :

GATESM HOISTS, CRANES & HAVY STEEL STRUCTURE FABRICATION
ERECTION FOR IRRIGATION, HYDROELECTRIC AND
THERMAL POWER PROJECTS
OTHER MAIN PRODUCTS OF

OM KOTHARI GROUP OF INDUSTRIES

● OXYGEN GAS ● NITROGEN GAS ● ACETEYIEN GAS ● CALCIUM CARBIDE ● ALLOY STEEL CASTING

MANUFACTURER OF METAL IDOLS C.R. SHEETS

HEAD OFFICE :
KOTHARI BHAWAN 30-31,
NEW GRAIN MANDI, KOTA-324 007

PHONE : 425107,
GRAM : KOTHARIES

शुभकामनाओं सहित :

लखोजी चैरीटेबल ट्रस्ट

☆ ☆ ☆ ☆

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

जयपुर

अनमोल बोल

1. धर्म परम्परा नहीं, स्व परीक्षित साधना है ।
2. ध्रुवधाम को ध्येय बनाकर उसका ध्यान करने में धर्म प्रगट होता है ।
3. निर्भार हुये बिना अंतर आत्मा में प्रवेश नहीं हो सकता ।
4. जगत के क्रमनियत परिणमन को ज्ञाता-दृष्टा भाव से स्वीकार करो ।
5. सभी आत्मायें स्वयं परमात्मा है, परमात्मा कोई अलग नहीं होते ।
6. जो जीव सम्यक् पुरुषार्थ करे, वह भगवान वन सकता है ।
7. भगवान जन्मते नहीं बनते हैं ।
8. भगवान जगत का कर्त्ता-धर्त्ता नहीं, मात्र ज्ञाता है ।
9. जब सभी धर्म वाले अभिवादन में अपने-अपने इष्टदेव का ही नाम बोलते हैं तो हम **जय-जिनेन्द्र** ही क्यों न वोलें ?
10. जिस घर में सत्साहित्य नहीं वह घर, घर नहीं, श्मशान है ।

महावीर जयन्ती की शुभ कामनाओं सहित :

जयपुर प्रिन्टर्स प्रा. लि.

एम. आई. रोड,

जयपुर

सुन्दर व आकर्षण छपाई का एक मात्र स्थान

फोन : 362468, 373822

With Best Compliments From

Indian Transformers & Electricals

Office & Factory
B 312(C), V K I Area,
Road No 17,
JAIPUR-302 013

Manufacturers

POWER &
DISTRIBUTION TRANSFORMERS

Phone 330629, 330968 (F)
Phone 375385, 363504 (R)

महावीर जयन्ती पर शुभ कामनाओं सहित :

☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

मैसर्स स्कोट मार्केटिंग प्रा. लि.

★ ★ ★
★ ★
★

With Best Compliments From

For

Castings from Induction Furnace Cast Iron/Steel/Alloys

Good Quality & Early Delivery

Please Contact

Standard
Alloys (India) Pvt. Ltd.

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

F-26 (B) Parbatpura Ind Area

AJMER 305 002

Phone (0145) 33272/22562/33157/24254

Gram STANLOYS

पापी से नहीं, पाप से घृणा करो

—भगवान महावीर

PURAN KAMAL UDYOG

पूरन कमल उद्योग

Mfrs. : **DROPOUT FUSES, FUSE ELEMENTS**

13, Moti Lal Atal Road, JAIPUR–302 001

Phone Shop: 377481 Res. : 315287, 515012

Stockists:

H. T. & L. T. Electrical Line Material, Hardware, Pipe & Fitting ,
Chainpully Block Fixtures, Rubber Products,
Epoxy All Type of Kits, Epoxy Putty etc.
11 KV/ 33KV D. O Set / 40 Set

With

Best

Compliments

From

ACME SALES

* * * * *

* * * *

* * *

* *

*

LAXMINATH BHAWAN

CHURCH ROAD

JAIPUR-302 001

With Best Compliments From :

SOGANI GROUP OF COMPANIES

☆

The Universal Supply Corporation

☆

Sogani Brothers Private Limited

☆

Prakash Enterprises

☆

Unicorp Industries Limited

☆

Engineering Sales Corporation

☆

Vasundhara Automobiles

Sogani Bhawan,
M. I. Road,
JAIPUR-302 001

Phone	:	375058, 375059, 378109, 367510
Gram	:	"ROYAL"
Telex	:	0365-2399 USC IN
Fax	:	0141-379166

Branches at :

BHILWARA ★ CHITTORGARH ★ JAIPUR ★ JODHPUR
KOTA ★ NEW DELHI ★ UDAIPUR

With Best Compliments From

Lodha Brothers (P) Ltd.

MANUFACTURERS OF INSULATION BRICKS

Regd Office
Near SBBJ, Opp Industrial Estate
Parbatpura,
AJMER-305 002

(F) 21214, (R) 22203

Factory
9 11, Industrial Estate
Makhupura
AJMER 305 002

With Best Compliments From :

Arihant Cables

Mfg. of :

P.V.C. INSULATED WIRE & CABLES OF COPPER
&
ALUMINIUM AS PER ISI SPECIFICATION

F-4, INDUSTRIAL AREA,
PARBATPURA,
AJMER-305 002

☎ : (F) 22468 (R) 21413

With Best Compliments From

Authorised Agents
Indian Airlines
&
East West Airlines.

Satyam Travels & Tours



'JAIPUR TOWERS'

Opp A I R , M I ROAD, JAIPUR 302 001

Phone 374490 378794 Tlx 365 2167 RAVI IN

Cable FLYAIR Fax 0141-367760

(WE ALSO TAKE INTERNATIONAL BOOKINGS)

"राग और द्वेष ही संसार के जनक हैं
इनकी निवृति ही संसार से छूटने के उपाय है ।"

महावीर जयन्ती पर हार्दिक शुभ कामनाएँ :

ओम ट्रांसपोर्ट कॉरपोरेशन

चारटर्स एण्ड बुकिंग एजेन्ट्स

हैड ऑफिस : मोती डूँगरी रोड़, जयपुर- 302 004

फोन : आफिस 49605, निवास : 40860

शाखायें :

25, महर्षि देवेन्द्र रोड़, कलकत्ता-7
फोन : 2398390, 2392483
गोदाम : 67/28, स्ट्रण्ड बैंक रोड़, कलकत्ता- 6
फोन : 2387063

मदनगंज किशनगढ
वस स्टैण्ड के पास
फोन : 2326

जयपुर, कलकत्ता-दिल्ली, आसाम, विहार और यू. पी. हेतु स्पेशल सर्विस

सह प्रतिष्ठान :

ओम मार्बल उद्योग

F 42, औद्योगिक क्षेत्र, मदनगंज किशनगढ़ (अजमेर) Ph. 2353

अनन्त मार्बल एण्ड ग्रेनाइट्स प्रा. लि.

इन्डस्ट्रीयल एरिया
मदनगंज
फोन : 2015

With Best Compliments From

Ganpati Plastfab Limited

Manufacturers of

PP/HDPE Circular Woven Sacks and Fabrics

Regd Office

D 157/A Kabir Marg

Bani Park

JAIPUR 302 016

Phones 77812, 76354

Telex 0365 2646 GPFL - IN

Works

Itarana Road Old Industrial Area,

ALWAR-301 001

Phone 70290, 70362

Telex 0366 - 205 GPL - IN

With Best Compliments From :

Phone : 23879, 21999
Telex : 0303 216 AEI IN
Fax : 91 145 32974

ASSOCIATED ENGINEERS & INDUSTRIALS PVT. LTD.

HMT INDUSTRIAL AREA
AJMER-305 003

Contributing the nation in import substitution and Export of High-Tech Cable Machinery

Regd. Office :
Katewa Bhawan
M. I. Road, Jaipur-302 001

B.C. JAIN
Managing Director

Shree Padmawati Marbles Pvt. Ltd.

Manufacturer of MARBLE SLABS & TILES

Regd Off SURAJ MANSION, 1, Anand Nagar Ajmer
Factory Makrana Road, Madanganj – Kishangarh

Phone STD 01463
KSG 3092, 3548
Ajmer 50115

With

Best

Compliments

From :

☎ 566464

S. B. & CO.

(STOCK BROKER'S & INVESTMENT CONSULTANT)

Near Veer Balika College
Tikkiwalon Ka Rasta
Johari Bazar
JAIPUR

SHARAD SOGANI
SANJAY JAIN



राजस्थान खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड ग्रामीण क्षेत्रो मे आपको आमन्त्रित करता है ।

ग्रामोद्योग के माध्यम से बेरोजगारी उन्मूलन के लिये

मुख्य ग्रामोद्योग

कुम्हारी उद्योग	कली चूना उद्योग	ग्रामीण तेल उद्योग
कुटीर दियासलाई	लुहारी, सुथारी उद्योग	साबुन उद्योग
हाथ कागज उद्योग	अगरबत्ती उद्योग	चर्म उद्योग
रेशा उद्योग		

ऋण मात्र 4 प्रतिशत ब्याज दर पर

ऋण वापसी आसान किस्तो मे

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करे

* सचिव राजस्थान खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड जवाहरलाल नेहरू मार्ग जयपुर (राज) फोन 510247
* प्रत्येक जिले में जिला उद्योग केन्द्र में जिला अधिकारी (खादी ग्रामोद्योग)
* प्रत्येक पचायत समिति में ग्रामोद्योग प्रसार अधिकारी

सौजन्य से

राजस्थान खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, जयपुर

मानिकचन्द्र सुराणा
अध्यक्ष

एस एस वर्मा
सचिव

"हिंसा से विरक्त होना अहिंसा है"

With best compliments from :

Bhuramal Rajmal Surana

Lal Katla, Haldiyon Ka Rasta, JAIPUR-302 003
PHONE : 561607, 563624
GRAM : KUSHAL
Fax : 561283

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर हार्दिक शुभकामनाएँ

RAMSUKH CHUNNILAL JAIN

☆ ☆ ☆ ☆
☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

A 5 GRAIN MANDI,
CHANDPOLE
JAIPUR-302 001

✳ ✳ ✳
✳ ✳
✳

☎ 374931, 372093
Gram SHANTI

RAJASTHAN TRANSFORMERS & SWITCHGEARS

(Prop : Bhanwarlal Bhutoria Limited)

Manufacturers of

POWER & DISTRIBUTION TRANSFORMERS

Winners of

ENGINEERING EXPORT PROMOTION COUNCIL AWARD FOR

OUTSTANDING EXPORT PERFORMANCE

HEAD OFFICE
56, Netaji
Subhas Road
Calcutta-700 001

Phone : 256024
256025

TELEX 21-5331 RTS IN

GRAM . BHARMAR
CALCUTTA

JAIPUR WORKS
C-174, Vishwakarma
Industrial Area
Jaipur -302 013

Phone 330269
330405

TELEX 365-2460 RTS IN

GRAM . TRANSWITCH
JAIPUR

AGRA WORKS
Near 16 KM Mile
Stone, P O Artoni
Mathura Road
Agra - 282 007

Phone : 63175

GRAM : TRANSWITCH
AGRA

SISTER CONCERNS ARE :

BHUTORIA TRANSFORMERS & RECTIFIERS (P) LIMITED

F- 68 Industrial Area
NEWAI- 304 021

Phone · 70 (Off)
181 (Res.)

KOGAWA, TEWAR
JABALPUR- 482 003

Phone : 28423

F- 139-140, UDYOG VIHAR
CHOMU ROAD
JETPURA
Dist. Jaipur

Phone : 82

ABHAY TRANSFORMERS & SWITCHGEARS
O.T ROAD
BALASORE - 756 001 (Orissa)
Phone · 2319

With Best Compliments From

KISTUR CHAND INDER CHAND KATARIA

(Manufacturers & Exporters)

B-11, Moti Marg,
Bapu Nagar,
Jaipur-302015

☎ 510378, 513061, 513074, 78879
Fax 91-141-510378
Cable KATARIA RUG

With Best Compliments From :

ARVIND PRESS CAPS LIMITED

(Manufacturers of Lamp Caps)

Head Office :

23/24, Radha Bazar Street,
CALCUTTA-700 001
Phone : 242-1119
Fax : 033-2421230

Works & Regd. Office :

E-337, 346 RIICO Industrial Area,
P O. Bhiwadi, Distt ALWAR
Phone : 2213, 2295
Telex No. 0364-219 PCO IN
Fax : 091-01493-2213

शुभकामनाओं सहित

मैसर्स भारती कन्स्ट्रक्शन कम्पनी

बासवाड़ा

मेहता ऐसोसिएट्स

बासवाड़ा

मैसर्स सिंह एण्ड ऐसोसिएट्स

बासवाड़ा

श्री लक्ष्मी लाल पटेल

उदयपुर

श्री भगवती कन्स्ट्रक्शन

उदयपुर

फाईव स्टार बिल्डर्स एण्ड कॉन्ट्रेक्टर्स

उदयपुर

शुभकामनाओं सहित :

भगवान महावीर की पावन जयन्ती के शुभ अवसर पर
हार्दिक शुभ कामनाएँ

केशव लाल जैन कॉन्ट्रेक्टर

ऋषभदेव

सोहन लाल शर्मा कॉन्ट्रेक्टर

डूँगरपुर

सी. एल. पटेल कॉन्ट्रेक्टर

उदयपुर

ओमप्रकाश शर्मा कॉन्ट्रेक्टर

श्रीनाथद्वारा

रामचन्द्र सन्तवानी कॉन्ट्रेक्टर

उदयपुर

पापियो से परहेज के बजाय अधिक हित पापो से परहेज करने मे है ।

With Best Compliments From

Pinkcity Paper Convertors Ltd.

Dhamani Street, Chaura Rasta, Jaipur–302 003
Phone (O) 312436 (R) 44954

DELUX PAPER CONVERTORS

(WHOLESALE PAPER MERCHANT)

Dhamani Street, Chaura Rasta Jaipur-302 003

Raj Panchayat Prakashan

Stationers, Publishers & Printed Material Suppliers

Dhamani Market, S M S Highway
JAIPUR–302 003
Phone (O) 312402 (R) 44954 (W) 312364

With Best Compliments From :

SHREENATH ENTERPRISES PVT. LTD.

MINE OWNES & PROCESSORS OF DEEP BLUE KOTA STONE

PHONE : (O) 20474, 21730, 25694
(R) 23852, 23587
GRAM : SILICA

NEW COLONY, GUMANPURA,
KOTA - 324 007

With Best Compliments From

MADE FROM SELECTED MUSTARD SEED

ALWAYS USE

AGMARK MUSTARD OIL

MANGAL BRAND

FOR PURITY, TASTY & NUTRITIOUS FOOD

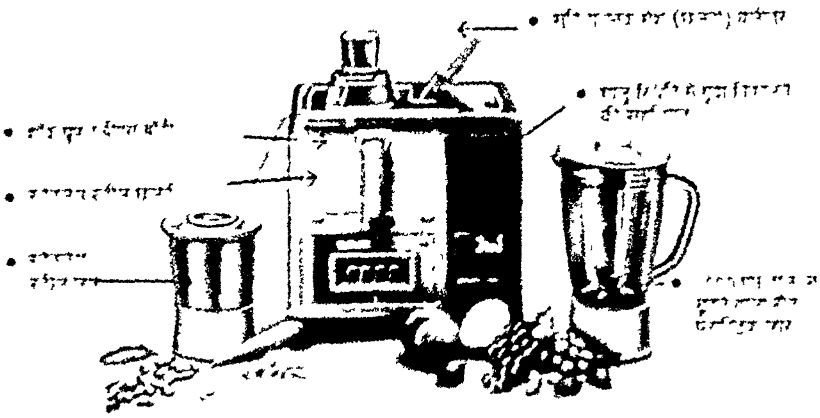
MANUFACTURER

SHREE CONTAINERS PRIVATE LIMITED

Regd Office 135, Vijay Path, Tilak Nagar, Jaipur - 302 004
Works Durgapura, Tonk Road, Jaipur - 302 015
PHONE 550131, 550141, 550151
GRAM 'KHEMKACO'

शुभकामनाओं सहित :

बजाज ट्राइमेट खरीदने के कई छोटे कारण



2 साल की गारंटी

एक मशीन काम तीन

bajaj

बजाज — भरोसे का दूसरा नाम

बजाज इलेक्ट्रीकल्स लि.

गोकुल निवास, एम. आई. रोड,
जयपुर - 302 001

With Best Compliments From

EST

GARG ISPAT UDYOG PRIVATE LIMITED

MANUFACTURERS OF ERW MS BLACK & GALVANISED STEEL TUBES & PIPES

Steel Tube House 2862, Sirkiwalan 2nd Floor Hauz Qazi Delhi 110 006 • ☎ Off 3279629 3282013 Res 502217

ALWAYS INSIST ON

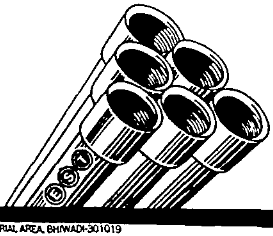
IS : 1239

ISI

EMBOSSED

EST

STEEL TUBES



G-459-61 INDUSTRIAL AREA, BHIWADI-301019

(ALWAR) RAJASTHAN ☎ 01493-2453, 2682 Fax 011 3283895

WITH BEST
COMPLIMENTS FROM :

MUNDRA TRACTORS (PVT) LTD.

16, JHALAWAR ROAD
KOTA

PHONE : (O) 26653, 21341
(F) 421379, (R) 428712, 426006

MFG. OF :
KOTA STONE DIAMOND CUT SLABS & CUT SIZE

With Best Compliments From

M/s. RATAN EXPORT

306, Mangaldeep,
Jada Khadi, Maliderpura
SURAT (Gujarat)
☎ 33081

M/s. DESERT EXPORT

3953, Nigotiya House,
M S B Ka Rasta,
Johari Bazar, JAIPUR–3
Phone 565828

M/s. DESERT JEWELLERS

3953, Nigotiya House,
M S B Ka Rasta,
Johari Bazar, JAIPUR–3
Phone 565828

With Best Compliments From

CHIRANJI LAL BAXI

279, Tripolia Bazar
JAIPUR-302 002
Phone (O) 563423 (R) 365470 (G) 45240

* * *

Dealers in

COLOUR ● CHEMICALS ● PAINTS

Prop S K BAXI

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर

एम. आर. आइल एण्ड दाल मिल्स

कुचामन सिटी

व्यवस्था ही घर की शोभा है
सन्तुष्ट स्त्री ही घर की लक्ष्मी है
समाधान ही घर का सुख है
आतिथ्य ही घर का वैभव हे

With best compliments from :

M/s. THE ROYAL COMPANY

KHASA KOTHI CIRCLE
STATION ROAD
JAIPUR–302 006
Phone . 69294, 314362 Res. 514708

Authorised Distributors for :

M/s. PSG INDUSTRIAL INSTITUTE

For Motors, Pumps, Diesel Engines, Machine Tools.

M/s. ADVANI OERLIKON Ltd.

for welding electrodes & welding equipments.

A Leading house of Industrial & Agricultural products.

With best compliments from :

ESTD 1907

Dhannalal & Brothers

(MANUFACTURER & EXPORTER)

Wholesale Dealers of Ivory, Brass, Sandalwood & Hand Made Panting Cloth & Paper

AJABGHAR KA RASTA
JAIPUR302 003
Phone : 313970 PP
Cable : HATHIDANT

With Best Compliments From :

TRIBHUVAN MEDICALS

19, MAHALAXMI MARKET
FILM COLONY, JAIPUR

☎ .70414 p p

शुभ कामनाओं सहित :

हनुमान ट्यूब वैल कम्पनी

पोलो विक्ट्री के सामने
स्टेशन रोड,
जयपुर

फोन : (O) 363323 (R) 550207

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

FOR QUALITY STRENGTH AND DURABILITY ALWAYS INSIST ON

MANGALAM BRAND

ORDINARY PORTLAND CEMENT AND PORTLAND POZZOLANA CEMENT

MANUFACTURERS :

MANGALAM CEMENT LIMITED

REGD. OFFICE & WORKS :

ADITYANAGAR, P.O. MORAK-326 517
DISTT. KOTA (RAJ.)
PHONE : 231, 237, 259, 261 & 262
GRAM : MANGALAM

KOTA - OFFICE :

93, DASHERA SCHEME, P.O. DASHERA SCHEME, P.O. DADABARI,
KOTA-324 009 (RAJ.)
TELEX : 0305 207 MCL
PHONE : 24047 & 26118

GIVING CONCRETE SHAPE TO A BETTER TOMORROW

With Best Compliments From

CHIRANJI LAL BAXI

279, Tripolia Bazar
JAIPUR-302 002
Phone (O) 563423 (R) 365470 (G) 45240

* * *

Dealers in

COLOUR ● CHEMICALS ● PAINTS

Prop S K BAXI

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर

एम. आर. आइल एण्ड दाल मिल्स

कुचामन सिटी

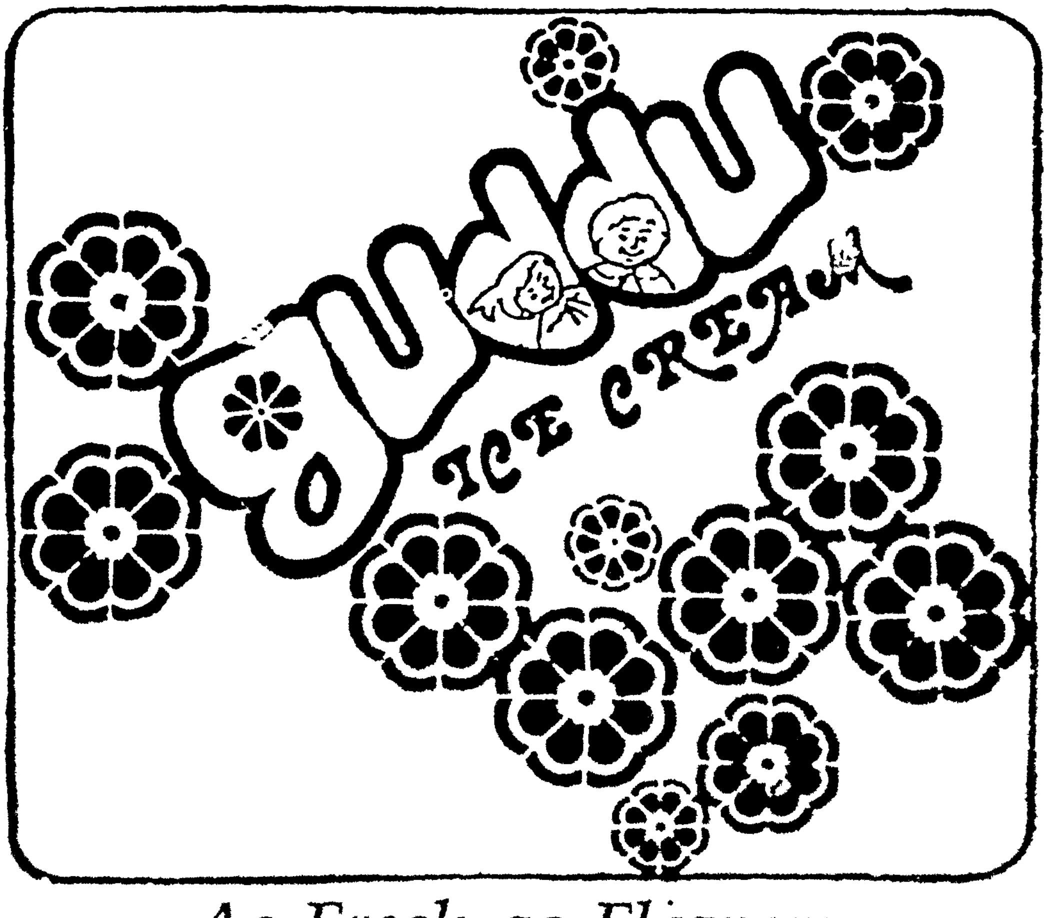
व्यवस्था ही घर की शोभा है
सन्तुष्ट स्त्री ही घर की लक्ष्मी है
समाधान ही घर का सुख है
आतिथ्य ही घर का वैभव है

त्याज्य कहे भी शास्त्र में, जो वर के अकार्य ।
शान्ती नहीं उसको मिले, यद्यपि हो कृतकार्य ॥

ॐ

For Your Sweet Parties
Always in Your Service

With best compliments from :



As Fresh as Flowers
Phone : 42224

With Best Compliments From

M/s. Wire Products

F-174 A, Matsya Industrial Area
ALWAR

Specialists in

Induction Hardening of Crank Shafts, Axles, Gears etc
High Frequency and
Medium Frequency Hardening

With Best Compliments From

CHIRANJI LAL BAXI

279, Tripolia Bazar
JAIPUR-302 002
Phone (O) 563423 (R) 365470 (G) 45240

* * *

Dealers in

COLOUR ● CHEMICALS ● PAINTS

Prop S K BAXI

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर

एम. आर. आइल एण्ड दाल मिल्स

कुचामन सिटी

व्यवस्था ही घर की शोभा है
सन्तुष्ट स्त्री ही घर की लक्ष्मी है
समाधान ही घर का सुख है
आतिथ्य ही घर का वैभव है

With Best Compliments From

CHIRANJI LAL BAXI

279, Tripolia Bazar
JAIPUR-302 002
Phone (O) 563423 (R) 365470 (G) 45240

* * *

Dealers in

COLOUR ● CHEMICALS ● PAINTS

Prop S K BAXI

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर

एम. आर. आइल एण्ड दाल मिल्स

कुचामन सिटी

व्यवस्था ही घर की शोभा है
सन्तुष्ट स्त्री ही घर की लक्ष्मी है
समाधान ही घर का सुख है
आतिथ्य ही घर का वैभव है

"संसार में सभी को जान प्यारी है, मरना कोई नहीं चाहता,
अतः किसी प्राणी की हिंसा मत करो"

- भगवान महावीर

With best Compliments From :

Mahachand Pannalal & Sons

(CUSTOM HOUSE AGENT)

Malpura House, 3rd Cross,
Opp. Goyal Color Lab.,
M.S.B. Ka Rasta, Johari Bazar,
JAIPUR- 302 003
Phone : 560369/565939
315570/40360
Grams : GEMSALE
Fax : 565939

A.K. JAIN
SUNIL KUMAR JAIN (RAJU)
MONU JAIN

With Best Compliments From

Ujala Pumps Pvt. Ltd.

Admn Office
C-127 Preet Vihar
NEW DELHI-110 092
Phones 2248491, 2213070
(W) 01493 2263

Works & Regd Office
F 83 Industrial Area,
BHIWADI Distt ALWAR

Manufacturers of

SELF PRIMING PUMPS, MONO BLOCKS
MINI MONO BLOCKS, JET PUMPS
& SUBMERSIBLE PUMPS

With Best Compliments From :

Agency Centre

Maniharon Ka Rasta,
Tripolia Bazar,
JAIPUR–302 003
Phone : 310209

☆

Sister Concern :

GLUE INDIA

2240, Modi Khana, JAIPUR
Deals In All Types of Adhesives Cruiser
Pens, Ball Pens and Packing Tapes

☆

Shri International

Khadi Gramodyog Road,
SANGANER
Phone : (R) 552033, 550214

A House of Quality Printing on any
types of Fabric

With Best Compliments From

ARUN STUDIO

WHOLE SELLERS & RETAILERS

SHOP NO 2, EAST KAMLA NEHRU MARKET
AJMERI GATE,
JAIPUR
PHONE (O) 311387 (R) 516209

☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

SUPPLIERS OF

KODAK, KONICA FILMS & CAMERAS

"लोभी व्यक्ति सदा दुःखी रहता है"

-भगवान महावीर

With the Compliments

of

SUDHIR KUMAR JAIN

(CUSTOM HOUSE AGENTS)

Malpura House, 3rd Cross
Opp. Goyal Color Lab.,
M.S B. Ka Rasta, Johari Bazar
JAIPUR-302 003
Phone 560369/565939
Grams : GEMSALE
Fax : 565939

SUDHIR KUMAR JAIN

शुभकामनाओं सहित :

श्री महावीराय नमः

बैराठी शू कं. प्रा. लि.

"बैराठी" हवाई चप्पल के निर्माता

E 324 रोड़ न 16 विश्वकर्मा इण्डस्ट्रीयल एरिया,
जयपुर

Phone 330370, 330770

भगवान महावीर का दिव्य सन्देश

1. राग और द्वेष ही संसार के जनक हैं। इनकी निवृत्ति ही संसार से छूटने के उपाय हैं।
2. शरीर अनित्य है, वैभव शाश्वत नहीं है। मृत्यु समीप में है। अतः धर्म का संग्रह करना श्रेयस्कर है।
3. यदि यह आत्मा परावलम्बन को छोड़कर अपनी आत्म ज्योति की ओर दृष्टि करले तो यह अनाथ न रहकर त्रिलोकीनाथ बन जावे।
4. कषाय क्रोधादि विकारों पर विजय प्राप्त करना ही चरित्र है।
5. जिसके हृदय में निर्मल आत्मा का वास नहीं होता उसे शास्त्र, पुराण एवं तपश्चर्या निर्वाण प्रदान नहीं कर सकती है।
6. यह आत्मा ही तो परमात्मा है। कर्मोदय के कारण यह आराध्य के स्थान पर आराधक बनता है।
7. इस आत्मा का प्राण "ज्ञान" है जो अविनाशी रहने के कारण कभी भी विनष्ट नहीं होता- इस कारण आत्मा का भी कभी मरण नहीं होता।
8. जो व्यक्ति कष्ट को सबसे बुरी चीज मानता है वह वीर नहीं हो सकता तथा जो सुख को सर्वश्रेष्ठ मानता है वह संयमी नहीं बन सकता।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा प्रसारित

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर हमारी शुभ कामनाऐ

गुलाबचन्द कपूरचन्द जैन

(मलिकपुर वाले)

किराना मर्चेन्ट्स

दुकान न 338, जौहरी बाजार

जयपुर-3

फोन 563221, 563605 PP

हमारे यहा शुद्ध साफ व उचित दामो पर किराने
का सामान उपलब्ध होता है एव गोठ,
शादियो व पार्टियो के लिए कुशल कारीगरो
द्वारा भोजन तैयार करवाया जाता है ।

With Best Compliments From

Jajodia Cements Private Limited

Plot No F 96 97 E-118 RIICO Industrial Area
RATANGARH-331022 Distt CHURU (Raj)
Phone (01567) 22473, 22610

**Manufacturer of ISI Brand
Ordinary Portland Cement**

With Best Compliments From :

VIJAY TRADING CORPORATION

DEVRIJI KA MANDIR, JOHARI BAZAR,
JAIPUR-302 003
Phone . (O) 560286 (R) 511554

Dealers for :

M/s. Modi Alkalies & Chemicals Ltd. Alwar
M/s. Punjab National Fertilizers & Chemicals Ltd.
M/s. Ballarpur Industries Ltd.

With Best Compliments From :

GEM ENTERPRISES

60, Dhruv Marg, Raja Park
JAIPUR-302 004
Phone : (O) 49959 (R) 566309
Fax : 0141 - 565429

Rikvin Quartz,PVC Vinyl Flooring, Aluminimum False Ceiling,Netion
Insect Screen Drapery Rods, Ceiling Tiles, Wall Paper, Blinds,
Carpets, Changable Display Board, Name Plates

Auth. Dealer : **RIKVIN FLOORS LIMITED**

Laxmi Vijay Gangwal

श्री वर्धमान आयुर्वेदिक रसायनशाला

लालजी साड का रास्ता, जयपुर-302 003

फोन 317152

शास्त्रोक्त पद्धति से शुद्ध एव त्यागी
व्रतियो के लिए ग्राह्य औषधि-
निर्माण का एक मात्र सस्थान

हमारे विशेष उत्पादन

च्यवनप्राश, ब्रह्मरसायन, खमीरागाज़वान, द्राक्षावलेह,
ऑवला मुरब्बा, गुलकन्द, रस, भस्मे,
वटिका, चूर्ण, दन्तमञ्जन,
शर्वत, अर्क आदि ।

आयुर्वेदिक औषधियो के निर्माता व विक्रेता

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

JAIN GOODS TRANSPORT CO. (REGD.)

जैन गुड्स ट्रान्सपोर्ट कम्पनी (रजि.)

21, New Dhan Mandi,
KOTA-324 007

BIGGEST TRUCK OPERATORS OF
RAJ.,M.P, U.P.,GUJARAT & MAHARASHTRA

PHONE : 25506, 22286

सुबोध स्टोन सप्लायर्स इण्डस्ट्रीज

21, नई धानमण्डी, कोटा
फैक्ट्री : F-199, इन्द्रप्रस्थ इण्डस्ट्रियल एरिया, रोड़ नं. 5, कोटा

Mfg. of :
KOTA STONE POLISHED

With Best Compliments From

RADHA MOHAN AGARWAL

GEMINI ENTERPRISES

☆ ☆ ☆

Plot No 1-2, Ram Shikha
Janta Colony
JAIPUR
Phone 46850, 41165

With Best Compliments From

BHANSALI
TRADING CORPORATION

2654, Shah Bhawan, Godho Ka Chowk
Ghee Walon Ka Rasta, Johari Bazar,
JAIPUR-302 003 (INDIA)
Phone (O) 563622 (R) 41158, 49785
Importers & Exporters
Precious & Semi Precious Stones
Specialist in EMERALDS

Prakash Bhansali

Santosh Bhansali

With Best Compliments From :

RATAN SERVICE STATION

Dealers-Hindusthan Petrolieum Corporation

Sikandra Road,

BANDIKUI-303 313

Phone : 2104

OIL IS PRECIOUS

USE IT ADEQUATELY

Shiv Ratan Yadav

शुभ कामनाओं सहित :

मैं. जनप्रिया सिमेन्ट प्रा. लि.

नीम का थाना, जिला सीकर

उच्च कोटि के सिमेन्ट के

निर्माण कर्त्ता एवं विक्रेता

WITH BEST
COMPLIMENTS FROM

SHREE AGARWAL UDYOG

☎ HEAD OFFICE 61574
RESI 71494
LNT ROAD, BIKANER

BRANCH
POST SUDSAR
DISTT CHURU

उच्चतम क्वालिटी की
दालों के निर्माता

With Best Compliments From :

UTTAM

(BHARAT) ELECTRICALS PRIVATE LIMITED

BAXI BHAWAN, NEW COLONY, NEAR PANCH BATTI,
JAIPUR-1

Phone : (O) 366653 (W) 330112 (R) 511487
Gram : UTTAMELEC
Telex : 0365-2395 UTAM IN

Works :
B-189/A, Road No. 9 (F)
V. K. I. A
JAIPUR

With Best Compliments From

University Book House Pvt. Ltd.

79 S M S Highway,
JAIPUR- 302 003 (India)

Phone (O) 314227, 313382
(R) 378828

Recognised Agents For Collecting Subscriptions to Indian & Foreign Journals

★ PUBLISHERS
BOOK SELLERS ★ SUPPLIERS

Law, Medical, Technical, College & Reference Books

Best Compliments From

ESTD. 1979

The Sunder Band

☎ 562939

The Sunder Band (Regd)

FIRST CROSSING OF
MOTI SINGH BHOMIYON KA RASTA
JOHARI BAZAR
JAIPUR-302003

Prop TILLUMAL KHEMANI

'तपों में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ तप है'

With Best Compliments From

HINDU JEA BAND

Johari Bazar, Jaipur-3

Phone H O 565089 Resi 322278

BRANCH

DELHI
477 L R Market
Phone 230162/230463/237164

AHMEDABAD
Manak Chowk
Phone 340388/490822

With Best Compliments From

Jain Plywood House

जैन प्लाईवुड हाउस

Kishan Pole Bazar, Jaipur 302001

Phone (O) 317722 (R) 371405

Dealers in

DURO PLYWOOD, BLOCK BOARD, NATIONAL BOARD, NOVOPAN BOARD, FLUSH DOORS, HARD BOARD, SUNGLOSS SUNMICA, INSULATED BOARD, GLUE ALL KINDS OF TIMBERS ETC

With best compliments from :

GEM SHOP

(PRECIOUS & SEMI PRECIOUS STONES & JEWELLERY)

Manufacturers and Exporters

Show Room
H-6, CHAMELIWALA MARKET
Opp. G. P. O.
M. I. Road
JAIPUR–302 001 (India)

With best compliments from :

Padam Paras Roadlines

Fleet Owners & Transport Contractors
Crossing Agents
B-56, Transport Nagar, JAIPUR-302 003
Phone : 40822, 41237
Full Load Service for : HARYANA, DELHI U P., PUNJAB GUJRAT, M.P., ASSAM, BENGAL, BIHAR & ALL Over INDIA

Shri Padam Hans Travels

Head Office :
B-57, Transport Nagar, JAIPUR-302 003
Phone: 40822, 41237
All kind of Deluxe Buses, Mini Buses & Semi-deluxe Buses are available 24 hours for L T C Tours Educational Tours Marriage Party & Picnic Party etc.

शुभ कामनाओं सहित :

मॉडर्न पब्लिक स्कूल

मेहता मार्ग, गलता रोड़
जयपुर
(मान्यता प्राप्त)
नर्सरी से कक्षा आठ तक
(हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम पृथक-पृथक पारियो में)
नोट : कम्प्यूटर व विज्ञान प्रयोग शाला की सुविधा सहित

With best compliments from :

HINDUSTAN SURGICAL COMPANY

Opp. S. M S. Hospital
JAIPUR-302 004
Phone : 368240

Manufacturers of .
BANDAGES & GAUGE
APPROVED GOVERNMENT CONTRACTORS

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

INTERNATIONAL
CARGO CARRIERS

(FLEET OWNER S TRANSPORT CONTRACTORS)

H O

B 59, TRANSPORT NAGAR, AGRA ROAD, JAIPUR

Regular Parsels Full Truck Road Service

For

Bombay ● Bhilwara ● Thana ● Surat ● Baroda ● Vapi ● Ahmedabad ● Gulabpura ● Bhilwara ● Udaipur ● Delhi

BRANCHES & ASSOCIATES

UDAIPUR
Near Surajpole Gate
Phone 28101

BHILWARA
Transport Nagar,
Shop No 210
Phone 22560

GULABPURA
Bhilwara Road
Phone 23132

BOMBAY
F 11/12 Sita Ram Bulding
Palton Road
Phone 3445788 3431606
3431572

BHIWANDI
D 9 B G T.A. Compound
Rehanal Village
Phone 23840

MADRAS
334 Wal Tax Road
Phone 528880, 519587

CALCUTTA
28 Black Burn Lane
Phone 274224 270918

With Best Compliments From :

DIN DAYAL & SONS (P) LTD.

✳ ✳ ✳
✳ ✳
✳

Works :
G-421, BHIWADI IND. AREA,
BHIWADI (Rajasthan)

☎ : 809

Manufacturers of :

PLASTIC CONTAINERS

With best compliments from

CHOUDHARY YATRA CO.

483 INDRA BAZAR
JAIPUR
Phone (O) 310099 317605
(R) 567314

With best compliments from

ESTD 1964 | REGD 21413

Nav Bharat Stationers

Shop No 135
Chaura Rasta, JAIPUR - 302 003
Phone (S) 312696 (R) 42399

Manufacturers Stationers
Paper Merchants & Order Suppliers
Specialists in Drawing Surveying & Art Materials

Distributors For
SUPREME BRAND
ACCOUNTS BOOK & STATIONARY

'परिग्रह के समान कोई जाल नहीं है"

With best compliments from

M/s Priya Paper Converters

M/s. Priya Enterprises

PAPRIWAL HOUSE, K G B
KA RASTA JOHARI BAZAR,
JAIPUR 302 003
Phone 560583

Manufacturers & Dealers of
Exercise Book Register Cash Book
Ledger Paper Stationery Articles

निष्ठुर, कर्कश आदि वचनों को
छोड़ने से वचन-शुद्धि होती है
With best compliments from

COTLERE®

School - Uniforms
PLEASE VISIT -

READYMADE CENTRE

104 JOHARI BAZAR
(NEAR L M B) JAIPUR
Phone (S) 565539 (R) 42331 540202

With Best Compliments From :

AJAY CHHABRA

(TAX SAVING & INVESTMENT CONSULTANT)

"CHHABRA BHAWAN"
2, NEW COLONY, PANCH BATTI,
JAIPUR-302 001
Phone : 363570, 368212

With Best Compliments From :

Surendra Kumar Patni
Agent

LIFE INSURANCE CORPORATION OF INDIA

Branch Office, Unit-I
"Jeevan Prakash" Bhawani Singh Road,
JAIPUR-5

OFF. : *314, Kishanpole Bazar,*
JAIPUR-302 001

RES. 58, *GEEJGARH VIHAR, HAWA SARAK*
JAIPUR 302006

With best compliments from :

SOHAN LAL DOYARA

(TAX SAVING & INVESTMENT CONSULTANT)

★ LIC
★ UTI
★ GIC

A-23-A, SEN COLONY,
KABIR MARG,
BANI PARK,
JAIPUR-6
Phone : 361959 PP

With best compliments from :

GIRIRAJ DAS MAHESHWARI

(TAX SAVING & INVESTMENT CONSULTANT)

★ LIC
★ UTI

"SHRI KRIPA"
K-20, Bhawani Nagar,
Sikar Road,
JAIPUR

With Best Compliments From

MACL

MODI ALKALIES & CHEMICALS LIMITED

ALWAR

WHERE TOTAL QUALITY MANAGEMENT (TQM)
IS RECOGNISED
AS JOB NO 1 AS ENTERPRISE GOAL

Manufacturers of

— Caustic Soda Lye/Solid/Flakes
— Liquid Chlorine
— Hydrochloric Acid
— Stable Bleaching Power
— Trichloroethylene

SP—460 Matsya Industrial Area
Alwar-301 030 (Raj.)
Phone 378 562, 563 564 (MIA)
Fax 0144 82361

With Best Compliments From :

PRITI GEMS

☎ : (O) 565320 (R) 565065

2372 Pungalia House
M. S. B. Ka Rasta
Jaipur 302003

Ganeshdas Bherulal Pungalia

JEWELLERS

2372, Pungalia House
M. S. B. Ka Rasta
JAIPUR-302003 (Rajasthan)
Phone : (O) 565397 (R) 565065

Fax No 00 91 141-561492

Phone 560756
517771 (R)

SHREERAM FAX

Opp SBB&J, 277, S.M.S Highway
JAIPUR-302 003

Establishment for

- Multi Color Photostat
- Fax
- Photostat in any size
- Plastic Lamination
- Electronic Type (Hindi & English)
- Cyclostyle

Quality work on reasonable rates

शुभकामनाओं सहित

महावीर नमक उद्योग

71, रेल्वे स्टेशन के पास
नावा सिटी

☎ (01586) 52245

सबसे ऊँचा आदर्श रागद्वेष से मुक्त हो जाना है।

शुभकामनाओं सहित

तारा मेडिकोज

1 ए, बापू बाजार, जयपुर - 302 003

☎ (O) 563772 (R) 514443

महावीर जयन्ती के पावन अवसर पर हार्दिक शुभकामनाऐं

फतेहचंद दासुराम जैन

एफ. डी. रंगवाला

नवाब साहब की हवेली, त्रिपोलिया बाजार
जयपुर-302 002

☎ (O) 560261 (R) 540255

ममता का वन्धन अत्यन्त भयावह है ।"

Best Compliments From :

Sushil Auto Stores

utomobile Dealers and Government Order Suppliers

Authorised Distributors for :

dusthan Trucks, Ambassador, Trekker & Contessa Parts & , S T D, P C O Service available Fax & Photostate

M I Road, Near Delux Hotel
Post Box No. 206
JAIPUR-302001
Phone : (S) 368418, 370550
(R) 513283 70550

"लोभी व्यक्ति सदा दुःखी रहता है"

- भगवान महावीर

फोन : (ऑ.) 372849, 363596 (घर) 312591
तार : फ्रूडग्रेन

बिरधीचन्द चिरंजीलाल जैन

सी-14, अनाज मण्डी चांदपोल, जयपुर (राज.)

मै० महावीर आयल इण्डस्ट्रीज

रोड़ नं० 1 वी.के. इण्डस्ट्रियल एरिया,
तिल्ली तेल के निर्माता
Phone : 330734

राज ट्रेडर्स

17, चांदपोल वाजार, जयपुर
खाद्य तेल एवं वनस्पति घी के थोक विक्रेता
Phone : 64795

ष्य जन्म से नही कार्य से महान वनता है"

☎ : 372491, 318167, 372491

राजूलाल
छतेहलाल जैन

कमीशन एजेन्ट्स

बी-1 नई धान मण्डी, चांदपोल
जयपुर-302 001

K.C. THOLIA
SHARAD THOLIA

* * *

SIMKO WIRES

Manufacturers Cooper & Aluminium Wires

* *
*

C-402, Mangla Marg, Brahampuri, Jaipur
Phone : 77563 (Fact.)
313608 (Resi.)

With Best Compliments From

CHIRANJI LAL BAXI

279, Tripolia Bazar
JAIPUR-302 002
Phone (O) 563423 (R) 365470 (G) 45240

* * *

Dealers in

COLOUR ● CHEMICALS ● PAINTS

Prop S K BAXI

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर

एम. आर. आइल एण्ड दाल मिल्स

कुचामन सिटी

व्यवस्था ही घर की शोभा है
सन्तुष्ट स्त्री ही घर की लक्ष्मी है
समाधान ही घर का सुख है
आतिथ्य ही घर का वैभव है

With best compliments from :

M/s. THE ROYAL COMPANY

KHASA KOTHI CIRCLE
STATION ROAD
JAIPUR–302 006
Phone : 69294, 314362 Res. 514708

Authorised Distributors for :

M/s. PSG INDUSTRIAL INSTITUTE

For Motors, Pumps, Diesel Engines, Machine Tools.

M/s. ADVANI OERLIKON Ltd.

for welding electrodes & welding equipments

A Leading house of Industrial & Agricultural products.

With best compliments from .

ESTD 1907

Dhannalal & Brothers

(MANUFACTURER & EXPORTER)

Wholesale Dealers of Ivory, Brass, Sandalwood & Hand Made Panting Cloth & Paper

AJABGHAR KA RASTA
JAIPUR302 003
Phone : 313970 PP
Cable : HATHIDANT

With Best Compliments From :

TRIBHUVAN MEDICALS

19, MAHALAXMI MARKET
FILM COLONY, JAIPUR

☎ 70314 p p

शुभ कामनाओं सहित :

हनुमान ट्यूब वैल कम्पनी

पोलो विक्ट्री के सामने
स्टेशन रोड,
जयपुर

फोन : (O) 363323 (R) 550207

शुभ कामनाओं सहित

हैण्ड पम्प व ट्यूब वैल
खोदने के कार्य हेतु

सम्पर्क करे

मै. भँवर लाल
जांगिड़

खाती मोहल्ला, ग्राम वाटिका,
तहसील सागानेर
जयपुर

With best compliments from

PUSHPA MOTORS

Near Meerji Ka Bagh
Sansar Chandra Road,
JAIPUR

☎ 375484

With best compliments from

S. S. Steel Suppliers

IInd Floor Somani Building
S C Link Road Loha Mandi
JAIPUR 302 001
Phone (O) 366468 (R) 310506

Delers In all kinds of Iron & Steel Materials

Sister Concern

M. K. Patni & Co.

Iron & Steel Brokers & Commission Agents
566 Maniharon Ka Rasta JAIPUR
Phone 310506

SATISH CHAND JAIN
PADAM KUMAR JAIN

Abhishek & Company

(STOCK & SHARE BROKER)
Office C 21 Anaj Mandi
Chandpole JAIPUR-302 001
Phone 73888, 74949 78833

Abhishek Trading Company

Specialist in
Mustred Seeds & Mustred Cake
C 21 Chandpole Anaj Mandi
JAIPUR 302 001

Sister Concern

★ Abhishek Broker Agencies
★ Abhishek Enterprises
★ Abhishek & Co (Share Broker)

'सज्जन पुरुष गुणों को ही ग्रहण कने वाले होते हैं ।'

With best Compliments from :

JAIN TRADERS

89, Atish Market, JAIPUR- 302 002

Phone : (O) 311093 Resi. 372601

DISTRIBUTORS :

Gem P.V.C. Rigid Pipes, "Globe" Chain Pulley Block
Indo Plast P.V.C. House Pipe, "deep" Chain
Pully Block, TT & Prakash Belting.

DEALERS :

Rubber Belting, P.V.C. Tubes, Chain Pulley Blocks,
Hose Tubes, Steel Tubes Fitting, C.I. Pulley
& Politions Tubes etc.,

"हिंसा से विरक्त होना अहिंसा है"

— चारित्र पाहुड़, 30

With Best Compliments from .

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

STAR COLOR LAB

Kishanpole Bazar, JAIPUR–302 001

PHONE : 316143

"ससार की तृष्णा विप वेल कही गई है"

महावीर जयन्ती पर हार्दिक शुभ कामनाएं :

* * *

* *

*

सत्येन्द्रकुमार बिल्टीवाला

जयपुर लाइम्स इन्डस्ट्रीज

नाग तलाई, आमागढ़, जम्पुर

दूभाष कार्यालय 41526 निवास 40167

आसक्ति दुःख है, अनासक्ति सुख ।

भगवान महावीर की पावन जयन्ती के अवसर पर

शुभ कामनाओं सहित :

अरूण ज्वैलर्स

(एक्सपोर्टर्स एव इम्पोर्टर्स)

प्रेसीयस, सेमी-प्रेसीयस, सिन्थेटिक एव सिल्वर

ज्वैलरी के थोक विक्रेता

565, गोपालजी का रास्ता, जयपुर - 302 003

फोन 560577, दुकान 564749

सतीशचन्द जैन, रमेश जैन, अरूण जैन

1787, अरूण विला, हल्दियों का रास्ता, जयपुर

"संसार की तृष्णा विष बेल कही गई है"

With best compliments from :

Bakliwal & Company

Authorised Distributors & Stockists

☎ 372337

Specialists in :

AUTOMOBILE AND DIESEL PARTS

MIRZA ISMAIL ROAD JAIPUR-302 001

With Best Compliments From

Phone : (O) 48834, 46991 (R) 49589

Gram : 'SPEEDWAYS'

Santosh roadways

Transport Contractors & Fleet Owners

Ahatram Manzil, Moti Doongari Road, JAIPUR-302 004

Sister Concern : Speedways M.D. Road, Jaipur

Regular services between our Branches

[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

Circle Office :

[illegible] KANPUR-208021 [illegible]

With Best Compliments From

RISHABH CONSTRUCTIONS (P) LTD.

ENGINEERS & CONTRACTORS

52, 53, Janta Colony Shopping Centre
Janta Colony, JAIPUR-302 004
Phone 41209

Rishabh Specialist in

☆ Industrial Structures ☆ Housing Complex ☆ High Raised Buildings

शुभ कामनाओं सहित

बज एण्ड कम्पनी

विचून मार्केट, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन 317887, 318594

बज क्लाथ स्टोर

हल्दियो का रास्ता, जयपुर फोन 566042

महावीर कटपीस क्लाथ स्टोर

30, दड़ा मार्केट, घी वालो का रास्ता, जयपुर

बज टेक्सटाइल्स

खजाने वालो का रास्ता, जयपुर

बज उद्योग

आचार्यो का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर

अहिंसा त्रस औं स्थावर सभी तरह के प्राणियों की कुशल-क्षेम करने वाली है ।

शुभ कामनाओं सहित :

AA

एलाइड एजेन्सीज

मिर्जा इस्माईल रोड़, जयपुर —302 001 (राजस्थान)

फोन : (O)374204, 366455, (R) 374205, 372957

टेलेक्स : 0365-2048 ACME IN

With best compliments from :

Bearings & Bearings

A HOUSE OF GENUINE BEARINGS

MIRZA ISMAIL ROAD, JAIPUR -302 001 (RAJASTHAN)

GRAM: 'STEELBALL'

Phone : (O) 366267, 362859, (R) 380843

Authorised Stockists :

SKF NBC NRB Unimac HMT AEL SBL

With best compliments from

Motilal Watch Company

146 Tripolia Bazar,
JAIPUR-302 002

☎ 48010 48011
Gram ROCHEES

Authorised Stockists
TITAN, ALLWYN, H M T & ROCHEES WATCHES

With Best Compliments From

M/s. Ratan Das Gupta

(Engineers, Contractors & Builders)

Specialised in
R C C Strectural Works

☆ ☆ ☆

240 Brahmpuri JAIPUR-302 002
Phone 74838 79165

B L BEOTRA
Works Manager

ASHOK AGARWAL
Partner

शुभ कामनाओं सहित :

* * *
* *
*

श्री अमृत ग्रेनाइट इण्डस्ट्रीज

F-79, इण्डस्ट्रियल एरिया
चूरू (राज.)

ग्रेनाइट स्लेब कटिंग व पालिशिंग ग्रेनाइट स्लेब के निर्माता

With Best Compliments From :

Honey Drug House

Near Fort
CHURU

With Best Compliments From

Shree Manish Trading Company

Mishra Rajaji Ka Rasta, Chandpole
JAIPUR
Phone 313048 313349

Wholesale Merchant

Kirana & Dry Fruits

With Best Compliments From

M/s. Jai Vijai Construction

30, Janakpuri 1st
Imliwala Phatak
JAIPUR

☎ 515276

With Best Compliments From :

SWASTIK TRADING COMPANY

SOLE DISTRIBUTORS FOR RAJASTHAN
PRECITEX APRONS & COTS

Manufactured by :

PRECISION RUBBER INDUSTRIES (P) LTD.

BOMBAY

4B, BASEMENT, NAVJEEVAN COMPLEX
29, STATION ROAD, JAIPUR-302 006
Phone : (O) 361364, 370317 (R) 562259

शुभ कामनाओं सहित :

मैसर्स एग्रोकिंग्स

एम. आई. रोड
जयपुर

यजदी एवं हीरोपुक
के विक्रेता

शुभ कामनाओं सहित

मैसर्स बोथरा इंजीनियरिंग कम्पनी प्रा. लिमिटेड

24-25, औद्योगिक क्षेत्र,
श्री डूंगरगढ़
जिला चुरू (राज)

**उच्च क्वालिटी क्लोरीनेटेड पैराफीन वैक्स
व हाइड्रोक्लोरिक एसिड के निर्माता**

शुभ कामनाओं सहित

सेरेमिक स्पेशियलिटीज इंडिया

30-31 A, औद्योगिक क्षेत्र,
श्री डूंगरगढ़
जिला चुरू (राज)

क्लिन फर्नीचर के निर्माता

With Best Compliments

Laxmi Screen O' Screeners

2128, Radio Market
Nehru Bazar, Jaipur
Ph. : 310264

Exclusive Quality of Letter-heads, Sticker's, Visiting & Wedding Cards by Screen Printing Brass Plates, Momentoes and all types of advertisement items.

From :
DHARMENDRA GODIKA
DEEPENDRA JAIN

With Best Compliments From :

A Reliable House for Paper Lamination & Varnishing

Jain Plastic Company
Jaipur Glazing Works

Vayso Ka Chowk, Pandit Shivdeen Ka Rasta,
Kishanpole Bazar, JAIPUR-302 001

✆

312388 (Lamination Unit)
311573 (Varnishing Unit)
513395 (Residence)

Rakesh Jain
Tej Prakash Jain

With Best Compliments From

PRECIOUS ENTERPRISES PVT. LTD.

MANUFACTURERS, INDENTORS, EXPORTERS & IMPORTERS

REGD OFFICE

B-172, Rajendra Marg

Bapu Nagar

JAIPUR-302 015 (INDIA)

☎ 516675 516774

"परिश्रम हर वस्तु को जीत सकता है"

With Best Compliments From

MANISH ENTERPRISES

Prop KAMAL CHAND CHHABRA

2636 Chhabra Bhawan Ghee Walon Ka Rasta

Johari Bazar, JAIPUR 302 003

Phone 561738

A Class Govt Electric Contractor & Authorised Dealer of Fort Gloster Industrial Tele Quip Audio Door Phone & Lock Equipments & Hardware General Order Suppliers

RAVI ELECTRIC STORES

Ghee Walon Ka Rasta Johari Bazar JAIPUR 302 003

Electric Hard Wares & General Order Suppliers

With Best Compliments From :

PARAG ENTERPRISES

F-810 (A) Road No. 14, N-1 V. K. I. Area

JAIPUR-302 013

☎ : 330374, 331474

Mfrs. :

Factorymade Panel Door, Window Shutters, Wooden Chowkhat

Pawan Jain

Chartered Accountant

Resi. : C-91, Shastri Nagar,

JAIPUR-302 006

☎ : 75721

With Best Compliments From :

Patni Coal Traders

A-21, Shastri Nagar

JAIPUR-302 016

Phone : 315351, 68234

Prop. :

Rameshwar Lal Patni

(Kaladera Wala)

With Best Compliments From

ruby source

✻

303, Panch Ratna
3937, M S B Ka Rasta, Johari Bazar
JAIPUR 302 003

☆

Phone 561547, 568233
Fax 42973

With Best Compliments From

RACHIT EXPORT

1181, HIRAWATON KA CHOWK
PARTANIYON KA RASTA
JOHARI BAZAR
JAIPUR

✻ ✻ ✻
✻ ✻
✻

Phone 568182

With Best Compliments From :

Sanmati Stationers

Opp. Adarsh Nagar Post Office,
Govind Marg, Raja Park,
JAIPUR-4
Phone (R) 318642 (S) 49564 PP

Contact for :
Exclusive Range of Office & Drawing Articles

With Best Compliments From :

Kiran Udyog

JAIPUR

With Best Compliments From

BIKANER TRANSFORMER UDYOG

F-94 Bichwal Industrial Area
BIKANER
Phone (O) 26632 (R) 25118

Manufacturer & Repairer of
Power & Distribution Transformers

शुभ कामनाओं सहित

दुर्गा दत्त खेतान

'डी' श्रेणी ठेकेदार

सिंचाई विभाग

डूंगरपुर

शुभ कामनाओं सहित :

JCT FABRICS

अनिल कुमार सुनील कुमार (जैन)

नेहरू बाजार, रेडियो मार्केट

जयपुर

फोन : (नि.) 314595 (दु.) 317033

अधिकृत विक्रेता : जे सी टी लि. फगवाड़ा

मयूर ट्रेडर्स

कपड़े के थोक व्यापारी

मनिहारों का रास्ता, नेहरू बाजार, जयपुर-302 003

With Best Compliments From :

PIPE TRADERS

B-22, M. G. D. MARKET

JAIPUR-302 002

Phone : (O) 69218, 74795, 313473

(R) 361188, 364306

Distributors of :

GALVANISED & BLACK STEEL

TUBES FROM $\frac{1}{2}$" TO 12"

FOR WATER, GAS, STEAM & CASING

With Best Compliments From

THYCON INDIA (P) LTD.

F-45, Malviya Industrial Area
JAIPUR-302017
Phone 511483 Gram THYNDIA

Manufacturer of Power Equipments

* Float and Boost Battery Chargers for Railways, State Electricity Boards Industries etc
* Inverters & D C D C Converters
* Servo Voltage Stabilizers
* Ferro Resonant Voltage Stabilizers (CVT)
* AC/DC Control Penels
* Un interrupted power supply system (UPS)

With Best Compliments From

M/s. UMA POLYMERS PVT. LTD.

* * *
* *
*

ABU ROAD (Raj)

With Best Compliments From :

M/s. HANUT INDUSTRIES

B-90, 91, 92 Industrial Estate
Bais Godown
JAIPUR-302 006

Manufacturer of :
All Kinds of Water Storage Tank
Holding Rate Contract with D.G.S. & D.

☎

374687, 368776

With Best Compliments From :

M/s. Baid Industrial Corporation

140(2) Industrial Area,
Jhotwara, JAIPUR-302 013

Manufacturer of :

Polycon Water Storage Tank holding Rate Contract with D.G.S. & D.

Office

Polycon House, Bais Godown, JAIPUR

With Best Compliments From

MARUDHAR EDIBLE OILS LTD.

Office

114/115, Jaipur Towers 1st Floor, M I Road, JAIPUR-302 001

Factory

F-170-G 173, Udyog Vihar, JETPURA-303 704 Distt JAIPUR (Raj)

Phone (O) 376601 376126

Gram OASIS

Fax (0141) 367760

Telex 0365-2167 RAVIIN

"ससार की तृष्णा विष बेल कही गई है"

शुभ कामनाओं सहित

अरिहंत कारपोरेशन

मिनर्वा सिनेमा के पीछे,

आगरा रोड, जयपुर-302 003

फोन 540393

ARIHANT FOR MENS

AVAILABI E AT

कोठ्यारी ड्रेसेज

121, जौहरी बाजार, जयपुर

फोन 560432

आकर्षण

चौड़ा रास्ता, जयपुर

फोन 316074

With Best Compliments From :

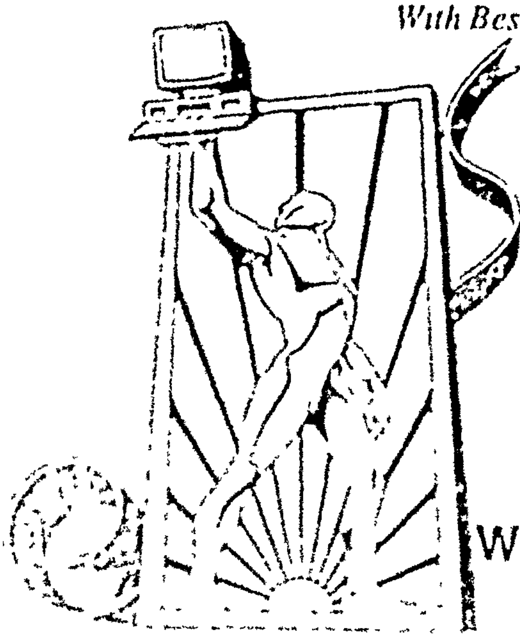
M/s. Manak Chand Fundilal Sethiya

Nayapura, Bus Stand Road,
KOTA-324 001
Phone : (O) 26230 (R) 22764

MINES HOLDER OF KOTA STONE

Jinendra Kumar Jain

With Best Compliments From :



ACADEMY OF COMPUTER LEARNING

Where A Future Begins

KOTA CENTRE
Allen Computers & Consultants
4b, Shopping Centre KOTA
Phone : 29206

UPTRON
ACL

With Best Compliments From

RAJ METAL CABEL

12, Agrsen Colony, Brahmpuri Khurra
JAIPUR-302 002
Phone (O & R) 78881

Mfrs

Anodised Aluminium, Brass Copper Engraved, Lables, Movemeto, Badge & Medal

With Best Compliments From

UTSAV ELECTRO-MECH PVT. LTD.

Utsav Industrial Estate,
Dabhoi Road, Pratapnagar,
BARODA-390 004
Phone 460282
Gram UTELEC

Manufacturers of

Connectors for Power and Distribution Transformers, Accessories for Transmission Line & Sub-Station

With Best Compliments From :

A. DAGA STEEL & INDUSTRIAL CORPN.

JANGID BHAWAN, M. I. ROAD
JAIPUR-302 001
Phone : (O) 379192, 377251
(R) 381392, 381304

Manufacturers of :

All Types of Steel & Wooden Furniture, Desert Coolers, Room Coolers, Ice Boxes & G. P. Boxes.

With Best Compliments From :

Anpee Corporation

* * *
* *
*

RATTAN MANSIONS
Opposite All India Radio
M. I. Road
JAIPUR-302 001
Phone : (O) [illegible] (R) [illegible]

शुभ कामनाओं सहित

श्री विजय कामर्शियल इन्स्टीट्यूट

Electronic Typing ★ Duplicating ★ Eletrostatc Photostat ★ Lamination

एवं

श्री विजय फैक्स

Navratan Apartments

Shop No 114, Near Lal Bhawan

Chaura Rasta JAIPUR

Phone 310573 Fax 312166

राम कामर्शियल इन्स्टीट्यूट

सुभाष चौक,

आमेर रोड़, जयपुर

मनोज पाटोदी

शुभ कामनाओं सहित

बाबू लाल गर्ग

बी श्रेणी के ठेकेदार

सिंचाई संभाग

जयपुर (राज)

With Best Compliments From :

M/s. Computer Accounts

B-15, BINERY SYSTEMS
JAIPUR TOWER
M. I. ROAD
JAIPUR-302 001

☎ : 360890

With best compliments from:

SHREE AMOLAK IRON & STEEL MFG. CO.

Phones : (O) 313900, 315478 (R) 316587, 310887
Gram . *AMOLAK*
Manufacturers of :

ALL TYPES OF STEEL & WOODEN FURNITURES & COOLERS

Office & Show room :
C-3-208, M.I. ROAD,
JAIPUR-302001
Factory :
[illegible]-72, INDUSTRIAL AREA, JHOTWARA,
JAIPUR-302012

|| श्री महावीराय नम ||

शुभ कामनाओं सहित

मैचिंग कार्नर

(फैन्सी ब्लाउज)
(रुविया एवं पापलीन के विशिष्ट विक्रेता)

लालजी साड का रास्ता,
चौड़ा रास्ता, जयपुर-3

With Best Compliments From

Parshwa Plastics Pvt. Ltd.

Manufacturer of Marble Slabs & Tiles

Ankit Marbles

Plot No F 36 36 A RIICO Industrial Area
MADANGANJ KISHANGARH 305 801 (Raj)
Phone (O) 2741 (R) 2513 (STD) 01463

SURENDRA DAGRA
DIRECTOR

With Best Compliments From :

SUBHGIRI INDUSTRIES

Fact. : B-92, I.P.I.A., Road No. 5, Opp. Om Metals, KOTA

Resi. : "GOKUL" Opp. Grand Hotel, Rampura, KOTA

☎ : (F) 420186 (R) 21706, 20223,

Gram. : SUBHGIRI

KOTA CELIMENTS

(SPLITTED KOTA STONE)

Fact : 244, Road No. 5 I.P.I.A., KOTA

Resi. : 1 - ज - 18, Vigyan Nagar, KOTA

✆ : (F) 421033 (R) 426861

With Best Compliments From :

Krishna Coal Industries

All Kind of Timber Furniture &
Coal Briquettes Manufacturers & Suppliers

Shiva Industries

Suppliers of Teak wood &
All Kind of Timber Furniture

557, Chhawni Road,
KOTA-324 007

☎ : [illegible]

शुभ कामनाओं सहित

YASHIKA

Television

1 कलर टी वी पोरटेवल पर 2 माह की मनी चैंक गारन्टी
2 5000/- दीजीऐ शेष ब्याज रहित आसान किस्तो पर
3 कलर टी वी खरीद पर पुराने टी वी वापसी की व्यवस्था
4 2 वर्ष की गारन्टी

SOGANI ELECTRONICS

66 A Radio Market Nehru Bazar
JAIPUR 3
Phone 319599

With Best Compliments From

SUSHIL KUMAR SONI
44, GANGWAL PARK
JAIPUR 302 004 ☎ 44361

The Typesetter of

SMARIKA

M/s Amarjyoti Computers

Kishore Niwas
Tripolia Bazar
Jaipur-302 002
Phone 312449

With Best Compliments From :

RAGUWAR
INDIA
LTD.

MUNDRA BHAWAN
3, AJMER ROAD
JAIPUR
PHONE : 368571

With Best Compliments From :

SHREE RAM OVERSEAS

MANUFACTURERS & EXPORTERS OF
FASHION GARMENTS & MADE-UPS

1-A, SANGA SETU ROAD
SANGANER-[illegible]
JAIPUR (INDIA)
PHONE : [illegible]

With Best Compliments From

Super Electricals

Manufacturers of

Paper Convertered Conductors and Wires

B 190b Road No 9 F
V K I A
JAIPUR
Phone 331210 330342

With Best Compliments From

Deepak Enterprises

Govt Contractors & General Order Suppliers

Monik Typewriter Company

Repairs of

All Make of Typewriters, Calculators, Duplicators

Specialist in

Reconditioning & Key-Board Conversion of Typewriters

Somani Building 1st Floor
Sansar Chandra Link Road (Loha Mandi)
Jaipur 302 001
Phone 365384 PP

With best compliments from :

INSTRUMENTS & APPLIANCE TRADERS

APPROVED 'A' CLASS CONTRACTORS

Dhadda Market, Johari Bazar,
JAIPUR-302 003
Phone : (O) 565602 (R) 78291

SPECIALISED IN POWER INSTALLATIONS & ALL CABLE WORKS
Also Undertake the work of Fire Alarm & Fire Fighting Works

With Best Compliments From

APEX SALES CORPORATION

Manufacturers of Agricultural Implements
C. I. Castings & Sewing Machine Stands

Factory :
147, Industrial Area, Jhotwara, JAIPUR-302 012 Phone : 842402
Office :
2, Raman [illegible], Station Road, JAIPUR-302 006
[illegible] 74378, 67348 (R) [illegible]
[illegible] Telex No. [illegible] Fax 0141 [illegible] Attn APEXCO

With Best Compliments From

When You are in Ajmer
Just feel our Cordiality

HOTEL SAMRAT

KUCHHERY ROAD, AJMER

Situated In Between Bus Stand to Railway Station

Facilites Available

- Check Out time 24 Hours
- EPABX STD ISD in Hotel at Government Rate
- Cable T V with 7 Internation Channel
- Vegetarian Food avaible 24 Hours
- A C Super Delux & Delux Room
- Channel Music
- Concession to voluntary clubs
- And all morden facilites for good living

खादी एक बड़ा मिशन

खादी का एक वड़ा मिशन है, खादी उन लाखो लोगो को गौरवपूर्ण उद्योग प्रदान करती है जो वर्ष मे लगभग चार मास वेकार रहते है । इस काम से जो आमदनी होती है उसे छोड़ दे तो भी वह स्वय अपना पुरस्कार है, क्योंकि अगर लाखो लोगो को मजवूरन आलसी वनकर रहना पड़े तो अवश्य ही उनकी आध्यात्मिक, शारीरिक और मानसिक मृत्यु हो जायगी । चरखे से लाखो गरीव स्त्रियो का दर्जा अपने आप वढ़ जाता है ।

महात्मा गांधी

राजस्थान खादी ग्रामोद्योग सस्था सघ वजाज नगर, जयपुर

"महावीर के गुणगान शब्दों में ही नहीं आचरण में भी उतारो
उनको मन्दिर में नहीं अन्दर भी निहारो"

With best compliments from :

BHAG CHAND & COMPANY

IRON STEEL MERCHANT & COMMISSION AGENT

Somani Building, Loha Mandi
Sansar Chandra Link Road
JAIPUR-302 001

☎ : (S) 378752 (R) 313047

With Best Compliments From :

Rajiv Brothers

☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

M. I. ROAD, JAIPUR-302 001
[illegible]
[illegible]
[illegible]

"खोटे साधनो से उपार्जित धन का परिणाम भी खोटा होता है"

With the compliments of

AVISHKAR TRADERS

POST BOX NO 257, OPP AMBER TOWER
SANSAR CHANDRA ROAD
JAIPUR—302 001
Phones Off 364658 Res 563350

Authorised Dealers for

- ☆ 'Advani-Oerlikon' Welding Rod and Transformers
- ☆ 'Vulcan' Arc Welding Transformer
- ☆ 'Wolf' & 'Black & Decker' Hand Tools & Spares
- ☆ 'Cinni' Bench Grinder & Polishers
- ☆ 'Itco' Drilling Machines
- ☆ 'Apex' Bench Vices
- ☆ 'Toya and Master' Air Compressors
- ☆ 'Asha' Gas Welding Equipments
- ☆ 'Everest' Car and Scooter Washing Pumps Pilot Spray Guns

With Best Compliments From

K. P. Distributors

Ram Bhawan S M S Highway
JAIPUR
Phone 560058 Gram Kalyan

CENTRAL MEDICAL AGENCIES

Phone 560825

Pharmaceuticals Distributor

With Best Compliments From :

☆ ☆ ☆
☆ ☆
☆

PRATIBHA MARKETING

JAIPUR

With Best Compliments From :

P. C. Jain & Associates
Usha Polutech Engg. (P) Ltd.

Consulting Engineers, Erectors for Generator Boiler, Storage Tank
Fire Fighting Installation & Elect Contractors

N-8-A 1st Floor Munshi Ram Bldg
Connaught Circus,
NEW DELHI-110 001
[illegible] (O) 3317767 (R) 5717547, 57[illegible]

धर्म करत ससार सुख, धर्म करत निर्वाण ।
धर्म पथ साधे विना, नर निर्यच समान ॥

शुभ कामनाओं सहित

एम. डी. पाण्ड्या

जौहरी बाजार, जयपुर

फोन (आफिस) 564087 (घर) 41447

"सुखी वही है जिसकी वासना छूट गई है"

☆ ☆ ☆ ☆

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

निहाल चंद जैन एंड सन्स

पंजाब एंड सिन्ध बैक के सामने

5, स्टेशन रोड, जयपुर

फोन कार्यालय 365619/370228 निवास 511686

Fax 364030

With best compliments from :

SUDHIR KATARIA

READY MADE HOUSE

48, BAPU BAZAR, JAIPUR-302003

☎ : 566055

COTLERE®

★ GARMENTS
★ SHIRTS
★ PANTS
★ FROCKS
★ BABA SUITS

With Best Compliments From :

✆ : (O) 561667 (R) 67963

खण्डाका जैन ज्वैलर्स

गन्धियों का रास्ता, जौहरी बाजार,
जयपुर-302 003

★ शुद्ध सोने से बने हुए जेवर ★ चांदी के जेवर
★ चांदी के बर्तन ★ पूजा का सामान
★ [illegible] ज्वैलरी ★ फैशन एवं सेमी-
फैशन ज्वैलरी का सुन्दर संग्रह मिलता है।

With Best Compliments From

MANOJ IRON TRADERS

IRON & STEEL MERCHANTS

* * *
* *
*

Radha Damodar Ki Gali
Choura Rasta
JAIPUR
Phone 313134 (O) 47802 (R)

With Best Compliments From

R. G. Nagori & Sons

Marwar Balia,DIDWANA-341303
Phone 01580 2062 2064

Nagori Sodium & Chemicals Pvt. Ltd.

112/212/2 Swaroop Nagar
KANPUR
Phone 0512-214315 294204

Manufacturers

Sodium Sulphide

Sodium Sulphate

With Best Compliments From :

Best Commercial Institute

Opposite Amar Jain Hospital, Chaura Rasta,
JAIPUR–302 003

Speciality : Quality Work ✲ Reasonable Rates ✲ Delivery in Time

☎ : 560330

- ✲ D.T.P (600 DPI Ledger Print)
- ✲ FAX (Selt Code Nos. Available)
- ✲ Map's Copy by Plain Printer.
- ✲ Map's Copy by Reduction & Enlorgement
- ✲ Lamination (Any Size)
- ✲ Colour Photostat Blue-Black-Brown
- ✲ Electronic Type Hindi/English.
- ✲ Ammonia Print
- ✲ Electronic & Spico Binding
- ✲ Duplicating Work.

With Best Compliments From :

SINGHI JEWELLERS

Importers, Exporters & Manufacturers

PRECIOUS & SEMI PRECIOUS STONES
SPECIALISTS IN EMERALD

Bairathi House
Haldiyon-Ka-Rasta
Johari Bazar, JAIPUR-302 003
(I N D I A)
[illegible]

R. K. SINGHI
M. K. SINGHI

"ससार की कृष्णा विप वेल कही गई है ।"

हार्दिक शुभ कामनाओं सहित .

गुडलक ड्रेसेज

रेडीमेड वस्त्रो का भव्य शो-रुम

82-83, जौहरी बाजार, जयपुर –302 003

दूरभाप दुकान 565959 निवास 563490

घृणा केवल प्रेम से ही जीती जा सकती है ।

With Best Compliments from

AGARWAL

GENERAL ENGINEERING (Pvt) LIMITED

Manufacturers

A A C & A C S R CONDUCTORS

Regd Office & Factory

C 176, ROAD NO 9 J V K I A JAIPUR

☎ Off 60470 Fact 832614, Resi 513708

With Best Compliments From :

M/s Jyoti Structures Ltd.

BOMBAY-400 051

Manufacturers of Galvanised Transmission Line Towers, Steel Structures & Turnkey Projects

NASIK-*WORKS :*

52A/53A Road 'D' Satpur Industrial Area,

NASIK-422 007

Phone : 31091,31092, 31093, 31094, 31134 Telex : 0752-271

RAIPUR *WORKS :*

P. No 1037/1046, Sarora, Ring Road, Urla Industrial Complex,

RAIPUR-493 221 (M.P.) Phone : 324567

With Best Compliments From :

Swatantra Bharat Medical Stores

DRUGGISTS & CHEMISTS

[illegible]

[illegible]

[illegible]

With Best Compliments From

* * *
* *
*

Kalandee Rail Nirman (Engineers) Ltd.

JAIPUR

DEEPALI TEXTILES Pvt. Ltd.,

Regd Off D-138 Basant Marg
Bani Park Jaipur-16 (INDIA)
Phone 91 141-7/139
Fax 91 141 79154
Telex 365 2584 OCEN IN
Cable OCEAN
Postal GPO Box 374
Jaipur 302001 (INDIA)

Mfrs House and Home in 100% Cotton Printed Embroidered and Patch Textiles Table Linen Bed linen, Bed spreads, Cushions, Aprons and bags

With Best Compliments From :

K. P. POLYMERS

NG/S/11 Nehru Place,
Tonk Road, JAIPUR
Phone : 517365

Distributors :

- ☐ MAPSA SELF ADHESIVE PACKING TAPE
- ☐ PRINCE MATERIAL HANDLING CRATES
- ☐ INT JET PRINTERS FROM CONTROL PRINTS INDIA LTD.
- ☐ TOVEL PRICE LABELLING MACHINES

With Best Compliments From .

P R E S E N T I N G

THE LATEST SERIES OF HOME APPLIANCES
WITH LATEST TECHNOLOGY AND UNDER STRICT QUALITY CONTROL

Distributor for Rajasthan :

SONA ELECTRICALS

31-32, Jayanti Market [illegible]
Phone : [illegible]

DLLERS ENQUIRY SOLICITED

With Best Compliments From

* * *

* *

*

ADINATH MEDICAL STORES

Opp S M S HOSPITAL

JAIPUR - 302 004

☎ (O) 375331 (R) 363140

मनुष्य कहलाने योग्य वही है
जिसने इन्द्रियाँ और मन वश किया है ।

With best compliments from

JAINA MEDICALS

OPP S M S HOSPITAL,

JAIPUR-302 004

Phone (S) 368634 (R) 567826

With Best Compliments From :

KASLIWAL ENTERPRISES

(Manufacturers : Representatives, Engineers, General Order Executors and 'A" Class PWD Registered contractors)

Branch Office :
1-ग-4, Dadabari,
KOTA_324 009
Phone : 20232

Head Office :
L-69, Himmat Nagar
Opp. Manav-Ashram
Tonk Road
JAIPUR-302 015
Phone : (R) 372288

महावीर जयन्ती पर शुभ कामनाएँ :

कृष्णा वायर इन्डस्ट्रीज

* * *

* *

*

22 गोदाम
औद्योगिक क्षेत्र, जयपुर

With Best Compliments From

ASHOK TRANSMISSION WIRES PVT. LTD.

Regd Office

D 82A Road No 7,

Vishwakarma Industrial Area JAIPUR-302 013

Phone 330896 330982 (R) 331809

Manufacturers of High Quality AAC and ACSR Conductors

With Best Compliments From

RASHMI ENTERPRISES

App Govt Contractors Suppliers & Manufacturer's Representative

Distributors

Sinter Plast Containers, Kalol (N G)

20 Gujaron Ki Bagichi

Indira Bazar JAIPUR

☎ 310742

With Best Comliments From :

B. C. OSWAL

KOTHARI STONES (P) Ltd.

Manufacturer of Marble Salbs & Tiles

★ ★ ★

E-56-57, RIICO Industrial Area, IIIrd Phase
MADANGANJ-KISHANGARH-305 801
Phone : (F) 3172 (R) 3116

With Best Compliments From :

BINDAL JEWELLERS

532, Hanuman Ka Rasta, JAIPUR-302 003
Phone : 560674 Fax. 561085

Manufactures, Exporters Importers & Commission agents of Precious, Semi Precious Stones, Diamonds & Silver Jewellery

Specialist in Emerald

Associate Firms .

Nawal Kishore & Co.

1979, Haldiyon Ka Rasta, JAIPUR Phone : 56[illegible]

Jugal Gems & Corp.

[illegible] JAIPUR [illegible]

With Best Compliments From

MARUDHAR KESARI MARBLES PVT. LTD.

RIICO INDUSTRIAL AREA
MADANGANJ KISHANGARH
AJMER

Manufacturer of

Marbles Slabs and Tiles

With Best Compliments From

ANKUR MARBLES (P) LTD.

* * *
* *
*

Village Sajana
Amet Kelwa Road
Amet Rajsamand

शुभ कामनाओं सहित :

नवीन जरी निकेतन

कटला बाजार

जोधपुर

उच्च क्वालिटी जरी, गोटा माला
आदि के निर्माता व विक्रेता

With Best Compliments From :

SONI PLASTIKS

Office :

Seth Mool Chand Soni Marg
Anop Chowk, AJMER-305 001
Phone : 20384

Works :

F-55, Parbatpura
Industrial Area, AJMER-305 002

Manufacturers of

HM HDPE, LDPE LLDPE FILMS BAGS TUBES LINERS LAY FLATS Pick up Bags & Carry Bags

With Best Compliments From

SHEELSON

SHEEL

Bapu Bazar
JAIPUR
Phone (O) 563612 565881 (R) 42422

क्या आप 'शेयर एप्लीकेशन' जमा कराने जा रहे हो ? जी हा, तो आप तुरन्त हमारे स्थानीय काऊन्टर JAIN-JAIN से सम्पर्क कर अनुपम योजना के साथ निम्न विशेपताओं का लाभ उठावे ।

1 नि शुल्क शेयर एप्लीकेशन जमा कराने की व्यवस्था ।
2 नि शुल्क शेयर फार्म मिलने का एक मात्र स्थान ।
3 NRI शेयर फार्म की हर सप्ताह नि शुल्क डाक व्यवस्था ।
4 मात्र 15 पैसे का पोस्ट कार्ड लिखे मन चाहे 'शेयर एप्लीकेशन नि शुल्क डाक से प्राप्त करे ।

सहयोग के लिए धन्यवाद

पत्र व्यवहार का पता
तारा चन्द जैन (सवारिया वाला)
510 पार्श्व कुटीर, गणगौरी वाजार,
जयुपर

मिलने का पता
T C Jain (सावरिया वाला)
वैक ऑफ वडौदा के वाहर (शेयर विभाग),
एम आई रोड, जयपुर

समय 9 00 बजे से 2.30 बजे तक

JAIN JAIN JAIN

"निंदा और प्रशंसा में सम्भावी ही सच्चा साधु है"

महावीर जयन्ती के पावन पर्व पर शुभकामनाएं :

मै. ज्वाला सहाय हरद्वारीलाल

B-36, एम. जी. डी. मार्केट, जयपुर

☎ : 73008

यह आत्मा ही तो परमात्मा है। कर्मोदय के कारण
यह आराध्य के स्थान पर आधक बनता है।

With best compliments from :

KASLIWAL TUBES LTD.

Regd Office 253/2 1st Floor Shahpur Jat
NEW DELHI-16
Head Office · 1201, Manibaron Ka Rasta, JAIPUR (Raj.)
Sales Office · 128, M. G. D. Market JAIPUR (Raj.)
Phone : Off 77651, 77761
Resi. 47559, 46227, 47429

Distributors :

TATA, T.T. SWASTIK, ADVANCE, H.T.C., R.T.L.
RAVINDRA, JINDAL STEEL & FITTING

शुभ कामनाओं सहित

☆ ☆ ☆ ☆

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

आशीष जैन

With Best Compliments From

Tractors & Machinery Corporation

Opp Roadways Bus Stand
Station Road JAIPUR-302 006
Phone 366980
Fax 0141 377956
Gram BULLSEYE - JAIPUR - 302 006

With Best Compliments From :

Mahendra Auto Body Builders

E-152, Road No.-11
V. K. I. Area,
Jaipur

☎ 332808 Factory
44164 Residence

A

Leading Motor Body Builders
of

Rajasthan State Road Transport Corporation

शुभ कामनाओं सहित

सीया राम जाजड़ा

'अ' श्रेणी के ठेकेदार

पुष्कर रोड़
रिजनल कॉलेज के सामने
अजमेर

शुभ कामनाओं सहित

जगदीश चन्द्र शर्मा

'सी' श्रेणी के ठेकेदार

ग्राम पोस्ट-बन्दरसिन्दरी
तहसिल किशनगढ़
जिला अजमेर

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

G. D. Garg

Member :

Jaipur Stock Exchange Ltd.

JAIPUR

With Best Compliments From

Distributor for Rajasthan

ARCHIES

© ARCHIES GREETINGS & GIFTS PVT LTD

Gibson CARDS U S A

PAPER ROSE

AMERICAN GREETINGS

DADOOS BONE CHINA

STICKERS, GIFTS & NOVELTIES

Selection Home

8, BHAGAT NIWAS,

Opp Nagour Aanchalik Bank

Sardar Patel Marg, C-Scheme, JAIPUR-1

Phone 511227 (R)

Phone 378355 (O)

Fax 0141-378355

शुभ कामनाओं सहित :

प्रताप राजस्थान स्पेशल स्टील लि.

वी. के. आई. एरिया,
जयपुर

शुभ कामनाओं सहित

मै. गोतम सीमेन्ट वर्क्स

फैक्ट्री

1-G रूरल इडस्ट्रियल एस्टेट

प्लाट न 20, 21, 22

अजमेर रोड

ब्यावर

Rajputana Enterprises
Rajasthan Sales & Services

B 4 5, New Market, Near Moti Mahal Cinema,

Sawai Jai Singh Road, JAIPUR-16

Phone (O) 63119, 62042 (R) 65099

M P PATNI

MG PARTNER

– *AUTHORISED* –

DEALERS FOR

- ESAB Welding Products
- Tractel Tirfor (I) Pvt Ltd
- Suhner Flexible Grinder
- Conveyor/Sproket Chains
- Wadce Pneumatic Tools

SERVICE CENTRE

- Wolf Portable Tools
- ESAB Welding Products
- Chack Chain Pulley Blocks
- Wadco Pneumatic Tools
- Welding Transformers

एक मात्र अहिंसा ही परम सुख दामनी है
शुभ कामनाओं सहित :

रतनलाल गंगवाल
एण्ड कम्पनी

एजेन्ट्स :
इण्डियन आइल कारपोरेशन लि.
आई. ओ. सी. डिपो के सामने
22 गोदाम, जयपुर-302 006 (राज.)
फोन : (का.) 366614 (नि.) 315217

5 अगस्त को प्रदर्शित हो रहा है
राजश्री प्रोडक्शन्स का गौरवमयी
सामाजिक चित्र
हम आपके हैं कौन ?
★ माधुरी दीक्षित ★ सलमान खान
★ अनुपम खेर ★ मोहनिश बहल ★ रेणुका शाहाने ★ आलोकनाथ ★ रीमा लागू
★ बिन्दू ★ सतीश शाह
★ हिमानी शिवपुरी ★ अजीत वच्चानी

निर्देशक-सवांद-पटकथा सूरज बड़जात्या
संगीत राम लक्ष्मण
वितरक :
राजश्री पिक्चर्स प्रा. लि. जयपुर

With best compliments from :



With best compliments from :

HINDU PRAKASH BAND

HEAD OFFICE :
Kh[illegible] Walon Ka Chowk
G[illegible] Ji Ka Rasta
Johari Bazar
Jaipur-302 0[illegible]

BRANCH OFFICE :
[illegible]

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

R. C. GOENKA

TREASURER

JAIPUR STOCK EXCHANGE LTD.

* * *
* *
*

Goenka House 1st Floor
D-75 Ghiya Marg Bani Park
JAIPUR 302 016
Phone 318370, 313990
Telex 0365 2690 CMG IN
Fax 0141-313990
Gram WHITESTONE

महावीर जयन्ती पर शुभकामनाओं सहित :

श्री सीलिका प्रोडेक्ट प्रा. लि.

रोड़ नं. 9 विश्वकर्मा औद्योगिक क्षेत्र

जयपुर

निर्माता :

इनगोट, Billets

शुभ कामनाओं सहित

मैसर्स स्पैक्ट्रम सीमेन्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

* * *
* *
*

रीको औद्योगिक क्षेत्र
रतनगढ़ (राज)

★ ★ ★
★ ★
★

उच्च क्वालिटी के पोर्टलैण्ड
सीमेन्ट के निर्माता

* * *
* *
*

शुभकामनाओं सहित :

अमृतलाल डी पटेल

(सिंचाई विभाग के पंजीकृत ठेकेदार)

नोनलेवी सीमेन्ट के विक्रेता एवं
सभी प्रकार के मेटेरियल सप्लायर्स

रतनपुर गेट, डूंगरपुर - 314001 (राज.)

Phone : 2427

With Best Compliments From

INVEST YOUR SAVINGS
IN
SECURITIES FOR
SAFETY, LIQUIDITY AND GOOD RETURNS
THROUGH
THE MEMBERS
OF

JAIPUR STOCK EXCHANGE LTD.

RAJASTHAN CHAMBER BHAWAN
M I ROAD, JAIPUR-302 001

☎

564962, 563517 568335, 563521
Gram JAISTOCK
Telex 365 2648 JSEL IN
Fax 0141 563517

S K MANSINGHKA	R C GOENKA	J N DHANKAR	K L. JAIN
Vice President	*Treasurer*	*Executive Director*	*President*

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

UTTAM CEMENT (P) LIMITED

Manufacturer of :

QUALITY O. P. CEMENT

☆ ☆

☆

Ambaji Industrial Area
ABU ROAD

★ ★ ★

★ ★

★

☎ H. O. & F. [illegible] 513074

With Best Compliments From

TARUN
CASTINGS PVT. LTD.

Manufacturers of

All Types of Grade Castings such as

(1) S G Iron Castings
(2) Steel Castings
(3) Grey Iron Casting

Regd Off & Works
C 781 Industrial Area
BHIWADI 301 019 (RAJ)
Phone (01493) 3213 3273

☆

Head Office
X-1, Loha Mandi Naraina,
NEW DELHI 110 028
Phone (011) 5708273

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

G. C. Bardia & Co.

Member :
Jaipur Stock Exchange Ltd.

I-03 SHASTRI NAGAR
JAIPUR 302 016
PHONE: 316740 319301
[illegible]

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

M/s. Raj Kumar Daga

★★★★
★★★
★★
★

Member · Jaipur Stock Exchange

✳✳✳✳
✳✳✳
✳✳
✳

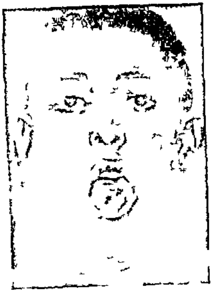
JAIPUR

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

M/s. C. M. Goenka & Co.

Member : Jaipur Stock Exchange Ltd.

Jaipur Tower,
M. I. Road,
JAIPUR



इस यच्चे को कैसर है ।
फिर भी
इसका भविष्य उज्जवल हो सकता है ।
इसको हमारी मदद की आवश्यकता है ।
आओ
हम सब मिलकर

इसकी और इसके जैसे कई अन्य लोगो की मदद करने को आगे बढ़े ।

यह सत्य है कि भारत मे आज हर 6 मौतो मे से एक मौत कैन्सर से होती है ।
यह भी सत्य है कि कैन्सर उम्र, लिग, धर्म या अमीरी-गरीबी नही देखता ।

भगवान महावीर कैन्सर चिकित्सालय एव अनुसधान केन्द्र
के रुप मे एक ऐसा केन्द्र स्थापित किया जा रहा है जहा इस खतरनाक बीमारी की शीघ्र पहचान व इलाज की सुविधा रहेगी ।
हम मे से प्रत्येक को इस स्वप्न को साकार करने मे मदद करनी चाहिए ।
यदि आप इस दिशा मे सहायता करने का दायित्व अनुभव करते है तो सम्पर्क करे

भगवान महावीर कैसर चिकित्सालय एव अनुसधान केन्द्र
जर्नल हाऊस, ए-95 जनता कालोनी, जयपुर 302 004
फोन 541006, 44398, 40906
सहायता राशि आयकर की धारा 80 जी के अन्तर्गत कर मुक्त है ।

स्थान प्रदत्त मैसर्स हीरालाल छगनलाल टाक, जौहरी बाजार, जयपुर
★ Fax (0141) 565390 ☆ Phone (O) 561621, 563671 ☆ Gram "GEMSTARS

OVERNITE EXPRESS OVERNITE EXPRESS OVERNITE EXPRESS OVERNITE EXPRESS OVERNITE EXPRESS

OW MANY LANGUAGES DOES A COURIER COMPANY WITH OVER 325 OFFICES AND 175 DESTINATIONS SPEAK ?



ust one. The universal language of efficiency. No matter what it delivers. Or where. Which is why, when it comes to confirmed delivery, most people prefer Overnite Express to any other courier. [illegible]

Corporate Office

[illegible]

OVERNITE EXPRESS

THE LARGEST COURIER SERVICE NATIONWIDE

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

HANDA & CO.

Member :

Jaipur Stock Exchange Ltd.

- ☐ STOCK SHARE & FINANCE BROKER
- ☐ INVESTMENT CONSULTANTS

B 76, RAMAN MARG
TILAK NAGAR
JAIPUR-302 004
Phone 45498 561752
Fax 0141 45498
Tlx 0365 2411

SEBI Registration No INB 160 192 318

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

LALIT JAIN
MANGLESH JAIN

LALIT JAIN & CO.

Member :
Jaipur Stock Exchange Ltd.

B 33 M. G. D. MARKET
JAIPUR-302 002
Phone (O) [illegible] (R) 513369 (JSE) [illegible]

राजस्थान जैन सभा के मच पर महावीर जयन्ती के पावन दिन पर 1992 को सकल्पित

निर्माणाधीन

भगवान महावीर कैन्सर चिकित्सालय व अनुसधान केन्द्र

कुल आवटित भूखण्ड	22126 वर्गगज
प्रस्तावित लागत राशि	35 करोड़ रुपये
प्रस्तावित निर्माण क्षेत्रफल	250000 वर्गफुट
प्रथम चरण की लागत राशि	10 करोड़ रुपये
प्रथम चरण पूर्ति की सम्भावित तिथि	महावीर जयन्ती 1996

प्रत्येक रुपया हमारे लिए महत्वपूर्ण है।

कैंसर खतरे के सात निशान

1 घाव जो न भरे
2. स्तन या और कहीं कोई लोथड़ा या जमाव
3 असामान्य रक्तस्राव या खून बहना
4 मस्सा या तिल मे कोई परिवर्तन
5 लगातार अपच या निगलने मे कठिनाई
6 लगातार स्वरभंग या खासी
7 सामान्य मल-मूत्र की आदतो में कोई परिवर्तन

सम्पर्क सूत्र

भगवान महावीर कैसर चिकित्सालय एव अनुसधान केन्द्र
जर्नल हाऊस ए-95 जनता कालोनी
जयपुर 302 004
फोन 541006 44398 40906

सहायता राशि आयकर की धारा 80 जी के अन्तर्गत कर मुक्त है।

With Best Compliments From :

GOLCHA GROUP OF INDUSTRIES

PIONEERS AND MARKET LEADERS OF BEST QUALITY TALC IN INDIA

MARKETED BY :

M/s. S. ZORASTER & COMPANY

(MINERAL DIVISION)

Head Office :

"Prem Prakash" S.M.S Highway, Jaipur-302 003

PHONES : 565013, 565014

GRAM : JUPITER *FAX* : 91-141-561119

TELEX : 0365-2353 TALCIN

PRODUCED BY :

JAIPUR MINERAL DEVELOPMENT
SYNDICATE PVT LTD
DAUSA

UDAIPUR MINERAL DEVELOPMENT
SYNDICATE PVT LTD
BHILWARA

With Best Compliments From

PRAMAN
MOTORS PVT. LTD.

**(Authorised TELCO Dealer for
Ajmer, Bhilwara, Tonk & Chittorgarh)**

Regd Office & Workshop

F 28/29 RIICO Industrial Area,
PARBATPURA, AJMER 305 002
Phone 33542
Telex 303 231 PMPL IN
Fax (0145) 33566

City Office
503 Srinagar Road
AJMER 305 001
Phone 31768

"वही धन उज्ज्वल है जो न्याय से आता है ।"

With Best Compliments From :

SOHAN LAL SETHI
NARENDRA KUMAR

PROMOTER-BUILDER-REAL ESTATE DEALER

Block "H"-8, Sukhijeevan Complex
Opp. Hotel Jai Mahal Palace, Jacob Road
Jaipur-302 006
Phone : 369287, 371007

Proprietor :
Sun Shine Properties

Director :
Jaipur Chalchitra (P) Ltd.
Samrat Cinema
Phone 45222

Managing Director :
Sanchal Constructions (P) Ltd.

Chairman & Managing Director
Padmani Enterprises (P) Ltd.

Partner
Sumeru Enterprises
[illegible] of Commercial Complex
Phone [illegible]

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

POOJA CASTINGS PRIVATE LIMITED

H O

Z-82/2, NARAINA IND AREA PHASE-I

NEW DELHI-110 028

T NO 5705999

WORKS

S P 289, IND AREA PHASE-I

BHIWADI - 301 019 (RAJ)

PHONES 01493-2271
01493 - 2839

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

NIKHAR

☆ ☆ ☆ ☆

☆ ☆ ☆

☆ ☆

☆

SARAOGI MANSION

M. I. ROAD,

JAIPUR

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

M/s. H. C. JAIN & CO.

* * * *
* * *
* *
*

Member :
Jaipur Stock Exchange Ltd.

* * * *
* * *
* *
*

Jaipur Tower
M I Road
JAIPUR

लोभी व्यक्ति सदा दुःखी रहता है

—भगवान महावीर

With Best Compliments From :

ASHOKA ENTERPRISES

(SUPPLIERS OF ALL TYPES OF WOOLLEN YARN)

SIRAS HOUSE, GANGAPOLE

JAIPUR-302 002

ASHOKA ENTERPRISES

(DYEING DIVISION)

ALL TYPE OF DYEING OF CARPET & COTTON YARN

SIRAS HOUSE, GANGAPOLE, JAIPUR-302 002

[illegible]

With Best Compliments From

M/s. Chokhani Iron & Steel Works
118-119 Industrial Area
Jhotwara JAIPUR

M/s. Hindustan Structurals
B-4C, Road No 1, V K I A
JAIPUR

M/s. Quality Forging Products
F 394 A Road No 9A V K I A
JAIPUR

M/s. Vikas Steel Industries
14 Kartarpura Industrial Area
Bais Godown
JAIPUR

M/s. Anil Industries
Kalwar Road, Jhotwara
JAIPUR

M/s. Khandelwal Industries
Kalwar Road Jhotwara
JAIPUR

DESIGN, FABRICATION OF TRANSMISSION LINE TOWERS
SUB STATION STRUCTURE & OTHER FABRICATION WORKS

शुभ कामनाओं सहित :

दी बैंक ऑफ राजस्थान लिमिटेड

(पंजीकृत कार्यालय : घण्टाघर, उदयपुर)

केन्द्रीय कार्यालय : जयपुर

समृद्धि एवं आकर्षक ब्याज के लिए
राज-बैंक की जमा योजनाएँ

1. आवर्ती जमा योजना
2. अरावली जमा योजना
3. जन हितैषी जमा योजना
4. सुविधा बचत योजना
5. सुखद भविष्य योजना
6. सुगम जमा योजना
7. नकद प्रमाण पत्र
8. मियादी जमा योजना
9. निधि संचय योजना

अधिक जानकारी के लिए हमारी निकटतम शाखा से सम्पर्क करें।

के. सी. अग्रवाल

[illegible]